DEVELOPMENT PLANNING OF BACKWARD ECONOMY
A CASE STUDY OF SONBHADRA DISTRICT OF U. P.

पिछड़ी अर्थव्यवस्था का विकास नियोजन :
उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जनपद का एक संदर्भित अध्ययन

(इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी. फिल्. उपाधि हेतु प्रस्तुत)
शोध-प्रबन्ध

निर्देशक
डॉ. बी. एन. सिंह, डी॰ फिल्॰
प्रवक्ता, भूगोल विभाग
इलाहाबाद, विश्वविद्यालय

शोधकर्ता
धर्मवीर सिंह
भूगोल विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

1993

प्राक्कथन

गाँवों का प्रादुर्भाव नगरों से पहले हुआ था। गाँव ही सामाजिक-आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक गतिविधियों के केन्द्र हुआ करते थे। कालान्तर में नगरों का प्रादुर्भाव एवं विकास गाँवों से ही हुआ। सम्प्रति नगर आर्थिक विकास के पर्याय बन गए हैं। ब्रिटिश काल में गाँवों की प्रमुख भूमिका कच्चे माल के संभरण एवं विनिर्मित माल के उपभोक्ता केन्द्र के रूप रही। स्वतन्त्रता के पश्चात् सभी पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विकास को उच्च प्राथमिकता दी गयी। वस्तुतः सम्पूर्ण गाँवों के विकास के बिना (जहाँ देश की 75 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती हैं) देश का समन्वित-विकास नहीं हो सकता है। क्षेत्रीय असमानताओं एवं विविधताओं के कारण प्रशासनिक एवं भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में सूक्ष्म-स्तरीय विशिष्ट योजनाओं के क्रियान्वयन पर विशेष बल दिया जा रहा है। इसका प्रमुख उद्देश्य आर्थिक एवं क्षेत्रीय विषमता को समाप्त करना तथा ग्रामीणों को जीवन स्तर को उच्च करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति कृषि, उद्योग, परिवहन, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के विकास पर निर्भर है। अर्थात् समन्वित क्षेत्र-विकास के लिए सूक्ष्म-स्तरीय आयोजन अपरिहार्य है।

इसी उद्देश्य के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोध विषय 'पिछड़ी अर्थव्यवस्था का विकास नियोजन· उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जनपद का एक संदर्भित अध्ययन' का चयन किया गया है। वर्तमान जनपद सोनभद्र का अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयन कई परिकल्पनाओं एवं तथ्यों की दृष्टि से किया गया है। प्रथम, 'वर्तमान समय में उद्योग पिछड़े क्षेत्रों के विकास के माध्यम हैं।' वस्तुतः यह सिद्धान्त कितना कारगर है इसके अध्ययन के लिए सोनभद्र उपयुक्त क्षेत्र है। द्वितीय, यहाँ का औद्योगीकरण हाल ही में प्रारम्भ हुआ है। उद्योगों की स्थापना से गुणात्मक तथा ऋणात्मक प्रभाव के अध्ययन के लिए उपयुक्त क्षेत्र है। तृतीय, कुटीर तथा लघु उद्योगों की पर्याप्त संभावनाएं हैं किन्तु इसका समुचित विकास नहीं किया जा रहा है। चतुर्थ, कृषि क्षेत्र की कमी है किन्तु जल एवं ताप विद्युत गृहों की अवस्थापना तथा बांधों एवं बंधियों के निर्माण से कृषि विकास की सम्भावना बढ़ गयी है। फसल गहनता में वृद्धि तथा फसल प्रतिरूप में परिवर्तन की पर्याप्त सम्भावना है। पंचम, यहाँ अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की जनसंख्या बहुत अधिक (42.5 प्रतिशत) है। ये पिछड़ेपन के पर्याय माने जाते हैं। अतः इनके विकास की पर्याप्त आवश्यकता है। षष्ठम, रोजगार पाने के

पर्याप्त सम्भावनाओं के बावजूद तकनीकी ज्ञान एवं अल्प वित्तीय संसाधन के अभाव में यहाँ के लोग बेरोजगारी के शिकार हैं। सप्तम्, अध्ययन क्षेत्र की विशिष्ट भौगोलिक स्थिति एवं स्वरूप होने के कारण विकास की पर्याप्त संभाव्यताा है। अष्टम्, शोधकर्ता अध्ययन क्षेत्र की समस्याओं एवं आवश्यकताओं से भलीभांति परिचित है(जन्म स्थली होने के कारण) तथा उसके पहुँच के अन्तर्गत है। इसके अतिरिक्त शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन, संचार एवं अन्य सुविधाओं की पर्याप्त कमी है, जो विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। यहाँ की भौतिक एवं सांस्कृतिक अर्थव्यवस्था पिछड़ी हुई है जिसके त्वरित विकास की आवश्यकता है।

अध्ययन क्षेत्र के विकास आव्यूह का विश्लेषण संकल्पनात्मक एवं व्यावहारिक दोनों ही दृष्टियों से किया गया है। संकल्पनात्मक विश्लेषण में यथा संभव उपलब्ध साहित्यों के अनुशीलन से प्राप्त विचारों को प्रस्तुत किया गया है। व्यावहारिक विश्लेषण आंकड़ों एवं क्षेत्रीय अनुभवों पर आधारित है। अध्ययन क्षेत्र के सूक्ष्म स्तरीय स्वरूप होने के कारण प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों प्रकार के आंकड़ों का प्रयोग किया गया है किन्तु द्वितीयक आंकड़े ही अधिक प्रयुक्त हुए हैं। प्राथमिक आंकड़े जिला उद्योग केन्द्र, राबर्ट्सगंज, आद्योगिक प्रतिष्ठान केन्द्रों; जिला कृषि कार्यालय, राबर्ट्सगंज; लोक निर्माण विभाग, राबर्ट्सगंज, तहसील मुख्यालय, राबर्ट्सगंज एवं दुद्धी; विकास खण्ड मुख्यालय, राबर्ट्सगंज, घोरावल, चतरा, नगवां, चोपन, दुद्धी, म्योरपुर, व बभनी; जिला विद्यालय निरीक्षक कार्यालय; जिला स्वास्थ्य केन्द्र राबर्ट्सगंज और पशु अस्पताल केन्द्र राबर्ट्सगंज से प्राप्त किये गये हैं। द्वितीयक आंकड़ों के मुख्य स्रोत जनगणना हस्त्पुस्तिका, जनपद मिर्जापुर, 1961 तथा 1971; गजेटियर, जनपद मिर्जापुर, 1988; सांख्यिकीय पत्रिका जनपद सोनभद्र, 1992; सोनभद्र जनपद के अग्रणी बैंक, इलाहाबाद बैक की वार्षिक कार्य योजना, सोनभद्र 1991-92; जनपद सोनभद्र की जिला कार्य योजना, 1992-93; उद्योगों की निर्देशिका, जनपद सोनभद्र, 1991-92; भारत 1991 तथा उत्तर प्रदेश वार्षिकी, 1990-91 है। उपर्युक्त आंकड़ों के अतिरिक्त यथा स्थान व्यक्तिगत सर्वेक्षण एवं अनुभव का भी आश्रय लिया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण में दुरूह सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग नहीं किया गया है किन्तु बस्तियों के अन्तरालन, विकास केन्द्रों के सीमांकन, शस्य गहनता, शस्य-साहचर्य, सड़क-सम्बद्धता तथा जनसंख्या प्रक्षेपण में यथा आवश्यक सामान्य सांख्यिकीय सूत्रों का प्रयोग किया गया है। विषय की स्पष्ट व्याख्या के लिए कुछ स्थानों पर आंकड़ों की पुनरावृत्ति भी की गयी है। विश्लेषित एवं संश्लेषित आंकड़ों को मानचित्रों एवं तालिकाओं, से

अधिक बोधगम्य बनाया गया है। प्रस्तुत अध्ययन की सुस्पष्टता के लिए 60 तालिकाओं एवं 43 मानचित्रों आरेखों व चित्रों को सम्मिलित किया गया है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में, समय एवं संसाधनों के अभाव में, समन्वित क्षेत्र-विकास से सम्बन्धित केवल कृषि, उद्योग, परिवहन, संचार, शिक्षा तथा स्वास्थ्य का विकास नियोजन प्रस्तुत किया गया है। उपर्युक्त क्षेत्रों का विकास-नियोजन 'विकास-केन्द्र' उपागम के अन्तर्गत विवेचित है। विकास-केन्द्र निर्धारण की प्रक्रिया सर्वथा व्यक्तिनिष्ठ प्रक्रिया है। इसके लिए उपलब्ध साहित्यों के अनुशीलन तथा क्षेत्रीय अनुभव के आधार पर उन्हीं बस्तियों को विकास केन्द्र/सेवा केन्द्र के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है जो चयनित 35 आधारभूत कार्यों/सेवाओं में से जूनियर बेसिक विद्यालय, मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र एवं उपकेन्द्र तथा फुटकर बाजार के अतिरिक्त किन्हीं दो कार्यों को सम्पादित कर रहे हों या उनके द्वारा सम्पादित सम्पूर्ण कार्यों का मान 3.16 से कम न हों। कार्यों के मान तथा सेवा केन्द्रों के केन्द्रीयता के मापन में एक नवीन विधि को व्यवहृत किया गया है। इस विधि से कार्यों/सेवाओं के सापेक्षिक महत्व का स्पष्टीकरण होता है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र के भ्वाकृतिक स्वरूप एव कार्यात्मक रिक्तता को देखते हुए 61 नए विकास-केन्द्रों का चयन, आधार-भूत कार्यों/सेवाओं की आवश्यकता हेतु किया गया है। निर्धारित एवं प्रस्तावित विकास/सेवा केन्द्रों के परिप्रेक्ष्य में ही सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र का विकास-नियोजन प्रस्तुत है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को, अध्ययन क्षेत्र में समन्वित विकास के लिए आठ अध्यायों में विवेचित किया गया है। अध्याय एक में शोध विषय सम्बन्धी (विकास, नियोजन एवं पिछड़ी अर्थव्यवस्था) समालोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। अध्याय दो में अध्ययन क्षेत्र की भौगोलिक पृष्ठभूमि का विशद विवरण प्रस्तुत है साथ ही इसके परिप्रेक्ष्य में विकास-नियोजन प्रस्तुत है। अध्याय तीन में बस्तियों के स्थानिक-कार्यात्मक संगठन की समीक्षा तथा जनपद के विकास ध्रुवों की विवेचना प्रस्तुत है। अध्याय चार में वर्तमान कृषि प्रतिरूप के मूल्यांकन के उपरान्त कृषि-विकास नीति की व्याख्या की गयी है। अध्याय पाँच में वर्तमान औद्योगिक पृष्ठभूमि का वर्णन कर स्थानीय संसाधनों पर आधारित उद्योगों के अवस्थापना एवं विकास की नीति निर्धारित की गयी है। अध्याय छः में परिवहन एवं संचार व्यवस्था के वर्तमान पिछड़े स्वरूप के संदर्भ में तीव्र विकास नियोजन का प्रस्ताव है। अध्याय सात में सामाजिक सुविधाओं

से सम्बन्धित शिक्षा एवं स्वास्थ्य के वर्तमान स्वरूप का वर्णन कर वांछित विकास हेतु नियोजन प्रस्तुत है। अध्याय आठ में समन्वित क्षेत्र-विकास से सम्बन्धित विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत है। इस अध्याय में उन पक्षों की समीक्षा प्रस्तुत की गयी है जिनका समन्वित क्षेत्र-विकास में महत्वपूर्ण योगदान है किन्तु अनेक कारणों से शोध-प्रबन्ध के अध्ययन में सम्मिलित नहीं किया गया है।

विकास, नियोजन तथा पिछड़ेपन से सम्बन्धित साहित्य अनेक सामाजिक विज्ञानों में उपलब्ध है, उन सभी का विवरण देना दुरूह कार्य है। यथास्थान उल्लखित सन्दर्भो को प्रत्येक अध्याय के अन्त में संख्या-क्रम में प्रस्तुत किया गया है। शोध प्रबन्ध के अंत में दो परिशिष्ट दिए गए हैं। प्रथम में शब्दावली तथा द्वितीय में प्रस्तुत शोध विषय एवं क्षेत्र से सम्बन्धित ग्रन्थों एवं लेखों का उल्लेख किया गया है।

चिर प्रेरणा के स्रोत गुरू प्रवर डॉ0 बी0 एन0 सिंह (प्रवक्ता, भूगोल विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) का मैं हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने विषम परिस्थिति में , अपने सुयोग्य निर्देशन में शोध-प्रबन्ध को यथाशीघ्र पूर्ण करने का सुअवसर प्रदान किया। प्रो0 आर0 एन0 तिवारी (निवर्तमान अध्यक्ष, भूगोल विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय), डॉ0 आर0 एन0 सिंह (रीडर, भूगोल विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) तथा डॉ0 बी0एन0 मिश्र (रीडर, भूगोल विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिनके सतत् प्रोत्साहन एवं विद्वतापूर्ण सुझावों से हमेशा मार्ग दर्शन मिलता रहा। डॉ0 सविन्द्र सिंह (वर्तमान अध्यक्ष, भूगोल विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) तथा डॉ0 आर0सी0 तिवारी (रीडर, भूगोल विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) की प्रेरणाएं न केवल प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध को पूर्ण करने में सहायता की वरन् जीवन की सच्चाई को समझने में आजीवन मार्ग प्रशस्त करती रहेंगी, का मैं आभारी हूँ। डॉ0 सुधाकर त्रिपाठी, डॉ0 नन्द किशोर सिंह, डॉ0 सुनील त्रिपाठी, डॉ0 रमा शंकर मौर्य, डॉ0 राम दुलारे पाण्डे तथा शोध छात्र ओम प्रकाश राय एवं अशोक कुमार सिंह के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने समय-समय पर अपना सुझाव एवं सहयोग प्रदान किया। मैं अपने समस्त परिवार जनों का, जिनके त्याग, प्रेरणा एवं स्नेह ने मुझे इस योग्य बनाया, आजीवन ऋणी रहूँगा।

अंत में, मैं टाइपिस्ट गोविन्द दास एवं राम नाथ सिंह को धन्यवाद देना चाहूंगा जिन्होंने शोध-प्रबन्ध का टंकण कार्य अतिशीघ्र पूर्ण करने में सहयोग प्रदान किया। मैं उन सभी संस्थाओं,पुस्तकालयों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों तथा व्यक्तियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने विविध प्रकार से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में सहायता करके शोध-प्रबन्ध को पूर्ण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

इलाहाबाद
14 नवम्बर, 1993
दीपावली

धर्मवीर सिंह
(धर्मवीर सिंह)
शोध छात्र,भूगोल विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

विषय-सूची

LIST OF MAPS & DIAGRMS

xxxxxxxxxxx

तालिकाओं की सूची

अध्याय 1

संकल्पनात्मक विश्लेषण

प्रस्तुत अध्ययन का शोध विषय पिछड़ी अर्थव्यवस्था का विकास- नियोजन (सोनभद्र जनपद का विशेष अध्ययन) न केवल राष्ट्रीय अपितु अन्तर्राष्ट्रीय चिंता का विषय बन गया है । उपर्युक्त शोध विषय मानव समाज के लिए एक समस्या बन गयी है जिसके समाधान हेतु अनेक स्तरों पर अनुसंधान, प्रयोग, सर्वेक्षण, अन्वेषण तथा नयी-नयी योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन किया जा रहा है । यह समस्या न केवल वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों, राजनीतिज्ञों व प्रशासकों के लिए वरन् भूगोलविदों के लिए भी चिंता का विषय बन गया है । पिछड़ी अर्थ व्यवस्था व ग्रामीण अर्थव्यवस्था एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी और बेरोजगारी की समस्याओं को खंडों में हल नहीं किया जा सकता । इसे तो समग्र रूप में ही सुलझाना होगा ।[1] इस शताब्दी के प्रारम्भ तक कृषि उत्पादन और उसे मिलते-जुलते क्षेत्रों , जैसे पशुपालन, डेयरी, वन, मत्स्य-पालन के विकास और मानवीय सुविधाओं जैसे पीने का पानी, सड़क, स्कूल, अस्पताल, गाँवों को विद्युत आदि की सुविधा उपलब्ध कराने को ही विकास माना जाता था । आधुनिक समय में विकास के मानदण्डों में वृद्धि होने के बावजूद उपर्युक्त आधारभूत सुविधाएँ उपलब्ध कराने का कार्य बरकरार है । वास्तव में विकास की अवधारणा दिग्भ्रमित हो गयी है । स्मिथ[2] ने विकास की समस्या को विश्व की सबसे महत्वपूर्ण समस्या माना है । विकास के तीन स्तर अविकसित , विकासशील व विकसित काफी प्रचलित हैं किन्तु इसमें कोई स्पष्ट भेद नहीं है । इस प्रादेशिक असमानता को दूर करने के लिए संतुलित नियोजन का निर्माण एवं उसके क्रियान्वयन की आवश्यकता है । विभिन्न क्षेत्रों के विकास हेतु उसकी भौगोलिक पृष्ठभूमि के अनुरूप विभिन्न विकास-योजनाओं की आवश्यकता होती है । प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य ध्येय पिछड़े क्षेत्रों की पहचान कर उसके लिए नियोजन की एक नीतिगत व्याख्या प्रस्तुत करना है ।

1.1 विकास, प्रगति एवं संवृद्धि की अवधारणा

विकास, प्रगति और संवृद्धि शब्दों का प्रयोग प्रायः एक दूसरे के पर्यायवाची के रूप में किया जाता है । परन्तु कुछ विद्वानों का मत है कि ये तीनों शब्द समानार्थी नहीं हैं । डडले सियर्स ने करीब 20 वर्ष पूर्व सम्भवतः लैटिन अमरीकी देशों के संदर्भ में लिखा था : 'ग्रोथ विदाउट डेवलपमेण्ट' अर्थात बिना विकास के वृद्धि । आधारभूत समस्या यह है कि यदि सकल राष्ट्रीय उत्पाद का आकलन करने की कठिनाइयों की अनदेखी कर दी जाय तो यह सकल राष्ट्रीय उत्पाद में परिवर्तन की दर किसी देश की आर्थिक वृद्धि का सरल मापदण्ड बन जाएगी । अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलना करने में त्रुटियाँ आ सकती हैं , परन्तु किसी देश में यह माना जा सकता है कि इस आकलन में दोष और कमियाँ निश्चित समय में एक जैसी ही रहेंगी । इस अवधारणा के आधार पर किसी निश्चित अवधि में सकल राष्ट्रीय उत्पाद में वृद्धि की बात कही जा सकती है । विकास में सकल राष्ट्रीय उत्पाद में वृद्धि सम्मिलित है, जबकि सैद्धान्तिक दृष्टि से यह कई और तत्वों पर भी आधारित है । प्रगति का क्षेत्र और भी व्यापक एवं विस्तृत है । इसमें विकास के साथ-साथ अन्य सामाजिक पहलू भी समाहित है । वृद्धि का अर्थ है आकलन किए जा सकने वाले तत्वों में बढ़ोत्तरी, विकास का अर्थ है आर्थिक परिवर्तन और प्रगति से अभिप्राय है सामाजिक परिवर्तन ।[3]

(अ) प्रगति और विकास

प्रगति का अभिप्राय वांछनीय परिवर्तन से है जिसमें इष्ट मूल्यों की पूर्ति होती है । जब हम प्रगति की चर्चा करते हैं तो हमारा संकेत केवल दिशा से ही नहीं है बल्कि किसी अन्तिम उद्देश्य और किसी आदर्श रूप में निर्धारित गन्तव्य स्थान की दिशा की ओर होता है । यदि सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन वांछित तरीके से होता है तो उसे प्रगति समझा जाता है । प्रगति एक

सापेक्षिक धारणा है, क्योंकि इसमें वर्तमान की तुलना भूतकाल की परिस्थितियों से की जाती है । इसके साथ ही एक निश्चित सामान्य पैमाने पर परिवर्तन का मूल्यांकन भी किया जाता है । अत. प्रासंगिक तुलनाओं से ही प्रगति का सही अनुमान हो सकता है । मूल्यांकन की कसौटियाँ आर्थिक , तकनीकी प्रगति, सांस्कृतिक लक्षण, गुण, और मानसिक विकास है । तकनीकी प्रगति सरलतम कसौटी है । उदाहरण के लिए इसमें मुद्रा अर्थव्यवस्था और संचार व्यवस्था को सम्मिलित किया जाता है । परन्तु प्रोद्योगिकी और सांस्कृतिक या सामाजिक विकास के बीच निकट का सम्बंध है । उर्जा के कुल उत्पादन और समाज के रूपान्तरण को प्रगति के मूल्यांकन का एकमात्र आधार नहीं माना जा सकता । ऐसे मत के अनुसार सांस्कृतिक प्रगति प्रौद्योगिक परिर्तन की तुलना में गौण मानी जाती है । वास्तव में किसी एक क्षेत्र में परिवर्तन या प्रगति दूसरे क्षेत्र से सम्बन्धित है और उस पर निर्भर भी है । अतः परिवर्तन एक जटिल प्रघटना है ।[4]

प्रगति की अवधारणा की तरह विकास की अवधारणा में भी वाँछित दिशा में परिवर्तन की ओर संकेत है । विकास की अवधारणा एक नूतन प्रघटना है , जबकि प्रगति की अवधारणा प्रबोध और औद्योगिक क्रान्ति से जुड़ी हुई है । विकास की प्रकृति संदर्भात्मक और सापेक्षिक है । प्रगति की प्रकृति सामान्य है और औचित्यात्मक कारकों पर आधारित है । वांछनीय दिशा में नियोजित गुणात्मक परिवर्तन लाने के उपाय को विकास कहते हैं । विकास की धारणा सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा राजनैतिक और भौगोलिक परिस्थिति के आधार पर प्रत्येक क्षेत्र में भिन्न-भिन्न पायी जाती है ।

विकास एक समिश्र अवधारणा है । क्षेत्र के विकास में कृषि, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन एवं संचार आदि विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति को गिना जाता है । विकास में समाज के कमजोर वर्गों , स्त्रियों और बच्चों , बेरोजगारों , बीमार और वृद्ध लोग तथा अल्पसंख्यकों के कल्याण को भी सम्मिलित करते हैं । विभिन्न नीतियों और कार्यक्रमों का उद्देश्य ग्रामीण और

शहरी क्षेत्रों , अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों, महिलाओं, कृषि मजदूरों और औद्योगिक श्रमिकों के कल्याण का है । अतः विकास एक मूल्य-भारित अवधारणा है । यह एक समाज, क्षेत्र और जनता की सामाजिक , सांस्कृतिक , आर्थिक व भौगोलिक आवश्यकताओं में सम्बद्ध है ।[5]

विकास का अभिप्राय एक प्रघटना के पूर्णतर वृद्धिरूपी उद्विकास से है । मनुष्य का अपने पर्यावरण पर नियंत्रण विकास का ही उदाहरण है। विकास की अवधारणा इन सामान्य मान्यताओं के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट कसौटियाँ भी हैं यथा आदिम कृषि अवस्था से औद्योगिक समाज की ओर समाज का उद्विकास तथा आर्थिक परिवर्तन । ज्ञान की वृद्धि तथा मनुष्य का अपने वातावरण पर नियंत्रण इन पहलुओं में निहित है । इस अर्थ में सामाजिक विकास सामाजिक प्रगति का पर्याय है ।

(ब) संवृद्धि एवं विकास

आर्थिक संवृद्धि को हम एक ऐसी वृद्धि की दर के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो अत्यन्त निम्न जीवन स्तर में फँसी हुई किसी अल्प-विकसित अर्थव्यवस्था को अल्पावधि में ही ऊँचे जीवन स्तर तक पहुँचा सका । [6] कुछ अर्थशास्त्रियों के अनुसार आर्थिक संवृद्धि एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी अर्थव्यवस्था का कुल राष्ट्रीय उत्पाद लगातार दीर्घकाल तक बढ़ता रहता है ।[7] आर्थिक संवृद्धि से प्रायः यह अर्थ निकाला जाता है कि उत्पादन में समय के साथ कितनी वृद्धि हुई । दूसरी तरफ आर्थिक विकास की संकल्पना में प्रति व्यक्ति उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि अर्थव्यवस्था के आर्थिक व सामाजिक ढाँचे में क्या परिवर्तन हुए । इस प्रकार आर्थिक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कुल राष्ट्रीय उत्पादन में कृषि का हिस्सा क्रमशः कम होता जाता है जबकि उद्योगों, सेवाओं, व्यापार, बैंकिंग व विनिर्माण का हिस्सा बढ़ता जाता है । इस प्रक्रिया में श्रमशक्ति की व्यावसायिक संरचना में भी परिवर्तन होता है तथा उसके कार्य कुशलता व उत्पादकता में वृद्धि होती है । अतः संवृद्धि परिवर्तन के

मात्रात्मक पहलू की ओर संकेत करती है जबकि विकास में मात्रात्मक के साथ-साथ गुणात्मक परिवर्तन को भी प्रश्रय मिलता है ।[8]

किंडलबर्गर के अनुसार जहाँ आर्थिक संवृद्धि का अर्थ उत्पादन में वृद्धि होता है , वहीं आर्थिक विकास से तात्पर्य उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ उत्पादन की तकनीक, संस्थागत व्यवस्था, तथा वितरण प्रणाली में परिवर्तन होता है । आर्थिक संवृद्धि की तुलना में आर्थिक विकास प्राप्त करना कहीं अधिक कठिन है । आर्थिक साधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करके उसकी उत्पादकता व उत्पादन बढ़ाकर आर्थिक संवृद्धि की जा सकती है किन्तु आर्थिक विकास के लिए उत्पादन के साधनों की संरचना में परिवर्तन लाना अनिवार्य होता है और साथ ही उसके आबंटन में परिवर्तन लाना होता है जिससे सामाजिक न्याय सुनिश्चित हो सके । इस प्रकार जहाँ आर्थिक संवृद्धि के लिए राष्ट्रीय आय पर ध्यान देना पड़ता है वहीं आर्थिक विकास का अनुमान मुख्यतः संरचनात्मक परिवर्तनों के आधार पर लगाया जाता है ।

साधारणतया पिछड़ी अर्थव्यवस्था वाले क्षेत्र में आर्थिक विकास और आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया साथ-साथ चलती है , परन्तु यह आवश्यक नहीं है । प्रायः किसी देश के राष्ट्रीय आय में वृद्धि तो होता है किन्तु अर्थव्यवस्था में कोई विकास नहीं होता है । कुजनेत्स का मत है कि आर्थिक संवृद्धि की अवस्था में बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ-साथ प्रति व्यक्ति उत्पादन (या आय) में भी वृद्धि होनी चाहिए । पिछड़ी अर्थव्यवस्था वाले क्षेत्रों में जहाँ जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है , संसाधन सीमित हैं और तकनीकी विकास की प्रक्रिया पर विकसित देशों का प्रभुत्व है , वहाँ आर्थिक संवृद्धि के द्वारा गरीबी, बेरोजगारी का न तो निवारण हो सकता है और न ही सामाजिक न्याय प्राप्त किया जा सकता है । फिर भी आर्थिक विकास के लिए आर्थिक संवृद्धि भले ही पर्याप्त न हो किंतु आवश्यक अवश्य है । बिना आर्थिक संवृद्धि के आर्थिक विकास कदापि नहीं हो सकता तथा बिना आर्थिक संवृद्धि के व्यावसायिक संरचना में परिवर्तन भी नहीं हो सकता ।

(स) क्रान्ति और विकास

क्रान्तियाँ अनेक प्रकार की होती हैं यथा राजनैतिक क्रान्ति, सामाजिक क्रान्ति, औद्योगिक क्रान्ति, कृषि क्रान्ति व धार्मिक क्रान्ति आदि । यहाँ पर क्रान्ति से तात्पर्य ' विकास - क्रान्ति' से लिया गया है । क्रान्तिकारी विकास से अप्रत्याशित विकास होता है जबकि साधारण विकास में विकास सतत् गतिशील होता है । क्रान्ति का अर्थ परिवर्तन के चरम स्वरूप से है।[10] यदि किसी समाज या क्षेत्र मे इस तीव्र परिवर्तन से सामजस्य करने की क्षमता नहीं है तो उसके नकारात्मक प्रभाव दृष्टिगत् होते हैं । कहा जाता है कि 'सोना पाना और खोना दोनों अपशकुन के सूचक हैं', इसका प्रतीकात्मक अर्थ यहीं है कि तीव्र परिवर्तन अच्छा नही होता है। क्रान्ति से तत्कालीन व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन हो जाता है । वास्तव में क्रान्ति का अर्थ तीव्र और आमूल परिवर्तन होता है।[11] विकास से धीमे एव सतत् परिवर्तन का बोध होता है । विकास से संतुलित विकास का भी बोध होता है । किसी समाज या क्षेत्र में कुछ ऐसे जड़ तत्व होते है, जिनमें क्रान्तिकारी विकास की आवश्यकता होती है, वास्तव में ये विकास प्रक्रिया की कुंजी होते हैं जिन्हें तीव्र किए बिना अन्य विकास कार्य सम्पादित हो ही नहीं सकते । भारत के संदर्भ में देखा गया है कि 'हरित क्रान्ति' के बाद कृषि आधारित उद्योगों का विकास स्वतः स्फूर्त था । मानव समाज के विकास में क्रान्तियों ने एक आवश्यक भूमिका अदा की है । क्रान्तियों के बिना एक ही प्रकार की व्यवस्था सदा चलती रहेगी, भले ही वह समय की दृष्टि से अनुपयुक्त क्यों न हो । इसके फलस्वरूप कोई प्रगति नहीं होगी ।[12]

1.2 विकास की भौगोलिक अवधारणा

मनुष्य अपने चेतन व गतिशील स्वभाव के कारण सभी प्राणियों से अलग है । वह अपने वर्तमान वस्तु - स्थिति से सन्तुष्ट न रहकर उसमें मनोवांछित परिवर्तन लाकर विकसित स्वरूप देखना चाहता है । वस्तुओं एवं घटनाओं का स्वरूप परिवर्तन ही विकास होता है ।[13] परिवर्तन दो तरह का होता है - एक ऋणात्मक तथा दूसरा धनात्मक, विकास का सम्बन्ध धनात्मक परिवर्तन से होता है ।[14] यह परिवर्तन भूतल पर अवस्थित किसी भी वस्तु-स्थिति से हो सकता है । अत· तथ्यात्मक संदर्भ मे विकास की परिभाषाओं का स्वरूप बदलता रहता है । विकास के अन्तर्गत भूतल पर अवस्थित सम्पूर्ण तथ्यों मे धनात्मक

परिवर्तन को ही सम्मिलित किया जाता है । मनुष्य ही सभी अध्ययनों का केन्द्र - बिन्दु होता है और मानव कल्याण में वृद्धि ही भूगोल का मूल उद्देश्य रहा है ।[15] अत मानव के क्रिया - कलापों के विकास को ही, विकास की परिधि में सम्मिलित करना चाहिए । ये क्रिया - कलाप सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्वरूपों से सम्बन्धित हो सकते है । इन समस्त क्रियाओं में आर्थिक क्रियाओं का स्थान सर्वोपरि है किन्तु विकास का यह - सम्बन्ध केवल आर्थिक क्रियाओं से ही नहीं है । इसमें वातावरण की गुणवत्ता में वृद्धि तथा सामाजिक आर्थिक, प्रगति के आधारभूत कारक संरचनात्मक एवं संस्थागत परिवर्तन को भी विकास के अन्तर्गत समाहित किया जाता है । वस्तुत विकास एक व्यावहारिक सकल्पना है, जिसका अभिप्राय प्रगति, उत्थान एवं वांछित परिवर्तन से है । विगत वर्षों में विकास से तात्पर्य आर्थिक क्षेत्र में हुई प्रगति और सुधार से समझा जाता था, किन्तु आजकल इसका आशय जीवन के विविध क्षेत्रों में हुए वांछित गुणात्मक एवं परिमाणात्मक परिवर्तनों से लिया जाता है ।[16] इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर ब्रह्म प्रकाश एवं मुनीस रजा [17] ने विकास को कार्य अथवा कार्यो की एक श्रृंखला या प्रक्रम माना है, जो जीवन की दशाओ में शीघ्र ही सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सास्कृतिक तथा वातावरणीय सुधार करता है अथवा भविष्य में जीवन की संभावना में वृद्धि करता है या दोनो ही कार्य इसके द्वारा किए जाते हैं ।

गुलतुंग [18] ने विकास की नयी परिभाषा देते हुए बताया कि विकास का सिद्धान्त सामाजिक विषयों का वह क्षेत्र है, जहाँ भूतकाल का अध्ययन इतिहास, वर्तमान का अध्ययन समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र एवं भूगोल आदि तथा भविष्य का अध्ययन भविष्यशास्त्र एक साथ करते हैं । आर0 पी0 मिश्र [19] ने विकास का विश्लेषण करते हुए कहा है कि - विकास, समाज एवं अर्थव्यवस्था के मात्रात्मक विस्तार के अतिरिक्त उनमें वांछित गति से वांछित दिशा में संरचनात्मक परिवर्तन के साथ - साथ मानव के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक रूपान्तरण से सम्बद्ध है, जिसमें सामयिक, क्षेत्रीय तथा स्थानिक पहलुओं के साथ नियोजन का समन्वय देखा जाता है । विकास के विविध पहलुओं को देखते हुए आर0 एन0 सिंह [20] ने लिखा है कि - विकास एक आदर्शोन्मुखी संकल्पना है, जिसमें सकारात्मक, प्रयोजनात्मक एवं वांछित सतत् उर्ध्वोन्मुख परिवर्तन समाहित है ।

1.3 आर्थिक विकास की अवधारणा

आर्थिक विकास पर न केवल भूगोलविदों ने अपितु क्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने भी बहुत अधिक काम किया है । आर्थिक विकास की अवधारणा आर्थिक संवृद्धि की आवधारणा से अधिक व्यापक है । आर्थिक विकास के लिए आर्थिक संवृद्धि की पूर्व दशा का होना अनिवार्य है । बीसवीं शताब्दी के मध्य के बाद से आर्थिक विकास की संकल्पनाओं को आर्थिक संवृद्धि की संकल्पना से भिन्न माना जाने लगा । विकास की प्रमुख समस्या गरीबी, संवृद्धि होने के बावजूद बढ़ती ही गयी । पाकिस्तानी अर्थशास्त्री महबूब - उल - हक [21] का कहना है कि: 'विकास की प्रमुख समस्या गरीबी की सबसे भयानक किस्मों पर सीधा प्रहार करना है । गरीबी, भुखमरी, बीमारी, अशिक्षा, बेरोजगारी और असमानताओं जैसी समस्याओं के उन्मूलन को विकास के मुख्य लक्ष्यों में शामिल किया जाना चाहिए । हमें यह सिखाया गया था कि कुछ राष्ट्रीय उत्पाद को बढ़ाया जाना चाहिए क्योंकि इससे गरीबी का निवारण होगा । अब समय आ गया है कि हम इस सम्बन्ध को बदल दें । अब आवश्यकता इस बात की है कि हम मुख्यतया गरीबी पर ध्यान केन्द्रित करें । इसके माध्यम से राष्ट्रीय उत्पाद को अपने आप महत्व मिल जाएगा । दूसरे शब्दों में अब कुल राष्ट्रीय उत्पाद की वृद्धि दर पर कम और उसकी संरचना पर अधिक ध्यान देना जरूरी है । '

आर्थिक विकास से सम्बन्धित दो मुख्य विचारधाराएं हैं --

प्रथम परम्परागत विचारधारा है - जिसमें कुल राष्ट्रीय (या घरेलू) उत्पाद में 5-7 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हो, उत्पादन तथा रोजगार के परिवर्तन का स्वरूप इस प्रकार हो जिसमें कृषि का हिस्सा निरन्तर कम होता जाय और तृतीयक व विनिर्माण क्षेत्र का हिस्सा बढ़ता जाय । इस विचारधारा के अन्तर्गत कृषि के स्थान पर उद्योग को अधिक प्रश्रय दिया जाता है । कुल राष्ट्रीय या घरेलू उत्पाद में वृद्धि तथा प्रति व्यक्ति उत्पाद में वृद्धि होने से शेष उद्देश्यों (गरीबी निवारण, आर्थिक असमानता में कमी और रोजगार अवसरों में वृद्धि आदि) को स्वतः धीरे - धीरे प्राप्त कर लिया माना जाता है ।

व्यावहारिक रूप में देखने से पता चलता है कि जनसंख्या के अधिकांश भाग को आर्थिक संवृद्धि से कोई लाभ नहीं मिला और उनकी स्थिति में किसी प्रकार का सुधार नहीं

हुआ है। इसका बहुत से विद्वानों में इस परम्परागत विचारधारा को संशोधित करके आर्थिक विकास का मुख्य उद्देश्य गरीबी असमानता और बेरोजगारी का निवारण रखा है। इसके अन्तर्गत 'पुनर्वितरण के साथ संवृद्धि' (रीडिस्ट्रीब्यूशन विद ग्रोथ) का नारा दिया है। इस सम्बन्ध में चार्ल्स पी0 किन्डलवर्गर और बूस हैरिक [22] का कहना है : 'आर्थिक विकास की परिभाषा प्रायः लोगों के भौतिक कल्याण में सुधार के रूप में की जाती है। जब किसी देश में खासकर निम्न आय वाले लोगों के भौतिक कल्याण में बढ़ोत्तरी होती है; जनसाधारण को अशिक्षा, बीमारी और छोटी उम्र में मृत्यु के साथ-साथ गरीबी से छुटकारा मिलता है; कृषि लोगों का मुख्य व्यवसाय न रहकर औद्योगीकरण होता है जिससे उत्पादन के लिये प्रयोग होने वाले कारकों के स्वरूप में परिवर्तन होता है; कार्यकारी जनसंख्या का अनुपात बढ़ता है और आर्थिक तथा दूसरे प्रकार के निर्णयों में लोगों की साझेदारी बढ़ती है तो अर्थव्यवस्था का स्वरूप बदलता है। इस प्रकार के परिवर्तन के फलस्वरूप हम कह सकते हैं कि देश विदेश में आर्थिक विकास हुआ है'।

ब्रोगर[23] ने आर्थिक विकास का अर्थ बताते हुए कहा है कि इसके अन्तर्गत सामाजिक राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिवर्तनों के संयुक्त प्रभाव को सम्मिलित किया जाना चाहिये । माइकेल पी0 टोडेरो[24] विकास के स्वरूप को सम्पूर्ण सामाजिक आर्थिक सरचना एवं विचारों के वांछित परिवर्तन में बताते हैं। विकास में न केवल आर्थिक पक्ष बल्कि सामाजिक, कल्याणकारी, मनावैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक पक्ष भी आते हैं। इसीलिये स्मिथ [25] ने लिखा है कि मानव के कल्याण में वृद्धि ही विकास है। आर्थिक विकास के उपर्युक्त व्यापक उद्देश्य के अतिरिक्त सामान्यतः आर्थिक विकास को निम्न रूपों में जाना जाता है-

(क) आर्थिक विकास एक ऐसी प्रकिया है जिसके फलस्वरूप किसी क्षेत्र की जनसंख्या विशेषतः निर्धन जनसंख्या के लिये अधिक अर्थपूर्ण सिद्ध हो सकें।

(ख) आर्थिक विकास का मुख्य लक्ष्य निर्धनता समाप्त करना है।

(ग) आर्थिक विकास का तात्पर्य वास्तविक आप में दीर्घकालीन वृद्धि है, न कि अल्पकालीन वृद्धि जो कि व्यापार चक्रों में वृद्धि काल में व्यक्त होता है।

(घ)आर्थिक विकास का लक्ष्य आर्थिक असमानता में कमी लाना है।

(ड) आर्थिक विकास के कुछ अन्य लक्ष्य, विभिन्न क्षेत्रों के विकास एवं समृद्धि

में भारी अन्तरों को कम करना तथा अर्थव्यवस्था का विशाखन एवं आधुनिकीकरण करना है।

यदि इनमें से एक या दो अथवा सभी लक्ष्यों को प्राप्त करने में हम असफल रहते हैं तो आर्थिक विकास कहना अनुपयुक्त होगा चाहे प्रति व्यक्ति आय दुगुनी ही क्यों न हो।[26]

1.4 संविकास (इकोडेवलपमेन्ट) की अवधारणा

किसी भी क्षेत्र का विकास स्तर मनुष्य और उसके वातावरण के सम्बन्ध पर निर्भर करता है। प्रारम्भिक विचारधारा यह थी कि मानव क्रियाकलाप प्राकृतिक वातावरण द्वारा नियन्त्रित होता है। संसार के विभिन्न भागों में एक समान प्राकृतिक वातावरण में एक प्रकार की मानव अनुक्रिया व विकास होने की आशा की जाती थी। किन्तु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में विकास होने से यह ज्ञात होने लगा कि प्राकृतिक वातावरण द्वारा प्रभावित सीमाओं को पार किया जा सकता है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के हथियार से मानव ने विकास के अनेक द्वार खोल दिये। इस क्रान्तिकारी विकास से पारिस्थितिक तन्त्र असंतुलित नजर आ रही है। पुराणों में कहा गया है कि जब देवताओं एवं असुरों ने तेजी से समुद्र मन्थन किया तो अमृत कुण्ड के साथ विष कलश भी निकला किन्तु दुर्भाग्य यह है कि उस विष कलश को पीने वाले आज कोई 'शंकर' नहीं है, जिसका दुष्प्रभाव अधिकांशतः गरीब जनता को भुगतना पड़ता है।

वातावरण का विनाश सिर्फ आर्थिक विकास के कारण ही नहीं वरन् अत्यधिक निर्धनता का भी प्रतिफल है।[27] भारत में पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में आने वाली समस्यायें गरीबी व विकास के निम्न स्तर से जुड़ी हुयी हैं। हमारी विशाल आबादी और उसमें हो रही निरन्तर वृद्धि तथा विकास गतिविधियों के कारण पर्यावरण को जो क्षति पहुँच रही है, वह इतनी अधिक है कि इसके लिये सीधे आवश्यक उपाय करने की आवश्यकता है। पर्यावरण प्रबन्ध को अब भारत में राष्ट्रीय विकास के लिये मार्ग निर्देशक तत्व के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। यह पता चलने पर कि गरीबी व विकास का निम्न स्तर देश की कई पर्यावरण समस्याओं से जुड़ा हुआ है यह तय किया गया कि इससे निपटने के लिये विकास दर में वृद्धि करना ही सबसे अच्छी नीति रहेगी। यह विकास ऐसा हो जिससे लोगों को विशेष रूप से गरीबों को, उनकी मूल आवश्यकताओं और बढ़ती आकांक्षाओं की पूर्ति कर लाभ पहुँचाया जा सके। लेकिन पर्यावरण समस्याओं की एक और श्रेणी उत्पन्न हो गयी है वे समस्यायें स्वयं

विकास की दिशा में किये जा रहे प्रयासों का अनचाहा परिणाम है। ये नई समस्यायें है, प्राकृतिक संसाधनों का कुप्रबन्ध, वनों का बड़े स्तर पर अंधाधुंध कटाई, कूड़े-कचरे और अवांछित पदार्थों का अनियोजित ढंग से फेंका जाना, विषैले रसायनों का प्रचलन, रिहायशी गतिविधि का विस्तार तथा अंधाधुंध निर्माण कार्य आदि। [28]

उपर्युक्त विवरण से लगता है कि विकास और पर्यावरण सरक्षण एक दूसरे के विरोधी है किन्तु वास्तविक अर्थों में ऐसा नहीं है। यू0एन0ई0पी0 के महासचिव मुस्तफा कमाल तोल्वा के शब्दों में, 'विगत 10-15 वर्षों में वातावरण एवं विकास के अन्तर्सम्बन्ध के प्रति हमारी अवधारणा में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। 1960 के दशक तक सामान्यतया यह माना जाता था कि वातावरण संरक्षण एवं विकास एक दूसरे के प्रतिलोम हैं। यदि विकास करना है तो वातावरण की गुणवत्ता के ह्रास के रूप में उसकी कीमत चुकानी पड़ेगी, अर्थात बिना वातावरण को क्षति पहुँचाये आर्थिक विकास असम्भव है परन्तु अब यह महसूस किया जाने लगा है कि ये दोनों तत्व परस्पर प्रतिलोम नहीं वरन् अन्योन्याश्रित हैं। बिना वातावरण संरक्षण के विकास नहीं हो सकता और बिना विकास के वातावरण संरक्षण नहीं हो सकता।' विकसित देशों में पर्यावरण ह्रास का कारण विकास की देन है तथा अल्पविकसित देशों में इसका कारण गरीबी है। परन्तु विकसित राष्ट्रों में पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने की क्षमता है जबकि अल्पविकसित देश ऐसा करने में अक्षम हैं। अतएव विकास एवं वातावरण संरक्षण एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यही संविकाश की अवधारणा है। संविकास का सामान्य अर्थ है, बिना विनाश किए विकास, इसे संधृत विकास (सस्टेनेबल डेवलपमेन्ट) अथवा ठोस विकास (साउन्ड डेवलपमेन्ट) की संज्ञा दी जाती है। संघृत विकास का उद्देश्य है- मानव समाज की विद्यमान मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति को बिना भावी पीढ़ियों की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता को किसी प्रकार नुकसान पहुँचाये, सुनिश्चित करना। संक्षेप में, संविकास ऐसा विकास है, जो सामाजिक दृष्टि से वांछित, आर्थिक दृष्टि से संतोषप्रद एवं परिस्थितिकी दृष्टि से पुष्ट हो। [29]

1.5 विकास के निर्धारक तत्व

प्राकृतिक पर्यावरण, प्रौद्योगिकी और संस्थायें आर्थिक विकास के तीन आधारभूत प्राचल हैं, जिनके द्वारा विकास की दिशा तथा स्तर निर्धारित होता है।[30] किन्तु विकास की

संकल्पना तथा विकास को निर्धारित करने वाले सूचकों के सम्बन्ध में मतभेद हैं । ये सूचक एक स्थान से दूसरे स्थान, एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति, एक समाज से दूसरे समाज तथा एक समय से दूसरे समय में भिन्न - भिन्न हो सकते हैं । विकास स्तर के निर्धारण से सम्बन्धित एडेलमैन तथा मैरिश [31] ने राजनीतिक तथा सामाजिक विषयों से सम्बन्धित 41 सूचकों का प्रयोग किया है । वर्तमान समय में विकास का मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत तथा सामाजिक प्रस्थिति में निरन्तर वृद्धि करना है । इस वृद्धि को किसी समाज की आवश्यक वस्तुओं के प्रयोग यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार तथा प्रति व्यक्ति आय के स्तर से ज्ञात किया जा सकता है । इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर हैगन [32] ने समाज एवं व्यक्ति के कल्याण से सम्बन्धित 11 सूचकों का प्रयोग विकास के स्तर को निर्धारित करने में किया है । संयुक्त राष्ट्र के सामाजिक विकास शोध संस्थान [33] (यू0एन0आर0आई0एस0डी0) ने 16 सूचकों को विकास के स्तर -निर्धारण में उचित बताया है । बेरी [34] ने 1960 में आर्थिक विकास के विश्लेषण में परिवहन, ऊर्जा का प्रयोग, कृषि उत्पाद, संचार, व्यापार, जनसंख्या तथा सकल राष्ट्रीय उत्पाद को प्रमुख सूचकों के रूप में प्रयुक्त किया है। इसके अतिरिक्त भी अनेक सूचक प्रयुक्त हुए हैं। किन्तु अधिकांश विद्वानों ने सकल राष्ट्रीय उत्पाद, स्वास्थ्य, शिक्षा, नगरीकरण, रोजगार, संचार, परिवहन तथा जनसंख्या की संरचना, औद्योगीकरण आदि सूचकों का प्रयोग किया है ।

1.6 विकास के सिद्धान्त

समाजशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों तथा जीव विज्ञानियों ने विकास से सम्बन्धित अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है । उनमें से भौगोलिक दृष्टिकोण से उपयुक्त कुछ प्रमुख सिद्धान्तों की संक्षिप्त व्याख्या निम्न है ।

मिरडल का क्यूमूलेटिव काजेशन मॉडल

मिरडल महोदय [35] ने 1956 में विकास सम्बन्धी ' क्यूमूलेटिव काजेशन मॉडल' प्रस्तुत किया (चित्र 1.1) जिसके माध्यम से इन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि प्रादेशिक विभेदशीलता आर्थिक विकास का स्वाभाविक प्रतिफल होती है - क्योंकि एक प्रदेश बिना दूसरे को हानि पहुँचाए कभी भी विकास नहीं कर सकता है । इनके मॉडल से स्पष्ट है कि आर्थिक विकास मुख्यतः उन्हीं स्थानों पर केन्द्रित होता है जहाँ कच्चा माल एवं शक्ति के साधनों की

MYRDAL'S PROCESS OF CUMULATIVE CAUSATION
LOCATION OF NEW INDUSTRY
Expansion of local employment and population
Increase in local pool of trained industrial labour
Development of ancilliary industry to supply former with inputs etc
Development of external economies for former's prod uction
Provision of better infrastructure for population and industrial development road factory sites, public utilies, health & education services, etc
Attraction of capital and enterprise to exploit expanding demands for locally produced goods and services
Expansion of service industries and others serving local market
Expansion of general wealth of community
Expansion of local government funds through increased local tax yield
Source R J Chorly and P Haggett, Models in Geography Methuen

Fig. 1.1

उपलब्धि आसानी से होती है । उनके अनुसार किसी स्थान पर एक बार विकास की प्रक्रिया आरम्भ हो जाने पर कार्यों के संचयी प्रभाव, केन्द्राभिमुखी शक्ति एवं गुणक प्रभाव के कारण सतत् बढ़ती जाती है । फलतः बढ़ती हुई औद्योगिक इकाइयाँ द्वितीयक प्रकार की औद्योगिक अवस्थापना को जन्म देती हैं तथा केन्द्रीय प्रदेश का निर्माण होने लगता है । सामाजिक इकाइयाँ इस प्रक्रिया को प्रोत्साहित करती हैं, जिससे स्वयं पोषी आर्थिक वृद्धि होने लगती है । केन्द्रीय प्रदेशों की ओर अपेक्षया निर्धन क्षेत्रों से संसाधनों का आकर्षण बढ़ता जाता है जिसे मिरडल ने ' बैकवाश इफेक्ट ' कहा तथा इसके परिणाम स्वरूप अभिवर्धित केन्द्रीय प्रदेश से फैलने वाले सम्भावित विकास को ' स्प्रैड इफेक्ट ' की संज्ञा दी, जिसके माध्यम से अन्तत सम्पूर्ण प्रदेश का विकास होता है ।

इस प्रकार इन्होंने विकास की तीन अवस्थाओं का निरूपण किया । प्रथम अवस्था को प्रारम्भिक औद्योगिक स्थिति कहा, जब प्रादेशिक असमानताएँ न्यूनतम होती है । द्वितीय अवस्था में संचयी कारक सर्वाधिक प्रभावित होते हैं । जिससे प्रदेश विशेष अन्य प्रदेशों की तुलना में तीव्रगति से विकसित होता है तथा संसाधनों के वितरण में असन्तुलन बढ़ने लगता है । तृतीय अवस्था में निस्तारण प्रभाव के कारण स्थानिक विषमताएँ कम होने लगती हैं ।

मिरडल महोदय के इस मॉडल की आलोचना इसके अत्यधिक गुणात्मकता को लेकर हुई, जिसके कारण यह मॉडल वास्तविकता से परे हो जाता है । इसके बावजूद विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों के अन्तर को स्पष्ट करने में यह मॉडल काफी सक्षम है ।[36]

फ्रीडमैन का केन्द्र - परिधि मॉडल

फ्रीडमैन ने मिरडल के दो प्रदेशों की आर्थिक विषमताओं के स्थान पर स्थानिक रूप से विषमताओं का वर्णन किया है तथा विश्व को गतिशील प्रदेश, द्रुतगति से बढ़ने वाले केन्द्रीय प्रदेश तथा अल्पगति से अग्रसर होने वाले या स्थैतिक प्रदेशों में विभक्त किया है । फ्रीडमैन के अनुसार क्षेत्रीय विस्तार में विकास के स्तर के परिप्रेक्ष्य में 4 संकेन्द्रीय कटिबन्ध देखे जा सकते हैं ।[37]

पहला प्रदेश - जिसकी अवस्थिति केन्द्रीय होती है - को इन्होंने केन्द्रीय प्रदेश कहा है । यह प्रदेश का वह क्षेत्र होता है जहाँ नगरीय औद्योगीकरण, उच्चस्तरीय तकनीक,

विविध संसाधन तथा जटिल आर्थिक संरचना के साथ वृद्धि दर उच्च होती है । इस प्रदेश के परिधीय क्षेत्र में विस्तृत केन्द्रीय प्रदेश से प्रभावित ऊर्ध्वोन्मुख मध्यम् प्रदेश होता है जहाँ संसाधनों का अधिकाधिक उपयोग होता है, जन प्रवास बृहत् पैमाने पर होता है तथा आर्थिक वृद्धि स्थिर होती है । तत्पश्चात् परिधीय विस्तार में संसाधन युक्त सीमान्त प्रदेश होता है, जहाँ नूतन खनिजों के खोज एवं विदोहन हेतु नवीन अधिवासों का विकास होता है तथा उसकी सीमा मे संवृद्धि की संभावनाएं विद्यमान होती हैं । केन्द्रीय प्रदेश से सुदूरतम् प्रदेश को उन्होंने अधोन्मुख प्रदेश कहा है, जहाँ ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुदृढ़ नहीं होती है तथा कृषि उत्पादन न्यूनतम होता है जो प्राथमिक संसाधनों की समाप्ति तथा औद्योगिक संस्थानों की क्षीणता के कारण सम्पन्न होता है। 'क्यूमूलेटिव काजेशन मॉडल' की ही भाँति इस मॉडल का भी प्रयोग आर्थिक एवं क्षेत्रीय विश्लेषण हेतु किया जा सकता है ।

रोस्टोव का आर्थिक वृद्धि की अवस्थाओं का सिद्धान्त

यह सिद्धान्त विशेषत· तकनीकी नवीनताओं को दृष्टिगत रखते हुए किसी प्रदेश में सामयिक आर्थिक वृद्धि का विश्लेषण करता है । रोस्टोव ने किसी क्षेत्र के विकास की निम्न 5 अवस्थाओं का निरूपण किया है । [38]

(क) रूढ़िवादी समाज,

(ख) ऊपर उठने की पूर्व अवस्था,

(ग) ऊपर उठने की अवस्था,

(घ) चर्मोत्कर्ष प्राप्त करने की अवस्था तथा

(ड) अधिकतम उपभोग की अवस्था ।

पहली अवस्था में इन्होंने रूढ़िवादी समाज की कल्पना किया है जिसका प्रधान व्यवसाय निर्वाहन कृषि है तथा संभाव्य संसाधनों की खोज नहीं हो पायी है । कुछ दशकों के बाद ऊपर उठने के पूर्व की अवस्था आती है जबकि आर्थिक वृद्धि तेजी से होती है और व्यापार विस्तृत होता है। वाह्य प्रभाव के कारण परम्परागत तकनीकों के प्रयोग के साथ - साथ नवीन तकनीकों का प्रयोग भी प्रारम्भ हो जाता है । तृतीय अवस्था ऊपर उठने की अवस्था आती है,

THE ROSTOW MODEL OF ECONOMIC DEVELOPMENT
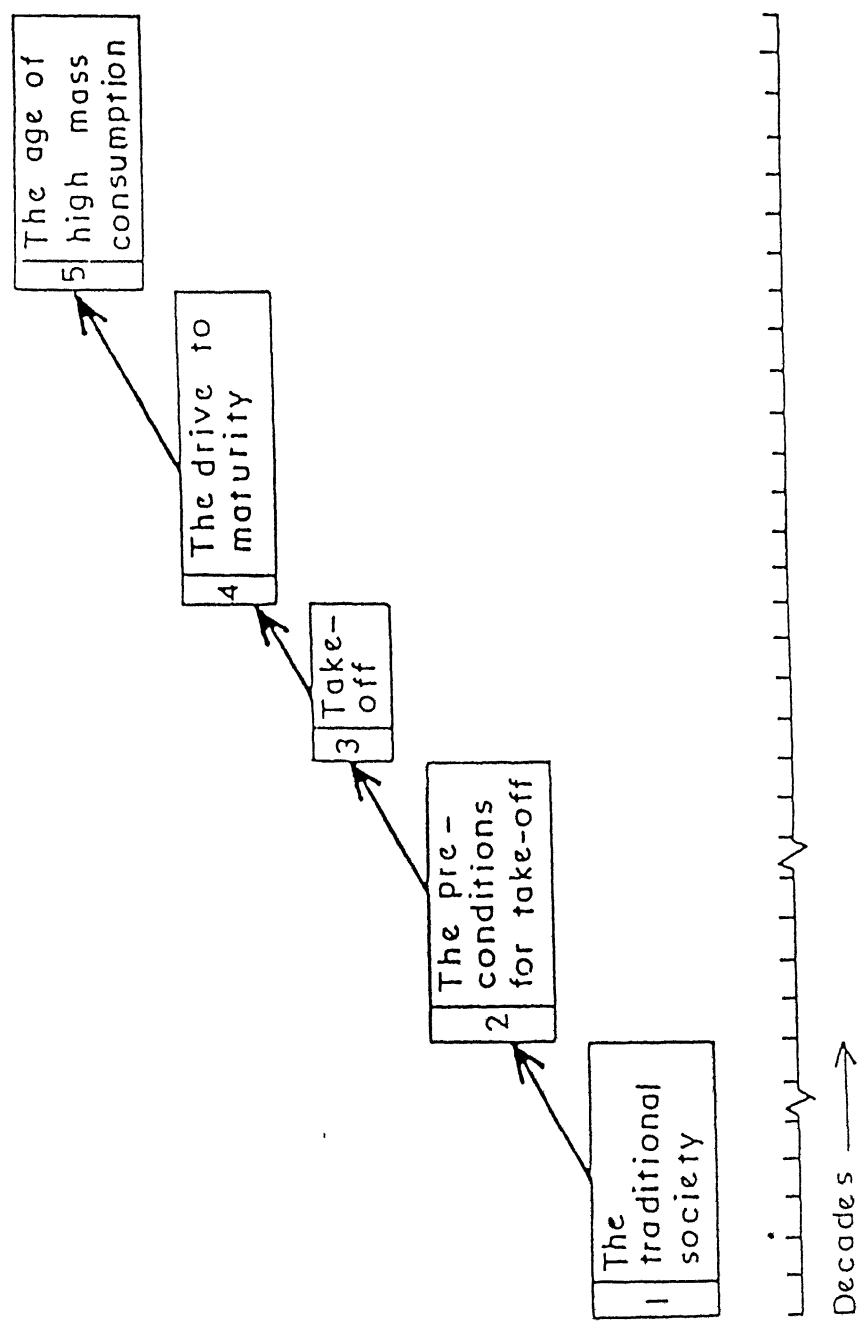
Source R.J Chorley and P. Haggett, Models in Geography, Methuen

Fig. 1.2

जब प्राचीनता का प्रतिस्थापन नवीनता द्वारा हो जाता है तथा आधुनिक प्रौद्योगिकीयुक्त समाज का जन्म होता है, जिससे अनेक औद्योगिक इकाइयों की स्थापना होती है, राजनीतिक एवं सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन होने लगता है तथा स्वयं-पोषी एवं स्वयं-सेवी वृद्धि आरम्भ हो जाती है। चतुर्थ अवस्था में समाज अत्यधिक सुसंगठित हो जाता है तथा पूँजी बढ़ने लगती है । कुछ पुरानी औद्योगिक इकाइयों का समापन नयी औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के कारण होने लगता है। वृहत् नगरीय क्षेत्र विकसित होने लगते हैं तथा यातायात- संचार व्यवस्था अत्यधिक जटिल हो जाता है । चौथी अवस्था का चर्मोत्कर्ष पांचवी अवस्था है । उत्पादकता प्रचुर मात्रा में बढ़ जाती है । तकनीकी व्यवसाय में वृद्धि होने लगती है तथा भौतिकता में वृद्धि के साथ संसाधनों का वितरण सामाजिक कल्याण हेतु होने लगता है ।

इस सिद्धान्त में पूँजी निर्माण की विधि की व्याख्या की गयी है, किन्तु पाँच अवस्थाओं के अन्तर्सम्बन्ध को स्थापित करने वाले तन्त्र की व्याख्या नहीं की गयी है । इसके बावजूद यह साधारण तथा विकसित देशों के विश्लेषण में बहुत अधिक उपयोगी है किन्तु विकासशील देशों के विश्लेषण में यह प्रक्रिया संदिग्ध है । तृतीय विश्व के कई देश प्रथम तीन अवस्थाओं के अन्तर्गत आते हैं ।

विकास-ध्रुव सिद्धान्त

विकास ध्रुव संकल्पना का प्रतिपादन सर्वप्रथम 1955 में पेराउक्स [39] महोदय ने किया । चूँकि पेराउक्स एक अर्थशास्त्री थे इसलिए इन्होनें केवल आर्थिक तत्वों पर ही ध्यान केन्द्रित किया, भौगोलिक तत्वों की ओर इनका ध्यान नहीं गया । इस सिद्धान्त को भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने का श्रेय बोडेविले [40] को है । विकास ध्रुवनीति के अन्तर्गत समस्या वाले क्षेत्र में एक या कई विकास ध्रुव चुन लिए जाते हैं और इन्हीं केन्द्रों पर नयी - नयी सुविधाएं उपलब्ध करायी जाती है । इस सिद्धान्त में यह तर्क दिया जाता है कि सार्वजनिक व्यय अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली होता है । विभिन्न सुविधाओं के पूंजीभूत होने से वहाँ स्वतःस्फूर्त विकास उत्पन्न हो जाता है । केन्द्रित अर्थव्यवस्था से अवस्थापनात्मक कारक यथा सड़कें, शक्ति, जल, स्वास्थ्य सुविधाओं आदि का विकास हो जाता है । विकास ध्रुव सिद्धान्त में दो प्रमुख कठिनाइयाँ उत्पन्न

होती हैं । प्रथम विकास ध्रुवों का चयन कठिन है तथा द्वितीय राजनीतिक दबाव के कारण चयन प्रक्रिया और कठिन हो जाती है । बोदेविले ने इन विकास ध्रुवों की पहचान प्रमुख केन्द्रीय बस्तियों के रूप में किया है जिनमें दूसरे बस्तियों को प्रभावित करने की क्षमता होती है । उनके अनुसार उपलब्ध सुविधाओं की संख्या और क्षेत्रीय आकार में इन केन्द्रों के विभिन्न स्तर होंगे । इसमें सबसे बड़ा केन्द्र क्रमश: अपने छोटे केन्द्र को प्रभावित करेगा तथा अविकसित क्षेत्र इन केन्द्रों से लाभ उठा सकेंगे । फलतः सम्पूर्ण क्षेत्र विकास परिधि में आ जाएगा । विकास की यह प्रक्रिया 'ट्रिकिल डाउन' तथा 'टाप डाउन' के नाम से भी जानी जाती है । विकास ध्रुवों से विकास की ऐसी क्रमबद्ध श्रृंखला बन जाती है जिससे सम्पूर्ण प्रदेश में संतुलित विकास को गति मिलती है। इसके इन्हीं विशेषताओं के कारण नियोजकों में यह सिद्धान्त काफी लोकप्रिय है । विकास ध्रुवों की अवस्थापना में, स्थान का चयन तथा सुविधाओं को उपलब्ध कराने में धन की आवश्यकता, कभी - कभी इस सिद्धान्त के क्रियान्वयन में व्यवधान उत्पन्न कर देते हैं । वास्तव में विकास ध्रुवों की उत्पत्ति का सहसम्बन्ध उस क्षेत्र के माँग व पूर्ति पर निर्भर करता है ।

1.7 नियोजन की संकल्पना

नियोजन और विकास एक दूसरे के पर्याय बन चुके हैं । सामाजिक - आर्थिक विकास के लिए नियोजन का प्रविधि के रूप में इस्तेमाल विश्वव्यापी हो गया है । नियोजन का प्रयोग एवं अर्थ विभिन्न क्षेत्रों, कालों एवं व्यक्तियों के संदर्भ में बदलता रहता है । इसीलिए फलूदी [41] ने नियोजन को बहुआयामी बताया है । उनके अनुसार नियोजन की संकल्पना व्यक्तिनिष्ठ, क्षेत्रनिष्ठ तथा तथ्यनिष्ठ है । जो व्यक्ति, क्षेत्र तथा तथ्य के संदर्भ में बदलती रहती है । फ्रीडमैन [42] के अनुसार नियोजन सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं पर विचार करने का भविष्य पर आधारित एक मार्ग है, जिससे समस्याओं के सामूहिक निर्णय के उद्देश्यों को नीतिगत कार्यक्रमों द्वारा प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है । हिलहोस्ट [43] ने लिखा है कि - नियोजन निर्णय प्राप्त करने की एक प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य किसी क्षेत्र विशेष में व्याप्त अनेक क्रियाओं के मध्य आदर्श समन्वय स्थापित करना है । द्रोर [44] के अनुसार नियोजन ऐसे निर्णयों के निर्माण की प्रक्रिया है जिनको उपलब्ध संसाधनों द्वारा भविष्य में प्राप्त किया जा सकता है । आर० एन० सिंह एवं अवधेश कुमार [45] के मतानुसार नियोजन से तात्पर्य किसी कार्य को सुचारू रूप

से सम्पन्न करने हेतु सुव्यवस्थित पद्धति के निर्माण करने की प्रक्रिया से है । एम0 एच0 कुरैशी [46] के अनुसार नियोजन का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की पहचान करना तथा ऐसी नीतियों का निर्धारण करना है जिससे उन लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके । साध्य एवं साधनों के समन्वय द्वारा आर्थिक समस्याओं के उचित समाधान के लिए प्रयास करना ही इसका मुख्य उद्देश्य है ।

1.8 नियोजन क्यों ?

इस शताब्दी के आरम्भ में ही सर हारकोर्ट बटलर ने कहा था, 'अब हम सब समाजवादी हैं ।' किन्तु इस शताब्दी के अंतिम तीन दशकों में यह कहना कहीं अधिक औचित्यपूर्ण है कि 'अब हम सब योजनाकार हैं ।' निःसन्देह अनेक व्यक्ति ऐसे होंगे जो स्वयं को समाजवादी कहलाना पसन्द नहीं करेंगे किन्तु योजनाकार कहलाने में उन्हें कोई हिचकिचाहट नहीं होगी।

नियोजन भारत के वैज्ञानिक युग की पद्धति - विशेष की समानार्थी हो गयी है । जब भी नियोजन शब्द का प्रयोग किया जाता है, इसका सामान्य अर्थ यही होता है कि नियोजन भविष्य के लिए एक सुनियोजित व्यवस्था है । भविष्य के निर्णय भाग्याधीन परिस्थितियों के भरोसे छोड़ने के बजाय नियोजन की प्रविधि एक सुविचारित प्रयास है जिससे भविष्य का निर्माण करने वाली शक्तियों को समझा जा सकता है और उन्हें इस प्रकार ढाला जा सकता है जिससे कि भविष्य के लिए व्यवस्था इस प्रकार की जाए जो हमारे अपने लक्ष्यों और इच्छाओं के अधिक अनुकूल हों । नियोजन से हम अपने वातावरण के प्रति असहाय आत्मसमर्पण करने की बजाय अपनी इच्छा शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं । इस अर्थ में नियोजन विवेक की अन्धविश्वास पर, ज्ञान की अज्ञान पर और भाग्यवादी असहाय दशा पर सुव्यवस्थित पहल की सफलता की प्रतीक है । आधुनिक टेक्नालॉजी और संगठन से मनुष्य की अपने जीवन को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों को समझने और उन्हें ढालने की क्षमता में काफी वृद्धि हुई है, इसी कारण नियोजन टेक्नालॉजी और संगठन की दासी है ।

अतः आज के प्रत्येक आधुनिक मानव या संस्थान या संगठन से यह अपेक्षा ठीक ही की जाती है कि वह अपने भविष्य के लिए नियोजन करे । इसका अर्थ यह है कि नियोजन आधुनिक समाज और अर्थ-व्यवस्था का एक विशिष्ट अंग बन गयी है । अत·

वर्तमान में नियोजन सुसंगठित सामाजिक कार्यों का एक अभिन्न अंग बन गयी है, उसे देखते हुए समाज को आधुनिक और प्रगतिशील कहा जा सकता है । जान कैनेथ गालब्रेथ ने अपनी पुस्तक 'दी न्यू इन्डस्ट्रियल स्टेट' में एक नए औद्योगिक समाज में नियोजन के महत्व की ओर ध्यान आकर्षित किया है । आधुनिक टेक्नालॉजी में वस्तुओं के उत्पादन में नवीनता लाने के लिए धन और साधनों की बहुल मात्रा में और लगातार आवश्यकता रहती है । केवल उत्पादन में ही नहीं बल्कि विपणन में भी, अति सतर्क और विस्तृत अनुसंधान व नियोजन के बिना काम नहीं चल सकता । बौचेट के शब्दों में, 'नई आवश्यकताओं के जन्म लेने से पहले उनको पूरा करने के साधनों पर विचार किया जाना चाहिए और इस दिशा में अनुसंधान कार्यक्रम आरम्भ करना चाहिए । सभी पश्चिमी देश ऊर्जा के क्षेत्र में अपने पूर्व - अनुमान और कार्यक्रम बीस वर्ष पहले बनाते हैं । ऊर्जा की आपूर्ति की सामान्य दरें पन्द्रह वर्ष से भी पहले लगाई गई पूँजी पर निर्भर करती है । पूँजी निवेश के यह मानक परिमाण लोहा और स्टील उद्योग, रासायनिक उद्योग तथा अन्य तेजी से विकसित हो रही शाखाओं पर भी लागू होते हैं । इन सभी उद्योगों में उत्पादन आरम्भ होने की अनुमानित तिथि से पहले ही अधिक धन की आवश्यकता होती है ।'

आधुनिक प्रबन्धन की तकनीक - एक उद्यमी की सफलता के लिए नियोजन एक पारपत्र (पासपोर्ट) बन गया है । आधुनिक प्रबन्धन में यह एक प्रथम और महत्वपूर्ण तकनीक है । नियोजन का अभाव तैयारी का अभाव है, अतः यह असफलता का मार्ग है। विकास के अन्योन्याश्रय के कारण पूर्वानुमान अर्थ-व्यवस्था के किसी एक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं होता है वरन् उसे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किया जाता है । फिर भी अर्थशास्त्री नियोजन शब्द का प्रयोग इस अर्थ में नहीं करते हैं । भविष्य के लिए सुव्यवस्थित व्यवस्था की, नियोजन के अर्थ में कोई विवाद नहीं है । दूसरी ओर, पहले भी और आज भी अर्थशास्त्रियों सामाजिक विचारकों और नीति - निर्धारकों द्वारा नियोजन का जो अर्थ लिया गया है, वह एक विवादास्पद विषय रहा है । उस विशेष अर्थ में नियोजन से तात्पर्य है किसी व्यक्ति या निजी संस्थान द्वारा की गयी नियोजन का स्थान राज्य द्वारा की गयी नियोजन द्वारा लिया जाना है । इस प्रकार नियोजन का तात्पर्य उस अर्थ - व्यवस्था से है जो मुक्त नीति का विकल्प है ।

राज्य द्वारा नियोजन का उद्देश्य है, व्यक्तियों या निजी संस्थानों, उपभोक्ताओं, उत्पादकों और कार्यकर्ताओं द्वारा लिए गए निर्णयों पर इस प्रकार प्रभाव डालना जिससे कि वे सब राष्ट्र के योजनाकारों द्वारा पूर्व निर्धारित प्राथमिकताओं या लक्ष्यों के अनुकूल हो सके। इस विशिष्ट अर्थ में नियोजन विभिन्न विचार - धाराओं, विभिन्न वादों और विभिन्न राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक पद्धतियों के अर्थशास्त्रियों सामाजिक विचारकों और दलों के बीच, वाद -विवाद का विषय बन गया है ।

मानव कल्याण हेतु गरीबी को समाप्त करना - अन्तिम रूप से विश्व के प्रगतिशील देशों में नियोजन गरीबी के दुष्चक्र को तोड़ने और जितना शीघ्र सम्भव हो सके, आर्थिक विकास तथा सामाजिक परिवर्तन लाने की एक प्रविधि है । अत: नियोजन की संकल्पना और मूलाधार उस विचारधारा पर निर्भर करेगा जिस पर चर्चा की जा रही हो । नियोजन की इन विभिन्न संकल्पनाओं में नियोजन के बारे में सामान्य धारणा, जैसा कि ऊपर कहा गया है, भविष्य के लिए सुनियोजित व्यवस्था से है ।

नियोजन में यद्यपि अनेक प्रकार के व्यक्ति विश्वास रखते हैं, चाहे वह विभिन्न अर्थो में हो, फिर भी विचारकों का एक दल ऐसा भी है, जो नियोजन में बिल्कुल विश्वास नहीं रखता है, वे सोचते हैं कि नियोजन के माध्यम से अर्थव्यवस्था का प्रबन्धन असम्भव है, व्यवहार्य नहीं है और वह निश्चित रूप से असफल रहता है । इनमें ल्यूडबिग, बान माइसिज और फॉदर बॉन हैक आते हैं । प्रत्येक आर्थिक प्रणाली के पास मूलभूत आर्थिक प्रश्नों के उत्तर होने चाहिए । ये प्रश्न हैं - किस वस्तु का उत्पादन करना है, कितना उत्पादन करना है, किसके लिए उत्पादन करना है, किस प्रकार उत्पादन करना है, उत्पादन कब करना है, उत्पादन कहाँ और क्यों करना है, अन्तिम प्रश्न सम्भवत: सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आर्थिक अभिकरण की मूलभूत समस्या से सम्बद्ध है ।

1.9 योजना प्रक्रिया के विभिन्न चरण

परम्परागत नियोजन प्रक्रिया के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित चरण आवश्यक हैं -

1. वर्तमान परिस्थितियों का विश्लेषण - इस चरण के अन्तर्गत वर्तमान दर्जे का आँकलन करना, उसकी समस्याओं का पता लगाना और विकास के लिए उपलब्ध अवसरों

का पता लगाना शामिल है । इसमें वर्तमान साधनों के परिमाण का पता लगाना भी समाहित है ।

2. उद्देश्य और लक्ष्य निर्धारण - लक्ष्यों का निर्धारण मोटे तौर पर समाज की समस्याओं और अवसरों पर तथा साधनों की वर्तमान एवं भावी स्थिति पर निर्भर करता है । फिर भी लक्ष्य निर्धारण का अर्थ है यह तय करना कि कौन से उद्देश्य पूरे करने हैं ।

3. नीति और नीति निर्माण - इस चरण में मुख्य रूप से साधनों के विश्लेषण के परिणामों का प्रयोग होता है और इसका निर्धारण योजना के भौतिक लक्ष्यों और उद्देश्यों पर निर्भर करता है । वैसे उद्देश्य व लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कई नीतियाँ बनायी जा सकती हैं, परन्तु महत्वपूर्ण बात यह है कि लोगों की क्षमता और अवसरों की तुलना की जाए और यह आंका जाए कि क्या निर्धारित उद्देश्य और लक्ष्य प्राप्त किये जा सकेंगे ।

4. कार्यक्रम और परियोजनाओं का पता लगाना - इस चरण में उन कार्यक्रम और परियोजनाओं का पता लगाया जाता है, जो योजना के उद्देश्यों और लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण है ।

5. साधन - आवश्यकता - आंकलन - इसमें चुने हुए कार्यक्रमों और योजनाओं की लागत का अनुमान लगाया जाता है और योजना में तय की गयी परियोजनाओं के क्रियान्वयन के लिए धन जुटाने के साधनों का पता लगाया जाता है ।

6. चरणबद्धता और क्रियान्वयन - इस चरण में परियोजना के क्रियान्वयन का कार्यक्रम तय किया जाता है तथा इसके लिए प्रशासनिक दायित्व निर्धारित किया जाता है । इसमें परियोजना क्रियान्वयन के लिए समन्वय कार्य भी बनाया जाता है । इसके लिए परियोजना से सम्बद्ध विभिन्न मंत्रालयों की भूमिका को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया जाता है ।

7. निगरानी और आंकलन - इस चरण के अन्तर्गत योजनावधि में चलाए जाने वाले कार्यक्रमों और परियोजना की प्रगति पर बराबर निगाह रखना शामिल है । परियोजनाओं और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की निगरानी करना बहुत महत्वपूर्ण है ।

मूल्यांकन या आंकलन का अर्थ है योजना के उद्देश्यों और लक्ष्यों की उपलब्धि का विश्लेषण योजना के विभिन्न चरणों में आंकलन किया जाता है, यथा मध्यावधि मूल्यांकन, अंतिम मूल्यांकन आदि । इससे क्रियान्वयन की अवधि में आने वाली कठिनाइयों का पता चलता है और सफलता या असफलता के कारणों को भी जाना जा सकता है । अंतिम आंकलन में तो भावी योजनाओं के लिए दिशा निर्देश भी प्राप्त हो सकते हैं ।

1.10 नियोजन का स्वरूप

नियोजन का स्वरूप बहु-आयामी है, इसकी विशेषताओं एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, कई वर्गों में विभक्त किया जा सकता है । पश्चिमी देशों में बाजार अर्थव्यवस्था से जुड़ी हुई नियोजन पद्धति प्रचलित है, पूर्वी यूरोपीय देशों में समाजवादी अर्थव्यवस्था पर आधारित नियोजन पद्धति प्रचलित थी तथा भारत जैसे अनेक विकासशील देशों में मिश्रित अर्थव्यवस्था की नियोजन प्रणाली प्रचलित है । प्रो० आर० पी० मिश्र [47] ने अवधि के आधार पर अल्पकालिक, दीर्घकालिक तथा परिप्रेक्ष्य नियोजन, कार्यक्रम अन्तर्वस्तु के आधार पर आर्थिक नियोजन एवं विकास नियोजन, संगठनात्मक दृष्टि से आदेशात्मक एवं निर्देशात्मक नियोजन, नियोजन प्रक्रिया की दृष्टि से मानकीय नियोजन एवं पद्धतिशील नियोजन, तत्वों के आधार पर प्रखण्डगत् तथा स्थानिक नियोजन, तथा नियोजन के स्तर के आधार पर एकल स्तरीय नियोजन एवं बहुस्तरीय नियोजन के रूप में विभाजित करने का प्रयास किया है । लेकिन नियोजन की प्रणालियां अन्य अनेक प्रकार से भी वर्गीकृत की गयी हैं, जैसे व्यापक नियोजन अथवा आंशिक नियोजन, आवश्यकताजनित अथवा प्रेरित नियोजन, अधिनायकवादी अथवा लोकतांत्रिक नियोजन, क्षेत्रीय या स्थानिक योजना, भौतिक अथवा वित्तीय योजना, परिप्रेक्ष्य अथवा दीर्घावधि योजना, अल्प अवधि अथवा वार्षिक नियोजन ।

1.11 विकास नियोजन

कई पूर्व निर्धारित और सुनिश्चित सामाजिक एवं आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किसी सार्वजनिक सत्ता द्वारा सोच समझकर बनाए जाने वाले आर्थिक कार्यक्रम को ही विकास नियोजन कहते हैं । प्रो० वाटरसन ने नियोजन की परिभाषा इस प्रकार की है - 'यह विशेष लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उपलब्ध विकल्पों के चयन का चेष्टापूर्वक और निरन्तर प्रयास है । इसमें दुर्लभ और कम उपलब्ध साधनों को कम लागत पर उपलब्ध करना

भी शामिल है । विभिन्न समाजों ने विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न तरीकों से इस्तेमाल किया है । यह समाजवादी हल तक सीमित नहीं है । यह लोकतान्त्रिक और पूँजीवादी देशों के लिए इस्तेमाल हो सकता है और वहाँ इस्तेमाल होता भी है ।'

नियोजन आर्थिक विकास का एक उपयुक्त साधन है । आर्थिक विकास लक्ष्य है तथा नियोजन एक मार्ग । नियोजन का तात्पर्य उस व्यवस्था से है, जो भविष्य में आने वाली समस्या के समाधान के लिए की जाती है । असीमित आवश्यकताएँ और सीमित साधन, नियोजन को आवश्यक बना देती हैं । इसमें साधनों का विवेकपूर्ण आवंटन प्राथमिकता के निर्धारण के आधार पर किया जाता है । व्यक्ति द्वारा नियोजन व्यष्टिवादी तथा सरकार द्वारा नियोजन समष्टिवादी होता है ।

कुछ निश्चित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए अर्थव्यवस्था में उपलब्ध साधनों का पूर्ण ज्ञान तथा प्रभावपूर्ण उपभोग के लिए सुव्यवस्थित एवं नियन्त्रित कार्यक्रम होना चाहिए।

नियोजन का मुख्य उद्देश्य देश के प्राकृतिक और जनशक्ति साधनों का उपयुक्त ढंग से उपयोग करके तेजी से आर्थिक विकास करना है । इस समय विश्व के लगभग सभी विकासशील देश तीन गम्भीर समस्याओं का सामना कर रहे हैं, वे हैं - गरीबी, असमानता और बेरोजगारी । भारत सहित अनेक विकासशील देश इन समस्याओं से निपटने के लिए नियोजन अपना रहे हैं ।

विकास नियोजन के आवश्यक पहलू निम्न है -

1. विकास प्राथमिकताओं के सावधानीपूर्वक चयन द्वारा साधनों का न्यायसंगत आवंटन,

2. अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं पर आधारित पूर्व निर्धारित लक्ष्य,

3. नियोजन का दायित्व और विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में समन्वय के लिए केन्द्रीय प्राधिकरण,

4. लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त विकास नीति का चयन,

5. योजना लागू करने के लिए आवश्यक साधनों को जुटाना और उन्हें प्रयोग करना ।

6. पूर्ण क्रियान्वयन और

7. निश्चित अवधि

भारतीय योजना आयोग के अनुसार नियोजित विकास के निम्न 5 उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं : -

1. राष्ट्रीय आय में अधिकतम वृद्धि
2. तीव्र औद्योगीकरण एवं आधारभूत उद्योगों की स्थापना
3. रोजगार के अवसरों में अधिकतम वृद्धि,
4. आय की असमानताओं को कम करना, तथा
5. समावादी राज्य की स्थापना

इसके अतिरिक्त विभिन्न आर्थिक योजनाओं के अन्तर्गत नियोजन के भिन्न-भिन्न उद्देश्य थे। सामान्यतः नियोजन को विकास का पर्याय माना जाता है। नियोजन-'सभी वस्तुएं सभी के लिए'[48] का उद्देश्य तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक एवं संस्थानात्मक परिवर्तन न किये जाय। विकास की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए विद्वानों ने अल्पावधि तथा प्रखण्डगत नियोजन को आर्थिक नियोजन कहा है जबकि समाज एवं अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक एवं संस्थानात्मक परिवर्तन से सम्बन्धित नियोजन को विकास-नियोजन कहा है। [49] आर्थिक नियोजन विकसित राष्ट्रों की ऐसी अर्थव्यवस्था के लिये होता है, जहाँ पर अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक स्थिति सुदृढ़ हो चुकी है तथा उस स्थिति को बनाए रखने की समस्या है। विकास नियोजन तृतीय विश्व के अल्पविकसित राष्ट्रों के लिए आवश्यक है जहाँ प्रति व्यक्ति उत्पादन एवं आय कम है, औद्योगिक विकास नहीं हुआ है तथा जीवन स्तर अति निम्न है। [50]

1.12 सूक्ष्म स्तरीय नियोजन

हाल के वर्षों में सकल राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि के लिए सकल नियोजन पर जोर देने की बजाए विशेष क्षेत्रों के लिये सूक्ष्म स्तरीय नियोजन पर बल दिया जाने लगा है। इसे विकेन्द्रित नियोजन या एकदम निचले स्तर से नियोजन भी कहा जाता है और इसका आशय होता है जिला, विकास खण्ड और गाँव जैसे क्षेत्रों के लिए योजना बनाना। इसमें और राष्ट्रीय नियोजन में यहीं अन्तर है कि सूक्ष्म स्तर की योजना में स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं

को ध्यान में रखा जाता है जबकि राष्ट्रीय क्षेत्रीय नियोजन राष्ट्रीय उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है । राष्ट्रीय और क्षेत्रीय नियोजन के स्थानीय लोगों की जरूरतें पूरी करने में असफल सिद्ध हो जाने के बाद ही सूक्ष्म स्तर की योजनाएं बनाना शुरू किया गया । इसमें अपेक्षाकृत छोटे क्षेत्र के लिये योजना बनायी जाती है जिससे राष्ट्रीय और क्षेत्रीय नियोजन की कमियाँ नहीं रह पाती।

सूक्ष्म स्तरीय आयोजन देश के विकास प्रयासों में एक नया आयाम है और इसे निचले स्तरसे विकास की नीति भी कहा जा सकता है। इसीलिए विकास की नीति के रूप में स्थानीय स्तर के आयोजन में स्थानीय समस्याएं हल करने, स्थानीय साधन जुटाने और योजना बनाने और लागू करने की प्रक्रिया में लोगों को सम्मिलित करने के प्रयास किए जाते हैं। इसमें उन मानकीकृत चरणों और प्रक्रियाओं को नहीं अपनाया जाता जो वृहद् स्तरीय आयोजन में अपनायी जाती है ।

(अ) सूक्ष्म स्तरीय नियोजन से लाभ

1. सूक्ष्म स्तरीय नियोजन का एक बड़ा लाभ तो यह है कि योजनाकारों और साधारणजनों के बीच निकट का सम्पर्क स्थापित होता है। इसी कारण सूक्ष्म स्तर के नियोजन में मानवीय पहलू और जन साधारण की जरूरतों पर अधिक ध्यान रहता है। इसलिए जहाँ वृहद् स्तर की योजना बनाने वालों का ध्यान शायद सकल राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ाने पर रहता है, वहीं स्थानीय स्तर के योजनाकारों का ध्यान गरीबी, बेरोजगारी, कुपोषण आवास आदि स्थानीय समस्याओं पर होता है जो स्थानीय लोगों के लिये अधिक आवश्यक और वास्तविक होती है। राष्ट्रीय आयोजक तो जनसाधारण को प्रतिशत भर बनाकर छोड़ देते हैं, उसे मनुष्य समझकर नहीं चलते ।

2. सूक्ष्म स्तर का नियोजन कुल नियोजन से अधिक प्रभावी इसलिए भी होगा क्योंकि यह अपेक्षाकृत छोटे समूह के लिए रहता है जिससे समूचे देश के संदर्भ में विधिता बहुत कम होती है ।

3. सूक्ष्म स्तर का नियोजन एक समूह-क्षेत्र की ज्ञात आवश्यकताओं पर आधारित होता है, जबकि वृहद् स्तरीय नियोजन में बहुधा स्थानीय आवश्यकताओं की अनदेखी हो जाती है। क्योंकि वहाँ राष्ट्रीय लक्ष्य महत्वपूर्ण होते हैं ।

4. चूंकि सूक्ष्म स्तरीय आयोजन नीचे से शुरू होता है अत· इसमें लोगो को शामिल करने और क्रियान्वयन में उनका सहयोग प्राप्त करने के अधिक अवसर रहते है।

5. माइक्रो स्तरीय नियोजन में संतुलित क्षेत्रीय विकास को बढावा मिलता है जिससे आय और रोजगार के वितरण मे क्षेत्रीय असमानताए दूर करने में मदद मिलती है ।

6. आजकल अन्तर-क्षेत्रीय और अन्तर-सामूहिक आर्थिक असमानताएं समाप्त करने के उद्‌देश्य से स्थान-विशेष और समूह विशेष के लिए विकास कार्यक्रमों की माँग बढ़ रही है और इनके लिए सूक्ष्म स्तर की योजना ही सार्थक सिद्ध हो सकती है।

(ब) भारत में सूक्ष्म स्तरीय नियोजन

संतुलित बहुमुखी विकास सुनिश्चित करने के तन्त्र के रूप में सूक्ष्म नियोजन का महत्व देश मे योजना-प्रक्रिया के आरम्भ होने के समय से ही स्वीकार कर लिया गया था। निरन्तर हर योजना मे इसे अपनाने की वकालत भी की जा रही है। पहली पचवर्षीय योजना मे भी राज्य की योजना के अन्तर्गत ही जिला स्तर पर सूक्ष्म स्तरीय योजना बनाने के महत्व पर जोर दिया गया था। इसे दूसरी पंचवर्षीय योजना में भी जारी रखा गया और जिला स्तर पर चलायी जाने वाली कुछ गतिविधियों की योजना बनाई गयी। तीसरी योजना में माइक्रो स्तरीय आयोजन के महत्व पर बल दिया गया और राज्यों को सुझाव दिया गया कि वे विकास खण्ड और जिले को विकास की इकाई मानकर योजनाए बनाएं ।

इन सब प्रयासों के बावजूद चौथी पंचवर्षीय योजना में यह अनुभव किया गया कि सूक्ष्म स्तरीय नियोजन आरम्भ नहीं हो पाया है और राज्य स्तरीय योजना बनाने की परम्परागत प्रक्रिया मे राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों की विविध परिस्थितियों और समस्याओं पर ध्यान देना संभव नहीं हो पा रहा है ।

इसलिए विभिन्न क्षेत्रो, समुदायों और परिस्थितियों की आकांक्षाओं तथा आवश्यकताओं पर अधिक ध्यान देना आवश्यक समझा गया तथा वर्तमान साधन क्षमता का अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के उद्‌देश्य से उपयुक्त उपायों का पता लगाया गया। अत· फिर कहा गया कि जिला स्तर पर माइक्रो स्तरीय योजना बनाई जाए क्योंकि इस स्तर पर ऐसे अधिकारी उपलब्ध

हो सकते थे जो स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप योजना बना सकते थे, इन्हे स्थानीय परिस्थितियों की पूरी-पूरी जानकारी थी। परन्तु इस बात पर भी बल दिया गया की जिलों की योजनाएं बनाते समय राष्ट्रीय और राज्य स्तर की प्राथमिकताओ को भी ध्यान मे रखा जाए और जहाँ जरूरी हो वहाँ क्षेत्रीय, उपक्षेत्रीय, खंड और बाजार स्तर की योजनाए भी बनाई जाए।

सूक्ष्म स्तरीय नियोजन के लिए योजना आयोग ने पहल की और दिशा निर्देश निर्धारित किए। उन योजनाओं की सूची तैयार की गयी जिन्हें जिला स्तर पर चलाया जा सकता था। इसके लिए योजना आयोग के दिशानिर्देश सुझावों के रूप में थे और राज्य सरकारों को अपनी आवश्यकतानुसार उनमें परिवर्तन करने की स्वतन्त्रता थी। अधिकांश राज्य इस सदर्भ मे विवरण नही एकत्रित कर पाए और फलस्वरूप सूक्ष्म स्तरीय नियोजन लागू नही किया जा सका इसलिए योजनातन्त्र को, विशेषकर राज्य स्तर पर, मजबूत करना जरूरी हो गया। इसे देखते हुए योजना आयोग ने राज्यों के योजना विभागों को योग्य और कुशल तकनीकी कार्यकर्ता उपलब्ध कराया ।

पांचवी पंचवर्षीय योजना के आरम्भ से ही गरीबी बेरोजगारी और सामाजिक असमानता की समस्याओं पर अधिक ध्यान दिया गया और ये योजना प्रक्रिया का मुख्य केन्द्र बिन्दु भी बन गई। इन परिस्थितियों से निपटने के लिए योजना तन्त्र और निर्णय प्रक्रिया को इस स्तर पर लाना जरूरी समझा गया जहाँ लोगों की समस्याओं का पता लगाकर सक्रिय सामुदायिक सहयोग से इन्हें हल करने के प्रयास किए जा सके ।

स्थिति की माँग को देखते हुए क्षेत्रीय विकास के कई विशेष कार्यक्रम आरम्भ किए गए और उनके क्रियान्वयन के लिए विशेषज्ञ एजेंसियां गठित की गयी। इनके साथ ही गरीबी रोकने और क्षेत्र आधारित कार्यक्रमों को लागू करने, बुनियादी न्यूनतम जरूरतें पूरी करने और रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के लिए योजना प्रयासों के विकेन्द्रीकरण की जरूरत महसूस की गयी। इसलिए इस स्तर पर खण्ड स्तरीय आयोजन को ग्रामीण क्षेत्रों का विकास तेज करने का माध्यम समझा गया क्योंकि इसमें रोजगार के और आय जुटाने के स्थानीय साधनो का अधिकतम उपयोग किया जा सकता था और साथ ही स्थानीय समस्याएं हल करने पर ध्यान दिया जा सकता था। यह विश्वास था कि विकासखण्ड अपने छोटे क्षेत्रीय आकार और कम जनसंख्या के कारण योजनाएं और कार्यक्रम बनाने और उन्हें लागू करने में एक आदर्श इकाई बन सकता था।

इससे पहले राज्य स्तर पर नियोजन प्रणाली को प्रभावी बनाने के लिए योजना आयोग ने एक योजना का निर्माण किया [51] किन्तु जिला सतर पर नियोजन के निर्देश इससे भी पहले 1969 में दिए जा चुके थे। [52] 1978 से 1983 की अवधि में विकास खण्ड स्तर पर नियोजन का विकास किया गया, जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विकास कार्य-क्रम को स्थानीय ससाधनों के बेहतर उपयोग द्वारा सुदृढ़ बनाना था। [53] नवम्बर 1977 को 'विकास खण्ड स्तर पर नियोजन' हेतु गठित 'दातावाला कमेटी' ने निम्न सुझाव दिया[54] -

1. कृषि एवं सम्बन्धित क्रियायें
2. गौण सिंचाई
3. मृदा सरक्षण एवं जल-प्रबन्ध
4. पशुपालन एवं मुर्गी पालन
5. मत्स्य पालन
6. वानिकी
7. कृषि उत्पादों का प्रक्रमण
8. कृषि उत्पादन मे साधनों की पूर्ति
9. कुटीर एवं लघु उद्योग
10. स्थानीय सुविधा आधार
11. सार्वजनिक सुविधाएं यथा
    - पेय जल आपूर्ति
    - स्वास्थ्य तथा पोषण
    - शिक्षा
    - आवास
    - सफाई
    - स्थानीय परिवहन
    - जनकल्याण कार्यक्रम
12. स्थानीय युवकों को प्रशिक्षण तथा स्थानीय जनसख्या के कोशल में वृद्धि

यद्यपि खण्ड स्तरीय योजना मूलरूप से व्यापक योजना थी जिसे स्थानीय साधनों के आकलन के आधार पर बनाया जाना था फिर भी यह रोजगार जुटाने के लिए चलाई गई योजनाओं

और लाभकर्ताओं तक ही सीमित रह गई सीमित खण्ड योजना बनाने का कारण था, खण्ड स्तर पर कुशल तकनीकी कार्यकर्ताओं का अभाव, माइक्रो योजनाओं के लिए योग्य एव कुशल कर्मचारियों की नितान्त कमी को देखते हुए निर्णय लिया गया कि विकास खण्ड स्तर पर योजनाएं बनाने के लिए जिला - स्तर पर नियोजन एकक बनायी जाय ।

छठीं पंचवर्षीय योजना के शुरू मे की गई समीक्षाओं से पता चला कि सूक्ष्म-स्तरीय नियोजन के लिए समताएं बहुत ही कम थी। अत सही प्रक्रियाओं और उपयुक्त ढाँचे की खोज होनी चाहिए थी। इस दिशा में जिला नियोजन संबधी कार्यदल ने 1982 मे एक धीमी पहल अपनाने की वकालत की । इसके बाद योजना आयोग ने जिला स्तर पर वित्तीय और प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण लागू करने के उपाय प्रारम्भ किए । इसकी प्रतिक्रिया मे कई राज्यो ने राज्य योजनाओं के विभाज्य प्रावधानो को जिले के लिए हस्तान्तरिक कर दिया और प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण के उपाय लागू कर दिए । जिला स्तर पर नियोजन तन्त्र को मजबूत बनाने की केन्द्रीय योजना भी शुरू की गई और चुने हुए अधिकारियों को जिला और विकास खण्ड नियोजन का प्रशिक्षण दिया गया।

इन सबके बावजूद सातवीं पंचवर्षीय योजना में नियोजन के विकेन्द्रीकरण के लिए समुचित तन्त्र उपलब्ध नहीं हो सका और प्रशासन बराबर कमजोर बना रहा जबकि ग्रामीण विकास के अनेक नए कार्यक्रम शुरू होने की वजह से ग्रामीण क्षेत्रों मे चल रहे अन्य विभागीय कार्यक्रमों के साथ उनका सामंजस्य स्थापित करना भी जरूरी हो गया था ताकि जिला और विकास खण्ड स्तर के नियोजन के लिए प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण लागू हो सके। इसलिए सातवी योजना में सूक्ष्म स्तरीय नियोजन को बढावा देने के कई उपाय अपनाए गए। सूक्ष्म स्तरीय नियोजन के लिए विभिन्न समूहों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की जा रही है।

1.13 स्थानवद्ध नियोजन

स्थानवद्ध नियोजन की रचना, क्षेत्र विकास की धारणा पर आधारित होती है। प्राकृतिक और आर्थिक पहलू किसी क्षेत्र को लाभप्रद स्वरूप प्रदान करते है और उसी के कारण वहाँ पर आर्थिक कार्यकलाप विकसित होता है। इस प्रकार योजनाकारों ने महानगरीय क्षेत्रो, नदी-घाटी क्षेत्रों और औद्योगीकरण क्षेत्रों, भौगोलिक समूहों, उत्खनन क्षेत्रो, जल-सग्रह क्षेत्रों, बाढ़ नियन्त्रण आदि क्षेत्रों को अलग-अलग बताया है। कतिपय सजातीय व्यवस्थाएं यथा जल मृदा-प्रकार परिवहन व्यवस्थाएं आदि ऐसे क्षेत्रों को क्षेत्रीय आधार पर आर्थिक नियोजन तैयार करने

के लिए उपयुक्त इकाइयां बना देती हैं।

यह आवश्यक नहीं है कि ऐसे क्षेत्रों की सीमाएं प्रशासनिक सीमाओं के अनुरूप हों, नदी क्षेत्र अथवा मिट्टी की किस्मों की कोई कृत्रिम सीमाएं नहीं होती हैं। अतः एक नयी धारणा बन रही है कि वर्तमान प्रशासनिक सीमाओं से मिले-जुले क्षेत्रों के लिए स्थानबद्ध योजनाएं बनाने की अपेक्षा नियोजन के क्षेत्र निर्धारित कर दिए जांय और उनके लिए क्षेत्र योजनाएं तैयार की जाय । ऐसे नियोजन क्षेत्रों की कुछ विशेषताएं भी हैं। ये आर्थिक कार्यकलाप के प्रसार केन्द्र बन जाते हैं। कभी-कभी इन्हें विकास केन्द्र अथवा केन्द्रीय क्षेत्रों की भी सज्ञा दी जाती है।

क्षेत्रीय विज्ञान के अध्ययन के पता चलता है कि विकास का केवल एक ही बिन्दु नहीं होता, इसकी पूरी श्रृंखला होती है। विकास बिन्दुओ की श्रृखला मे सबसे नीचे एक समूह की तरह जुड़े कतिपय गाँव और समुदाय होते है। उसके बाद दूसरे केन्द्रीय स्थानों का समूह एक ऊँचे स्तर के विकास केन्द्र के इर्द-गिर्द एक तारामण्डल का रूप ले लेता है। क्षेत्रीय योजना अथवा स्थानबद्ध योजना में किसी सम्पूर्ण क्षेत्र के आर्थिक कार्यकलापों के लक्ष्यों की चर्चा करने के अतिरिक्त उन आर्थिक गतिविधियों को व्यक्त करना चाहिए जो विकास केन्द्रो की श्रृंखला और उनसे प्रभावित होने वाले क्षेत्रों से जुड़ी हों। इसी से नियोजन को स्थिति सम्बन्धी दिशा मिलती है और उनके क्रियान्वयन में वास्तविकता की प्राप्ति होती है ।

1.14 पिछड़ी अर्थव्यवस्था की संकल्पना

पिछड़ी अर्थव्यवस्था की उपयुक्त परिभाषा देना कठिन है। फिर भी इसे दरिद्रता, अज्ञानता अथवा रोग की स्थिति द्वारा; राष्ट्रीय आय के कुवितरण द्वारा; प्रशासनिक अक्षमता द्वारा तथा सामाजिक विघटन द्वारा परिभाषित करने का प्रयास किया गया है।[55] पिछड़े (बैकवर्ड) और दरिद्र (पुअर) शब्द अल्पविकसित के पर्यायवाची मानकर भी प्रयोग किए जाते हैं।[56] प्रस्तुत अध्ययन में पिछड़ी अर्थव्यवस्था शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थों में किया गया है। साधारणतया 'पिछड़ी अर्थव्यवस्था' शब्द का प्रयोग संकुचित अर्थों में किसी क्षेत्र के मात्र आर्थिक तन्त्र के लिए किया जाता है। यहाँ पर अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत किसी भी भौगोलिक परिदृश्य के समष्टि या समन्वित रूप में किया गया है, जिसमे आर्थिक तत्वों के साथ-साथ भौगोलिक तथ्यों को समाहित किया गया है। मानव के सम्पूर्ण क्रियाओं में आर्थिक क्रियाओं का विशेष महत्व है क्योंकि अन्य

क्रियाओं पर आर्थिक क्रियाओं का प्रभाव होता है। अत प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध विषय में भौगोलिक शब्द 'पिछड़ा क्षेत्र' की जगह 'पिछड़ी अर्थव्यवस्था' शब्द का प्रयोग किया गया है।

क्षेत्रीय असंतुलन, क्षेत्रीय विभेदशीलता तथा पिछड़ापन के अर्थों मे भी पर्याप्त विभेद है । स्मरणीय है कि सामान्य तौर पर क्षेत्रीय असंतुलन, क्षेत्रीय विभेदशीलता तथा पिछड़ेपन का प्रयोग एक ही अर्थ मे किया जाता है किन्तु वास्तव में ऐसा नही है। क्षेत्रीय असतुलन तथा क्षेत्रीय विभेदशीलता का दृष्टिकोण जहाँ अत्यधिक व्यापक है वहीं दूसरी ओर पिछड़ेपन का प्रयोग इसके एक अंश के रूप में किया जाता है। जहाँ क्षेत्रीय असन्तुलन व क्षेत्रीय विभेदशीलता का सम्बन्ध अर्थव्यवस्था के तीनों चरणों (अविकसित - विकासशील तथा विकसित) से है, वही पिछडेपन का सम्बन्ध अर्थव्यवस्था के मात्र प्रथम चरण (अविकसित) से है। किन्तु कुछ सन्दर्भों में इसका प्रयोग अर्थव्यवस्था के द्वितीय चरण (विकसित) में भी किया जा सकता है ।

विकास की भाँति 'पिछड़ी अर्थव्यवस्था' की कोई निश्चित परिभाषा नहीं है बल्कि यह एक तुलनात्मक विचार है। सामान्यतया पिछड़ेपन से तात्पर्य अर्थव्यवस्था के उस स्वरूप से, जो उस क्षेत्र में रहने वाले या उस समाज मे रहने वाले लोगो की न्यूनतम आवश्यकताओ को भी पूरा न कर सके। अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन की तीव्रता का अनुमान ऐसी लोगो जिनकी निम्नतम् आवश्यकताए भी पूर्ण नही हो पाती हैं - की संख्या पर निर्भर करता है। ऐसी दशा का आविर्भाव किसी क्षेत्र मे अर्थव्यवस्था के मुख्य स्तम्भ - कृषि एव औद्योगीकरण के पिछड़ेपन के कारण होती है। इस पिछडेपन का कारण भौतिक तथा सांस्कृतिक ससाधनो का अविकसित होना है। भौतिक ससाधनों से तात्पर्य किसी स्थान विशेष के उच्चावच्च, खनिज, जलवायु, मृदा अपवाह, प्राकृतिक वनस्पति व जीव जन्तु से है तथा सांस्कृतिक ससाधनों से तात्पर्य मानव के सम्पूर्ण क्रिया-कलापों से है। भौतिक तथा सांस्कृतिक संसाधनों के पिछड़ेपन के आधार पर पिछड़ी अर्थव्यवस्था निम्न प्रकार की हो सकती है -

। भौतिक रूप में पिछडी अर्थव्यवस्था
2. अंशत· भौतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था
3. सांस्कृतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था
4 अंशत· सांस्कृतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था
5. भौतिक एवं सास्कृतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था
6. भौतिक तथा अंशत सांस्कृतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था

7. अंशत· भौतिक तथा सांस्कृतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था

भौतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था में उस क्षेत्र को सम्मिलित किया जाता है, जहाँ की जलवायु जीव जन्तुओं एव मनुष्यो के स्वास्थ्य, क्रियाकलाप एवं व्यवसाय के प्रतिकूल हो, उच्चावच्च इस प्रकार हो जहाँ कृषि, बागवानी, निर्माणकार्य के प्रतिकूल हो वन-संसाधनों व खनिज संसाधनों की अल्पता हो। उपर्युक्त सभी तथ्य अर्थव्यवस्था के विकास के आधार स्तम्भ हैं, जिनके अभाव में विकास प्रक्रिया संचालित नहीं हो सकती। उपर्युक्त आधारभूत तत्वों के अभाव मे यदि पिछड़ेपन को दूर करने का प्रयास किया जाता है तो अर्थव्यवस्था और जटिल तथा पिछड़ेपन का शिकार हो जाती है ।

सांस्कृतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत भौतिक ससाधन तो प्रचुरमात्रा मे होते हैं किन्तु मानव प्रबन्धन की कमी के कारण अर्थव्यवस्था पिछड़ी दशा में रहती है। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में विकास की संभाव्यता रहती है। मानव प्रबन्धन में सुधार करके ऐसी अर्थव्यवस्था को दीर्घ अवधि में विकसित किया जा सकता है।

भौतिक एवं सांस्कृतिक रूप से पिछड़ी अर्थव्यवस्था मे क्षेत्रों का भौतिक या सांस्कृतिक रूप में विकास करने की सम्भावना कम होती है।

भौतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से अंशत· पिछडी अर्थव्यवस्था में सभी सांस्कृतिक एवं भौतिक संसाधनो की अंशतः कमी पायी जाती है ।

भौतिक तथा सांस्कृतिक रूप में अंशत· पिछड़ी अर्थव्यवस्था में भौतिक संसाधनों का अभाव अवश्य होता है किन्तु सांस्कृतिक संसाधन में अंशत कमी पायी जाती है। इसी प्रकार कुछ अर्थव्यवस्थाओं में सास्कृतिक संसाधन का पूर्णतया अभाव पाया जाता है किन्तु भौतिक संसाधनों मे अंशतः कमी पायी जाती है ।

यह एक विचारणीय प्रश्न हो सकता है कि किसी क्षेत्र के भौतिक एवं सांस्कृतिक दोनो प्रकार के पिछड़े संसाधनों में, किसमें सर्वप्रथम सुधार करना आवश्यक होता है। चूंकि सांस्कृतिक संसाधनों के विकसित होने पर भौतिक संसाधनों का पिछड़ापन शीघ्र दूर हो जाता है इसलिए सास्कृतिक

ससाधन को सर्वप्रथम विकसित करने की आवश्यकता है।

1.15 पिछड़ेपन का कारण

जनसंख्या वृद्धि, प्रति व्यक्ति निम्न आय, कृषि की प्रधानता, तकनीकी पिछडापन, भयकर बेरोजगारी, भुगतान संतुलन की बिगडती स्थिति तथा औद्योगीकरण का प्रभाव देश के सम्मुख कुछ ऐसी चुनौतियाँ हैं जो भारत को पिछड़ेपन के धरातल पर लाकर खड़ा कर दिया है। वैयक्तिक आर्थिक विषमताए तथा शहरों एवं गाँवों मे वितरण की असमानता पिछडेपन के अन्तर को और बढ़ा देती है। भारत के पिछड़े क्षेत्रों का मूल कारण न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक, धार्मिक व राजनीतिक भी हैं। जिनमें प्रमुख कारण राजनीतिक अस्थिरता, अकुशलता, दृढ निर्णय का अभाव तथा सामाजिक रूढ़िवादिता, अधविश्वास, भाग्यवादिता के अतिरिक्त बाजार की अपूर्णताए, निर्धनता का दुश्चक्र, पूँजी निर्माण की निम्न दर, आधारभूत सरचना, का अभाव, उद्यमशीलता एव प्रबन्धकीय योग्यता का अभाव, प्राकृतिक ससाधनों का अभाव, प्राकृतिक स्रोतो के उचित सर्वेक्षण एव सर्वोत्तम उपयोग का अभाव और दोषपूर्ण सरकारी नीतिया रहे है। [57]

स्वतन्त्रता पूर्व भारत की अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन का सम्बन्ध तत्कालीन राजनीतिक स्वरूप व औपनिवेशिक तन्त्र से गहन रूप से जुडा हुआ था। ब्रिटिश शासन का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह था कि भारत की अर्थव्यवस्था बहुत पिछडी हुई तथा कृषि प्रधान थी। इसकी आर्थिक संरचना अपेक्षाकृत उन्नत देशों से विपरीत थी। जनसंख्या का 70% से अधिक भाग कृषि मे लगा हुआ था जिसका राष्ट्रीय आय में 60% से अधिक योगदान था। कृषि में जनसंख्या के अधिकांश भाग का नियोजित होना और उसमें (कृषि में) लोगो की संख्या व प्रतिशतता में लगातार वृद्धि या उनमें (जनसंख्या) में कमी न होना पिछड़ी अर्थव्यवस्था का द्योतक है। ब्रिटिश शासन के शोषक व विभेदकारी नीतियो के कारण सदियों में सुस्थापित भारतीय दस्तकारी का कुछ ही वर्षों में पतन हो गया, जिससे जनसंख्या का एक बड़ा भाग रोजी-रोटी की खोज मे कृषि की ओर उन्मुख हुआ। इस प्रक्रिया के अनवरत चलते रहने के कारण कृषि व जमीन पर दबाव बढ़ा, परिणामस्वरूप भूमि का विखण्डन हुआ, कृषि व उद्योग का सम्बन्ध टूट गया। इस प्रकार कृषि का उद्देश्य मात्र भरण-पोषण होने के कारण सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पिछड़ेपन का शिकार हो गयी।

गैर कृषि क्षेत्र की संरचना परिवर्तित होकर छोटी व असतुलित हो गयी। उद्योग के नाम पर कृषि उपज के परिष्करण हेतु हल्के उद्योग थे न कि आधुनिक धातुकार्मिक, इंजीनियरिंग गृहनिर्माण सामग्री, रसायन व खनिज तेल उद्योग। जहाँ अन्य देशो मे औद्योगिक क्रान्ति हुई वहाँ भारत मुख्य रूप से कृषि प्रधान देश बना रहा। भारतीय ससाधनों से ब्रिटिश औद्योगीकरण को गति मिली। भारत ब्रिटेन के लिए कच्चे माल का निर्यातकर्ता तथा विनिर्मित सामान का बाजार केन्द्र बन गया। परिणामस्वरूप भारत शेष विश्व से लगातार पिछड़ा गया। उपर्युक्त विवरण से किसी देश के पिछड़ेपन का ज्ञान हो जाता है किन्तु किसी देश के अन्तर्गत किसी क्षेत्र विशेष के पिछड़ेपन का कारण सूक्ष्म स्तरीय नियोजन पद्वति न अपनाना तथा असमान नियोजन पद्वति है।

1.16 पिछड़ी अर्थव्यवस्था के मापदण्ड

पिछड़ी अर्थव्यवस्था का निर्धारण अनेक कारकों को ध्यान में रखकर किया जाता है। किन्तु सामान्यतया प्रति व्यक्ति निम्न आय, प्रति व्यक्ति निम्न उत्पादन, कृषि पर अत्यधिक निर्भरता, औद्योगिक पिछड़ापन, उपभोग की अधिकतम दर, बचत व पूँजी की कमी, जनसख्या का अत्यधिक दबाव तथा वृद्धिदर, रोजगार की अल्पता तथा औद्यागिक पिछडापन इत्यादि किसी भी पिछड़ी अर्थव्यवस्था के प्रतिबिम्ब है। साथ ही किसी क्षेत्र के अर्थव्यवस्था के पिछडेपन का निर्धारण निम्न तथ्यों के संदर्भ में दिया जा सकता है। [58]

1. प्रति व्यक्ति आय
2. कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति एव जनजातियों का प्रतिशत
3. कृषि भूमि - जनसख्या अनुपात
4. कृषि मे संलग्न जनसंख्या
5. ग्रामीण नगरीय जनसंख्या अनुपात
6. परिवहन संचार तथा अन्य सेवाओं की उपलब्धता
7. जल विद्युत तथा अन्य सुविधाओं की उपलब्धता, तथा
8. साक्षरता का स्तर

पिछड़ी अर्थव्यवस्था के उपर्युक्त तथ्यों में केवल सास्कृतिक पक्ष को ही समाहित किया गया है। सांस्कृतिक तथ्यो में भी क्रियाशील जनसंख्या अनुपात तथा आश्रित जनसंख्या अनुपात जैसे अनिवार्य तथ्य को समाहित नहीं किया गया है। इसके साथ ही प्राकृतिक तत्वो

को जो किसी क्षेत्र की अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन लिए कहीं अधिक महत्वपूर्ण हैं, की अवहेलना की गयी है। अत पिछड़ी अर्थव्यवस्था के निर्धारण में उक्त तथ्यो के साथ क्रियाशील जनसंख्या अनुपात, आश्रित जनसंख्या अनुपात, जलवायु, उच्चावच्च, जल-संसाधन, वन व खनिज आदि संसाधनों की उपलब्धता पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके साथ ही पिछडी अर्थव्यवस्था के निर्धारण में दो और समस्याएं हैं ।

पहला, पिछड़ेपन के निर्धारण हेतु लिए गए मानदण्डो की सीमा क्या हो ? अर्थात किसी तथ्य से सम्बन्धित वह कौन सा देहलीज (थ्रीशोल्ड) या औसत (एवरेज) हो जिसके ऊपर रहने पर क्षेत्र विकसित कहा जाय तथा नीचे रहने पर पिछडा कहा जाय। मापदण्डों के लिए निर्धारित मानक सीमा राष्ट्रीय औसत हो या विश्व औसत या राज्य औसत या योजना आयोग द्वारा समय - समय पर निर्धारित मानदण्ड हो।

दूसरी समस्या, पिछड़ेपन के निर्धारण हेतु क्षेत्र के स्तर की सीमा से है, जिसमें किसी अर्थव्यवस्था के पिछडेपन के निर्धारण में तुलनात्मकता पर ध्यान दिया जाता है। उदाहरणार्थ यदि किसी विकास खण्ड के पिछड़ेपन का निर्धारण करना है तो वह तहसील जनपद कमिश्नरी, राज्य तथा राष्ट्र में से किसकी तुलना में ज्ञात किया जाय? भारत के संदर्भ में यह क्षेत्र सम्पूर्ण राष्ट्र हो सकता है या योजना आयोग द्वारा निर्धारित क्षेत्रीय स्तर हो सकता है ।

उपर्युक्त दोनों ही तथ्यों के निर्धारण मे कोई सुविचारित वस्तुनिष्ठ प्रक्रिया न होकर एक व्यक्तिनिष्ठ प्रक्रिया है। इसके निर्धारण के बावजूद किसी अर्थव्यवस्था के पिछडेपन की वास्तविक तस्वीर उभर कर नहीं आती है क्योंकि इससे मात्र क्षेत्रीय विषमता ही आभाषित होती है। इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम होगा, समान वातावरणीय दशाओ के विभिन्न तथ्यो का तुलनात्मक अध्ययन। अर्थात किसी क्षेत्र के सम्बन्धित क्रियाओं का कितना प्रतिशत भाग विकसित किया जा चुका है तथा कितना प्रतिशत विकसित किया जाना शेष है, ज्ञात करना। सम्बन्धित क्षेत्र की कुल सम्भाव्यता का यदि 50% से कम विकसित किया गया है तो वह क्षेत्र नितान्त पिछडा कहा जाएगा और यदि सम्भाव्यता का 50-75% भाग विकसित किया गया है तो उसे विकासशील तथा 75% से अधिक विकसित प्रदेश को विकसित कहा जा सकता है,किन्तुउपर्युक्त आंकड़ों पर बहुत अधिक बल नहीं दिया जा सकता है ।

अर्थव्यवस्था के सभी पक्षों के पिछड़ेपन का निर्धारण आंकडो की अनुपलब्धता तथा सीमित अवधि के कारण संभव नही है। अध्ययन क्षेत्र पर सामान्य दृष्टिपात करने से ही सोनभद्र के पिछड़ेपन का आभास हो जाता है। सोनभद्र की अर्थव्यवस्था भौतिक रूप से अंशतः तथा सांस्कृतिक रूप से पूर्णत पिछडी अर्थ-व्यवस्था है। योजना आयोग[59] तथा राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक परिषद[60] द्वारा प्रयुक्त मानदण्डो के अनुसार सम्पूर्ण पूर्वी उत्तर प्रदेश ही पिछडे क्षेत्रों के अन्तर्गत आता है। अत. द0पूर्वी उत्तर प्रदेश मे स्थित नवीन सोनभद्र जनपद भी पिछडी अर्थव्यवस्था का एक मानक प्रतिरूप है ।

1.17 पिछड़े क्षेत्रों की पहचान

पिछड़े क्षेत्रों की पहचान एव उनके विकास को प्रोत्साहन देने हेतु योजना आयोग ने 1968 मे दो कार्यकारी दलों की नियुक्ति की थी। प्रथम, पिछड़े क्षेत्रो की पहचान के लिए श्री बी0डी0 पाण्डे तथा द्वितीय पिछड़े क्षेत्रो में उद्योगों की स्थापना के लिए मौद्रिक एव वित्तीय प्रोत्साहन देने हेतु श्री एन0एन0 वॅाञ्चू की अध्यक्षता मे कार्यकारी दलो का गठन किया। इन आयोगों ने पिछड़े क्षेत्रों की पहचान के आधार और उनमें उद्योगों की स्थापना के लिए मौद्रिक एवं वित्तीय प्रोत्साहन देने की सिफारिशों का आधार प्रस्तुत किया था। वर्तमान में 1983 की संशोधित नीति के अनुसार पिछड़े राज्यो, जिलों तथा क्षेत्रो को औद्योगिक विकास के लिए अनुदान एवं आर्थिक सहायता की दृष्टि से परिभाषित किया गया है। इस नीति के अनुसार पिछड़े क्षेत्रों, जिलों को विकास के स्तर के आधार पर तीन वर्गों मे बाटा गया है यथा 'अ' श्रेणी, 'ब' तथा 'स' श्रेणी के जिले ।

वर्तमान समय में भारत 25 राज्यों एवं 7 केन्द्रशासित प्रान्तो में विभाजित है। भारत के 25 राज्यों को 463 जिलों तथा 7 केन्द्र शासित प्रान्तो को 20 उपजिलों एवं 4 जिलों में विभाजित किया गया है। इनमें आय एवं उद्योगों की दृष्टि से 267 जिले तथा 20 उप जिले पिछड़े हुए हैं। भारत के असम, हरियाणा, केरल, महाराष्ट्र, पंजाब, तामिलनाडु, कर्नाटक तथा गुजरात विकसित एवं गोवा, अरूणांचल प्रदेश, जम्मू काश्मीर, त्रिपुरा, सिक्किम, नागालेण्ड व मणिपुर पूर्ण रूप से पिछड़े हुए राज्य हैं, जबकि आन्ध्र प्रदेश, बिहार, हिमांचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, मिजोरम तथा राजस्थान के आधे से अधिक जिले पिछड़े हुए हैं। दूसरी ओर भारत के 7 केन्द्र शासित प्रान्तो में केवल दिल्ली

प्रान्त ही विकसित है, शेष 6 प्रान्त पूर्ण रूप से पिछड़े हुए है। इस प्रकार सम्पूर्ण भारत के 299 जिले पिछड़े हुए हैं, जिनमें 131 जिले श्रेणी 'अ', 55 जिले श्रेणी 'ब' तथा 113 जिले श्रेणी 'स' में आते हैं, जो सम्पूर्ण जिलों का 20 26% है। अर्थात भारत के कुल क्षेत्रफल का 70% व कुल जनसंख्या का 56% भाग पिछडे क्षेत्रो में आता है।[61]

पिछड़ेपन को दूर करने तथा क्षेत्रीय असन्तुलन को समाप्त करने के लिए, संविधान की धारा 280 के अधीन, प्रति पांच वर्ष मे एक वित्त आयोग का गठन किया जाता है। संसाधनो के अंतरण के लिए आयोग द्वारा अपनाए गए जनसंख्या और अन्य मापदण्ड तथा प्रविधियां पिछड़े राज्यों के पक्ष में गई हैं। पिछड़े क्षेत्रों में पूँजी निवेश व औद्योगिक अवस्थापना को प्रोत्साहन दिया जाता है। यह स्वीकार किया गया है कि क्षेत्रीय पिछड़ापन एक क्षेत्रीय समस्या है। और इसका समाधान क्षेत्र की दृष्टि से ही हो सकता है। इस दृष्टिकोण को ध्यान मे रखते हुए पिछडे क्षेत्रों के लिए विशेष विकास योजनाए बनायी जाती हैं।[62]

संदर्भ

1. सिंह,इकबाल· भारत में ग्रामीण विकास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्, 1986, पृष्ठ 2.

2 *Smith, D.M.: Human Geography: A Welfare Approach, Arnold Heine Mann, London, 1984.*

3. दत्त, भवतोष: वृद्धि, विकास और प्रगति, योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 15 अगस्त 1987, पृष्ठ 6.

4 शर्मा, के0एल0 भारतीय समाज, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ 153.

5. वही, पृष्ठ 154.

6. मिश्र, एस0के0 एवं पुरी, वी0के0 : भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस, बम्बई, 1991, पृष्ठ 4.

7. *Meir, G.M. and Balduin, R.E.: Economic Development: Theory, History and Policy,*

8. *Drewnowski, J.: On Measuring and Planning the Qualityof Life, Mounton, The Hague, 1974, p.95.*

9. *Kuznets, S.: 'Towards a Theory of Economic Growth', in R.Lekachman (ed), National Policy for Economic Welfare at Home and Abroad, p. 16.*

10 पूर्वोक्त सदर्भ संख्या 4, पृष्ठ 151.

11. देव, अर्जुन · सभ्यता की कहानी (2), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली, 1987, पृष्ठ 178.

12. वही, पृष्ठ 179

13. मिश्रा, बी0एन0 · 'विकास एक वैज्ञानिक - धार्मिक सन्दर्भ, भू-संगम, 2 (1), इलाहाबाद ज्योग्राफिकल सोसायटी, इलाहाबाद, 1984 पृष्ठ 1-16.

14. *Qureshi, M.H.: India: Resources and Regional Development,NCERT, New Delhi, 1990, P. 81.*

15. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 2

16. सिंह, आर0एन0 एवं कुमार, ए0 'भारतीय नियोजन प्रणाली एव ग्रामीण विकास एक समीक्षा, भू-संगम, 2 (1), इलाहाबाद ज्योग्राफिकल सोसायटी इलाहाबाद, 1984, पृष्ठ 17-24.

17. *Prakash, B. and Raya M.: Rural Development 'Issues to Ponder', Kurukshetra, 32(4), 1984, pp. 4-10.*

18. तिवारी, आर0सी0 तथा त्रिपाठी, एस0 : 'समन्वित ग्रामीण विकास - भौगोलिक दृष्टिकोण', ग्रामीण विकास : संकल्पना, उपागम एवं मूल्यांकन (स0), सिंह, पी0 एवं तिवारी, ए0, पर्यावरण विज्ञान अध्ययन केन्द्र इलाहाबाद, 1989, पृष्ठ 48 - 64.

19. *Mishra, R.P., Sundram K.P. and Prakas Rao, V.L.S.: Regional Development Planning in India: A New Stretegy, Vikas Publishing House, New Delhi, 1974, p.189.*

20. Singh, R.N. and Kumar, A.: 'Spatial Reorganisation: Concept and Approaches', National Geographer, 18 (2), 1983, pp. 215-226.

21. Haq, Mahbub ul, "Employment and Income Distributin in the 1970s: A New Perspective", Pakistan Economic and Social Review, June -December 1971, p. 6.

22. Kindleberger, C.P. and Herrick, B.: Economic Development (New York, 1977) p. 1.

23. Broger, D.: 'Central Place System, Regional Planning and Development in Developing Countries: Case of India', in Transformation Habitat in India Perspective, Geographical Dimention, (ed) Singh, R.L. and Rana, P.B.S. National Geographical Society of India, B.H.U., Varanasi 1978, pp. 134-164.

24. Todaro, M.P.: Economic Development in the Third World, New York, Longman Inc. 1983, p.70.

25. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 2.

26. Seers, Dubley: "The Meaning of Development", Eleventh World Conference of the Society for International Development (New Delhi 1969), p.3.

27. सिंह, जगदीश वातावरण नियोजन एवं संविकास, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर, 1988, पृष्ठ 242.

28. भारत, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, 1988 - 89, पृष्ठ 142

29. पूर्वोक्त संदर्भ सख्या 27, पृष्ठ 242-46.

30. पूर्वोक्त संदर्भ सख्या 14, पृष्ठ 81

31. Adelmn, I. and Merris, C.T.: Society, Politics and Economic Development, Boltimore, The John Hopkins, 1967.

32. Hagen, E.E.: 'A Framework for Analysing Economic and Political Development', in Robert Asher, (ed) Development of Emerging Countries, Washingtion D.L., Bookings Institution, 1962, pp. 1-38.

33. United Nations Research Institute for Social Development: Contents and Measurements of Social Economic Development, Geneva, Report No. 70.10, 1970.

34. Berry, B.J.L.: 'An Inductive Approach to the Regionalization of Economic Development', in N.Ginsburh (ed), Essays on Geography and Economic Development, Research Paper 62, Department of Geography' University of Chicago, 1960.

35. Myrdal, G.: Economic Theory and Underdevelopment, London, 1957.

36. Keeble, D.: 'Models of Economic Development', in R.J. Chorley and P.Haggette, Models in Geography, London, Methuen, 1967.

37. Friedman, J.: The Urban-Regional Frame for National Development', International Development Review, 1966.

38. Rostow W.W.: The Stage of Economic Growth, London, Cambridge University Press, 1962, p.2.

39. Perroux,F.: 'La Nation De Croissance', Economique Applique, Nos. 1 and 2, 1955.

40. Boudeville, T.R.: Problem of Regional Economic Planning, Edinburgh University Press, 1966.

41. Faludi, A.: Planning Theory, Pergamon Press, Oxford, 1973.

42. Friedman, J.: 'The Concept of Planning Regions, The Evolution of an Idea in the United States', Reprinted in J. Friedman and W.Alonso (ed), Regional Development and Planning, A Reader, the M.I.T. Press, 1958.

43. Hill Horst, J.G.M.: Regional Planning: A Systems Approach. Rotterdam University Press, 1977.

44. Dror, Y.: 'The Planning Process: A Facet Design', International Review of Administrative Science, 29(1), 1963.

45. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या, 20.

46. कुरेशी, एम0एच0 भारत संसाधन और प्रादेशिक विकास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, 1990 पृष्ठ 118

47. पूर्वोक्त संख्या 19.

48. *Gillingwater, D.: Regional Planning and Social Change, A Responsive Approach, Saxon House, 1975, p.1.*

49. पूर्वोक्त संख्या 19

50. पूर्वोक्त संख्या 35.

51. *Singh, A.K.: Planning of the State Level in India, Commerce Pomphlet 25, 1970, p.29.*

52. *Planning Commission,: Guidelines for the Formulation of District Plans, 1969, pp. 1.2, (U.P.Government edition).*

53. *Vaishnav, P.H. and Sundram, K.V.: Integrating Development Administration at the Area Level, in Planning Commission, Report of the Working Group on Block Level Planning, 1978, p.2.*

54. वही

55. *Keenleyside, H.L.: 'Obstacles and Means in Internation Development' in Dynamics of Development, (ed) G.Hambridge, P.8.*

56. *The United Nations Experts on Measures for the Economic Development of Underdeveloped Countries Wrote: 'An Adequate Synonymn for Underdeveloped Countries would be poor countries' p.3.*

57. योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 15 मई 1992, पृष्ठ 14.

58. *Chand, M. and Puri V.K.· Regional Planning in India, Allied Publishers Ltd., New Delhi, 1983, p.331.*

59. *Government of India, Planning Commission: Report of the Working Group on Identification of Backward Area, New Delhi, 1969.*

60. *National Council of Applied Economic Research: Techno-Economic Survey of Uttar Pradesh, New Delhi, 1965.*

61. पूर्वोक्त संदर्भ सख्या, 54

62. भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, जून 1985, पृष्ठ 53.

****

अध्याय 2

अध्ययन क्षेत्र की भौगोलिक पृष्ठभूमि

प्रत्येक क्षेत्र अपनी विशिष्ट भौगोलिक विशेषताओं से युक्त होता है । किसी भी क्षेत्र के विशिष्ट प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक भू-दृश्य वहाँ के प्राकृतिक एवं जैविक अन्तर्क्रिया के परिणाम होते हैं । विकास योजनाएं भौगोलिक तथ्यों एवं विशेषताओं को ध्यान में रखकर ही बनायी जाती हैं, किन्तु विकास नियोजन में मानव कल्याण एवं पर्यावरण संतुलन केन्द्रीय तत्व होते हैं । अस्तु प्रस्तुत अध्याय का उद्देश्य अध्ययन क्षेत्र के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप का वर्णन एवं विश्लेषण करना है ।

2.1 स्थिति एवं विस्तार

अध्ययन क्षेत्र, उत्तर प्रदेश के दक्षिण - पूर्व में स्थित जनपद सोनभद्र है, जिसका सृजन 4 मार्च 1989 को हुआ । वर्तमान सोनभद्र जनपद में पूर्व मीरजापुर जनपद के राबर्ट्सगंज एवं दुद्धी तहसील का सम्पूर्ण क्षेत्र सम्मिलित है । राबर्ट्सगंज को अस्थाई जनपद मुख्यालय बनाने के अतिरिक्त पूर्व के प्रशासनिक भागों एवं क्षेत्रों में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया गया है । जनपद का 'सोनभद्र' नामकरण अग्निपुराण में उल्लिखित सोन नदी के नाम पर किया गया है ।[1]

'नमस्ते ब्रह्मपुत्राय शोण भद्राय ते नम. ।
मेकलोदभवाय वृहते सर्व पाप हरायव ।।'

प्राकृतिक रूप से दक्षिण में दक्कन के पठार व उत्तर में गंगाघाटी तथा राजनीतिक दृष्टि से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व बिहार के संगम पर स्थित, सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र पठारी क्षेत्र है । सोनभद्र के पूर्व में छोटा नागपुर का पठार, पश्चिम में बघेलखण्ड तथा रीवा का पठार, उत्तर में गंगाघाटी तथा दक्षिण में बघेलखण्ड का पठार है । सम्पूर्ण जनपद दक्कन पठार का ही एक भाग है । सोनभद्र के पूर्व में जनपद गढ़वा व भभुवा (बिहार राज्य), पश्चिम में सीधी (मध्य प्रदेश), दक्षिण में सरगुजा (मध्य प्रदेश) तथा उत्तर में मिर्जापुर व वाराणसी (उत्तर प्रदेश) राजनीतिक सीमा बनाते हैं । अध्ययन प्रदेश का अक्षांशीय विस्तार $23^0 52'$ उत्तरी अक्षांश से $24^0 53'$ उत्तरी अक्षांश के मध्य है तथा देशान्तरीय विस्तार $82^0 38'$ पूर्वी देशान्तर से $83^0 33'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य है।[2]

DISTRICT SONBHADRA
ADMINISTRATIVE DIVISIONS
STUDY AREA
KM
ROBERTSGANJ
GHORAWAL
NAGAWA
CHATARA
CHOPAN
DUDHI
MUIR PUR
Babhani
BABHANI
MIRZAPUR
VARANASI
MADHYA PRADESH
BIHAR
ROBERTSGANJ
DUDHI
STATE BOUNARY
DISTRICT BOUNDARY
TAHSHIL BOUNDARY
BLOCK BOUNDARY
DISTRICT HEADQUARTER
TAHSIL HEADQUARTER
BLOCK HEADQUARTER
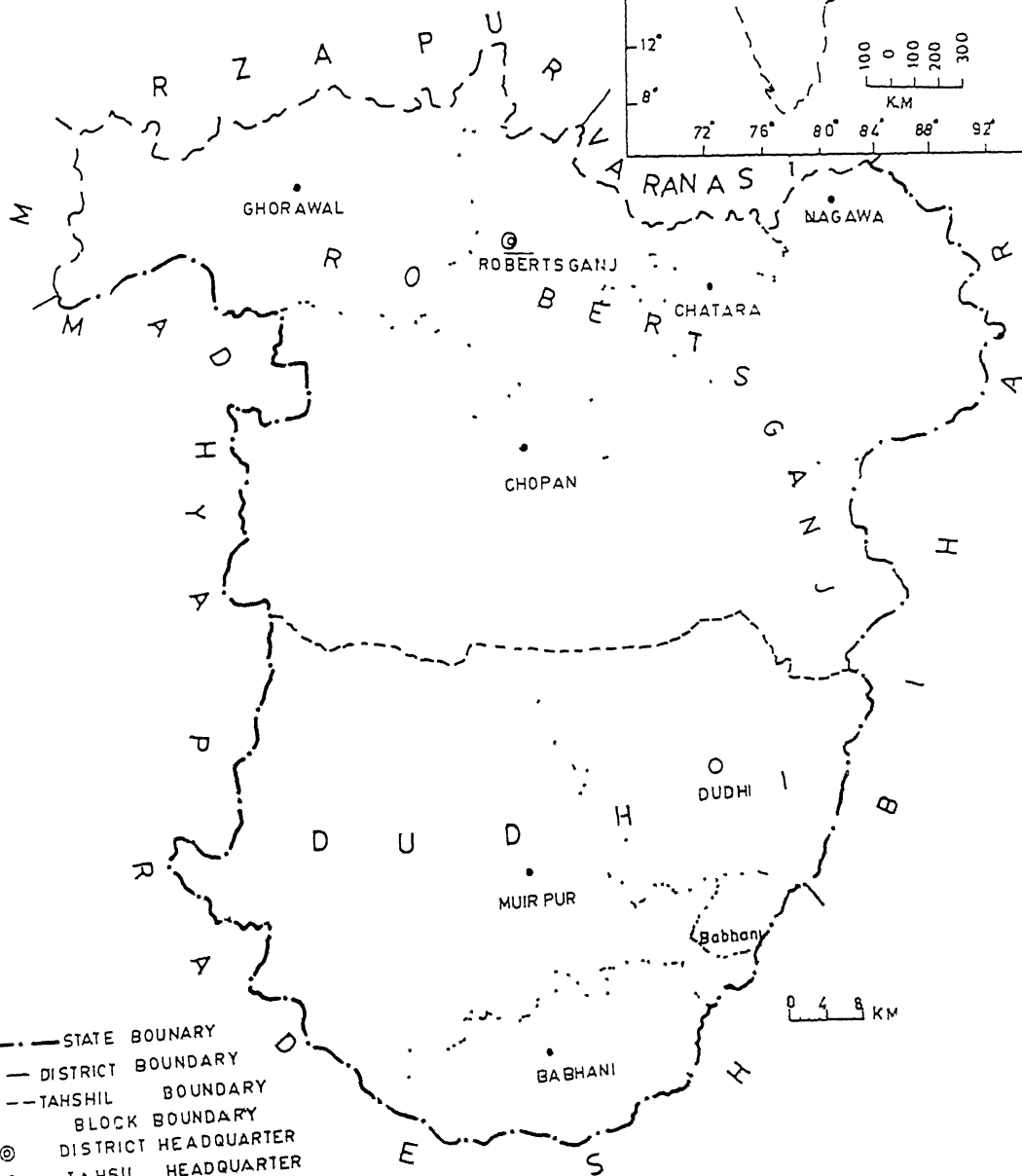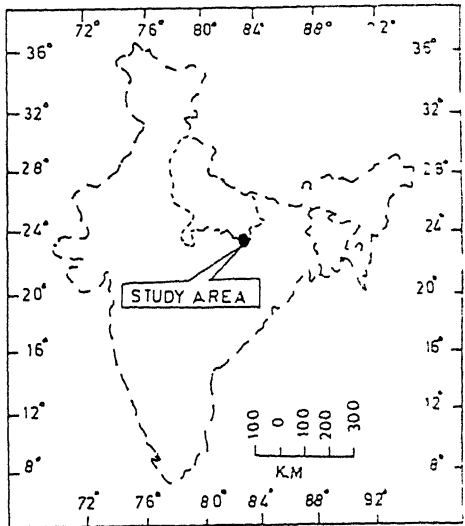
FIG 2 1

अध्ययन क्षेत्र का आकार आयताकार है, जिसका उत्तर से दक्षिण तथा पूर्व से पश्चिम की ओर प्रसरण है । इसकी उत्तर - दक्षिण अधिकतम लम्बाई 111 कि0मी0 तथा पूर्व - पश्चिम अधिकतम चौड़ाई 95 कि0मी0 है ।[3]

प्रशासनिक दृष्टि से सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को 2 तहसीलों - राबर्ट्सगंज एवं दुद्धी तथा 8 विकास खण्डों - घोरावल, राबर्ट्सगंज, चतरा, नगवां, चोपन, म्योरपुर, दुद्धी व बभनी में विभक्त किया गया है । तहसील राबर्ट्सगंज में 5 विकासखण्ड (घोरावल, राबर्ट्सगंज, चतरा, नगवां व चोपन) तथा दुद्धी में 3 विकासखण्ड (म्योरपुर, दुद्धी व बभनी) हैं । सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को 66 न्याय पंचायत, 586 ग्राम सभा, 1346 आबाद ग्राम (इसमें 4 वन ग्राम सम्मिलित है) तथा 80 गैर आबाद ग्राम में विभक्त किया गया है । जनपद के सभी विकासखण्डों का विवरण तालिका 2.1 में प्रदर्शित है । कुल 8 नगरीय क्षेत्रों में 1 नगरपालिका (राबर्ट्सगंज), 2 टाउन एरिया (घोरावल व दुद्धी) तथा 5 नोटीफाइड एरिया (चुर्क - गुरमा, चोपन, ओबरा, रेनूकूट व पिपरी) है । अध्ययन क्षेत्र का कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 6819.28 वर्ग कि0 मी0 है, जिसमें नगरीय क्षेत्र 20.48 वर्ग कि0मी0 तथा ग्रामीण क्षेत्र 6798.80 वर्ग कि0 मी0 है । क्षेत्रफल की दृष्टि से विकासखण्ड चोपन सबसे बड़ा (1712.97 वर्ग कि0 मी0) तथा चतरा सबसे छोटा (254.85 वर्ग कि0 मी0) है । क्षेत्रफल के अनुसार अवनत क्रम में विकासखण्डों की स्थिति क्रमशः इस प्रकार है - चोपन, म्योरपुर, नगवां, घोरावल, दुद्धी, बभनी, राबर्ट्सगंज तथा चतरा (तालिका 2.1) । जनपद मुख्यालय से विकासखण्ड मुख्यालय की दूरी तालिका 2.1 में प्रदर्शित है । दूरस्थ विकासखण्ड बभनी (142 कि0 मी0) है ।

2.2 भौतिक विशेषता

अध्ययन क्षेत्र के भौतिक विशेषता के अन्तर्गत सम्पूर्ण प्राकृतिक तथ्यों का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है । किसी भी क्षेत्र के विकास में भौतिक स्वरूपों एवं प्राकृतिक संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान होता है । अध्ययन क्षेत्र का प्राकृतिक विभाग, भौतिक स्वरूप, संरचना (भौमिकी), अपवाह, जलवायु, वनस्पति, मृदा एवं खनिज संसाधनो का वर्णन किया गया है ।

(अ) प्राकृतिक विभाग

सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र पठारी क्षेत्र है, जो बघेलखण्ड पठार, छोटा नागपुर पठार

तालिका 2.1

जनपद - सोनभद्र

तहसील	विकासखण्ड	क्षेत्रफल (वर्ग कि0मी0में)	क्षेत्रफल प्रतिशत में	न्याय पंचायत	ग्राम सभा	आबाद ग्राम	राजस्व ग्राम	जनपद मुख्यालय से वि0खं0मु0 की दूरी
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1. राबर्ट्सगंज	1. घोरावल	818.73	12.00	14	148	337	354	24
	2. राबर्ट्सगंज	442.45	6.48	10	117	329	340	5
	3. चतरा	254.85	3.73	5	63	168	190	19
	4. नगवां	916.20	13.43	7	62	128	143	31
	5. चोपन	1712.97	25.20	9	60	91	93	27
2. दुद्धी	6. म्योरपुर	1337.89	19.61	8	55	120	124	104
	7. दुद्धी	707.45	10.37	8	46	98	102	79
	8. बभनी	608.26	8.91	5	35	71 4 वनग्राम	72	142
	योग ग्रामीण	**6798.80**	**99.70**	**66**	**586**	**1346**	**1426**	
	योग नगरीय	**20.48**	**00.30**					
	योग जनपद	**6819.28**	**100.00**	**66**	**586**	**1346**	**1426**	

स्त्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 16, 25, 29 व 113 एवं उससे संगणित ।

(रोहतास पठार) तथा गंगा घाटी से परिवृत्त है । प्राकृतिक स्वरूप तथा भूमि की बनावट की दृष्टि से इसे दो भागों में विभक्त किया गया है, [4] जिसका विवरण इस प्रकार है ।

(1) मध्यवर्ती पठारी भाग

इस भाग के अन्तर्गत तहसील राबर्ट्सगंज का विकासखण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज, चतरा व नगवां का सम्पूर्ण भाग सम्मिलित है, जो सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र का लगभग 35% है । यह उप-सम्भाग विन्ध्य पर्वत के अन्तर्गत पठारी हिस्से से होता हुआ कैमूर पर्वत श्रृंखला की अंतिम सीमा सोन नदी तक स्थित है । यह संभाग गंगा की घाटी से 400′ से लेकर 1100′ तक की ऊँचाई पर स्थिति है । इस क्षेत्र के अनेक पहाड़ी नाले कर्मनाशा, चन्द्रप्रभा, बेलन तथा सोननदी में मिलते हैं । घोरावल से वैनी तक लगभग 60 कि0 मी0 लम्बा तथा 15 कि0 मी0 चौड़ा समतल मैदानी भाग परिलक्षित होता है ।

(2) सोनघाटी

यह उप-संभाग सोन के दक्षिण में स्थित है, जिसके अन्तर्गत विकासखण्ड चोपन, म्योरपुर, दुद्धी तथा बभनी आते हैं । यद्यपि यह संभाग पहाड़ियों तथा जंगलों से आच्छादित है, फिर भी सिंगरौली, सोनघाटी एवं दुद्धी घाटी अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उपजाऊ है । इस क्षेत्र की प्रमुख नदी सोन है, जिसमें कनहर व रिहन्द नदी मिलती है ।

(ब) भौतिक स्वरूप एवं संरचना

जनपद सोनभद्र के दोनों तहसीलों (राबर्ट्सगंज व दुद्धी) के भौतिक स्वरूप एवं संरचना का विवरण पृथक - पृथक प्रस्तुत किया जा रहा है । इसे मानचित्र 2.2, 2.3 व 2.4 में प्रदर्शित किया गया है ।

(1) दुद्धी तहसील का भौतिक स्वरूप

यह क्षेत्र अधिकांश रूप में पहाड़ी है । इसके उत्तर में पहाड़ियों एवं पठारों की एक सतत् श्रृंखला है जिसकी लम्बाई लगभग 75 कि0 मी0 तथा चौड़ाई 6 से 12 कि0 मी0 है । इसमें छोटी - छोटी पहाड़ियाँ तथा कूट (रिजेज) इधर - उधर दिखायी पड़ती है, दक्षिणी एवं दक्षिणी पश्चिमी सीमा पर 4 कि0 मी0 चौड़ी एक और सतत् कूट (रिज) है । पश्चिम में अवस्थित एक लम्बी श्रृंखला जिसमें चिल्काटाँड़, खड़िया एवं बॉसी वन खण्ड सम्मिलित हैं,

का भी विन्यास पहाड़ी है । सामान्यतया इन पहाड़ियों एवं कूटों (रिजेज) की प्रवणता (ग्रेडियेण्ट) सामान्य से अधिक की ओर है लेकिन इनमें से कुछ पहाड़ियों जैसे गोंडा मृर्गारानी पहाड़ी, चैनपुर पहाड़ी, झंडी पहाड़ी (बहेराडोलखण्ड), बॉसी खण्ड की पहाडियाँ तथा चिल्काटॉड़ पहाड़ी बहुत ही खड़ी ढाल की है तथा अवक्षिप्त है । यह क्षेत्र उत्तर एवं दक्षिण में मुख्य पहाड़ियों के बीच में एक उतार - चढ़ाव दार मैदान है जो कि अनेक छोटे-छोटे नालों आदि से कटा-पिटा है । केन्द्रीय मैदानी ढाल दक्षिण की ओर समुद्र की सतह से लगभग 400 मीटर तथा उत्तर की ओर लगभग 215 मीटर की ऊँचाई पर है, जबकि पहाड़ियाँ मैदान की सतह से और भी ऊँची है । इस क्षेत्र की सबसे ऊँची चोटी समुद्र की सतह से 651 मीटर ऊँची है, जो कि दक्षिण पूर्व में चैनपुर पहाड़ी (रानी कोठी पहाड़) में है ।

निचली चट्टानी पहाड़ियाँ एवं उनकी शाखाएँ जो कि अधिवासों के पास हैं, को छोड़कर पूर्णतया जंगलों से ढकी है । अधिवासों के पास की पहाड़ियाँ अत्यधिक चारागाह के रूप में प्रयुक्त होने के कारण उजड़ सी गयी है तथा इन्ही कारणों से अपक्षरण का भी शिकार हुई हैं । इसके बीच का चपटा मैदानी क्षेत्र जगह - जगह पर छोटे - छोटे ग्रामों से भरा हुआ है, जहाँ की आबादी कृषि कार्य में संलग्न है । इस क्षेत्र का अधिकांश भाग वनाच्छादित है तथा अत्यधिक पथरीला होने के कारण कृषि कार्य हेतु लगभग अनुपयुक्त है । यह क्षेत्र अपनी भौगोलिक संरचना के कारण मध्य भारत से काफी मिलता जुलता है ।

(2) दुद्धी तहसील की भूवैज्ञानिक संरचना

भारतीय स्तर शैलक्रम के अनुसार इस क्षेत्र की शैलें प्रीकैम्ब्रियन एवं पुराकल्पीय हैं जिनमें प्रीकैम्ब्रियन शैलों का बाहुल्य स्पष्ट है विविध शैल वर्गो का क्रमबद्ध विवरण निम्नवत् है ।

1. प्रीकैम्ब्रियन शैल

दुद्धी तहसील में विगोपित (इक्स्पोज्ड) प्रीकैम्ब्रियन शैलें मणिभीय एवं बिजावर शैल वर्गों में वर्गीकृत की जा सकती हैं । मणिभीय शैलें म्योरपुर, बभनी व दुद्धी क्षेत्र (दुद्धी - विण्ढमगंज सार्वजनिक निर्माण मार्ग के दक्षिण में) तथा बिजावर शैलें सम्पूर्ण पिपरी क्षेत्र, अवशिष्ट दुद्धी क्षेत्र एवं अनपरा क्षेत्र के मार्गो में विगोपित है ।

DISTRICT SONBHADRA
GEOLOGY
N
S
0 4 8 KM
Gondwana system
SARAKARSTAGE
TALCHIR SERIES
Vindhyan system
KAIMUR SERIES- UPPER
SEMRI SERIES- LOWER
Cuddapa / system
BIJAWAR SERIES
ARCHAEAN GNEISSES & SCHISTS
JUNGEL SERIES
FIG 22

प्रीकैम्ब्रियन मणिभीय शैलों में अधिकांशतः नाइस तथा उनके साथ सम्बद्ध शैलें (जैसे मेटा - अवसादीय शैलें, मेटा अवसादीय एवं धारीय अंतरावेश) परतें (बेन्ड्स) क्वार्ट्स पिंक फेल्डस्पारएपिडोट शैल मालाएँ (रीफ्स) क्वार्ट्ज शिरा आदि हैं । बिजावर शैलों में मुख्यतः मृदास्मिक (पेलिटिक) एवं सिकताश्मिक (सेमिटिक) शैलों के स्थानान्तरित समरूप मेटामार्फिक इक्विवेलेन्ट्स जैसे कि गुलाबी भूरी हरीतिमा युक्त स्लेट, फाइलाइट, क्वार्ट्जाइट तथा अल्पमात्रा में क्षारीय शैलों के (बेसिक राक्स) स्थानान्तरित समरूप हैं ।

मणिभीय एवं बिजावर शैलों का सम्पर्क भ्रंशित है । यह तथ्य उत्तर में डुमरा से प्रारम्भ होकर रनटोला, बैरपान से होते हुए औड़ी तक परिलक्षित सिलीशियम ब्रेशिआ कूट (रिज) की उपस्थिति से सत्यापित होता है । परन्तु क्षेत्र में मणिभीय एवं बिजावर शैलों का क्षैतिज स्थानान्तरण द्रृष्टिगत नहीं होता । यह सम्भवतः भ्रंश की प्रक्रिया स्ट्राइक के अनुरूप होने के कारण हो सकता है ।

दुद्धी तहसील के दक्षिण एवं दक्षिण पूर्व हिस्सों में कई स्थानों पर मेटा सेडिमेन्टरी/ इग्नीयस इनक्लेव्स/बैन्ड की परतें अन्तरावेश नाईसों के बीच दिखाई पड़ते हैं । इस वर्ग में क्वार्ट्जाइट, मणिभीय चूना पत्थर, केल्कसिलिकेट ग्रेन्यूलाइट, हार्नब्लेंड, शिस्ट, एम्फीबोलाइट आदि अन्तर्भूत हैं । इसके अतिरिक्त बिजावर शैल समूह के मुख्य फाइलाइट प्रक्षेत्र और नाइसों के बीच एक और प्रक्षेत्र है, जिसमें स्थूलकणीय बायोटाइट शिस्ट तथा फाइलाइट परतें है ।

2. **नाइस** - बिण्ढमगंज के उत्तर से दक्षिण में मध्य प्रदेश की सीमा तक के क्षेत्र में नाइस शैलों का बाहुल्य है । सामान्यतया उपलब्ध नाइसें निम्न हैं

(क) गुलाबी बायोटाइट नाइस

(ख) सूक्ष्म कणीय बायोटाइट नाइस

(ग) पॉर्फाइराइटीक बायोटाइट नाइस

(घ) परतदार नाइस तथा मिश्राश्म

(ड) चाक्षुष नाइस

खाटाबरन खण्ड मुख्य रूप से गुलाबी बायोटाइट नाइसों पर अवस्थित है जो कि स्थूल कणीय एवं भुरभुरी सी है । यह मुख्यतया क्वार्ट्ज गुलाबीफेल्डस्पार, बायोटाइट नाइसे रासपहरी,

DISTRICT SONBHADRA
RELIEF
N
S
ELEVATION
2000
1750
1500
1250
750
500
FIG 2 3
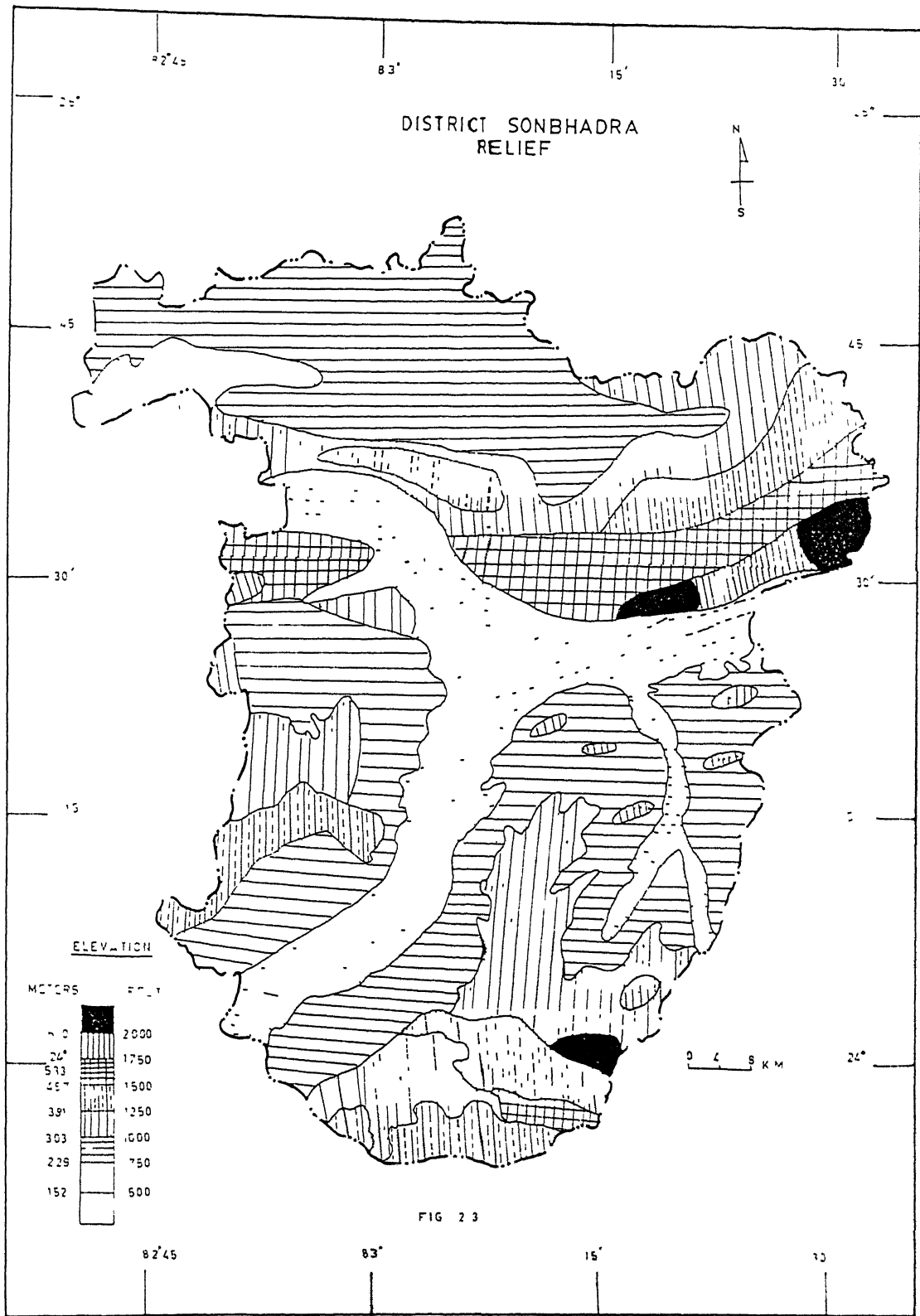
परनी तथा गड़िया और बराइटॉड़ के बीच में देखी जा सकती है । पॉर्फाराइट, बायोटाइट नाइस विण्ढमगंज, दुद्धी के अधिकतर भागों में अवस्थित है । यह मुख्यतया गुलाबी एवं सफेद फेल्सपार, क्वार्ट्ज बायोटाइट से बनी हैं । परतदार नाइसें एवं मैनिटाइटस जो कि हार्नब्लेड शिस्ट तथा बायोटाइ नाइसों के एकान्तरित परतों के रूप में होने के कारण बनें हैं, करहिया और सिसवा के बीच तथा आरंगपानी, बरवाटोला, जामपानी, विश्रामपुर, बोमपकरी, हुमेलदोहर और सागोबाँध खण्डों में दिखायी देते हैं । नाइसें बहुत ही सूक्ष्म कणीय तथा अति केल्डस्पैशिक (जिनमें सफेद, गुलाबी फेल्डस्पार हैं) शैलें हैं । फेल्डस्पार सामान्यतया फेल्डस्पार के पुंजित समूहों (जिनमें सामान्यतया माइक्रोक्लाइन और सफेद फेल्डस्पार दिखाई पड़ते हैं) से निर्मित है । यह नाइसें झिली, महुआ, नवाटोला तथा चेरी और गौसकाटा के बीच में दिखायी देती हैं ।

3. बिजावर शैल वर्ग - बिजावर शैलवर्ग की शैलें दक्षिण में दुद्धी वर्ग की मणिभीय शैलों एवं उत्तर में कजरहट के निम्न विन्ध्य (लोअर विन्ध्यन)जो कि अगोरी विजयगढ़ वर्नो में है । शैल वर्गो के बीच के मध्य प्रक्षेत्र में स्थित है । इस वर्ग का मणिभीय शैलों के साथ सम्पर्क भ्रंशित तथा निम्न विन्ध्य शैलों के साथ सम्पर्क भ्रंशित अथवा विसंगत है । बिजावर वर्ग की मोटाई 24 से 40 कि0 मी0 है जिसका 5-12 कि0 मी0 दुद्धी तहसील में पड़ता है। बिजावर वर्ग में निम्नलिखित क्रम परिलक्षित होता है ।

(क) राख के रंग की एवं हल्के रंग की क्लोराइट सेरिसाइट फाइलाइट तथा अभ्रकीय बालू पत्थर की वीप्ताकार संस्तर,

(ख) ब्रेक्शिएटेड क्वार्ट्जाइट, हीमेटाइट - क्वार्ट्जाइट, पतली वीप्ताकार (लेन्टिकुलर), स्तरकीय (लैमिनेटेड), फाइलाइट तथा बालूकीय कार्बोनेट तथा

(ग) डोलोमाइट, मणिभीय चूना पत्थर और सिडेराइट वाले कार्बोनेट ।

इस सम्पूर्ण वर्गक्रम के साथ हल्के रंग के क्षारीय शैलें अल्प मात्रा में पाये जाते हैं तथा इस वर्ग की शैलों के पर्णन (फीलिएशन) के सदिश (पैरलल) एवं पर्णन को काटती हुई क्वार्ट्ज कैलसाइट की पतली परतें पायी जाती है । ऊपर दिए हुए सम्पूर्ण क्रम में संस्तरों का एक दूसरे से मिल जाना एक सामान्य दृश्य है ।

DISTRICT SONBHADRA
LITHOLOGY
N
S
0 4 8
KM
SAND STONE WITH SHALE
SHALE WITH SAND STONE
SLATE AND LIME STONE
SLATE AND PHYLLITE WITH SCHIST AND QUARTZITE
GRANITE
SCHIST
GNEISS
FIG 2 4
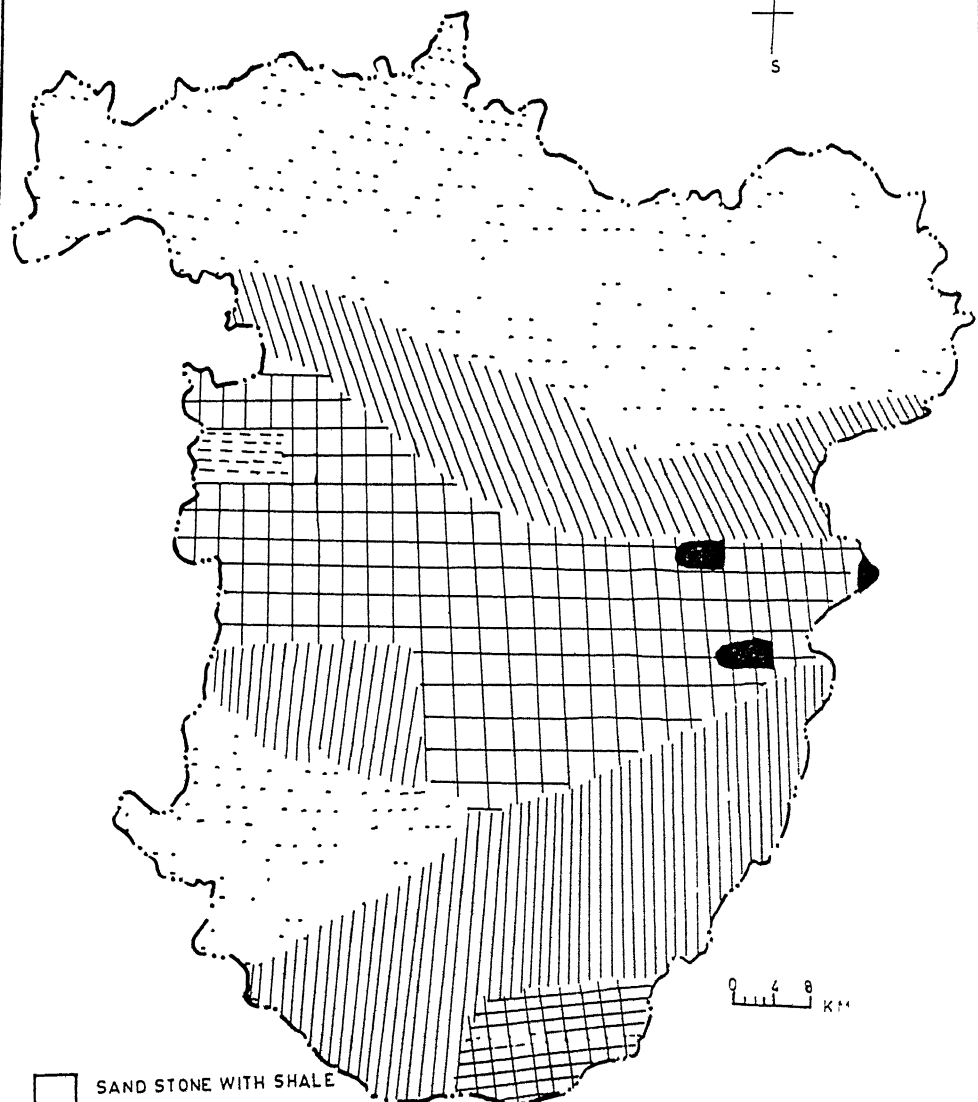
4. फाइलाइट - यह सामान्यतया राख के रंगवाली, सूक्ष्म कणीय तथा हल्के संस्तरवाली सेरिसाइट एवं क्लोराइट फाइलाइट है । यह शैल सदैव ही अत्यधिक भाजित (क्लीण्ड) होती है । कभी-कभी भाजन और संस्तरीकरण में अन्तर करना कठिन होता है । कहीं - कहीं परतदार हीमेटाइट का केन्द्रीकरण भी पाया जाता है । पुनः स्फटित (रीक्रिस्टेलाइज्ड) क्वार्ट्जाइट के 5 मि0 मी0 से 2 से0 मी0 मोटाई वाले संस्तर एकान्तरित रूप से फाइलाइट से मिलते हैं । इसके अतिरिक्त स्थूल कणीय अभ्रकीय बालू पत्थर भी प्राप्त हैं । ये पत्थर फाइलाइट के साथ उनकी स्ट्राइक के अनुरूप सामान्य सूक्ष्म कणीय फाइलाइट्स में मिल जाते हैं ।

30 कि0 मी0 क्षेत्र जो कि $24^0 15'$ से $24^0 18'$ उत्तरी अक्षांश एवं $83^0 17'$ - $83^0 24'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य अवस्थित हैं, में उपस्थित फाइलाइट्स में एन्डाल्यूसाइट उपस्थित है । एण्डाल्यूसाइट पूर्ण विकसित त्रिपार्श्वीय मणियों (प्रिज्मैटिक क्रिस्टल्स) के रूप में पाया जाता है जो कि स्लेटी रंग के हैं तथा सामान्यतया लम्बाई में 1 से0 मी0 से 1.5 से0 मी0 तक के होते हैं । ये विशेषरूप से विण्ढमगंज के उत्तर - पूर्व में स्थित सुखड़ा नाले में, हरनाकछार के उत्तर पशिचम में एवं गड़िया के उत्तर - पूर्व में स्थित बिजुल झरिया नाले में दिखायी पड़ते हैं ।

5. क्वार्ट्जाइट - फाइलाइट क्रम के ऊपर निम्न क्वार्ट्जाइट उपलब्ध है ।

(क) बेक्शियेटेड क्वार्ट्जाइट

(ख) क्वार्ट्जाइट ब्रेक्शिया

(ग) बैण्डेड - हीमेटाइट - क्वार्ट्जाइट

इनमें से प्रथम दो लोहित या लोहा रहित हो सकते हैं । ये शेष सामान्यतया पुनःस्फटित हैं, हॉलाकि अवशिष्ट (रेलिक्ट) संस्तरीकरण भी कभी-कभी दिखायी देता है । संस्तरों की मोटाई 2 से0 मी0 से 15 से0 मी0 के बीच में है ।

6. डोलोमाइट/चूना पत्थर - डोलोमाइट/चूना पत्थर एवं पुनः स्फटित चूना पत्थर के छोटे- छोटे विगोपन (इक्पोजर्स) कहीं - कहीं दिखाई देते हैं । इनमें हथवानी - म्योरपुर सड़क के किनारे, मुर्धवा - 9 पर एवं सिधवा ग्राम के दक्षिण में विगोपित शैल उल्लेखनीय है।

7. **क्षारीय शैल** - ये मुख्तया हल्के या गहरे हरे रंग के सूक्ष्मकणीय कहीं - कहीं पर्णित शैल हैं । इनमें अल्प मात्रा में सल्फाइट, चालकोपायराइट, आरूतेनोपायराइट आदि खनिज कहीं - कहीं पाये जाते हैं । सामान्यतया परतों की मोटाई पाँच से पच्चीस मीटर तथा लम्बाई आधा से चार कि0 मी0 होती है ।

क्वार्ट्ज शिराएं एवं क्वार्ट्ज फेल्डस्पार शैल मालाएं (क्वार्ट्स बेन्ड एण्ड क्वार्ट्स फेल्डस्पैथिक रीफ्स) बिजावर एवं प्रीकैम्ब्रियन मणिभीय शैलों को काटती हुई क्वार्ट्ज शिराएँ इस क्षेत्र के अधिकतम हिस्सों में दिखाई देती है । ये सामान्यतया दुग्धवत् श्वेत (मिल्की ह्वाइट) तथा कभी - कभी धूमल एवं हल्की पीली (जहाँ क्वार्ट्ज के साथ आरसेजिक हो) रंग की अपखण्डित (फ्रेग्मेन्ट्री) या बेक्शिएटेड होती है । इनकी मोटाई कुछ मि0 मी0 से 3 मीटर तक तथा लम्बाई कुछ मीटर से 1/2 कि0 मी0 तक हो सकती है ।

गुलाबी फेल्डस्पार क्वार्ट्ज शैल मालाएँ अधिकतर रेखीय विगोपनों के (लिनीयर आउटक्राप) रूप में दिखाई देती हैं । ये विशेषतया लभरी, कुण्डाभाती, सोनवानी, पिपरी आदि क्षेत्रों में दृष्टिगत है । यह शैल सामान्यतया निम्नलिखित रूप में उपलब्ध है -

(क) 0.5 से 3.0 मी0 मोटी परतों के रूप में नाइसों एवं बिजावर मेटा अवसादीय शैल क्रम के पर्णभ के सदिश ।

(ख) अनेक कोणीय खण्डों के रूप में जो कि अपक्षरण के लिए अत्यधिक प्रतिरोधी है ।

क्षारीय नितुन्न शैलें (बेसिक इन्ट्रूसिव रॉक्स) साधारणतया नाइसों एवं बिजावर अनुक्रम में रालभित्ती (डाइक) एवं राल पट्ट (सिल) के रूप में मिलती है । क्षारीय शैलें मेटाडोलेराइट, माइक्रोग्रैबो, जोराइट, डोलेराइट आदि है । जोगिया पहाड़ में विगोपित ओलिबीन ग्रैबो शैल हरे रंग की मॉटल्ड दृष्टिगत होती है जिसमें अपक्षरण के बाद गड्ढे पड़ जाते हैं । ये शैल दुद्धी क्षेत्र में काफी अधिक मात्रा में पायी जाती है ।

8. **गोंडवाना अनुक्रम** - निम्न गोंडवाना वर्ग की तालचिर एवं बाराकर रचित (फार्मेशन) की शैल क्षेत्र के दक्षिण पश्चिम भाग में दृष्टिगत होती है जो उत्तर प्रदेश की

सीमा पर स्थित सिंगरौली कोयला क्षेत्र में उपस्थित शैल क्रम का प्रतिनिधित्व करती है । सिंगरौली क्षेत्र का लगभग 52 वर्ग कि0 मी0 क्षेत्र कोटा ग्राम के निकट अवस्थित है । सिंगरौली कोयला क्षेत्र में निम्नलिखित क्रम उपस्थित हैं ।

निम्न गोंडवाना वर्ग (क) तालचिर फार्मेशन
(ख) बाराकर फार्मेशन

(क) तालचिर फार्मेशन - यह पहाड़ी क्षेत्र की तलहटियों एवं समतल मैदानी क्षेत्र में अवस्थित है । तालचिर - बाराकर का मिलन - स्थल खड़ी काट में नहीं दिखाई देता है । औड़ी ($24^0 12' 15''$30 अक्षांश एवं 82^0 $46'$ $30''$ पूर्वी देशान्तर) के दक्षिण पश्चिम में देवहर नदी में यह स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं । इनमें कैल्केरियस बालू - पत्थर तथा मृदा पत्थर तथा गादीय शैल सम्मिलित हैं । इस क्षेत्र के कुछ कुओं की काट में महीन दानेदार क्लास्टिक चूना पत्थर का भी पता लगा है । कैल्साइट चिपकाने वाले पदार्थ के रूप में है एवं इसके अतिरिक्त गारनेट, अभ्रक, एपीडोट तथा स्टाइल आदि हैं ।

(ख) बाराकर फार्मेशन - बाराकर संरचनाओं के इस सम्पूर्ण समूह का 95% बालू पत्थर है जबकि शेष भाग में बर्फ और ग्रेशेल्स, मृत्तिका बैण्ड तथा कोयला के स्तर हैं । बालू पत्थर जो कि मध्यम से मोटे दानेदार तथा कहीं - कहीं पेब्ली व ग्रिटी भी हैं, इसमें घुसे हुए पेबुल्स ब्यास में 1-5 से0 मी0 तक है । बालू पत्थर सफेद रंग के हैं , लेकिन उनमें सामान्यतया एक हल्की गुलाबी झलक दिखाई देती है, जो कि पोटाश फेल्सपार के अधिक अनुपात में होने के कारण है । किसी - किसी स्थान पर यह बालू पत्थर फेरुजिनस भी है । अपक्षरण के समय दानेदार फेरुजिनस कांक्रीशंस छोड़ने की इसकी प्रकृति है । कोटा के उत्तर में छोड़ी हुई कोयला खान के पास उपलब्ध बालू पत्थर अत्यधिक फेरुजिनस है और हीमेटाइट अपक्षरित सतह पर मोटेल्ड रूप में दिखाई देता है । इस बालू पत्थर में बांसी के पास कोल सीम से निकट रूप में सम्बद्ध, सिडेराइट के सेन्ट्रीजन्स भी पाये जाते हैं । यह सम्भवतः कोयले में संमिश्रित पाइराइट के भंग होने के कारण बनते हैं । फेल्सपैथीय बालू पत्थर, मृत्तिका से सम्पर्क स्थल पर बदल कर केओलिनाइट बन जाता है । बांसी क्षेत्र में कार्बोनेशियस शैल का एक महत्वपूर्ण एक्सपोजर दिखाई देता है, इसमें कुछ पौधों के जीवाश्म भी प्राप्त हुए हैं । इन शैलों में एक लगातार लेंस के रूप में एक पतला कोयले का स्तर भी प्राप्त हुआ है ।

(3) राबर्ट्सगंज तहसील का भौतिक स्वरूप

इस भूखण्ड के भौतिक स्वरूप में बहुत अधिक विषमता दृष्टिगोचर होती है, उच्चावच्च में भी विषमता है । उत्तरी भाग में बेलन बेसिन समप्राय अवस्था में है । अत. यहाँ पर निरपेक्ष उच्चावच्च तथा आपेक्षिक उच्चावच्च दोनों अत्यन्त कम हैं । [5] घोरावल से वैनी तक लगभग 60 कि0 मी0 लम्बी तथा 15 कि0 मी0 चौड़ी समतल पेटी में अच्छी कृषि की जाती है । सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्य हेतु यहीं सबसे बड़ा 'कृषि क्षेत्र' है । इस पेटी के दक्षिण में तथा सोन नदी घाटी से संलग्न पूर्व से पश्चिम दिशा में कैमूर पर्वतमाला फैली हुई है । कैमूर पर्वतमाला तहसील के सम्पूर्ण मध्यवर्ती व पूर्वी क्षेत्र में फैली हुई है । इसकी चोटी का भाग प्राय समतल है । कैमूर के कगार से दक्षिण में सोन नदी तक कुछ छोटी - छोटी पहाड़ियाँ हैं जो प्राय· पूर्व - पश्चिम दिशा में अधिस्थापित हैं और कटी हुई हैं । कैमूर श्रेणी की सामान्य ऊँचाई 200 से 450 मीटर तक है । सोन नदी के बाएं तट पर, कैमूर का दक्षिणी ढाल काफी तीव्र है । इसमें बड़ी नदियों का अभाव है । कैमूर के दक्षिणी ढाल से वर्षा के दिनों में तीव्र वेग से बहने वाले नाले सोन नदी में मिलते हैं । तीव्र अपरदन के कारण दक्षिणी ढाल लगभग खड़ा हो गया है, जो देखने में दीवार जैसा लगता है । सोन के तटीय भागों में जलोढ़ मृदा पायी जाती है, जिसमें अच्छी खेती होती है । विकासखण्ड घोरावल के दक्षिणी व पूर्वी भाग में अनेक पहाड़ियाँ हैं जो 150 - 400 मीटर तक ऊँची हैं ।

सोन नदी का दक्षिणी भाग अनेक छोटे - छोटे नालों से कटा - फटा है , ये नाले सोन नदी में सीधे या सहायक नदियों के माध्यम से मिल जाते हैं । छोटे - छोटे नालों में बन्धे बनाकर भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए समतल बनाया जाता है । इस प्रकार चोपन क्षेत्र के वन पहाड़ी, ऊँची - नीची भूमि और नालों या गहरी घाटियों के किनारों में ही अवस्थित हैं । कैमूर पर्वत माला के भू-खण्ड में स्थित भाग का समुद्र की सतह से अधिकतम ऊँचाई 628.5 मीटर गुरूर - गड़ाव खण्डों की सीमा के निकट तरिया क्षेत्र में है । इस क्षेत्र में सोन नदी के तल की समुद्र की सतह से ऊँचाई लगभग 153.0 मीटर से 173.4 मीटर तक है ।

(4) राबर्ट्सगंज तहसील की भू-वैज्ञानिक संरचना

कैमूर पर्वत माला के उत्तरी भाग बेलन - बेसिन में मुख्यतः महीन तथा मध्यम कणों वाले क्वार्ट्ज युक्त बालुका प्रस्तर पाये जाते हैं, जो कि ऊपरी विन्ध्यन के 'कैमूर-क्रम'

के बालुका प्रस्तर अवस्था से सम्बन्ध रखते हैं । विकासखण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज व चतरा के मध्यवर्ती भाग में मुख्य खनिज क्वार्ट्ज हैं, जो गोल कणों के रूप में मिलता है । कुछ स्थानों पर अभ्रक की परतें भी दृष्टिगोचर होती हैं । शैल संस्तरों का सामान्य नतिलम्ब (स्ट्राइक) पूर्व पश्चिम है तथा नति (डिप) उत्तर की ओर है । निचली सोनघाटी में आधारभूत चट्टानें आर्कियन ग्रेनाइट तथा नीस हैं जिनके ऊपर असम विन्यास (अनकन्फारमिटी) के बाद बिजावर क्रम की ग्रेनाइट तथा नीस चट्टानें पायी जाती हैं जिनके ऊपर पुनः असम विन्यास पाया जाता है । इस असम विन्यास के ऊपर निचले विन्ध्यन क्रम की सेमरी श्रेणी की चट्टानें पायी जाती हैं । [7]

कैमूर उच्च स्थली में जो गंगा नदी के दक्षिण में कैमूर पर्वत माला की चोटी तक व्याप्त है, शैलों का विन्यास व स्वरूप मुख्यतया बालूमय या रेतीले (आरबेसियस) प्रकार की है । मुख्य कैमूर पर्वतमाला के शैल, जिसकी दक्षिणी ढाल इसी भूखण्ड में है, बालूमय प्रकार के ही हैं । इसमें क्वार्ट्जाइट सैण्डस्टोन प्रमुख हैं । मुख्य कैमूर पर्वत श्रेणी के दक्षिण में सैण्डस्टोन के अतिरिक्त शेल तथा चूर्णिय (कैल्केरियस) प्रकार के भी शैल पाए जाते हैं । विन्ध्यन भू-भाग की यह श्रृंखला सोननदी के दक्षिण में कजरहट - डाला - ओबरा तक विद्यमान है । यहाँ से दक्षिण की ओर बिजावर भू - भाग का शैल वर्ग प्रारम्भ होता है जो मुख्यतः मृण्मय (आर्जीलेसिअस) प्रकार का है । इस भू - खण्ड में पाए जाने वाले मुख्य प्रकार के शैल निम्नलिखित है ।

विन्ध्य सिस्टम

विन्ध्यन महासमूह	कैमूर समूह	- धन्धरौल क्वार्ट्जाइट
		- स्कार्प सैंड स्टोन
		- विजयगढ़ शैल
		- अपर क्वार्ट्जाइट
		-ससनई ब्रेसिया
		-सिलिसिफाईड शैल
		- लोवर क्वार्ट्जाइट
	सेमरी समूह (लोअर विन्ध्यन)	- रोहतास लाईम स्टोन
		- ग्लोकेनाइटिक शेल (वेड) या सैण्डस्टोन
		- फौन लाइम स्टोन
		- कजरहट लाइम स्टोन

विसंगतियां (अन-कॅनफॉरमिटी)

बिजावर समूह

- बीनक्वार्ट्ज
- फैरूजिनस सैण्डस्टोन व लाइमस्टोन
- शैलयुक्त बेन्डेड हेमाटाइट जसपार
- बेसिपेटेड क्वार्ट्जाइट
- काल्क क्लोराइट शिस्ट
- रेड शेल
- परसोई फिलाइट व शेल

1. **कैमूर समूह (कैमूर स्कार्प)** - कैमूर स्कार्प इस भूखण्ड के मध्य व पूर्वी भाग में है, यहाँ से सोन नदी तक अनेक अवसादी शैल विगोपित है । सोन नदी के दक्षिण में प्रमुख शैल कांगलोमरेट सैण्डस्टोन पोरसेलेनाइट तथा लाइमस्टोन है । सोन नदी से उत्तर की ओर जाने में सबसे प्रमुख शैल रचना रोहतास लाइमस्टोन की है । इसका रंग साधारण तथा 'धूसर ग्रे' है । यह प्रथकम्भाजी (फ्लेगी) तथा पतले तलों से एकान्तरित (अल्टरनेट) है । आधार (दक्षिण में) की ओर सिलीसियस व शैलयुक्त नाइसस्टोन पाया जाता है परन्तु उत्तर की ओर अच्छी प्रकार के लाइमस्टोन की मोटी पर्त है । यह गहरे भूरे रंग की है तथा इसमें शैल का अन्तर्वेशन (इन्टरकैलेशन) बहुत कम है । यहीं लाइमस्टोन चुर्क फैक्ट्री में सीमेण्ट बनाने के प्रयोग में लाया जाता है ।

रोहतास लाइमस्टोन के उत्तर में क्वार्ट्जाइट प्रकार की शैल श्रृंखला है । आधार (दक्षिण) की ओर पृथक - पृथक कगार (स्कार्प) बनाती हुई क्वार्ट्जाइट की दो पट्टियाँ दृष्टिगोचर होती हैं । निचले कगार की मोटाई लगभग 25 मी0 है । यह सपुन्जिव (मैसिव), बालूकणीय (ग्रिटी) तथा श्वेत धूसर रंग का है । इसका ऊपरी भाग शैल युक्त है । निचले और क्वार्ट्जाइट के बीच लगभग 15 मी0 मोटी, सैकजायित (सिलिसिफाईड) शैल, प्रकार की शैलों की पर्त है। ऊपरी कगार की मोटाई लगभग 30 मी0 है । यह महीन कणयुक्त तथा सफेद रंग की है ।

क्वार्ट्जाइट श्रृंखला के उत्तर में विजयगढ़ शैल प्रकार की श्रृंखला में, शैल भली भांति विगोपित (एक्सपोज) नहीं हुए हैं । इसमें पाए जाने वाले प्रमुख प्रकार के शैल प्रागारमय (कार्बोनिसियस) काला, शैल सीदमय (सिल्टी) सैण्डस्टोन, माइकायुक्त सैण्डस्टोन तथा लौह पत्थर है । इस श्रृंखला की मोटाई लगभग 80 मीटर है ।

विजयगढ़ शैल के उत्तर में महीन कणयुक्त तथा पृथकम्भाजी (फ्लेगी) सैन्डस्टोन हरे व भूरे रंग की माइकायुक्त, बालूमय शैल प्रकार के शैल हैं । इनके ऊपर महीन कणयुक्त हरे रंग के सैष्डस्टोन की शैले हैं तथा इसके उपरान्त भूरे रंग के सैण्डस्टोन तथा हल्के बैंगनी रंग के बालूमय (रेतीले) प्रकार की शैलें हैं । यहीं शैलें मुख्य कैमूर पर्वतमाला को बनाती हैं। इनकी मोटाई लगभग 200 मी0 है ।

कैमूर पर्वतमाला की चोटी की ओर (उत्तर में) बढ़ने पर शैलों का स्वरूप अधिक शुद्ध रूप से क्वार्ट्जाइट प्रकार हो जाता है । इसका रंग सफेद है तथा इसमें बैंगनी व लाल कण (धब्बे) दिखलाई पड़ते हैं । इन्हें धन्धरौल क्वार्ट्जाइट कहा जाता है ।

2. **सेमरी समूह** - सोन नदी के दक्षिणी भाग में लगभग कजरहट - डाला - ओबरा तक आदि विन्ध्य की सेमरी माला की शैलें पाई जाती हैं । भू-खण्ड के पश्चिमी भाग में नेवाड़ी तथा बरगवां के निकट सोन नदी के दक्षिण किनारे में ग्लोकेनाइटिक सैण्डस्टोन विद्यमान है । नेवाड़ी गाँव के निकट ओलिव शेल, विगोपित हैं । रिहन्द नदी के पूर्व में तथा अरंगी गाँव की दक्षिणवर्ती पहाड़ियां कजरहट लाइमस्टोन तथा शेल युक्त हैं । बिल्ली -बाड़ी तथा कजरहट क्षेत्रों में लाईम स्टोन सीमेण्ट तथा लौह कारखानों के लिए कच्चे माल के रूप में खनन किया जाता है । जुगैल (रिहन्द नदी के पश्चिम में) के पास एक विशिष्ट प्रकार की शेल श्रृंखला है, जिसको जुगैल सीरीज कहते हैं और पश्चिम में सीधी जिले (म0प्र0) की ओर चली जाती है । इसमें कांग्लोमरेट व सैण्डस्टोन प्रकार की शैले पाई जाती है । कनहर नदी के पूर्व में झिरगाडाण्डी के पास कुछ क्षेत्र में ग्रेनाइट प्रकार की शैलें भी विगोपित (एक्सपोज) हुई हैं ।

3. **बिजावर समूह** - सोन नदी के दक्षिण में स्थित भू-खण्ड के अधिकांश भाग में बिजावर समूह की शैलें पाई जाती हैं । बिजावर माला उत्तर में सेमरी माला (आदि विन्ध्य)

से बरगवां व द्वारी के मध्य स्थित एक विर्भंगित कटिबन्ध (फाल्ट जोन) से अलग होती है। इस कटिबन्ध में मुख्यतया ब्रेसिपेटेड व फेरूजिनस प्रकार की शैल विद्यमान है ।

रिहन्द नदी के पश्चिम में परसोई - गरदा (दक्षिण सीमा) तथा बिजौरा - भरहरी (उत्तरी सीमा) के मध्य में स्थित भू-भाग में बिजवाड़ माला के शेल प्रकार जैसे रेड शेल, ब्रेसिएटेड क्वार्ट्जाइट, काल्क क्लोराईट, शिस्ट बैन्डेड हेमाटाइट जसपार फैरूजिनस सैण्डस्टोन व लाइमस्टोन पाये जाते हैं । इस श्रृंखला के अधिक कठोर प्रकार के शैल (क्वार्ट्जाइट, बैन्डेड हेमाटाईट, क्वार्ट्जाइट जसपार, सैण्डस्टोन) प्रायः पूर्व - पश्चिम दिशा में अधिस्थापित पहाड़ियों में, जिनकी समुद्र सतह से ऊँचाई लगभग 300 से 480 मीटर तक है, पाये जाते हैं । इन पहाड़ियों की घाटी में बिजवाड़माला के शेल व सिस्टोज प्रकार के शैल विद्यमान हैं ।

(स) अपवाह प्रणाली

अध्ययन क्षेत्र की प्रमुख नदी सोन है । सोन के अतिरिक्त कर्मनाशा, बेलन, घाघर, गोटन, बिजुल, रिहन्द तथा कनहर आदि नदियां हैं । सोनपार की प्रवाह प्रणाली दक्षिण से उत्तर की तरफ है । सोन नदी मध्य प्रदेश के अमरकंटक से निकलकर जनपद सोनभद्र के विकासखण्ड चोपन की उत्तरी सीमा बनाती हुई, पूर्व दिशा की ओर प्रवाहित होती हुई पटना (बिहार) के पास गंगा नदी में मिल जाती है । सोन नदी का उत्तरी ढाल काफी तीव्र है । घाघर के अतिरिक्त कोई प्रमुख नदी उत्तर दिशा से आकर नहीं मिलती है । उत्तरी ढाल से आने वाले अधिकांशतः बरसाती नाले हैं, जो प्रपात का रूप भी धारण कर लेते हैं । सोन के दक्षिण से आकर मिलने वाली नदियों में विजुल, रिहन्द तथा कनहर है । सोन के दक्षिण में आयताकार प्रवाह - प्रणाली दृष्टिगत होता है । कनहर व बिजुल नदियां ग्रीष्म ऋतु में लगभग जल रहित हो जाती है। बिजुल की सहायक नदी गोटन है । रिहन्द व कनहर की प्रमुख सहायक नदी पॉगन, थेया, बीछी तथा अझीर हैं । रिहन्द के ऊपरी भाग में रिहन्द जलाशय के निर्माण तथा पिपरी व ओबरा में जलविद्युत गृह निर्माण से , प्रवाह प्रणाली नियन्त्रित हो गयी हैं । इन नदियों को तरूणावस्था में देखने से स्पष्ट हो जाता है कि इनका प्रतिस्थापन अत्यन्त प्राचीन संरचना पर हाल ही में हुआ है । सोन तथा इसकी सहायक नदियां भौतिक बाधाओं को काटकर प्रवाहित होती है जिससे स्पष्ट होता है कि निचली संरचना पर उनका अध्यारोपण हो गया है ।

सोन नदी के उत्तर में बेलन, कर्मनाशा व घाघर तीन प्रमुख नदियां हैं । घाघर नदी पर विकासखण्ड चतरा में धंधरौल जलाशय का निर्माण किया गया है । यह नदी दक्षिण

DISTRICT SONBHADRA
DRAINAGE SYSTEM
N
S
BELAN RIVER
Karamnasan
GHAGHARA RIVER
Dhandharaul RES.
SILHAT
NAGAWA
SON RIVER
RIHAND RIVER
KANHAR RIVER
THEMA RIVER
Pant Sagar
Reservair
0 4 8
KM
PRIMARY WATER SHED
SECONDARY WATER SHED
TERTIARY WATER SHED
RIVERS
DAMS BUNDHIES AND RESERVOIRS
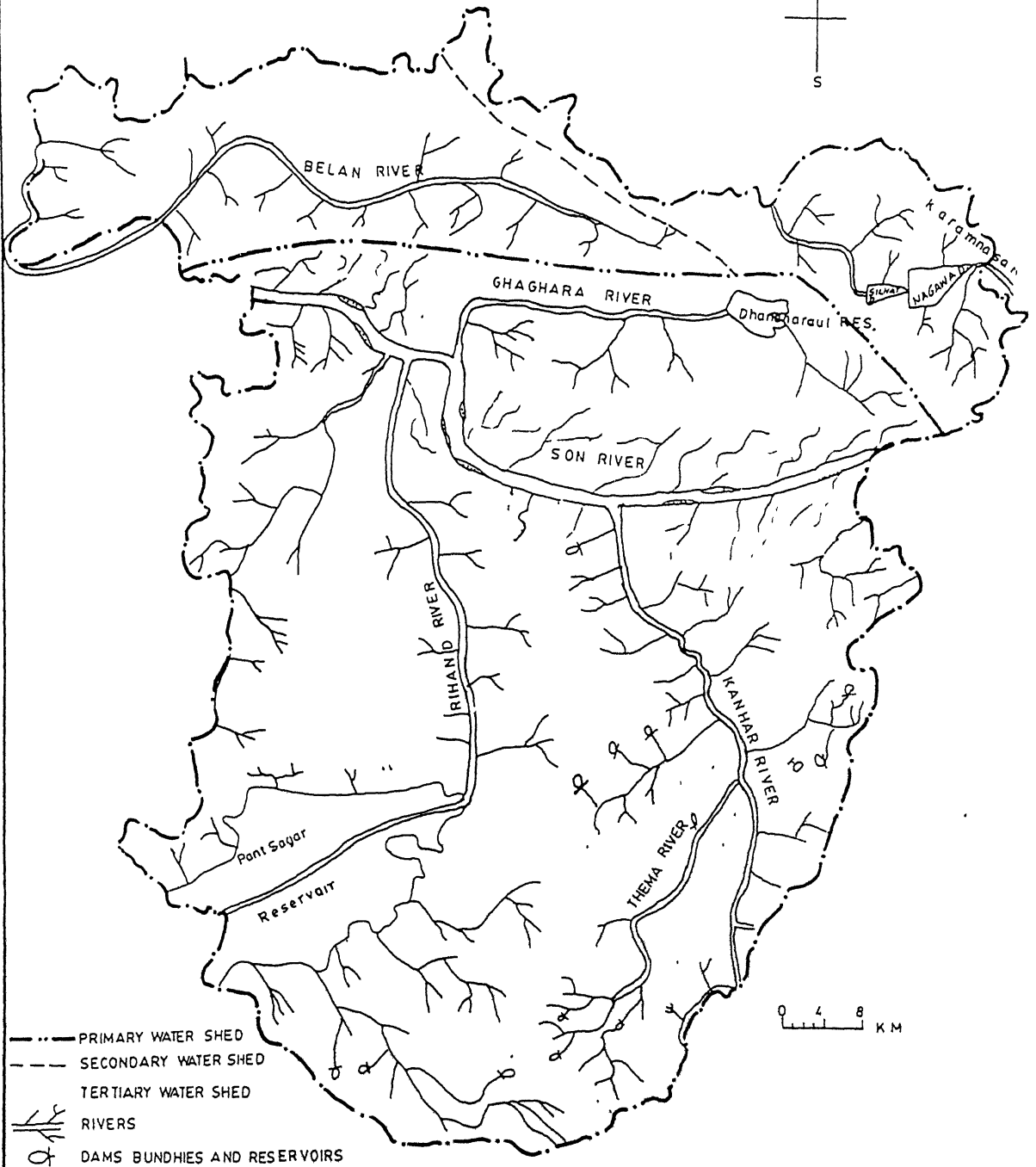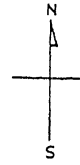
FIG. 2 5

दिशा में प्रवाहित होती हुई सोन नदी में मिलती है । कर्मनाशा नदी शाहाबाद, रोहतास से प्रवाहित होती हुई जनपद सोनभद्र के विकास खण्ड नगवां में प्रवेश करती है, जो स्वय गंगा नदी की सहायक नदी है । कर्मनाशा पर 1918 में सिलहट तथा 1948 में नगवां बांध का निर्माण किया गया । कर्मनाशा में पहाड़ी क्षेत्र से निकलने वाले अनेक नाले आकर मिलते हैं । बेलन नदी, विकास खण्ड चतरा के करद - ऐलाई गाँव से निकलकर विकास खण्ड राबर्ट्सगंज व घोरावल से होकर मिर्जापुर, रीवा तथा इलाहाबाद जनपद में प्रवाहित होती हुई टोंस नदी में, जो स्वयं गंगा नदी की सहायक है, मिल जाती है । बेलन प्रवाह बेसिन अण्डाकार रूप में है । बेलन तथा उसकी सहायक नदियों ने आयताकार प्रवाह - क्रम का निर्माण किया है ।[8]

(द) जलवायु

जनपद सोनभद्र की जलवायु उत्तर प्रदेश के उत्तरी और पश्चिमी जनपदों से सर्वथा भिन्न तथा मध्य प्रदेश के अधिक समान है । इसकी मुख्य विशेषता दीर्घ और प्रचण्ड ग्रीष्म, साधारण जलवृष्टि और अल्पकालिक एवं मृदु शिशिर है । ग्रीष्म ऋतु सामान्यत· मध्य मार्च से जून के अन्त तक रहती है, जब प्रायः मानसूनी वर्षा प्रारम्भ हो जाती है । अप्रैल से भीषण गर्मी प्रारम्भ हो जाती और 'लू' चलने लगती है । धूल भरी आँधी का प्रकोप सामान्यतया कम रहता है । ग्रीष्म ऋतु में 40^0 सेन्टीग्रेट तापमान सामान्य तौर पर रहता है किन्तु कभी-कभी तापमान 46^0 सेन्टीग्रेट तक पहुँच जाता है । यद्यपि यहाँ ग्रीष्म ऋतु में दिन का अधिकतम तापमान राज्य के अन्य स्थानों की तुलना में सबसे अधिक नहीं है तो भी ऐसा समझा जाता है कि यहाँ दिन के समय बेचैनी और भीषण गर्मी का प्रकोप अन्य स्थानों से कहीं अधिक है । इसके मुख्य कारण वायुमण्डल की अधिक स्वच्छता, पारदर्शिता, नग्न शैलों द्वारा सूर्य के किरणों का परावर्तन तथा भयंकर 'लू' समझे जाते हैं । ताप विद्युत केन्द्रों व उसके आसपास के क्षेत्रों में, जनपद के अन्य भागों की अपेक्षा अधिक तापमान पाया जाता है । दिन की अपेक्षा रातें कम कष्टप्रद होती हैं ।

यहाँ शीत ऋतु अल्पकालिक होती है । यह लगभग मध्य नवम्बर से फरवरी के अन्त तक रहती है । कठोर जाड़े की अवधि प्राय· नगण्य होती है । तुषारापात साधारण और कम होता है और प्रायः घाटियों एवं निचली तलहटियों तक ही सीमित रहता है । प्रात·काल सोन व रिहन्द नदी तथा धन्धरौल, नगवा व सिलहट जलाशय के तटवर्ती भागों में प्रायः कुहरा छा जाता है । सामान्यतया ग्रीष्म तथा शीतकाल स्वास्थ्यवर्धक है ।

NORMAL RAINFALL OF ROBERTSGANJ AND DUDHI

RAINFALL IN mm

400
300
200
100
0

JAN FEB MAR APR MAY JUN JUL AUG SEP OCT NOV DEC

MONTHS

ROBERTSGANJ DUDHI
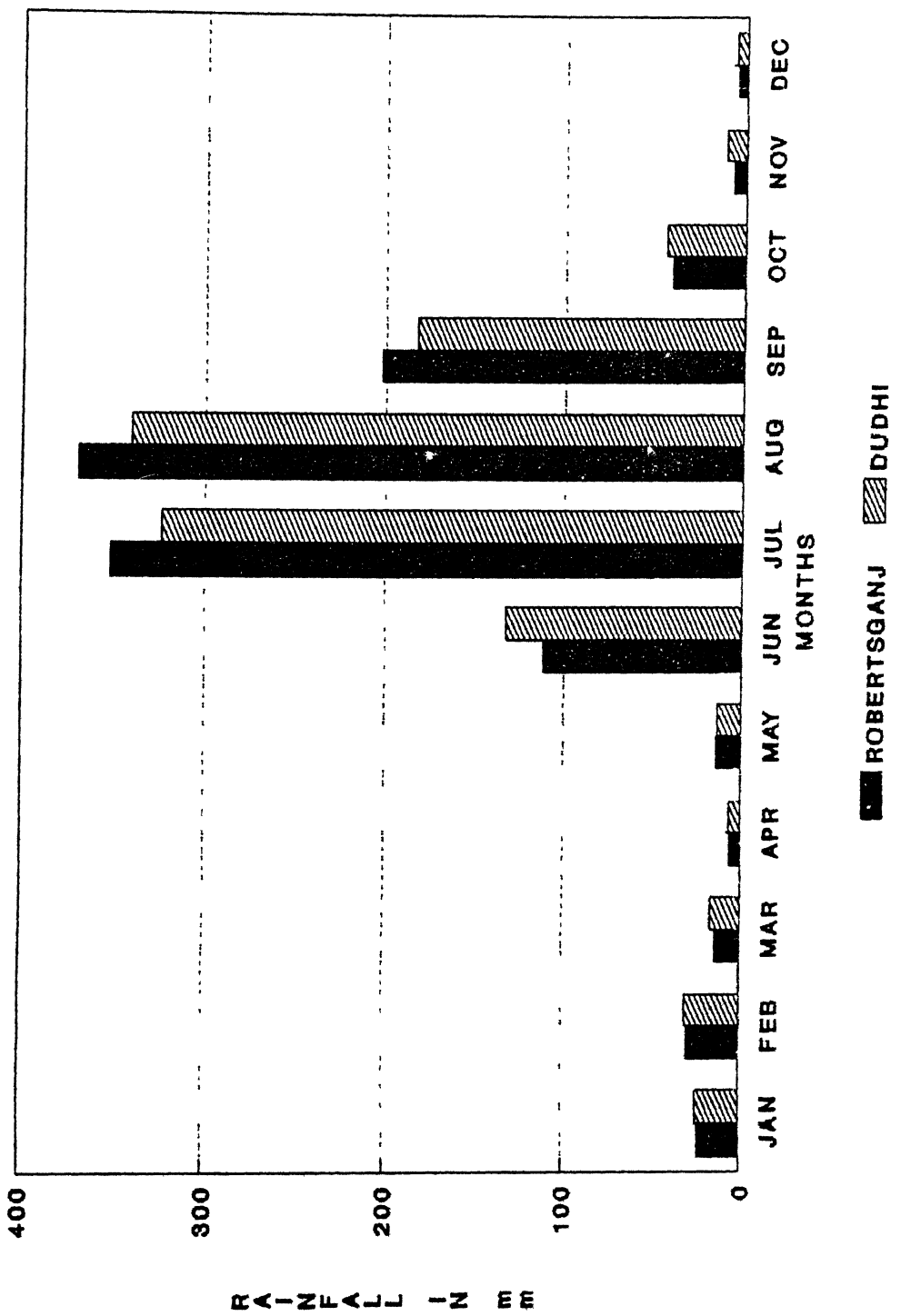
Fig 2.6

वर्षा जून के अन्त या जुलाई से प्रारम्भ होती है । अधिकतम वृष्टि जुलाई, अगस्त एवं सितम्बर में होती है । वृष्टि अक्टूबर के मध्य तक होती है । शीतकालीन जल वृष्टि प्राय· जनवरी और फरवरी में होती है । यहाँ प्रदेश के अन्य भागों की अपेक्षा शीतकालीन - वृष्टि अधिक सुनिश्चित है । कुछ वर्षों में शीतकालीन जल वृष्टि लगभग शून्य हो जाती है और साथ ही मानसून वृष्टि भी लगभग नगण्य होती है । ऐसी असामान्य परिस्थिति में क्षेत्र सूखा ग्रस्त हो जाता है । यहाँ बंगाल की खाड़ी एवं अरब सागर दोनों तरफ से आने वाली मानसून हवाओं से वर्षा होती है । जनपद सोनभद्र की औसत वार्षिक वर्षा 115 से0 मी0 है । 90% से अधिक वर्षा वर्ष के चार माह (जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर) में हो जाती है । 50 वर्षों के वर्षा के वार्षिक औसत आंकड़ों का प्रदर्शन तालिका 2.2 में किया गया है । जिसके देखने से स्पष्ट होता है कि राबर्ट्सगंज में औसत वार्षिक वर्षा 117.63 से0 मी0 तथा दुद्धी में 113.37 से0 मी0 होती है इन दोनों तहसीलों के वार्षिक वर्षा में लगभग 5 से0 मी0 का अन्तर है । इससे स्पष्ट होता है कि वर्षा सभी भागों में एक समान होती है । एक दिन में यदि 2.5 मि0 मी0 वर्षा होती है, तो उसे वर्षा का दिन मानकर 50 वर्षों के वर्षा के दिन का प्रदर्शन भी तालिका 2.2 में किया गया है । तालिका 2.2 में वर्षा के दिन के प्रदर्शन से यह स्पष्ट है कि जनपद सोनभद्र में लगभग 60-61 दिन वर्षा के होते हैं । मानसून के समय आर्द्रता अधिक रहती है, जो 70% से अधिक हो जाती है और ग्रीष्म ऋतु में विशेषकर दोपहर में सापेक्षिक आर्द्रता बहुत कम हो जाती है ।[9]

तालिका 2.2

वर्षा

	राबर्ट्सगंज		**दुद्धी**	
माह	औसत वर्षा (मि0मी0 में)	वर्षा का औसत दिन(प्रतिदिन 2.5 मि0मी0 या इससे अधिक)	औसत वर्षा (मि0मी0 में)	वर्षा का औसत दिन (प्रतिदिन 2.5 मि0मी0 या इससे अधि
1	2	3	4	5
जनवरी	23.9	1.9	25.7	1.9
फरवरी	29.7	2.1	31.0	2.4
मार्च	14.0	1.4	17.0	1.6
अप्रैल	6.6	0.6	6.9	0.7

1	2	3	4	5
मई	14.5	1.2	13.5	1.5
जून	111.8	6.3	132.3	7.3
जुलाई	351.5	16.3	323.9	16.0
अगस्त	369.5	16.8	340.1	16.7
सितम्बर	202.4	9.6	182.4	9.1
अक्टूबर	40.4	2.4	43.9	3.1
नवम्बर	7.6	0.6	11.2	0.8
दिसम्बर	4.8	0.5	5.8	0.4
योग	**1176.3**	**60.0**	**1133.7**	**61.5**

स्त्रोत · *Uttar Pradesh District Gazetteers, Mirzapur, 1988, p.16.*

(य) मृदा

(1) मृदा संरचना

इस क्षेत्र की मृदा मूल रूप में अधिकांशतः अवशिष्ट प्रकार की है ।[10] मृदा की प्रकृति मूल शैल (पैरेण्ट रॉक) के अनुसार भिन्न - भिन्न होती है जो निम्नलिखित है ।

1. **प्रीकैम्ब्रियन मणिभीय शैलों से निर्मित मृदा** - प्रीकैम्ब्रियन मणिभीय शैलें (जैसे नीस, ग्रेनाइट, शिस्ट, क्षारीय अंतरावेश आदि) लाल रंग वाली बलुई दोमट मिट्टी को जन्म देती है । मिट्टी का यह रंग लोहांश अधिक होने के कारण न होकर विस्तृत विसरण के कारण होता है । यह निम्न कोटि (ऊँची पहाड़ियों पर हल्की, बजरीदार तथा हल्के रंग वाली) से उच्च कोटि (मैदानों और घाटियों में अधिक उर्वर, गहरी काली) की होती है । यह मिट्टी सामान्यतया थोड़ी सी कैल्केरियस होती है तथा इसमें नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की मात्रा कम होती है । इसमें कार्बनिक पदार्थों की मात्रा हल्के से थोड़ी अधिक तथा क्षार की मात्रा अच्छी होती है ।

कुछ प्रदेशों में मिट्टी में तुलनात्मक रूप से पोटाश (जहाँ मूल शैलों में पोटाश फेल्डस्पार एवं मस्कोवाइट की मात्रा अधिक हो जहाँ मुख्यतया बायोटाइट एव हार्नब्लेंड वाली शैल हो) तथा चूना एवं मैग्नेशिया (जहाँ एम्फीबोलाइट अल्पबेसिक रॉक आदि क्षारीय शैलों का

बाहुल्य हो) की मात्रा अधिक होती है । क्वार्ट्जाइट शैल से बनी मृदा अत्यन्त उर्वरक, बलुई हल्के कोटि की तथा पत्थर मिश्रित पोषक तत्वों से रहित होती है । इसकी जलधारण क्षमता भी बहुत कम होती है ।

2. **बिजावर शैल से निर्मित मृदा** - बिजावर वर्ग की शैलें विघटित होने पर मुख्यतः मृत्तिकामय मिट्टी बनती है । एक प्राचीन संरचना होने के कारण इसके ऊपर की मिट्टी अत्यधिक परिपक्व होती है और यह क्रिया सतत गौण परिवर्तनों से सम्पन्न होती है। यह मिट्टी कैलकेरियस तथा क्षारीय होती है । इसमें कार्बोनिक पदार्थ नहीं के बराबर होते हैं। इस मृदा की प्रकृति स्थान पर, उसमें उपस्थित अशुद्धियों की मात्रा पर वह जिन शैलों के अपक्षरण से बनी है, उन शैलों के प्रकार पर (जैसे मृदाश्मिक, सिकतासिक, क्षारीय कार्बोनेट आदि) निर्भर करती है ।

3. **गोंडवाना अधिवर्ग की शैलों से निर्मित मृदा** - गोंडवाना अधिवर्ग की शैले विघटन के उपरान्त अपेक्षाकृत निम्न कोटि एवं उर्वरता की मिट्टी को जन्म देती है । सामान्तया मिट्टी बलुई होती है । इसमें ह्यूमस की मात्रा कम तथा रासायनिक प्रक्रिया उदासीन होती है।

(2) मृदा का वर्गीकरण

अध्ययन क्षेत्र का मृदा वर्गीकरण प्रत्येक तहसील का अलग - अलग प्रस्तुत किया गया है ।

1. दुद्धी तहसील की मृदा -

(क) हाथीनाला श्रेणी - यह श्रेणी लगभग समस्त उसी क्षेत्र में उपलब्ध है, जिस क्षेत्र में बिजावर समूह की शैलें हैं । शैलें अत्यधिक विघटित रूप में है और परिष्कृत एवं स्पष्ट परिच्छेदिका सुलभ नहीं है । पहाड़ियां निम्न कोटि के वनों से आच्छादित हैं यहाँ पर अल्पकृषि कार्य सम्भव है । उत्पन्न फसल का स्तर भी बहुत निम्न श्रेणी का है । मिट्टी का रंग पीले भूरे से पीला लाल तक है और अधिकांशतया उसमें अभ्रक मिला हुआ है । मिट्टी की सतह अधिकांशतया पतली है ।

(ख) दुद्धी संघ - बिजावर समूह की शैलों के दक्षिण में मृदाओं का एक समूह पाया जाता है । जिसके विभिन्न संगठनों का संतुलन एवं मोटाई जो कि त्रिभुजाकार रूप में है

DISTRICT SONBHADRA
SOILS
N
S
0 4 8 KM
SOIL TYPES
DRAINAGE-CUM-TEXTURE TYPES
SERIES
GANGA
KHADAR
CLAY LOAM
Vinhhyan
CLAY LOAM NONCALCARIOUS
COARSE SANDY LOAM
Belan
CLAY
Bijaigrah
SANDY LOAM
COARSE SANDY LOAM
Son
SANDY LOAM
FINE SANDY LOAM
Paraspani
SANDY LOAM
Jungel
CLAY LOAM
Hathinala
COARSE SANDY LOAM
Dudhi
SANDY LOAM
Dudhi
COARSE SANDY LOAM
Gonda
COARSE SANDY LOAM
Aundi
CLAY
Carbonifer-ous
CARBON(COAL)
FIG 27

और जिसका शीर्ष विण्ढमगंज के निकट है । दक्षिण की ओर इसका विस्तार है और म्योरपुर क्षेत्र को आच्छादित करने के पश्चात् यह गोविन्द बल्लभपन्त सागर (रिहन्द जलाशय) में मिल जाता है । साधारणतया घाटी में पायी जाने वाली मिट्टी भी निम्न कोटि की है और क्षेत्र में पहाड़ियों के बाहुल्य के कारण मृदा बजरीयुक्त है । यद्यपि निम्न क्षेत्रों में मृदा उर्वर एवं गहरी है । यह मिट्टी काले रंग की है, जबकि ऊँचे स्थानों की मिट्टी लाल है ।

(ग) सिंगरौली श्रेणी - इस प्रकार की मिट्टी रिहन्द नदी और उसकी सहायक नदी देवहर नाला के बीच वाले क्षेत्र में पाई जाती है । परन्तु अब इस प्रकार का अधिकांश भाग रिहन्द जलाशय में डूब गया है । खड़िया, बांसी और औड़ी के कुछ क्षेत्र ही इस श्रेणी में आते हैं । स्थानीय भाषा में यह मिट्टी 'केवल मिट्टी' के नाम से पुकारी जाती है । यह अत्यधिक उर्वर है । यह काले रंग की मटियार दोमट मिट्टी है जो कि सम्भवतः कार्बोनीफेरस पदार्थो से ही उत्पन्न हुई है । यह प्रतिक्रिया में हल्की क्षारीय है तथा इसमें कार्बोनिक पदार्थों का संमिश्रण मध्यम श्रेणी का है ।

(घ) औड़ी श्रेणी - गोंडवाना एव्रं नाइस समूह की शैलों के बीच में यह क्षेत्र अवस्थित है और हाथीनाला समूह के नीचे भूमि की एक पतली तिकोनी पट्टी के रूप में मिलता है । त्रिकोण का शीर्ष औड़ी के पास है और आधार के दोनों सिरे बेलवादह और पहाड़ी (अब जलाशय में) पाये जाते हैं । इस क्षेत्र की मिट्टी लाली लिए हुए मृत्तिकामय है । इस श्रेणी का एक मुख्य भाग अब रिहन्द जलाशय में समाविष्ट है । बैरपान, लोझरा और औड़ी क्षेत्रों के कुछ भाग इस श्रेणी में सम्मिलित हैं ।

(ड.) कार्बनी फेरस - यह श्रेणी भी उसी क्षेत्र में उपलब्ध है, जिस क्षेत्र में गोंडवाना समूह की शैलें फैली हुई हैं । बांसी, खड़िया और चिल्काटांड इस श्रेणी में ही स्थित है ।

(च) गोहड़ा श्रेणी - इस श्रेणी की मिट्टी इस मण्डल में ठीक दक्षिण में बभनी श्रृंखला तथा गोहड़ा क्षेत्र में गोंडा मिर्गारानी और जोराही खण्डों के पास पाई जाती है । यह मिट्टी बलुई दोमट होते हुए भी ठोस और कड़ी है, और उसमें मोरम के रूप में ग्रेवेल तथा अर्ध विघटित शैलों का बाहुल्य है । निम्न क्षितिजों में इनका अनुपात अधिक है । मिट्टी का रंग गहरे लाल से भूरे लाल तक बदलता है । रंग में लाली की मात्रा निचले स्तरों में बढ़ती जाती है ।

2. राबर्ट्सगंज तहसील की मृदा - इस भूखण्ड की मृदा पठारी संरचना की है तथा इनकी निम्न विशेषताएं हैं -

- मृदा कम गहरी, मोरम, कंकड़युक्त तथा कहीं - कहीं लौह पट्ट लिए हुए हैं । मटियार का अनुपात औसत सामान्यतः अच्छा तथा नाइट्रोजन व फास्फेट तत्वों की कमी है ।

- जलधारण क्षमता सामान्य है परन्तु कम गहराई के कारण शीघ्र सूख जाता है ।

- मटियार या लौह पट्ट वाली मृदा में जल बहाव अवरूद्ध होता है जिससे दल - दल हो जाता है ।

विन्ध्य क्षेत्र में अवशिष्ट मूल (रेजुडूअल ओरिजिन) की मृदा पायी जाती है। विन्ध्य श्रेणी के शैलों के अपक्षयन (वेदरिंग) से यह मृदा विकसित हुई है । इस भू-खण्ड में उत्तर में दक्षिण के क्रम में विन्ध्य वर्ग के अन्तर्गत निम्नलिखित समुदाय की मृदा पाई जाती है ।

बेलन - मटियार दोमट (क्ले)

विजयगढ़ - बलुई दोमट

सोन - बलुई दोमट (सैन्डी लोम)

- दोमट (लोम)
- बारीक बलुई दोमट (फाईनसैन्डी लोम)

परासपानी - बलुई दोमट (सैन्डी लोम)

हाथीनाला - मोटी रेत (कोर्स सैन्ड)

जुगैल - दुद्धी मिट्टी बरगवां, देवखर आदि के दक्षिण में सफेद मिट्टी पर्याप्त रूप से पायी जाती है ।

(क) बेलन समुदाय - इस भू-खण्ड के थोड़े से क्षेत्र में जो कैमूर पर्वतमाला चोटी के मैदानी भाग में स्थित है, इस समुदाय की मृदा पायी जाती है । मृदा कैल्केरियस प्रकार की है । इसके नीचे कंकर ग्रन्थाएं (कंकर नाड्यूल) हैं ।

(ख) विजयगढ़ समुदाय - इस समुदाय की मृदा कैमूर की पहाड़ी क्षेत्र में पायी जाती है । यह सैण्डस्टोन व स्लेट प्रकार की शैलों के अपक्षयन से विकसित हुई हैं । यह भू - भाग पहाड़ी व कटा- फटा है । मृदा का रंग पीला व लाल है । इसकी रचना बलुई दोमट (सैन्डीलोम) प्रकार की है । यह थोड़ी सी अम्लीय अचूर्णिय (नान कैल्केरिअस) तथा मोटी बजरी वाली (कोर्स ग्रेवली) है ।

(ग) सोन समुदाय - इस समुदाय की मृदा सोन नदी के दोनों किनारो मे स्थित भू-भाग में पायी जाती है । यह मृदा समुदाय आदि विन्ध्य प्रकार की शैल माला के अपक्षयन से विकसित हुई है जिसके चार मुख्य भाग हैं । मृदा की संरचना बलुई दोमट, दोमट तथा बारीक बलुई दोमट प्रकार की है ।

(घ) परासपानी समुदाय - सोनघाटी के दक्षिण में शैलों का विन्यास अलग प्रकार (विजयवाड़ माला) का हो जाता है । अतएव यहाँ की मृदा में भी पर्याप्त भिन्नता आ जाती है । भू-भाग पहाड़ी है । मृदा का रंग अधिकतर लाल है । वास्तव में मृदा का रंग जारण अवस्था (आक्सीडेशन स्टेज) पर निर्भर करता है । यह गहरे धूसर से तेज लाल हो जाता है।

(ड) हाथीनाला समुदाय - इस समुदाय की मृदा भू-खण्ड के दक्षिणी भाग (दुद्धी क्षेत्र की सीमा) में पायी जाती है । मृदा के गुण लगभग परासपानी समुदाय की तरह ही है । इसका रंग पीला - भूरा या पीला - लाल होता है तथा इसमें चमकते हुए अभ्रक (माइका) के टुकड़े दृष्टिगोचर होते हैं ।

(च) जुगैल समुदाय - भू-खण्ड के उत्तरी - पश्चिमी भाग मे इस समुदाय की मृदा पायी जाती है । यहाँ एक विशिष्ट प्रकार की शैल श्रृंखला विद्यमान है ।

(र) प्राकृतिक वनस्पति एवं वन संसाधन

प्राकृतिक संसाधनों में वनस्पति एवं वन संसाधनों का एक महत्वपूर्ण स्थान होता है । प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूपों में प्राकृतिक वनस्पति मानव - जीवन को प्रभावित करती है ।[11]
वन वास्तव में नवीकरण योग्य संसाधन हैं तथा ये उत्पादी और संरक्षी दोनों प्रकार के कार्य करते हैं ।[12] पर्यावरण को शुद्ध रखने, भूमि के कटाव को रोकने, मृदा में ह्यूमस की मात्रा को बढ़ाने तथा जलवायु को मृदु बनाने में वनों की महत्वपूर्ण भूमिका है ।[13] वनस्पति प्रकारों के अध्ययन से सम्बन्ध मुख्यतः प्रमुख जातियों, उनकी दिखावट (वाह्य रूप), अनुकूलन स्वरूप, पारस्परिक

साहचर्य सम्बन्ध तथा जलवायविक क्रमोत्कर्ष पर पहुँचने के लिए आवश्यक विकास की अवस्थाओं से होता है, अर्थात एक समुदाय के रूप में उनका पूर्ण विकास जिनके बाद उनमें वृद्धि नहीं होती बल्कि वे संतुलित रहते हैं ।[14] प्राकृतिक वन से आशय 'किसी भी भू-भाग पर उन पेड़, पौधों, झाड़ी, जड़ी - बूटियों व घासपातों तथा काई से है जो स्वतः उगने, बढने और नष्ट होने के लिए स्वच्छन्द हैं।'[15] मृदा की विभिन्नता, उच्चावच्च की विषमता तथा अपवाह प्रणाली के अनुसार स्थानिक रूप में वनों में विभेद पाया जाता है । केवल थोड़े से उष्ण नदी तटीय सीमावर्ती (रिपेरियन फ्रिन्जिग फारेस्ट) वनों को छोड़कर जो नदियों और नालों के किनारों की पट्टियों पर स्थित है, इस भूखण्ड के लगभग सभी वन उत्तरी शुष्क पर्णपाती वर्ग के हैं । विकासखण्ड चोपन के उत्तर - पूर्व तथा नगवां के दक्षिणी भाग में भरूही (क्लारोक्जाइलौन स्वीटीनिया) प्रचुर मात्रा में विद्यमान है, इसकी उपस्थिति उत्तरी शुष्क मिश्रित पर्णपाती उपवर्ग में कही जा सकती है । कर्मनाशा नदी तट में पाए जाने वाले साल के बहुत थोड़े से वन को छोड़कर इस जनपद में सभी वन उत्तरी शुष्क पर्णपाती वर्ग के हैं । चैम्पियन तथा सेठ के वर्गीकरण के अनुसार इस जनपद में निम्नलिखित वर्ग के वन जाये जाते हैं ।[16]

क्रम संख्या	वर्गीकरण	प्रकार
1	2	3
		माइस्ड ट्रापिकल फारेस्ट
1.	4 ई/आर एस ।	उष्ण नदी तटीय सीमावर्ती वन
		ड्राई ट्रापिकल फारेस्ट
2.	5बी/सी - । सी	शुष्क प्रायद्वीपीय साल
3.	5बी/सी 2	उत्तरी शुष्क मिश्रित पर्णपाती वन
		विकृत अवस्था
4.	5/डी एस ।	शुष्क पर्णपाती के क्षुद्ररोह
		मृदीय प्रकार
5.	5 /ई 2	सलई वन
6.	5 /ई 4	परसिद्ध वन
7.	5 /ई 9	शुष्क बांस ब्रेक
8.		रोपवन
9.		नदी तट

(1) नदी तटीय सीमावर्ती वन

इस प्रकार के वन नदियों तथा बड़े नालों के किनारों पर सकरी पट्टियों में पाए जाते हैं । वृक्षों की प्रजातियों में कहुआ, जामुन, कठजामुन, करंज, आंजन, गुटेल तथा गुरही मुख्य है । अन्य वृक्ष प्रजातियों में चिलबिल, तेन्दू, असना, धौ, भुरकुल, खाजा, साल व करम उल्लेखनीय है । अधोवन अधिक महत्वपूर्ण नहीं हैं ।

(2) शुष्क प्रायद्वीपीय साल

अध्ययन क्षेत्र के समस्त साल इसी प्रकार के अन्तर्गत आते हैं । साल न्यूनाधिक अनुपात में लगभग समस्त भू-खण्ड में पाया जाता है । परन्तु इसकी अवस्थिति छोटी नदियों एवं बड़े नालों की घाटियों में अधिक है । साथ ही, अपेक्षाकृत ठण्डी उत्तरी ढालों में भी साल का अनुपात बढ़ जाता है । सोन नदी के उत्तरी भाग में लगभग सभी नालो के किनारे साल न्यूनाधिक अनुपात में पाया जाता है । कैमूर की ढालों में इसका अनुपात घट जाता है । परन्तु कैमूर पर्वतमाला की चोटी के समतल टुकड़ों में कहीं - कहीं साल का अनुपात पर्याप्त रूप में बढ़ जाता है । साल वृक्ष शुद्ध रूप में विद्यमान न होकर मिश्रित रूप मे पाया जाता है । साल के प्रमुख मिश्रण वृक्ष तेन्दू, धौ, सिद्धा, पियार, असना, बहेड़ा, ऑवला आदि उल्लेखनीय है । घासों में प्रमुख है - बगई, चुरॉठ, चिकनिआ तथा भुसभुसिया ।

(3) उत्तरी मिश्रित पर्णपाती वन

अध्ययन क्षेत्र के अधिकांश वन इसी प्रकार के अन्तर्गत आते हैं । यह वन पहाड़ियों की चोटियों के समतल भागों, पहाड़ी ढालों, उच्च स्थलियों व कूटों में विद्यमान है । वृक्ष प्रायः क्षीण आकृति व छोटे प्रस्तम्भों वाले हैं । प्रायः सभी प्रजातियों के वृक्ष ग्रीष्मकाल में पूर्णतया पर्ण विहीन हो जाते हैं । इनमें वर्षा ऋतु में पुनः नई पत्तियाँ आ जाती हैं । इस भाग के प्रमुख वृक्ष तेन्दू, धौ, झींगन, खैर, ककोर, कटैला विरल अवस्था में पाए जाते हैं । इनके अतिरिक्त सलई, कुर्लु, धुसुर, आंवला, गलगल आदि भी उपलब्ध हैं । अधिक समतल भागों व उच्च स्थलियों में जहाँ मृदा की गहराई अपेक्षाकृत अच्छी है, अनेक प्रजातियों के वृक्ष मिश्रण में पाये जाते हैं ।

(4) शुष्क पर्णपाती वनों के क्षुद्ररोह

इस प्रकार के वन उन क्षेत्रों में है, जहाँ विगत कुछ वर्षो में भारी अनियमित

पातन हुए हैं । ऐसे क्षेत्र अधिकतर गाँवों के पास हैं । इनमें घरेलू जानवरों के कारण, अनियमित पातन, स्कन्धकर्तन (पोलाई) तथा शाखाकर्तन आदि का अत्यधिक जोर है । इन वनों में पायी जाने वाली झाड़ियों में मुख्य कुलधनई, झरबेरी, भैक्सी, करोंदा, खैर, बेर, कटैला, सेहुड़ व कोराया है ।

(5) सलई वन

सलई वन लगभग समस्त भू-खण्ड में व्याप्त है । पहाड़ियों के समतल चोटियों, कूटों व बाहुकूटों (स्पर) तथा उच्च स्थलियों में जहाँ जल का निकास अच्छा हो, सलई अधिक पाई जाती है । यह उल्लेखनीय है कि सलई प्राय. पथरीली व चट्टानी स्थानों मे भी जहाँ मृदा कम हो , पाई जाती है । इन वनों में सलई उच्च वितान की मुख्य प्रजाति हो जाती है । इसके वृक्ष 10-15 मीटर ऊँचे तथा औसतन 30 से0 मी0 व्यास के हैं । पहाड़ियों के चोटियों में कहीं - कहीं विशुद्ध रूप में भी सलई विद्यमान है । सलई के वृक्ष की विशेष उपयोगिता मालूम न होने के कारण पिछले वर्षों में कटान से बच गए थे ।

(6) परसिद्ध वन

परसिद्ध वन विस्तृत क्षेत्र में एक साथ नहीं पाया जाता । इसकी अवस्थिति अपेक्षाकृत छोटे व कम विस्तृत क्षेत्रों में देखी जाती है । यह लगभग सदाबहार प्रजाति है । अतएव शुष्क मिश्रित पर्णपाती वनों में इसकी अलग से पहचान करना सरल होता है । वृक्ष अधिकतर तरूण हैं । कहीं - कहीं प्रौढ़ या अति प्रौढ़ वृक्ष भी दिखाई पड़ते हैं । प्राकृतिक पुनर्जनन सन्तोषप्रद है । जैविक कारणों द्वारा परसिद्ध वनों को बहुत क्षति पहुँचायी गयी है।

(7) शुष्क बाँस

इस भू-खण्ड में बाँस की केवल एक प्रजाति पाई जाती है । सोन नदी के उत्तर में समस्त तरिया व गुर्मा राजियों में बाँस उपलब्ध है । यह नालों के किनारों तथा समस्त पहाड़ी ढालों में अधिकतर पाया जाता है । परन्तु कहीं - कहीं तो यह चट्टानी व विप्रपाती कूटों (रिज) में भी विद्यमान है । सबसे अच्छे बाँस युक्त क्षेत्र पकरी व कन्धौरा, पश्चिमी ससनई, पूर्वी ससनई, झरिया, गड़ाव, मोहना व भीतरी खण्डों में स्थित हैं । बाँस युक्त सभी क्षेत्रों में उच्च वितान बहुत घनी अवस्था में नहीं है ।

तालिका 2.3 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के 49.11% (334918 हे0) क्षेत्रफल पर वनों का आवरण है । वनों का सर्वाधिक क्षेत्रफल विकासखण्ड म्योरपुर में है । वनों के क्षेत्रफल के अनुसार अवनत क्रम में विकासखण्डों की स्थिति क्रमश इस प्रकार है - म्योरपुर (25.65%), चोपन (22.74%), नगवां (17.96%), दुद्धी (12.99%), बभनी (11.18%), घोरावल (7.67%), चतरा (1.06%) तथा राबर्ट्सगंज (0.75) (तालिका 2.3) । अध्ययन क्षेत्र में वनों का अनुपात देश व प्रदेश की तुलना में अधिक है । वन संसाधन की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र समृद्ध है । जंगलों में रहने वाले अनेक जंगली जानवरों, पशुओं व पक्षियों की सुरक्षा के लिए 'कैमूर वन अभ्यारण्य' का निर्माण किया गया है । प्रशासनिक दृष्टि से सम्पूर्ण वनों को 4 वन प्रभागों (डिवीजन) तथा 18 राजियों (रेंज) में विभक्त किया गया है ।

तालिका 2.3

वनों का वितरण 1990 -91

विकासखण्ड	कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल हे0 में	वन क्षेत्रफल हेक्टेयर में	क्षेत्रफल का प्रतिशत	कुल वनों का % प्रतिशत
1	2	3	4	5
घोरावल	81873	25700	31.39	7.67
राबर्ट्सगंज	44245	2500	5.65	0 75
चतरा	25485	3540	13.89	1.06
नगवां	91620	60166	65.66	17.96
चोपन	171297	76180	44.46	22.74
म्योरपुर	133789	85908	64.21	25.65
दुद्धी	70745	43500	61.49	12.99
बभनी	60826	37444	61.56	11.18
ग्रामीण योग	**679880**	**334918**	49.11	**100.00**
नगरीय योग	2048			
जनपद योग	681928	**334918**	**49.11**	**100.00**

स्त्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 43 एवं संगणित ।

DEVELOPMENT BLOCKWISE FOREST OF
DISTRICT SONBHADRA : 1990 - 91
FOREST AREA IN HECTARES (Thousands)
100
80
60
40
20
0
25.7
2.5
3.54
60.166
76.18
85.908
43.5
37.444
GHORAWAL
ROBERTSGANJ
CHATARA
NAGAWA
CHOPAN
MUIRPUR
DUDHI
BABHANI
DEVELOPMENT BLOCKS
Fig 2.8
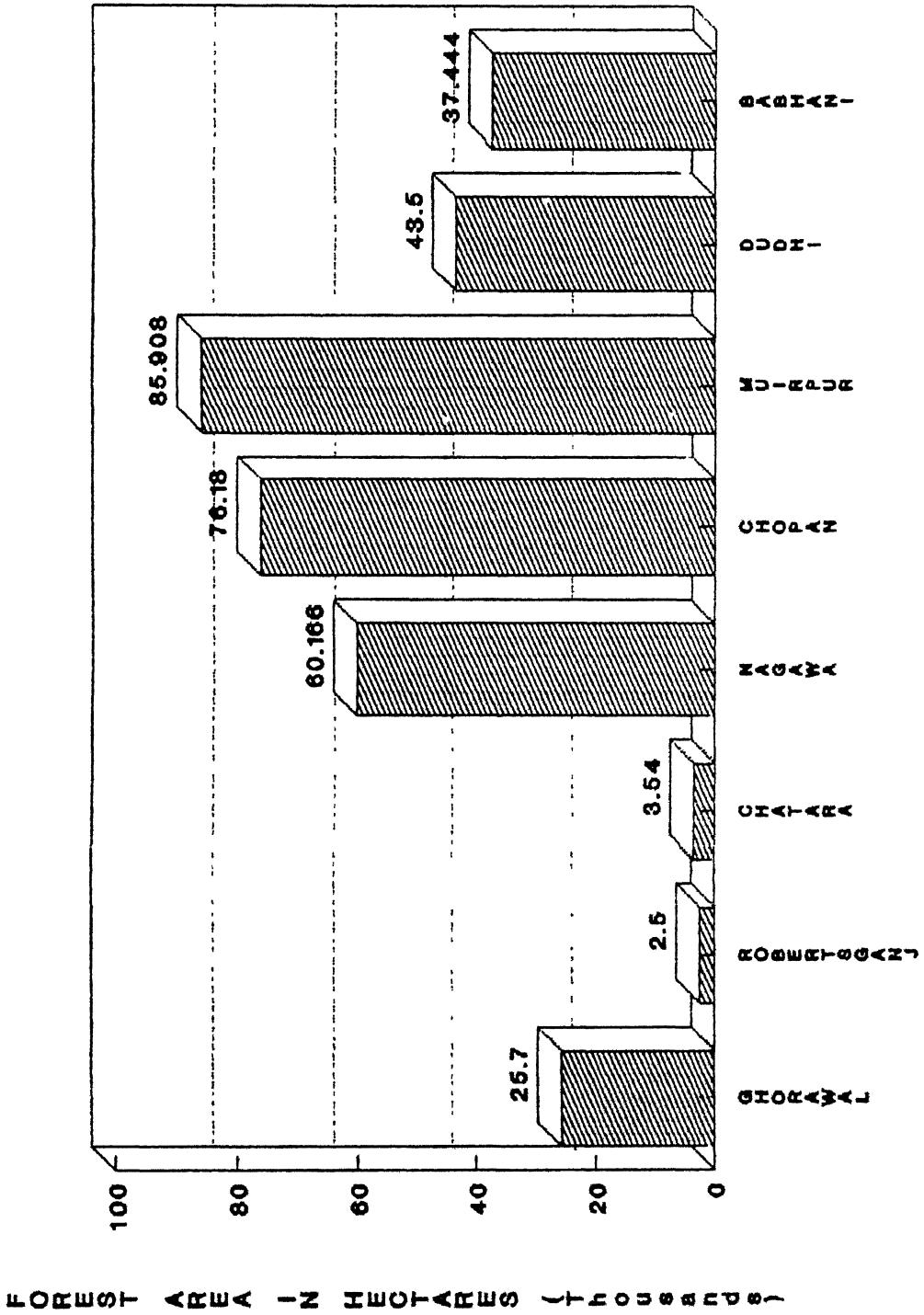
(ल) खनिज सम्पदा

खनिज संसाधनों की विविधता एवं मात्रा की दृष्टि से जनपद सोनभद्र का अद्वितीय स्थान है । रत्नगर्भा के रूप में जहाँ 'काला हीरा' और अभ्रक का भण्डार है, वहीं पर सफेद संगमरमर भी इसी क्षेत्र को प्राप्त है । यहाँ के पत्थरों में मैगनीज, लोहा, डोलोमाइट आदि के अयस्क प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं, जिसके कारण सोननदी एवं मारकुण्डी पहाड़ी के मध्य स्थित सलखन एवं पटवध में चूना उद्योग बड़े पैमाने पर चलाए जाते हैं । इतना ही नहीं लौह अयस्क के पत्थर की आपूर्ति बिहार प्रदेश के बोकारो स्टील प्लांट को भी होता है । [17]

जनपद में स्थित खनिजों के आधार पर आसपास के क्षेत्रों में अनेक उद्योगों का विकास हुआ है । सिंगरौली कोयला क्षेत्र पर आधारित ताप विद्युत केन्द्र, चूनापत्थर पर आधारित सीमेण्ट कारखाना एवं चूना उद्योग इसके प्रमुख उदाहरण हैं । जनपद सोनभद्र के प्रमुख खनिजों को निम्न दो वर्गो में बांटा जा सकता है -

(1) धात्विक खनिज - लौह अयस्क, सोना

(2) अधात्विक खनिज - फेल्सपार, अभ्रक, सल्फाइड, लाइमस्टोन, हीरा, मैग्नेटाइट, भवन व सड़क निर्माण में काम आने वाले पत्थर ।

1. लौह अयस्क - लोहे को राष्ट्रीय समृद्धि का प्रतीक माना गया है । मानव सभ्यता के विकास में लोहा एवं उससे निर्मित विविध वस्तुओं का महत्वपूर्ण योगदान है । वर्तमान समय में भी किसी देश की शक्ति का आंकलन लोहे के उत्पादन एवं उसके उपयोग से निर्धारित होता है ।

जनपद सोनभद्र के दुद्धी तहसील में बिजावर श्रेणी की शैलों में लौह अयस्क के कई निक्षेपों का पता लगा है । यह अयस्क बेण्डेड, हीमेटाइट -क्वार्ट्जाइट से बने हुए एवं उससे सम्बद्ध है । प्राचीनकाल में एक स्थानीय जाति 'आगरिया' द्वारा छोटे पैमाने पर कई स्थानों पर इस अयस्क से लोहा निकाला जाता था । ये लोग इससे कृषि आदि कार्यो में उपयुक्त यन्त्र बनाया करते थे । चोपन ब्लाक के बरगवां के लगभग 2 कि0 मी0 दक्षिण - पूर्व पश्चिम दिशा में स्थित पहाड़ी में, जो पश्चिम से भरहरी तक चली गई है, बेण्डेड हेमेटाईट पाया जाता है । इनमें से कोई भी निक्षेप आर्थिक रूप से मूल्यावान नहीं है, इसलिए इस क्षेत्र में लौह उत्खनन को छोड़ दिया गया है ।

DISTRICT - SONBHADRA
MINERALS
N
S
LIME STONE
COAL
IRON ORE
CHINA CLAY
FINE CLAY
MARBLE
SILICA
CALCITE
ANDALUCITE
JASPER
MICA
KM
FIG. 29
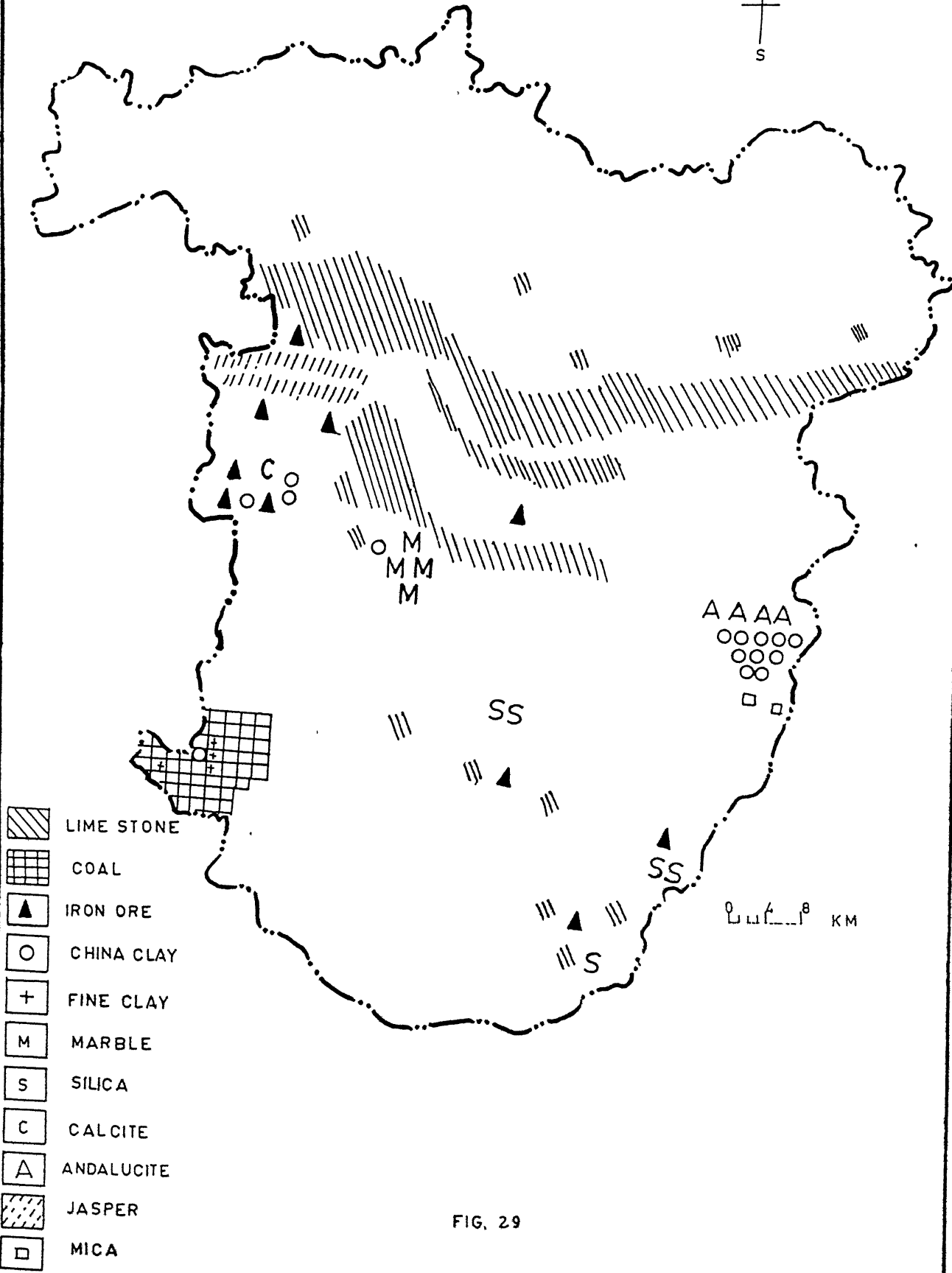
2. सोना - भारत ही नहीं बल्कि विश्व के आर्थिक गतिविधियों में सोने का अति महत्वपूर्ण स्थान है । सोने की प्राप्ति या तो शिला - संरचनाओं की पट्टिकाओं से अथवा नवीन या प्राचीन नदियों द्वारा अवसादित एल्यूवियम मिट्टी से की जाती है ।

3. सल्फाइड - बिजावर एवं प्रीकैम्ब्रियन मणिभीय शैलों को काटने वाली क्वार्ट्ज शिराओं में सल्फाइड के खनिज (जैसे पायराइट, चालकों पायराइट आदि) अल्पमात्रा में पाये जाते हैं । कहीं - कहीं इन खनिजों का प्रमाण तुलनात्मक दृष्टि से अधिक भी हो जाता है ।

4. लाइमस्टोन - उत्तम कोटि का व अधिक मात्रा में लाइमस्टोन सोन नदी के उत्तर में पाया जाता है । सोन के ठीक दक्षिण में बरगवां, घटीसा, ओबरा, डाला आदि के आस-पास भी लाइम स्टोन पाया जाता है । यह इस भूखण्ड की सबसे महत्वपूर्ण खनिज सम्पत्ति है । कजरहट चूना पत्थर खान, जिसके नाम पर चुनार में कजरहट सीमेण्ट कारखाना स्थापित किया गया है, इस खान का चूना पत्थर अधिकतर डाला सीमेण्ट के कारखाने में प्रयुक्त होता है । दूसरी महत्वपूर्ण खान गुरमा चूनापत्थर खान है, जिससे पटवध व सलखन में चूना निर्माण उद्योग तथा चुर्क में सीमेण्ट कारखाना स्थापित है । बसुहारी में चूना पत्थर का विशाल क्षेत्र पाया जाता है । इस क्षेत्र को सरकार अपने नियंत्रण में लेकर नया सीमेण्ट कारखाना स्थापित करने का विचार कर रही है ।

5. मैग्नेटाइट - परसोई के पूर्व में बहुत कम मात्रा में क्वार्ट्जाइट के साथ पाया जाता है ।

6. सफेद मिट्टी - सफेद मिट्टी बरगवां, देवखर आदि के दक्षिण में पर्याप्त रूप से पाई जाती है । स्थानीय निवासी इसे घरेलू उपयोग में लाते हैं ।

7. मृत्तिका (क्ले) - सूक्ष्म विभाजित एवं अतिसूक्ष्म कणों वाली मृत्तिका के निक्षेप बाराकर स्टेज में बांसी, मिश्रा और मकड़ीखोह में उलबब्ध है । निक्षेपों की सम्भावित क्षमता लगभग तीन मिलियन टन आँकी गयी है, जिसमें से लगभग 2.2 मिलियन टन अग्निरोधक उद्योग द्वारा अग्निरोधक ईटों के निर्माण के लिए उपयुक्त है ।

8. निर्माण सामग्री - इस क्षेत्र में ग्रेनाइट, ग्रेनाइट नीस, डोलेराइट, क्वार्ट्जाइट, सैण्डस्टोन, डोलोमाइट, संगमरमर आदि भवन, सड़क एवं अन्य उपयोगी सामान बनाने के लिए

उत्कृष्ट स्त्रोत हैं । बरगवां की दक्षिणी पहाड़ियों में तथा ओबरा के दक्षिण में निम्न कोटि का संगमरमर पाया जाता है । करौंती के ठीक उत्तर में संगमरमर की पट्टी पायी जाती है । इसका रंग सफेद है तथा निर्माण सामग्री के लिए उपयुक्त है । महदिया से 2 कि0 मी0 उत्तर पूर्व में नीलिमा लिए हुए चमकीले संगमरमर के बारे में जानकारी मिली है । इसी तरह का एक निक्षेप गीधर के पास पाया जाता है ।

डोलोमाइट के निक्षेप बरगांव और कजरहट में है । ओबरा के पास भलुवा डोलोमाइट खान तथा डाला से 3 कि0 मी0 दूर चोपन रोड पर बारी डोलोमाइट खान सर्वाधिक प्रसिद्ध है ।

सजावटी पत्थर के रूप में काम आने वाले जास्पर, एपिडोट शेल आदि कहीं-कहीं प्रचुरता में पाया जाता है । अनेक स्थानों में कंकड़ उपलब्ध है । हेमेटाइट (लौहयुक्त) तथा जास्पर, जुगैल व पनसिला के दक्षिण-पूर्व में पाये जाते हैं ।

9. **कोरण्डम** - मध्य प्रदेश के सीधी जिले के सीमा से लगे हुए दीप्रा और कडोयनी गाँव के बीच तथा रिहन्द नदी के एक कि0 मी0 पूर्व में पाया जाता है ।

10. **कोयला - (सिंगरौली कोल फील्ड लिमिटेड)** - सिंगरौली एक इलाका है इस नाम का न कोई गाँव है न ही शहर । बताया जाता है कि सिंगरौली एक राज्य था जो मध्य प्रदेश के सीधी और उत्तर प्रदेश के सोनभद्र में विभक्त हो गया । इस राज्य का महल रिहन्द जलाशय में जलमग्न है । 'सिंगरौली कोल फील्ड के अन्तर्गत' खानों में से केवल तीन खान (बीना, ककरी व खड़िया) है । किन्तु अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से सम्पूर्ण कोयला क्षेत्र का वर्णन किया गया है । 'इंडियन ब्यूरों ऑफ माइन्स' ने 1961 में कुछ निश्चित स्थानों पर विस्तृत अध्ययन कराए, जिससे सिंगरौली क्षेत्र भारत के कोयला मानचित्र पर उभर आया । 1963 में एन0 सी0 डी0 सी0 के अन्तर्गत सिंगरौली -1 खदान का विधिवत प्रारम्भ हुआ । लेकिन उसे बीच में रोककर 1965 में पहली खदान 'झिंगुरदा परियोजना प्रारम्भ हुई जो कि अपने कोयले की मोटाई (162 मी0) की दृष्टि से विश्व प्रसिद्ध है ।[18]

सिंगरौली क्षेत्र से लगा हुआ पलामू में भी कोयले का विस्तृत भण्डार है । बिहार के हजारी बाग और राँची क्षेत्र जहाँ 'नेशनल डेवलपमेण्ट कारपोरेशन' बाद में 'सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड' का मुख्यालय रहा, वहीं से इस क्षेत्र को जिसे 'सिंगरौली क्षेत्र' कहा जाता था, कोयले के उत्खनन् की देख-रेख लगभग 20 वर्षों तक चली । ऐसे समय में ही रूसी वैज्ञानिक की

तालिका 2.4

	परियोजना	कुल कोयला क0टन में	खदान क्षेत्र वर्ग किमी0	खदान की उत्पादन क्षमता		उत्पादन आरम्भ वर्ष	औसतन स्ट्रीपिंग अनुपात	कुल उत्पादन क0घनमी0	अनुमोदित राशि करोड़ रूपया
				सम्पूर्ण क0 टन प्रतिवर्ष	अनुमोदित क0टन/वर्ष				
1.	गोरबी	2.44	1.4	0.1	0.1	1972	1.47	5.1	7.52
2.	झिंगुरदा	12.10	1.5	0.3	0.3	1965	1.15	21.5	24.87
3.	बीना	10.83	4.0	0.45	0.45	1976	2.2	30.6	168.64
4.	जयन्त	34.90	10.1	1.0	1.0	1976	2.6	112.5	378.04
5.	ककरी	7.19	2.3	0.25	0.25	1980	2.25	20.9	137.80
6.	अमलोरी	31.93	9.51	1.0	0.4	1984	4.40	157.3	527.11
7.	दुद्धीचुआ	34.50	8.68	1.0	0.5	1983	3.29	134.9	289.68
8.	खड़िया	29.92	7.93	1.0	0.4	-	4.23	145.2	400.00
9.	निगाही	49.18	15.54	1.40	0.42	-	3.76	215.3	588.75
10.	मोहेर	37.6	8.8	1.0	-	--	3.30	147.5	-
11.	गोरबी बी0	छोटी परियोजना है। दो वर्ष पहले प्रारम्भ हुई।							
12.	मरक	प्रस्तावित							

× परियोजना क्रम संख्या 3, 5, 8 सोनभद्र में तथा शेष सोनभद्र की सीमा पर मध्य प्रदेश में है।

स्रोत : एन0सी0लि0 की गृहपालिका बसुन्धरा जून-जुलाई 1992 पृ0 30.

देखरेख में यहाँ के कोयला क्षेत्र की परियोजनाओं (गोरबी, झिंगुरदा, बीना, जयन्त, ककरी, अमलोरी, दुद्धीचुआ, खड़िया, निगाही, गोरबी बी., मरक तथा मोहेर) को सन् 1974 में सी0 एम0 पी0 डी0 आई0 एल0 ने विभक्त किया । इसमें झिंगुरदा सीम (162 मी0) रानीगंज की और अन्य सभी बराकर श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं । इस समय 220 वर्ग कि0 मी0 क्षेत्र में लगभग 900 करोड़ टन कोयले का भण्डार छिपा है जो कि प्रमुखतः तापीय ऊर्जा के लिए ही उपयुक्त है।

सिंगरौली के दक्षिण में लगभग 200 कि0 मी0 पर मध्य प्रदेश का ही एक प्रमुख कोयला क्षेत्र 'चिरमिरी' शुरू हो जाता है जो कि वर्तमान में 'साउथ इस्टर्न कोल फील्ड्स लिमिटेड' के अन्तर्गत आता है और यहाँ का भी कोयला 'पावर हाउस' के लिए उपयोग किया जा रहा है । सिंगरौली में कोयले की तीन परत हैं -

(क) पुरेवा टाप (12 मीटर),
(ख) पुरेवा बाटम (9 मीटर) और
(ग) तुर्रा (20 मीटर) ।

ये खानें अन्य स्थानों के विपरीत पृथ्वी की सतह से कुछ मीटर नीचे हैं जिन्हें आसानी से खुली खदान (ओपेन कास्ट) विधि से ऊपरी सतह को हटाकर कोयले को खोद लिया जाता है । इस कार्य के लिए आजकल उच्च तकनीक ने 'डम्पर', 'शावेल', 'ड्रेगलाइन' आदि अनेक उत्खनन यन्त्र उपलब्ध हैं । दुधीचुआ परियोजना को विश्वबैंक से जयन्त, खड़िया, निगाही परियोजनाओं को भूतपूर्व सो0संघ से, अमलोरी को ब्रिटेन से सहायता मिली है । मशीनों को चलाने के लिए उच्च स्तर के तकनीकी और कुशल कारीगर 'नार्दर्न कोल फील्ड्स लि0' में लगभग सभी मिलकार 15 हजार से अधिक कार्यरत हैं । यहाँ का प्रति मजदूर 6.67 घ0मी0 कोयला उत्पादन करता है जबकि कोल इण्डिया में औसतन एक घ0 मी0 से नीचे, मजदूर निकाल पाते हैं । इस क्षेत्र में नार्दर्न कोल फील्ड्स लि0 जो कि कोल इण्डिया लि0 की एक सहायक कम्पनी है और जिसका 1985 में गठन किया गया था, विगत कई वर्षो में कोयला उत्पादन से करोड़ों रूपयों का लाभ प्राप्त कर रही है ।

2.3 सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

सोनभद्र और मीरजापुर उत्तर प्रदेश का एक हृदय क्षेत्र है । यह जनपद अनादिकाल से वन्य - सभ्यता के कारण ललित कलाओं का केन्द्र तो रहा ही है जनजातीय संस्कृति का

भी केन्द्र रहा है ।[19] विन्ध्य शैल समूह तथा कैमूर क्षेत्र के मध्य में स्थित यह जनपद पवर्तों की कठोरतम् चट्टानों तथा तरल लावा के शीतल होने से बनी प्राचीनतम् जलज चट्टानों से बना है । इस भू - भाग को आदि मानव की क्रीड़ा - स्थली होने का श्रेय प्राप्त है । मिले प्रमाणों के अनुसार निश्चय ही इस अंचल की गोद में पृथ्वी के, पहले मानव ने क्रीड़ाएं की होंगी । उसके अस्तित्व एवं मानव विकास की लम्बी यात्रा के प्रमाण इस क्षेत्र में यत्र - तत्र बिखरे रूपों में पाये जाते हैं , जो कई अपरदन सतहों में मिलते हैं ।[20]

यहाँ आदिम प्रजातियाँ नदी के किनारे या पर्वतों की गुफाओं में निवास करती थी । शिकार इनकी आजीविका थी, जो नुकीले पत्थर और हड्डी के हथियार से किया जाता था । पंचमुखी के शैलाश्रित गुहाचित्र जिसके प्रमाण हैं । आज भी ओबरा पानी की टंकी के नीचे की गुफा में लावा के गिरने से बने स्तम्भ तथा डमडम पहाड़ी की गुफा में जलज चट्टानों द्वारा बने नुकीले तेज पत्थर देखे जा सकते हैं । इन शैल चित्रों में पशु - पक्षियों के शिकार नृत्य, संगीत तथा पारम्परिक जीवन के विविध दृश्य समाहित है जिनको कुछ विदेशी इतिहासकारों ने ईसा पूर्व 400 वर्ष बताया । डॉ0 हंसमुख सांकलिया ने इस सभ्यता को ईसा से एक से पाँच लाख वर्ष पूर्व स्वीकार किया है । सोढ़रीगढ़ के अवशेष, पंचमुखी की खुदाई से मिले सामान, सिक्के तथा वर्तन के टुकड़े व मूर्तियाँ पाषाणकाल की सभ्यता के बारे में जानकारी देते हैं । ऐसा अनुमान है कि इस समय तक आदमी गुफा से निकल कर मकान आदि बनाने तथा श्रृंगार आदि करने लगा होगा । पशु पूजा, वृक्ष पूजा तथा मातृ पूजा आदि शुरू हो गयी होगी ।

रामायण व महाभारत काल के सांस्कृतिक चिह्न यहाँ प्राप्त हुए हैं । सुनसुमार गिरि यहीं था । कहा जाता है कि महाभारत युद्ध में जरासंध ने अनेक नरेशों को यहीं बंदी बनाकर रखा था । किन्तु प्राचीन काल में कभी आर्य यहाँ तक पहुँच पाये होंगे, ऐसा प्रतीत नहीं होता । पौराणिक कथाओं तथा यहाँ पर मिले शिवलिंग व प्रतिमाओं से ऐसा प्रतीत होता है कि शैव मतावलम्बियों ने इस भू-भाग पर शासन अवश्य किया होगा और शिव मन्दिर तथा शिवलिंग की स्थापना की होगी । शिवद्वार स्थित शिव - पार्वती की सृजन प्रतिमा शायद इसी काल की है ।

तृतीय शताब्दी में कान्तित (कान्तिपुरी) नाग वंशीय वाकाटक राजबंश के राजाओं की राजधानी रही तथा नवीं शताब्दी तक उन्नत रही । ऐसा उल्लेख मिलता है कि ग्यारहवीं

से तेरहवीं शताब्दी के मध्य यह क्षेत्र द्वितीय काशी के रूप में विख्यात रहा । कहीं - कहीं पर ऐसा वर्णन भी मिलता है कि पाँचवी शताब्दी में विजयगढ़ किले पर कोल राजाओं का आधिपत्य रहा और तेरहवीं शताब्दी में आभीर वंश के प्रतापी राजा राज्य किया करते थे । आभीर जाति को हर्ष तथा दण्डी के समय तक मान्यता प्राप्त थी । किंवदन्ती है कि राजश्री इन्हीं वनों में शरण ली थी । अगोरी दुर्ग पर गदनशाह, विजयगढ़ पर काशी नरेश राजा चेत सिंह, सोढ़रीगढ़ पर गहड़वाल राजाओं का अन्तिम आधिपत्य था । मंजरी कथा व चनवा की कथा लोरिक से सम्बन्धित है, जो इसी स्थान पर घटी घटनाएं हैं । लोरिक पत्थर मारकुण्डी पर आज भी शौर्य एवं सुहाग के प्रतीक के रूप में विख्यात है ।

(अ) लोकगीत, नृत्य एवं नाट्य

कृषि क्षेत्रों के विस्तार तथा औद्योगिक सभ्यता के प्रसार के फलस्वरूप आदिवासी जातियाँ विलुप्त होती जा रही हैं , किन्तु उनकी संस्कृति विद्यमान है । अध्ययन क्षेत्र की लोक संस्कृति बहुत ही प्रभावशाली है । वीर लोरिक की वीरता एवं प्रेम की कहानी को इस क्षेत्र में आज भी 'लोरिकायन' के रूप में श्रद्धा के साथ गाया और सुना जाता है । लोरिकायन में वर्णित करीब - करीब सभी स्थल सोनभद्र में ही हैं, जिसके प्रमाण यहाँ मिलते हैं । लोरिकायन को लिपिबद्ध नहीं किया गया था । फिर भी इस क्षेत्र की जनता के कंठ में आज भी 'लोरिकी' 'चनैनी' के रूप में विद्यमान है । बीसवीं शताब्दी का मध्य 'कजली' का स्वर्ण युग कहा जाता है । राबर्ट्सगंज 'कजली' के अखाड़ों के लिए प्रसिद्ध था । इस शताब्दी के प्रारम्भ में जहांगीर खलीफा ने 'कजली' की शुरूआत की थी । 1940 -41 में चकिया, 1943 - 44 में अहरौरा एवं 1942 में मिर्जापुर में कजली की प्रतियोगिता हुई । पंडित रामनिहोर ने राबर्ट्सगंज में एक अखाड़ा बनाया । इसके बाद से सोनभद्र कजली का महत्वपूर्ण क्षेत्र बन गया । विजयगढ़, अगोरी व कण्डाकोट दुर्ग, पंजमुखी, मुखादरी, सीतामुण्ड आदि की गुफाओं की बनावट तथा वहाँ बने विचित्र चित्र आज भी कौतुहल व तिलस्म - बोध कराते हैं, जिसका रोचक वर्णन देवकी नन्दन खत्री के लोकप्रिय उपन्यास 'चन्द्रकांता' व 'चन्द्रकांता संस्तति' में देखने को मिलता है।

अध्ययन क्षेत्र में अनेक नृत्य होते हैं, जिनमें प्रमुख हैं - करमा, कोलदहकी, धरकहरी, अगरही, डोमकच, सैलानृत्य, गोदनही, करगही, ललहीछठ, उधवा, झूमर तथा मोखाजा। जनपद सोनभद्र की इस विशिष्ट सांस्कृतिक परम्परा के सौष्ठव और विविधता में वृद्धि करने की आवश्यकता है । इन परम्पराओं को संकलित, संग्रहित तथा संरक्षित कर भारत महोत्सव

के माध्यम से देश - विदेश में प्रचारित व प्रसारित करने की आवश्यकता है, नहीं तो वह दिन दूर नही जब औद्योगिक सभ्यता इसका समूल विनाश कर देगी ।

(ब) जनसंख्या

(1) जनसंख्या वितरण एवं घनत्व

प्रादेशिक अध्ययन के विषय - वस्तु का केन्द्र बिन्दु मानव है । मानव एक उत्पादक, सेवाओं का सृजन-कर्ता, उपभोक्ता तथा स्वयं एक संसाधन है । इसमें प्रकृति को प्रभावित करने एवं उससे अनुकूलन की अपार क्षमता होने के बावजूद अनेक भौतिक तथा सांस्कृतिक कारकों ने जनसंख्या वितरण को प्रभावित किया है । भौतिक कारको में अभिगम्यता, धरातलीय स्वरूप, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, मिट्टी तथा जल की उपलब्धि आदि मुख्य कारक हैं । सांस्कृतिक कारकों में सांस्कृतिक समूहों का विस्थापन, उत्प्रवास तथा राजनैतिक कारणों द्वारा विस्थापन आदि सम्मिलित है । अध्ययन क्षेत्र के जनसंख्या वितरण को उपर्युक्त कारकों ने अत्यधिक प्रभावित किया है । जिन विकासखण्डों में अपेक्षाकृत अच्छी कृषि होती है (घोरावल, राबर्ट्सगंज एवं चतरा), वहाँ जन-घनत्व सबसे अधिक है तथा जिन विकासखण्डों में बड़े उद्योगों का विकास हुआ है , वहाँ भी अन्य विकासखण्डों की अपेक्षा अधिक जन-घनत्व है । नगवां व बभनी विकासखण्ड मे न तो उल्लेखनीय कृषि होती है और न ही उद्योग पाए जाते हैं फलत जन-घनत्व सबसे कम पाया जाता है । अवनत क्रम में विकासखण्डवार प्रति वर्ग कि0 मी0 जन-घनत्व इस प्रकार है - राबर्ट्सगंज (312), चतरा (265), घोरावल (191), म्योरपुर (144), दुद्धी (137), चोपन (97), बभनी (94) तथा नगवां (60) (तालिका 2.6) ।

तालिका 2.5

जनसंख्या वितरण 1991

विकासखण्ड	कुल जनसंख्या	पुरूष	स्त्री	गत दशक से वृद्धि प्रतिशत
1	2	3	4	5
1. घोरावल	155963	82359	73604	35.77
2. राबर्ट्सगंज	137889	72784	65105	26.60
3. चतरा	67441	35404	32037	27.71
4. नगवां	54518	28637	25881	29.21

1	2		3	4	5
5. चोपन	166693		88609	78084	26.43
6. म्योरपुर	192719		105623	87096	77.63
7. दुद्धी	96533		50826	45707	34.28
8. बभनी	57618		30102	27516	26.06
वन ग्राम	**1584**		**855**	**729**	-
गामीण योग	**930958**	**(86.6%)**	**495199**	**435759**	**36.25**
नगरीय योग	**144083**	**(13.4%)**	**82204**	**61879**	-
जनपद योग	**1075041**		**577403**	**497638**	**38.75**

स्त्रोत - संख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 28 एवं संगणित ।

यद्यपि अध्ययन क्षेत्र में प्रति दशाब्दी जन-घनत्व में वृद्धि हो रही किन्तु उत्तर प्रदेश व भारत की तुलना में जन-घनत्व अभी भी बहुत कम है (तालिका -2.6)। 1951 में अध्ययन क्षेत्र का प्रति वर्ग कि0 मी0 जन - घनत्व 49 था। 1961, 1971, 1981 तथा 1991 में क्रमशः 63, 83, 114 तथा 158 हो गया । 1991 में उत्तर प्रदेश का जन घनत्व 471 तथा भारत का 267 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0 मी0 था ।

तालिका 2.5 से स्पष्ट है कि विकास खण्ड चोपन में जनसंख्या, क्षेत्रफल की तुलना में (लगभग 25%) कम (लगभग 18%) है । कृषि प्रधान विकासखण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज तथा चतरा में 'क्षेत्रफल प्रतिशत' की तुलना में 'जनसंख्या प्रतिशत' अधिक है । उद्योग प्रधान विकासखण्ड म्योरपुर व दुद्धी के क्षेत्रफल व जनसंख्या प्रतिशत के अनुपात में बहुत अधिक समानता है, जबकि उद्योग विहीन एवं अल्प कृषि क्षेत्र युक्त विकासखण्ड नगवां व बभनी में क्षेत्रफल की तुलना में

तालिका 2.6

जनसंख्या घनत्व

वर्ष । विकासखण्ड	घनत्व प्रति वर्ग किमी0
1951	49
1961	63
1971	83
1981	114
1991	158
विकास खण्ड 1991	
1. घोरावल	191
2. राबर्ट्सगंज	312
3. चतरा	265
4. नगवां	60
5. चोपन	97
6. म्योरपुर	144
7. दुद्धी	137
8. बभनी	94
ग्रामीण	137
नगरीय	7035
सम्पूर्ण जनपद	**158**
उत्तर प्रदेश	471
भारत	267

DISTRICT SONBHADRA
DENSITY OF POPULATION
N
S
0 4 8
KM
PERSONS / KM²
300-400
200-300
100-200
< 100
FIG. 2 10
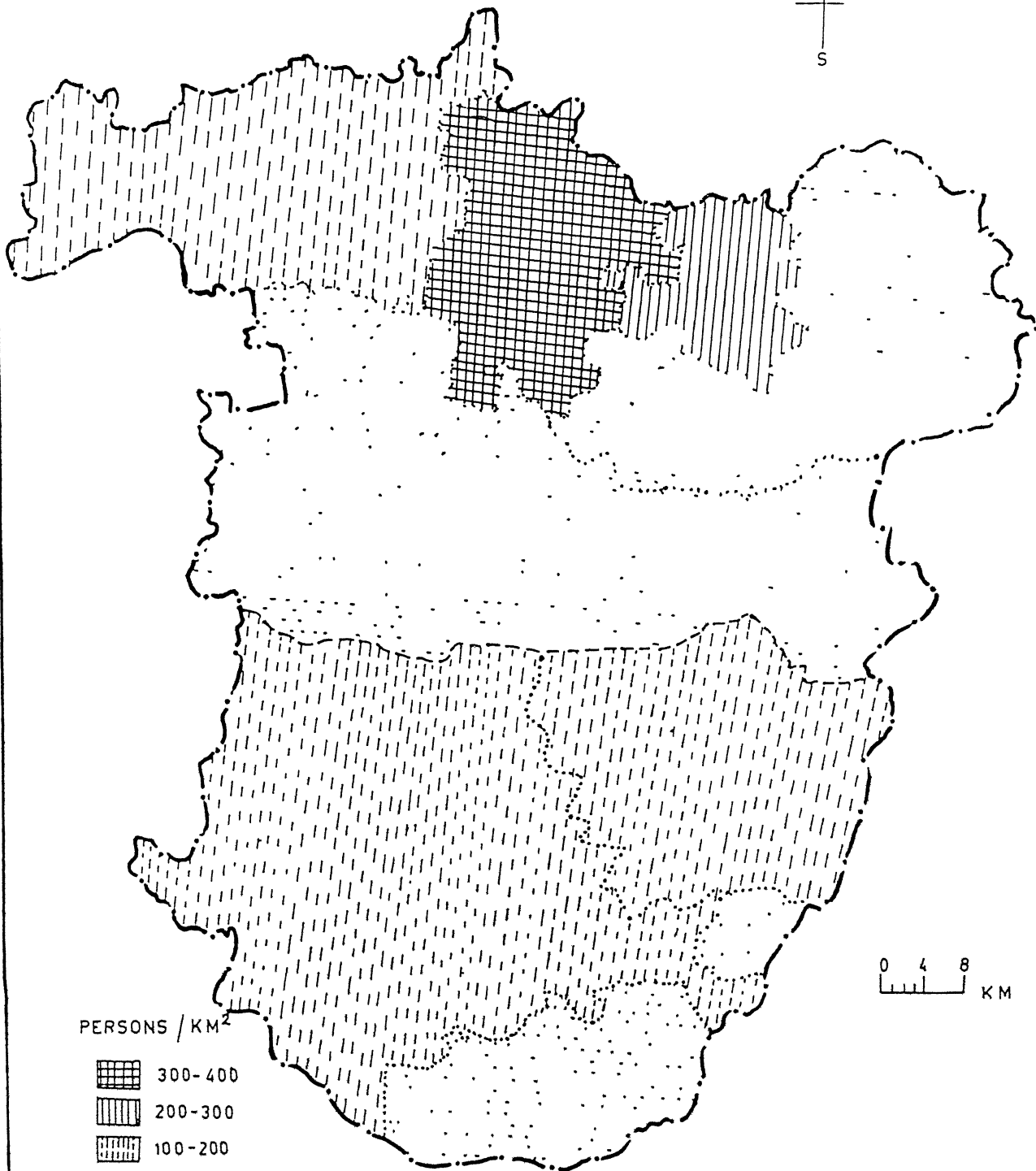
DEVELOPMENT BLOCKWISE POPULATION OF
DISTRICT SONBHADRA : 1991
POPULATION IN Thousands
200
150
100
50
0
GHORAWAL
ROBERTSGANJ
CHATARA
NAGAWA
CHOPAN
MUIRPUR
DUDHI
BABHANI
DEVELOPMENT BLOCKS
TOTAL POPULATION
MALE POPULATION
FEMALE POPULATION
Fig 2.11
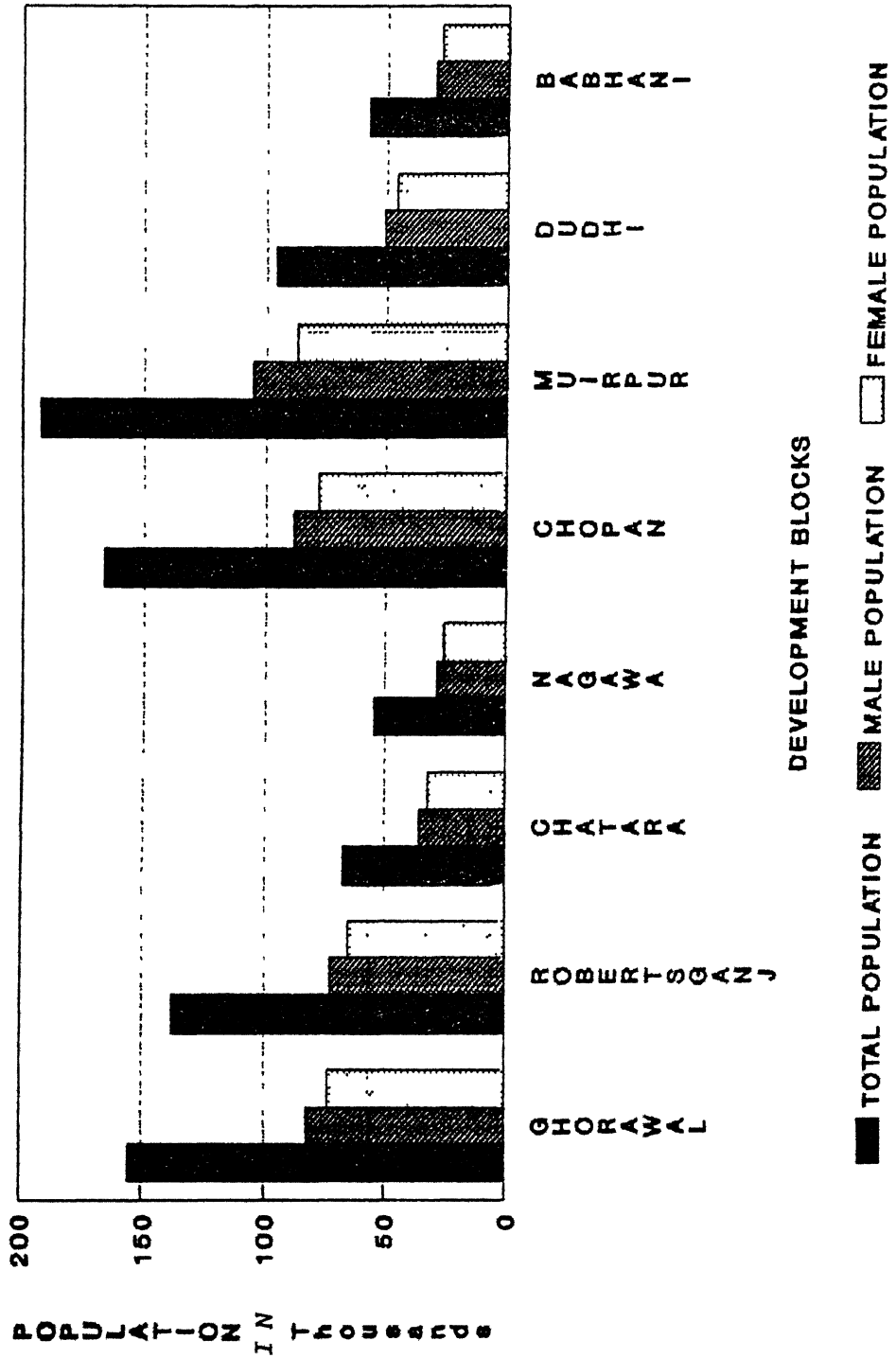
जनसंख्या बहुत ही कम है (तालिका 2.1 व 2.5) । इससे स्पष्ट है कि कृषि तथा उद्योग जनसंख्या वितरण को प्रभावित किए हैं। उल्लेखनीय है कि उद्योग प्रधान विकास खण्ड म्योरपुर में जनसंख्या वृद्धि गत कुछ वर्षों में ही हुआ है। 1981-91 में म्योरपुर में 77.63% जनसंख्या वृद्धि हुई, जिसका प्रत्यक्ष कारण उद्योग एवं खनन है ।

अध्ययन क्षेत्र की 1951 में जनसंख्या 331170 थी जो 1991 में बढ़कर 1075041 हो गयी। प्रतिदशक जनसंख्या वृद्धि 1961, 1971, 1981, व 1991 में क्रमश: 30.40, 30.59, 37.39 तथा 38.75%हुई (तालिका - 2.7) । अध्ययन प्रदेश में कुल 8 नगरीय क्षेत्र (घोरावल, राबर्ट्सगंज, चुर्क - गुरमा, ओबरा, पिपरी, रेजूकूट, चोपन व दुद्धी) है, जिनसे 13.4% लोग रहते हैं। 86.6% जनसंख्या ग्रामीण है (तालिका - 2.5) ।

तालिका 2.7

जनसंख्या वृद्धि

वर्ष	जनसंख्या	गत दशक से वृद्धि	गत दशक से वृद्धि प्रतिशत में
1951	331170		
1961	431841	100671	30.40
1971	563954	132113	30.59
1981	774804	210850	37.39
1991	1075041	300237	38.75

(2.) अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति

अध्ययन क्षेत्र में अनुसूचित जातियों की बहुलता है। सरकारी आंकड़ों में 1981 तक एक भी अनुसूचित जनजाति नहीं थी। ऐसा लगता है उन्हें अनुसूचित जाति में सम्मिलित कर लिया गया था। किन्तु 1991 में 139 अनुसूचित जनजाति के लोगों की पहचान की गयी है। इसमें 94 पुरूष तथा 45 महिलाएं हैं। [21] अध्ययन क्षेत्र में कुल 456872 लोग अनुसूचित जाति

के हैं जो कुल जनसंख्या के 42.5% है। 96.24% अनुसूचित जाति के लोग ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 3.76% नगरीय क्षेत्रों में रहते हैं। अवनतक्रम में इनकी जनसंख्या प्रत्येक विकास खण्ड में इस प्रकार है - चोपन - 21.18%, म्योरपुर - 18.14%, घोरावल - 15%, दुद्धी - 12.13%, राबर्टसगंज - 9.52%, बभनी - 8.24%, नगवां - 6.39% तथा चतरा 5.39% (तालिका 2.8) । विकास खण्ड चोपन, म्योरपुर, घोरावल व दुद्धी में सम्मिलित रूप से लगभग 65% अनुसूचित जातियाँ रहती हैं। भारत में अनुसूचित जाति के 15.8% तथा उत्तर प्रदेश में 23.3% लोग हैं। अतः तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन प्रदेश में इनकी संख्या अधिक है।

तालिका 2.8

अनुसूचित जाति की जनसंख्या 1991

क्रम सं0	विकासखण्ड	कुल जनसंख्या	प्रतिशत
1.	घोरावल	68570	15.00
2.	राबर्टसगंज	43513	9.52
3.	चतरा	24619	5.39
4.	नगवां	29179	6.39
5.	चोपन	96766	21.18
6.	म्योरपुर	82891	18.14
7.	दुद्धी	55403	12.13
8.	बभनी	37638	8.24
वन ग्राम		1109	0.24
ग्रामीण		439688	96.24
नगरीय योग		17184	3.74
सम्पूर्ण जनपद		**456872**	**100.00**

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र 1992, पृष्ठ 30 एवं पृष्ठ 31 से संगणित ।

DEVELOPMENT BLOCKWISE SCHEDULED CASTES
POPULATIONT OF DISTRICT SONBHADRA : 1991

POPULATION IN thousands

120
100
80
60
40
20
0

68.57
43.513
24.619
29.179
96.766
82.891
55.403
37.838

GHORAWAL R.GANJ CHATARA NAGAWA CHOPAN MUIRPUR DUDHI BABHANI

DEVELOPMENT BLOCKS
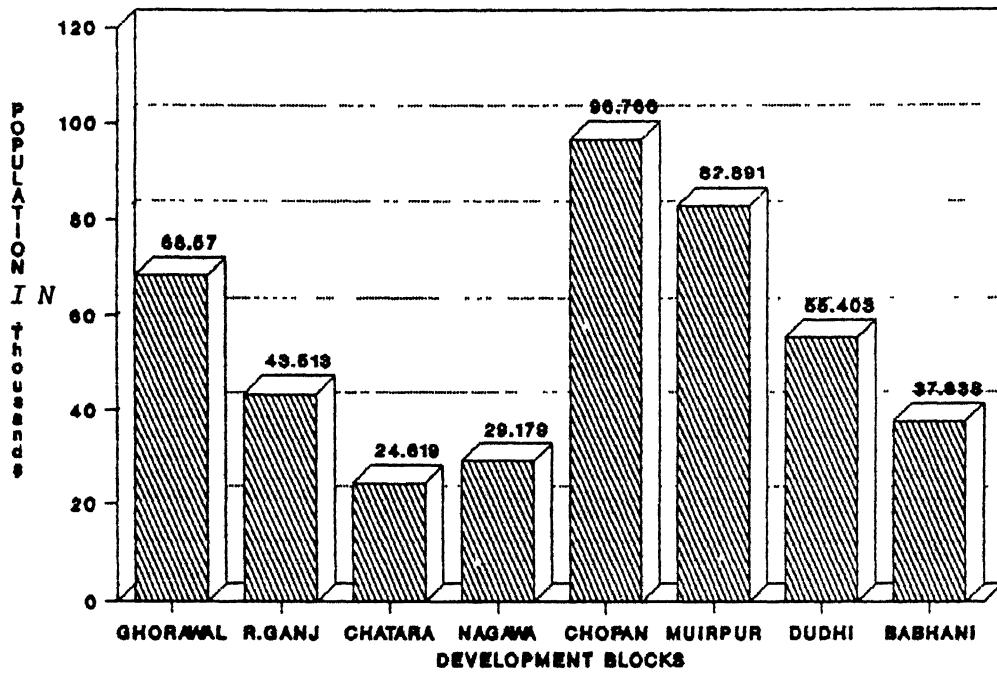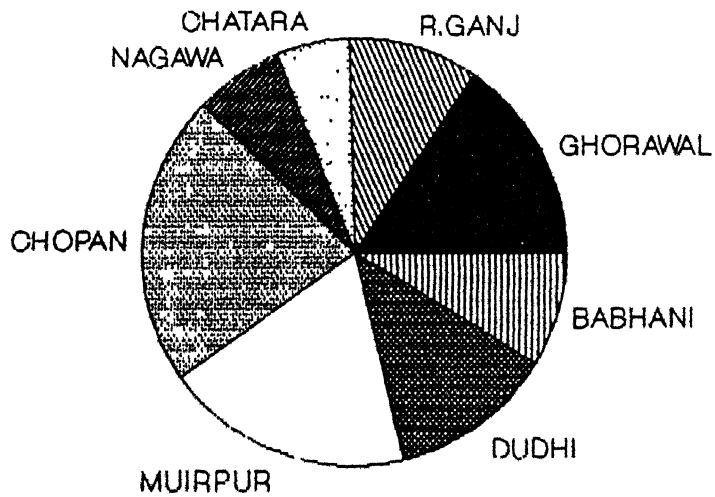
Fig 2. 12

Fig 2.12

(3.) साक्षरता

अध्ययन क्षेत्र में 1971 में 20.60%, 1981 में 27.50% तथा 1991 में 34.40% लोग साक्षर थे। 1991 में पुरूषों की साक्षरता 47.56% तथा स्त्रियों की 18.56% थी। भारत में 52.11% लोग साक्षर हैं जिनमें पुरूषों व स्त्रियों की साक्षरता प्रतिशत क्रमश 63.86 तथा 39.42 है। भारत की तुलना में अध्ययन प्रदेश में बहुत कम लोग साक्षर हैं। विकास खण्ड म्योरपुर, चतरा, राबर्ट्सगंज, घोरावल, दुद्धी, चोपन, बभनी व नगवां में साक्षरता प्रतिशत क्रमश 41.29, 31.04, 30.32, 25.42, 22.94, 20.73, 19.28 व 18.27 है। सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र में 27.92% लोग साक्षर हैं, जबकि नगरीय क्षेत्र मं 74.08% लोग साक्षर हैं (तालिका 2.9) ।

तालिका 2.9

जनपद सोनभद्र में साक्षरता प्रतिशत

वर्ष/विकासखण्ड/ जनपद	कुल	पुरूष	स्त्री
1	2	3	4
1971	20.60	29.10	10.90
1981	27.50	38.00	15.10
1991	34.40	47.56	18.56
विकासखण्ड 1991			
घोरावल	25.42	38.69	10.28
राबर्ट्सगंज	30.32	45.40	13.09
चतरा	31.04	47.91	12.08
नगवां	18.27	29.55	5.56
चोपन	20.73	31.47	8.07
म्योरपुर	41.29	54.07	25.01
दुद्धी	22.94	36.05	8.02
बभनी	19.28	31.66	5.42

1	2	3	4
वनग्राम	29.34	46.04	9.68
ग्रामीण योग	27.92	41.12	12.49
नगरीय योग	74.08	84.08	60.20
सम्पूर्ण जनपद	**34.40**	**47.56**	**18.56**

स्रोत : साख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ - 41 ।

(4.) व्यावसायिक संरचना

तालिका 2.10 को देखने से स्पष्ट हो होता है कि 43.21% लोग कृषक हैं, तथा 26.90% लोग कृषि मजदूर हैं। सम्पूर्ण कृषि कृषि से सम्बन्धित कार्यों में लगे लोगों की संख्या कुल कर्मकरों की 70.87% है। निर्माण कार्य में 1.27%, यातायात एवं संचार मे 1.12% तथा खनन कार्यों में 0.98% जनसंख्या लगी है। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि कुछ बड़े उद्योगों की आवस्थापना के बावजूद अध्ययन क्षेत्र कृषि प्रधान है ।

जनपद के कुल कार्यशील जनसंख्या को 11 व्यवसाय वर्ग में विभक्त किया गया है। प्रत्येक कार्य में लगे लोगों की संख्या व प्रतिशत तालिका - 2.10 में प्रदर्शित है ।

(स) बस्तियों का प्रतिरूप

बस्तियों का प्रतिरूप कोई आकस्मिक कारकों अथवा घटना का परिणाम नहीं होता। उसका सीधा सम्बन्ध जिस स्थान पर बस्ती की उत्पत्ति हुई है उससे तथा उसकी नाभि के विन्यास से होता है। हैगेट (1979) के अनुसार धरातल पर बस्तियाँ मानव व्यवसाय की अभिव्यक्ति है तथा सांस्कृतिक भू-दृश्य के रूप में विकसित मानव की

तालिका - 2.10

जनसंख्या का व्यावसायिक संरचना - 1991

क्रमसंख्या	व्यवसाय	कुल संख्या	कुल संख्या का प्रतिशत
1	2	3	4
1.	कृषक	194849	43.21
2.	कृषक मजदूर	121310	26.90
3.	पशुपालन, जंगल लगाना व वृक्षारोपण	3423	0.76
4.	खान खोदना	4425	0.98
5.	पारिवारिक उद्योग	5213	1.16
6.	गैर पारिवारिक उद्योग	23918	5.30
7.	निर्माण कार्य	5741	1.27
8.	व्यवसाय एवं वाणिज्य	13009	2.89
9.	यातायात एवं संचार	5072	1.12
10.	अन्य कर्मकर	33776	7.49
11.	कुल मुख्यकर्मकर	410636	91.07
12.	सीमान्त कर्मकर	40265	8.93
13.	कुल कर्मकर	450901	100.00

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ - 32, 33, 34 एवं इसके आधार पर संगणित ।

प्रथम रचनायें हैं, प्रत्येक बस्ती की अपनी मौलिक विशेषता होती है। कुछ सामान्य विशेषताओं यथा आकार, अन्तरालन, बसाव प्रतिरूप तथा गहनता आदि के परिप्रेक्ष्य में बस्तियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। आकारकीय एवं कार्यात्मकता के

तालिका - 2.11
जनसंख्या के अनुसार गाँवों का वर्गीकरण
जनसंख्या का आकार

क्रम सं0	विकासखण्ड	200 से कम	200-499	500-999	1000-1999	2000-4999	5000 से अधिक	योग
	1	2	3	4	5	6	7	8
1.	घोरावल	121	119	80	31	3	-	354
2.	राबर्ट्सगंज	122	135	60	18	5	-	340
3.	चतरा	87	61	26	13	3	-	190
4.	नगवां	53	53	28	8	1	-	143
5.	चोपन	14	17	20	17	19	6	93
6.	म्योरपुर	14	33	28	30	11	8	124
7.	दुद्धी	16	29	21	24	12	-	102
8.	बभनी	7	24	18	22	-	1	72
	वनग्राम	6	1	-	1	-	-	8
	ग्रामीण योग	440	472	281	164	54	15	1426
	जनपद योग	**440** (30.86%)	**472** (33.10%)	**281** (19.71%)	**164** (11.50%)	**54** (3.76%)	**15** (1.05%)	**1426** (100%)

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ - 42

DISTRICT SONBHADRA
DISTRIBUTION OF SETTLEMENTS
N
S
0 4 8
KM.
POPULATION SIZE
OF SETTLEMENT
< 500
500-999
1000-1999
2000-9999
>10000
DISTRIBUTION
OF SETTLEMENTS
OF SONBHADRA
POPULATION SIZE OF SETTLEMENTS
>10000
2000-9999
1000-1999
500-999
< 500

FIG. 2.13

आधार पर बस्तियों को ग्रामीण एवं नगरीय दो वर्गों में विभक्त किया जाता है ।

जनपद सोनभद्र में 8 नगरीय बस्तियों तथा 1346 ग्रामीण बस्तियाँ हैं। यद्यपि सम्पूर्ण ग्रामों की संख्या 1426 है। ग्रामीण क्षेत्रों में कुल 86.6% तथा नगरीय क्षेत्रोंमें 13.4% जनसंख्या निवास करती है। सम्पूर्ण अध्ययन प्रदेश में 200 से कम जनसंख्या वाले गांवो की संख्या 440, (30.86%) 200 से 499 जनसंख्या वाले गांवों की संख्या 472 (33.10%), 500 से 999 जनसंख्या वाले गांवों की संख्या 281 (19.71%), 1000 से 1999 जनसंख्या वाले गाँवों की संख्या 164 (11.50%), 200 से 4999 जनसंख्या वाले गांवों की संख्या 54 (3.29%) तथा 5000 से अधिक जनसंख्या वाले गाँवों की संख्या 15 (1.05%) है (तालिका 2.11) ।

अध्ययन क्षेत्र में बड़ी बस्तियों की अवस्थिति दूर-दूर है। बस्तियों की जनसंख्या के अनुसार आकार में कमी के साथ-साथ उनके बीच की दूरी में कमी पायी जाती है। सामान्यतया बस्तियों का आकार परिवहन मार्गों के अभिगम्यता से प्रभावित होती है। बस्तियों का स्वरूप कृषि प्रधान क्षेत्रों में संहत है किन्तु अधिकांश बस्तियां विकीर्ण हैं। बस्तियों का अवस्थापनात्मक वितरण बस्तियों की सघनता और अन्तरालन के द्वारा समझा जा सकता है। बस्तियों की सघनता से तात्पर्य प्रति 100 वर्ग किमी0 क्षेत्र में बस्तियों की संख्या से है। जनपद में बस्तियों की सघनता 21 बस्ती प्रति 100 वर्ग किमी0 है, जो काफी न्यून है। जनपद के विभिन्न क्षेत्रों में इसका क्षेत्रीय वितरण और अधिक असमान है। प्रति 100 वर्ग किमी0 में सबसे अधिक बस्तियां कृषि प्रधान विकास खण्डों राबर्ट्सगंज, चतरा तथा घोरावल में क्रमशः 77, 75 तथा 43 हैं। शेष विकास खण्डों नगवां, दुद्धी, बभनी, म्योरपुर तथा चोपन में क्रमश· 16, 14, 12, 9 तथा 5 हैं। विकास खण्ड चोपन में प्रति 100 वर्ग किमी0 बस्तियों की संख्या 5 अत्यधिक कम है।

बस्तियों की सघनता तथा अन्तरालन में विलोम सम्बन्ध है। सघनता कम होने पर अन्तरालन बढ़ता है। तथा सघनता बढ़ने पर अन्तरालन कम होने लगता है, उपर्युक्त तथ्य तालिका - 2.12 से स्पष्ट है। बस्तियों के अन्तरालन की गणना माथेर (1944) द्वारा प्रयुक्त सूत्र द्वारा की गयी है, जो निम्नलिखित है -

$$\text{अन्तरालन} = 1.0746 \sqrt{\frac{\text{क्षेत्रफल}}{\text{बस्तियों की संख्या}}}$$

तालिका 2.12

गाँवों की सघनता और अन्तरालन

क्रम सं0	विकासखण्ड	सघनता प्रति 100 वर्ग किमी0	अन्तरालन किमी0 में
1.	घोरावल	43	1.63
2.	राबर्ट्सगंज	77	1.23
3.	चतरा	75	1.25
4.	नगवां	16	2.72
5.	चोपन	5	4.61
6.	म्योरपुर	9	3.54
7.	दुद्धी	14	2 83
8.	बभनी	12	3.12
	जनपद योग:	**21**	

अध्ययन प्रदेश के बस्तियों की सघनता और अन्तरालन के विश्लेषणोपरान्त कहा जा सकता है कि बस्तियों का वितरण प्रतिरूप असमान है। बस्तियों का असमान वितरण प्रतिरूप भ्वाकृतिक विशेषताओं तथा कृषि से प्रभावित है। भौतिक तथ्यों का बस्तियों के वितरण प्रतिरूप पर सबसे अधिक प्रभाव है। अध्ययन क्षेत्र की अधिकांश बस्तियां मिट्टी, लकड़ी व घास-फूस से निर्मित हैं ।

जनपद में नगरीय बस्तियों की संख्या बहुत कम है। कुल 8 नगरीय क्षेत्र (घोरावल, राबर्ट्सगंज, चुर्क-गुरमा, ओबरा, चोपन, दुद्धी, रेनूकूट तथा पिपरी) हैं। नगरीय

जनसंख्या 13.4% है। अध्ययन क्षेत्र के अनेक औद्योगिक केन्द्रों जैसे - रिहन्द नगर, शक्तिनगर, अनपरा, रेणूसागर, डाला आदि को नगरीय क्षेत्र की मान्यता शीघ्र मिलने की सम्भावना है। अध्ययन क्षेत्र में नगरीकरण बहुत धीमी गति से हो रहा है। यहाँ ग्रामीण बस्तियों व ग्रामीण संस्कृति का ही बाहुल्य है ।

किसी भी क्षेत्र के भौगोलिक पृष्ठभूमि के वर्णन में कृषि, उद्योग तथा परिवहन एवं संचार का महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन के अध्याय - 4 मे कृषि, अध्याय - 5 में उद्योग तथा अध्याय - 6 में परिवहन एवं संचार का विस्तृत वर्णन एवं विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इसलिए तथ्यों के पुनरावृत्ति न होने देने की दृष्टि से इस अध्याय में उपर्युक्त तथ्यों को वर्णित नहीं किया गया है ।

सन्दर्भ

1. केशरी, अर्जुनदासः 'सोनभद्र एक नयी संस्कृति को जन्म देगा', स्वतन्त्र भारत, लखनऊ, 6 मार्च 1989.

2. *Gazetteer of India, Uttar Pradesh, District Mirzapur, 1988,p.1*

3. वही, मानचित्र संख्या 2.1 से संगणित.

4. एकीकृत जिला योजना, जनपद सोनभद्र, 1992-93, पृष्ठ 5.

5. सिंह, सविन्द्र: 'भू आकृति विज्ञान', बसुन्धरा प्रकाशन, दाउदपुर, गोरखपुर, 1982, पृष्ठ 652-53.

6. वही, पृष्ठ 652.

7. वही, पृष्ठ 654.

8. वही पृष्ठ - 652.

9. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 2, पृष्ठ 16.

10. ओबरा वन - प्रभाग, उत्तर प्रदेश की प्रबन्ध योजना 1992-93, 2001-2, कार्य योजना वृत्त प्रथम.

11. सिंह, जगदीश, राव, बच्चा प्रसाद व सिंह, रामबली: तीन दक्षिणी महाद्वीप (तुलनात्मक प्रादेशिक अध्ययन), तारा पब्लिकेशन, वाराणसी, 1980, पृष्ठ 59.

12. कुरैशी, एम0एच0 'भारत, संसाधन और आर्थिक विकास' राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 1990, पृष्ठ 11.

13. कुरैशी, एम0एच0 : 'भूगोल के सिद्धान्त', भाग 11, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 1989, पृष्ठ 6.

14. रजा, मुनीम व एजाज, अहमद,: भारत का सामान्य भूगोल, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, 1978, पृष्ठ 74.

15. चेतन, सुदर्शन कुमार· 'हमारे वन' , प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1981, पृष्ठ 1.

16. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 10, पृष्ठ 37 .

17. नवभारत टाइम्स, लखनऊ, 4 मार्च 1992, पृष्ठ - 4.

18. एन0सी0एल0 की गृहपालिका, 'बसुन्धरा, 1992,पृष्ठ 11-12.

19. केशरी, अर्जुनदास संस्कार भारती, ओबरा (शोणभद्र) की स्मारिका, 4 अप्रैल 1992, पृष्ठ - 31.

20. सोनभद्र, इतिहास और संस्कृति, संस्कार भारती, ओबरा (सोणभद्र) की स्मारिका, अप्रैल 1992, पृष्ठ 27.

21. सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 31.

अध्याय 3

बस्तियों का स्थानिक - कार्यात्मक संगठन एवं नियोजन

प्रत्येक क्षेत्र का अपना एक विशिष्ट व्यक्तित्व होता है जिसका निर्माण न केवल वहाँ प्राप्त संसाधनों द्वारा अपितु वहाँ निवास करने वाले लोगों के द्वारा भी होता है ।[1] संसाधनों तथा आर्थिक क्रियाओं के असमानता के कारण ही किसी विशिष्ट क्षेत्र में विभिन्न स्तरीय सेवा केन्द्रों का अभ्युदय तथा विकास होता है । इन सेवा केन्द्रों का अधिवास प्रतिरूपों से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है । अन्य देशों की भाँति भारत में भी विभिन्न भौगोलिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में सुसंहत एवं व्यासृत दोनों ही प्रकार के अधिवास प्रतिरूपों का विकास हुआ है । इन दो प्रतिरूपों के अतिरिक्त दोनों के मध्य अनेक प्रतिरूपों जैसे विसरित पल्लियों आदि का भी विकास स्थान विशेष की विशिष्ट सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के परिणामस्वरूप मिलता है ।[2] कृषि आधारित बड़े पैमाने पर संहत बस्तियाँ भारतीय बस्ती प्रतिरूप की मुख्य विशेषता है ।[3] अध्ययन क्षेत्र में अधिकांशतः व्यासृत बस्तियाँ पायी जाती हैं । अहमद[4] ने उत्तरी सोनभद्र में विसारित प्रकार का अधिवास तथा दक्षिणी सोनभद्र में व्यासृत अधिवास का प्रतिरूप बताया है । व्यासृत बस्तियाँ ऐसे बस्तियों के प्रतिरूप हैं जिनमें आवासगृह परस्पर दूरी पर स्थित होते हैं और सम्पूर्ण बस्ती बिखरी एवं फैली हुई होती है । उत्तरी सोनभद्र के विकासखण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज एवं चतरा के बेलन घाटी कृषि क्षेत्र में नाभिक बस्तियाँ पायी जाती है । ये ऐसे बस्तियों के प्रतिरूप हैं जिसमें आवासगृह सुसंहत होते हैं । माइत्सेन[5] ने सुसंहत ग्रामीण अधिवास को सामुदायिक कृषि व्यवस्था से और व्यासृत आवासगृहों को व्यक्तिगत कृषि व्यवस्था से सम्बन्धित बताया है ।

नगरों का विकास गाँवों से होता है और नगरवासी निरन्तर ग्रामवासियों के परिश्रम पर ही पनपते हैं ।[6] सामाजिक - आर्थिक अधःसंरचना की दृष्टि से ये ग्रामीण बस्तियाँ नगरी बस्तियों की अपेक्षा पर्याप्त रूप से पिछड़ी हैं । इनके पिछड़ेपन के कारण ही बड़े पैमाने पर कार्यशील जनसंख्या का स्थानान्तरण गाँवों से नगरों की ओर हो रहा है, जो भारतीय जनसंख्या की प्रमुख समस्या है । गाँवों से नगरोन्मुखी स्थानान्तरण की समस्या का समाधान, ग्रामीण बस्तियों की सामाजिक - आर्थिक अधःसंरचना के विकास में निहित है ।[7] इस समस्या का समाधान क्षेत्र के विकास द्वारा ही सम्भव है और उस क्षेत्र का विकास ऐसे अनेक बस्तियों के माध्यम से किया जा सकता है जहाँ लगभग सभी आधारभूत सामाजिक-

आर्थिक सुविधाओं का केन्द्रीकरण हो । यदि ये बस्तियाँ आवागमन एवं संचार माध्यमों से आपस में सुसम्बद्ध हो जाय तो विकास की गति और तेज हो सकती है । प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र 'पिछड़ी अर्थव्यवस्था' का प्रतिरूप है । अध्ययन क्षेत्र में आधारभूत बस्तियों को पहचनाने का प्रयास किया गया है जो संख्या में अल्प हैं । साथ ही सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र के संतुलित विकास के लिए, विकेन्द्रीकरण के माध्यम से, ऐसे नवीन केन्द्रों का चयन तथा विकास केन्द्रों के रूप में संवर्धन के लिए नियोजन प्रस्तुत किया गया है ।

3.1 विकास - केन्द्र की संकल्पना

जिन बस्तियों में किसी भी मात्रा या गुण के सामाजिक एवं आर्थिक क्रियाओं का संकेन्द्रण हो जाता है, विकास - केन्द्र के रूप में अभिहित किया जाता है । विकास-केन्द्रों को अनेक नामों से जाना जाता है जैसे - सेवा केन्द्र, विकास - ध्रुव, केन्द्र-स्थल व विकास बिन्दु आदि । कार्यों की तीव्रता के आधार पर विकास केन्द्रों को तीन वर्गों - (1) विकास ध्रुव, (2) विकास केन्द्र,और (3) विकास बिन्दु,में रखा गया है । प्रो0 आर0 पी0 मिश्र [8] (1975) ने विभिन्न प्रकार के कार्यों की संरचना के आधार विकास केन्द्रों को निम्न 6 वर्गो में विभक्त किया है -

1. विकास ध्रुव
2. विकास केन्द्र
3. विकास बिन्दु
4. सेवा केन्द्र
5. बाजार केन्द्र
6. गाँव केन्द्र

प्रस्तुत अध्ययन में इन सभी प्रकार के विकास जनक केन्द्रों को विकास केन्द्र कहा गया है कुछ बस्तियों की विशिष्ट स्थिति एवं कार्यों के केन्द्रीकरण के परिणामस्वरूप विकास केन्द्रों के रूप में अभिनिर्धारण हो जाता है । ऐसी बस्तियाँ ही सम्बन्धित कार्यों द्वारा अपने समीपवर्ती क्षेत्रों को सेवा प्रदान करती हैं, जिससे उन्हें सेवा केन्द्र के रूप में अभिहित

किया जाता है । [9] इस प्रकार की बस्तियों की पहचान सर्वप्रथम मार्क जेफरसन [10] ने केन्द्र स्थल (सेन्ट्रल प्लेस) के रूप में किया था । इसी आधार पर क्रिस्टालर [11] ने 'केन्द्र स्थल सिद्धान्त' का प्रतिपादन किया । सेवा केन्द्रों का आधार छोटे गाँव से लेकर वृहद् नगरों तक होता है । ये कन्द्र विकास तथा नवाचार के जनक होते हैं । इन सेवा केन्द्रों के आधार पर पेराउक्स [12] महोदय ने, जो एक अर्थशास्त्री थे, विकास ध्रुव सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। बोडेविले [13] ने इस सिद्धान्त को भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में नया आयाम दिया ।

3.2 विकास केन्द्र एवं केन्द्रीय कार्य

कोई भी विकास केन्द्र चाहे जिस आकार प्रकार का हो वह सामाजिक -आर्थिक कार्यों का संग्रह केन्द्र होता है तथा समीपवर्ती क्षेत्र की सेवा करता है । बड़े विकास केन्द्रों में विकास कार्यों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है । किसी भी विकास केन्द्र की स्थापना एवं स्थायित्व उन सामाजिक - आर्थिक कार्यों पर निर्भर करता है, जिसके द्वारा समीपवर्ती क्षेत्र की सेवा प्रदान करता है । अतः ये केन्द्र परिधीय क्षेत्र से इष्टतम रूप में जुड़े होते हैं । इन केन्द्रों के सेवाओं का लाभ प्रत्येक जन तक पहुँचे, इसके लिए सम्पूर्ण क्षेत्र में विभिन्न स्तर के सेवा केन्द्रों का जाल होना चाहिए । वास्तव में ये केन्द्र सामाजिक-आर्थिक कार्यों के क्रीड़ा स्थल के रूप में होते हैं । इन सेवा केन्द्रों का स्वरूप स्थानीय इकाई के समान होता है, जिनके द्वारा अधिकांश सुविधाएँ एवं सेवाएं प्रमुखतः निश्चित क्षेत्र के लोगों को दिए जाते हैं ।

सेवा केन्द्रों या केन्द्र स्थलों पर अनेक कार्यों का संकेन्द्रण होता है किन्तु इनमें से कुछ कार्य केन्द्र स्थल की जनसंख्या के लिए तथा कुछ कार्य समीपवर्ती क्षेत्र (सेवित क्षेत्र) की जनसंख्या के लिए होते हैं । स्वयं केन्द्र स्थल की जनसंख्या को सेवा प्रदान करने वाले कार्यों को सामान्य कार्य (नान बेसिक फंक्सन) तथा समीपवर्ती क्षेत्रों को सेवा प्रदान करने वाले कार्यों को आधारभूत कार्य (बेसिक फंक्सन) कहा जाता है, जिस पर ही उनकी अवस्थिति होती है । सामान्यतः सामान्य कार्य सभी बस्तियों द्वारा किये जाते हैं किन्तु आधारभूत कार्य कुछ विशिष्ट बस्तियों द्वारा ही सम्पादित होते हैं । क्रिस्टालर [14] ने इन

आधारभूत कार्यों को केन्द्रीयकार्य (सेन्ट्रल फंक्सन) कहा है । भट्ट [15] ने तकनीकी, आर्थिक एवं संस्थागत कारणों से असर्वगत (नान यूबीक्यूट्स) तथा कुछ निश्चित क्षेत्रों की सेवा के लिए निश्चित स्थानों पर अवस्थित सेवाओं को 'केन्द्रीय कार्य' के रूप में माना है । राजकुमार पाठक [16] के अनुसार जिन कार्यो से लोगों का स्थानान्तरण संभव होता है उसे 'केन्द्रीय कार्य' कहते हैं। यह स्थानान्तरण दैनिक, मासिक, वार्षिक, स्थायी, अस्थायी आदि अनेक रूपों में हो सकता है। किन्तु किसी भी कार्य का केन्द्रीय कार्य होना इस बात पर निर्भर है कि उसका उस क्षेत्र में क्या महत्व है ? किसी विकास केन्द्र के केन्द्रीय कार्यों का महत्व, स्वयं उस केन्द्र एवं सम्बन्धित क्षेत्र के विकास में योगदान से है । सम्बन्धित केन्द्र एवं क्षेत्र का विकास केन्द्रीय कार्यों का प्रतिफल होता है । इन विकास केन्द्रों का विकास, परिधीय क्षेत्रों के योगदान का भी परिणाम है । वास्तव में केन्द्रीय कार्यों का सम्बन्ध सम्बन्धित विकास केन्द्र एवं क्षेत्र का विकास करने से है । अतः ऐसे कार्यों को 'केन्द्रीय विकास कार्य' (सेन्ट्रल ग्रोथ फंक्सन) कहना अधिक उपयुक्त है । प्रस्तुत अध्ययन में प्रशासनिक, कृषि एवं पशुपालन, शिक्षा एवं मनोरंजन, परिवहन एवं संचार, चिकित्सा, वित्तीय तथा व्यापार एवं वाणिज्य से सम्बन्धित 35 कार्यो को केन्द्रीय विकास कार्य के रूप में प्रयुक्त किया गया है । सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में व्याप्त इन कार्यों को प्रवेशी जनसंख्या (इन्ट्री प्वाइंट पापुलेशन), संतृप्त जनसंख्या (सेचुरेशन प्वाइंट पॉपुलेशन) और कार्याधार जनसंख्या (थ्रीशोल्ड पॉपुलेशन) के साथ प्रस्तुत किया गया है ।

तालिका 3.1

केन्द्रीय विकास कार्य

कार्य	अध्ययन क्षेत्र में कुल संख्या	प्रवेशी जनसंख्या	संपृक्त जनसंख्या	कार्याधार जनसंख्या
1	2	3	4	5
(क) प्रशासनिक कार्य				
1. जिला मुख्यालय	1	20669	20669	20669
2. तहसील मुख्यालय	2	8960	20669	14815.5
3. विकासखण्ड केन्द्र	8	1078	20669	10873.5
4. न्याय पंचायत केन्द्र	66	438	11413	5925.5
5. थाना	12	334	43325	21839.5
6. पुलिस चौकी	7	996	35247	18121.5

1	2	3	4	5
(ख) कृषि एवं पशुपालन				
7. शीत भण्डार	1	20669	20669	20669
8. बीज, कीटनाशक एवं उर्वरक केन्द्र	78	264	1544	904
9. पशु अस्पताल	16	667	43345	22006
10. पशु सेवा केन्द्र	20	362	1863	1112.5
(ग) शिक्षा एवं मनोरंजन				
11. महाविद्यालय	2	8960	43345	26152.5
12. हायर सेकेन्ड्री वि0	30	508	6250	3379
13. सीनियर बेसिक वि0	96	317	6263	3275
14. जूनियर बेसिक वि0	715	122	658	390
15. छविगृह	5	9837	35247	22542
(घ) परिवहन एवं संचार				
16. रेलवे स्टेशन हाल्ट सहित	26	539	12190	6364.5
17. बस स्टेशन	18	810	8901	4855.5
18. बस स्टाप	42	240	4381	2310.5
19. फेरी घाट	10	310	33383	16846.5
20. डाकघर	136	160	1851	1005.5
21. दूरभाष एवं तारघर	16	2250	6350	4300
(ड) चिकित्सा				
22. अस्पताल	5	8960	43345	26152.5
23. प्रा0 स्वा0 केन्द्र	29	456	6260	3353
24. आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सालय	17	448	35247	1883.5
25. होम्योपैथिक चिकित्सालय	20	320	43345	21832.5

1	2	3	4	5
26. मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र एवं उपकेन्द्र	118	110	815	462.5
27. पंजीकृत व्यक्तिगत क्लिनिक	106	285	6250	3267.5
28. पंजीकृत औषधालय	36	860	6250	3555
(च) **वित्तीय कार्य**				
29. राष्ट्रीय बैंक	50	250	6250	3250
30. भूमि विकास बैंक	2	8960	20669	14815.5
31. जिला सहकारी बैंक	10	1300	35247	18273.5
32. संयुक्त ग्रामीण बैंक	10	1248	35247	18247.5
(छ) **व्यापार एवं वाणिज्य**				
33. फुटकर बाजार	46	48	863	455.5
34. थोक बाजार	8	2250	20669	13280
35. साप्ताहिक बाजार	36	242	24310	12276

3.3 केन्द्रीय कार्यों का पदानुक्रम

जो कार्य जितना अधिक महत्वपूर्ण होता है उसका स्तर भी उतना ही ऊँचा होता है । कार्यों के महत्व से केन्द्र की केन्द्रीयता प्रभावित होती है । अतः किसी निश्चित स्तर के कार्यों से युक्त केन्द्र का महत्व और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है, जब वह केन्द्र अधिक जनसंख्या की सेवा करता है । परन्तु उतनी ही मात्रा में उससे उच्च स्तर के कार्यों को सम्पादित करने वाले केन्द्र का महत्व अपेक्षाकृत अधिक होता है, क्योंकि वह और अधिक जनसंख्या की सेवा करता है । इसलिए केन्द्रीय कार्यों का पदानुक्रम निर्धारण, नितान्त आवश्यक

है । प्रत्येक केन्द्रीय कार्यों के निर्धारण में उनका तुलनात्मक महत्व निर्धारित होता है । 'कार्यों की प्रवेशी जनसंख्या' के आधार पर मिरयालगुडा तालुका के अध्ययन में, एल0 के0 सेन [17] ने कार्यों का पदानुक्रम निर्धारित किया है । किन्तु ऐतिहासिक और राजनीतिक कारणों से प्रवेशी जनसंख्या प्रभावित होती रहती है जो कार्यों के पदानुक्रम के निर्धारण में सर्वथा सक्षम नहीं होता है । अत. प्रस्तुत अध्ययन में कार्याधार जनसंख्या सूचकांक को पदानुक्रम निर्धारण में आधार बनाया गया है । 'कार्याधार जनसंख्या' किसी भी प्रदेश में किसी भी कार्य को उपयुक्त ढंग से सेवा प्रदान करने के लिए आवश्यक होता है, जो प्रदेश से सम्बन्धित कार्य की प्रवेशी और संपृक्त जनसंख्या के बीच की स्थिति होती है ।

प्रवेशी जनसंख्या से तात्पर्य किसी कार्य को सम्पादित करने से सम्बन्धित उस निम्नतम जनसंख्या से है जिस पर किसी बस्ती में किसी कार्य की अवस्थापना हो । प्रस्तुत अध्ययन में प्रवेशी जनसंख्या की गणना सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र के बस्तियों में से की गयी है । संपृक्त जनसंख्या वह जनसंख्या आकार है जिसके ऊपर किसी प्रदेश में कोई कार्य (यूबीक्वीटस) हो जाता है ।[18] किन्तु, प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र में इस नियम का दृढ़ता से पालन करना संभव नहीं है । उदाहरण स्वरूप जनपद मुख्यालय की जनसंख्या 20669 है । इसे संपृक्त जनसंख्या मानने में कठिनाई यह है कि इससे अधिक जनसंख्या वाले अध्ययन क्षेत्र में 4 केन्द्र (ओबरा - 43345, रेनुकूट - 25247, शक्तिनगर - 33383 तथा अनपरा - 24310) हैं किन्तु जनपद मुख्यालय तो एक ही हो सकता है । ऐसे कई कार्यों के संपृक्त जनसंख्या निर्धारण में, सम्बन्धित कार्य को करने वाले सबसे बड़े केन्द्र की जनसंख्या को संपृक्त जनसंख्या मान लिया गया है । कार्याधार जनसंख्या की गणना रीड मुन्च [19] विधि द्वारा की गयी है इसके बाद सबसे कम कार्याधार जनसंख्या वाले कार्य की जनसंख्या से सभी कार्यो की कार्याधार जनसंख्या में भाग देकर कार्याधार जनसंख्या सूचकांक की गणना की गयी है । पुनः कार्याधार जनसंख्या सूचकांक के निरीक्षण के बाद कार्यो के 4 पदानुक्रम निर्धारित किए गए हैं । तालिका 3.2 में कार्य, उनकी कार्याधार जनसंख्या तथा उनका सूचकांक तथा तालिका 3.3 में कार्यो का पदानुक्रम का विवरण दिया गया है ।

तालिका 3.2

कार्य एवं कार्याधार जनसंख्या सूचकांक

क्रम सं0	केन्द्रीय कार्य	कार्याधार जनसंख्या	कार्याधार जनसंख्या सूचकांक
1	2	3	4
1.	महाविद्यालय	26153	67.05
2.	अस्पताल	26153	67.05
3.	छविगृह	22542	57.80
4.	पशु अस्पताल	22006	56.43
5.	थाना	21840	56.00
6.	होम्योपैथिक चिकित्सालय	21832	55.98
7.	जिला मुख्यालय	20669	52.99
8.	शीत भण्डार	20669	52.99
9.	जिला सहकारी बैंक	18274	46.86
10.	संयुक्त ग्रामीण बैंक	18248	46.79
11.	पुलिस चौकी	18122	46.47
12.	फेरी घाट	16847	43.20
13.	तहसील मुख्यालय	14816	38.00
14.	भूमि विकास बैंक	14816	38.00
15.	थोक बाजार	13280	34.05
16.	साप्ताहिक बाजार	12276	31.48
17.	विकास खण्ड केन्द्र	10874	27.88
18.	रेलवे स्टेशन	6365	16.22
19.	न्याय पंचायत	5926	15.19
20.	बस स्टेशन	4856	12.45
21.	टेलीफोन एवं तारघर	4300	11.03
22.	पंजीकृत औषधालय	3555	9.12

1	2	3	4
23.	हायर सेकेन्ड्री विद्यालय	3379	8.66
24.	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	3353	8.59
25.	सीनियर बेसिक विद्यालय	3275	8.40
26.	पंजीकृत व्यक्तिगत क्लिनिक	3268	8.38
27.	राष्ट्रीय बैंक	3250	8.33
28.	बस स्टाप	2311	5.93
29.	आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सालय	1884	4.83
30.	पशु सेवा केन्द्र	1113	2.85
31.	डाकघर	1006	2.58
32.	बीज,कीटनाशक एवं उर्वरक केन्द्र	904	2.32
33.	मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र	463	1.19
34.	फुटकर बाजार	456	1.16
35.	जूनियर बेसिक विद्यालय	390	1.00

तालिका 3.3

कार्यों के चार पदानुक्रम

पदानुक्रम	कार्याधार जनसंख्या सूचकांक	कार्यो की संख्या
1	2	3
I	67.05 से अधिक	2
II	43.20 से 57.80	10
III	27.88 से 38.00	5
IV	1.00 से 16.22	18

3.4 विकास केन्द्रों का निर्धारण

भारत में वर्तमान विकास केन्द्रों का प्रतिरूप ऐतिहासिक-सांस्कृतिक शक्तियों तथा आर्थिक एवं राजनैतिक आवश्यकताओं का परिणाम है।[20] विकास केन्द्रों के निर्धारण से तात्पर्य अध्ययन क्षेत्र में अवस्थित बस्तियों में से उन बस्तियों का चयन करना जो वितरित बस्तियों का सेवा-केन्द्र के रूप में सेवा कर रहा हो। सेवा केन्द्रों के निर्धारण की प्रक्रिया सिद्धान्त रूप में जितनी आसान लगती है व्यावहारिक रूप में उतनी ही जटिल प्रक्रिया है। अध्ययन प्रदेश के विपुल बस्तियों में से किन-किन बस्तियों को किस मात्रा में तथा किस आधार पर सेवा-केन्द्र का अभिनिर्धारण किया जाय? वांछित आंकड़ों की अनुपलब्धता के कारण परिमाणात्मक मानदण्डों का उपयोग करना संभव नहीं हो पाता है। फलतः वास्तविक विकास केन्द्रों का सुनिश्चयन नहीं हो पाता है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से विभाजित एवं परिभाषित बस्तियाँ कभी-कभी समस्या खड़ी कर देती हैं। कुछ गाँवों में कई पुरवे अनेक केन्द्रक के रूप में कार्य करते हैं तथा कभी-कभी राजस्व गाँव वास्तविक बस्ती की इकाइयों से मेल नहीं खाते। कभी-कभी एक ही सातत्यकीबस्ती कई राजस्व गाँवों में बंटी होती है। कभी-कभी कुछ चौराहे, मोड़ या मुख्य सड़क की अवस्थितियाँ इतनी महत्वपूर्ण होती हैं कि मात्र एक या दो कार्यों के सम्पादन के बावजूद व्यावहारिक रूप में कई बड़े सेवा केन्द्रों से महत्वपूर्ण होते हैं। प्रायः यह भी देखने को मिलता है कि केन्द्रीय कार्यों की अवस्थिति सरकारी आंकड़ों में वस्तुत.प्रदर्शित नहीं होता हैं। अतः सेवा केन्द्र के केन्द्रीय कार्यों की गणना में प्रायः कठिनाई होती है। घोरावल विकास खण्ड का मुख्यालय घोरावल में न होकर खुरूवांव में है। नगवां विकास खण्ड का मुख्यालय वैनी में है। चतरा विकास खण्ड का मुख्यालय रामगढ़ में है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि चतरा, राबर्ट्सगंज विकास खण्ड की बस्ती है जबकि रामगढ़ उक्त विकाखण्ड में नहीं आता है। ऐसे अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं जो विकास केन्द्रों के निर्धारण में समस्या उत्पन्न करती हैं।

सामान्यतः सेवा केन्द्रों का निर्धारण केन्द्रीय सेवाओं की उपस्थिति, केन्द्रीयता तथा केन्द्रीयता सूचकांक, जनसंख्या आकार, कार्यशील व कुल जनसंख्या के अनुपात, केन्द्रीय कार्यों के कार्याधार जनसंख्या तथा बस्तियों के सेवा क्षेत्र के आधार पर या उपर्युक्त आधारों में से एकाधिक आधारों पर किया जा सकता है। विगत कुछ वर्षों में भारत में सेवा केन्द्रों

के निर्धारण में महत्वपूर्ण कार्य हुए हैं। सुधीर वनमाली[21], सेन[22], नित्यानन्द[23], कुमार एव शर्मा[24], एस0बी0 सिंह[25] तथा खान[26] आदि विद्वानों ने कार्यों के संकेन्द्रण के आधार पर सेवा केन्द्रों का निर्धारण किया है जिसमें कार्यों के औसत कार्याधार जनसंख्या को भी स्थान दिया गया है। इसके अतिरिक्त दत्ता[27] ने परिवहन सूचकांक के आधार पर आलम[28] ने जनसख्या के आधार पर, जी0के0 मिश्र[29] ने प्राथमिक कार्याधार जनसंख्या के आधार पर, जगदीश सिह[30] जनसंख्या के आकार और कार्यों की उपस्थिति के आधार पर तथा भट्ट[31] एवं पाठक[32] आदि विद्वानों ने बस्तियों की केन्द्रीयता को सेवा केन्द्रों के निर्धारण में आधार माना है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि सेवा केन्द्रों के निर्धारण की अनेक प्रक्रियाएं है। सभी प्रक्रियाएं व्यक्तिनिष्ठ हैं क्योंकि सेवा केन्द्रो का चयन, केन्द्रीय कार्यों का चयन तथा संतृप्त जनसंख्या बिन्दु का चयन जिसके ऊपर ही सम्पूर्ण विश्लेषण संभव है, अध्ययनकर्ता के विवेक पर निर्भर करता है। प्रस्तुत अध्ययन में कार्यों की औसत कार्याधार जनसंख्या, परिवहन द्वारा बस्तियों की सम्बद्धता तथा केन्द्रीय कार्यों की अवस्थिति के माध्यम से सेवा केन्द्रों का अभिनिर्धारण किया गया है। सर्वप्रथम केन्द्रीय कार्यों को सम्पादित करने वाली बस्तियो मे उन्हीं का चयन करने का प्रयास किया गया है जिनकी जनसंख्या सम्बन्धित कार्यों की कार्याधार जनसंख्या से ऊपर है। तत्पश्चात् किन्ही दो केन्द्रीय विकास कार्यों को सम्पादित करने वाली बस्तियों का चयन किया गया है जिनका मान 3.16 से अधिक है। चयनित सेवा केन्द्रो में से अधिकांश केन्द्रों पर जूनियर बेसिक विद्यालय, मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र एवं उपकेन्द्र तथा फुटकर बाजार पाए जाते हैं। अत सेवा केन्द्रों के कार्यात्मक अंक की गणना मे उपर्युक्त कार्यों के मान को नहीं जोड़ा गया है। यद्यपि फुटकर बाजार के मान (2.17) से राष्ट्रीय बैंक (2), पंजीकृत व्यक्तिगत क्लिनिक (0.94), डाकघर (0.74) सीनियर बेसिक विद्यालय (1.04) तथा न्याय पंचायत (1.52) का मान कम है किन्तु इन कार्यों की कुछ सेवा केन्द्रों पर ही उपस्थिति के कारण इनके मान को जोड़ा गया है, उक्त मानदण्डों के आधार पर अध्ययन क्षेत्र में कुल 63 सेवा केन्द्रों को मान्यता प्रदान की गयी है। इन 63 सेवा केन्द्रों का जनसंख्या तथा सम्पादित होने वाले कार्यों की संख्या तालिका 3.4 में प्रदर्शित है। इन सेवा केन्द्रों द्वारा सम्पादित कार्यों का नाम तालिका 3.1 में तथा इनकी स्थानिक अवस्थितियां मानचित्र 3.1 में प्रदर्शित हैं ।

तालिका 3.4

जनपद में निर्धारित सेवा केन्द्र

क्रम स्नंख्या	सेवा केन्द्रों का नाम	जनसंख्या 1991	सम्पादित होने वाले केन्द्रीय कार्यों की संख्या
1	2	3	4
1.	राबर्ट्सगंज	20669	25
2.	दुद्धी	8960	24
3.	घोरावल	4361	16
4	रामगढ़	2250	17
5	बैनी	1300	12
6.	चोपन	8901	17
7	म्योरपुर	2747	15
8.	बभनी	4326	15
9.	चुर्क	6250	14
10.	ओबरा	43350	20
11.	डाला	4370	11
12.	सलखन	978	9
13.	गुरमा	4040	8
14.	रेनूकूट	35247	17
15.	पिपरी	12190	15
16.	अनपरा	24310	18
17.	रेणूसागर	6350	7
18.	बीना	3710	11
19.	शक्तिनगर	33383	14
20.	रिहन्द नगर	9837	15
21.	खलियारी	1351	10

1	2	3	4
22	माची	996	6
23	पनिकप	663	3
24.	पन्नूगंज	334	3
25	तियरा	435	2
26	सिलथम	508	7
27.	नई बाजार	710	6
28	ककराही	836	7
29.	परासी दूबे	991	7
30.	मारकुण्डी	1214	5
31.	तेलगुड़वा	810	4
32.	कोन	1850	12
33	हाथीनाला	963	6
34	गुरमुरा	1660	6
35.	सलई बनवा	854	4
36	बिल्ली	1488	6
37.	परासपानी	1675	6
38	फफरा	693	5
39.	बागेसुर्ती	761	4
40	खरूवांव	1078	4
41.	शाहगंज	1863	11
42.	शिवद्वारा	1460	5
43.	जमगांव	883	3
44.	करमा	980	7
45.	पसही	883	6
46.	गोविन्दपुर	638	6
47.	जरहा	6233	7

1	2	3	4
48	सांगोवार	1851	8
49.	नधिरा	4381	5
50.	विण्ढमगंज	1248	12
51.	महुली	1438	8
52	अमवार	463	7
53	चपकी	1549	6
54.	चैनपुर	1163	7
55	असनहर	807	7
56.	महुअरिया	539	7
57.	झारो	1661	9
58.	हिन्दुआरी	461	4
59.	लिलासी	662	3
60.	आरंगपानी	4347	4
61.	रायपुर	973	4
62.	चकरिया	739	2
63.	अगोरी	944	3
64.	किरविल	3355	2
65	सण्डी	523	2
66.	नार्को	317	1

3.5 केन्द्रीयता का निर्धारण

केन्द्रीयता सेवा केन्द्रों के निर्धारण का अभिन्न अंग है। केन्द्रीयता से सेवाकेन्द्रों के महत्व का आंकलन तथा सापेक्षिक महत्व का पता चलता है। सेवा केन्द्रों का पदानुक्रम निर्धारण भी केन्द्रीयता के आधार पर किया जा सकता है। किसी केन्द्र की केन्द्रीयता उसके द्वारा सम्पादित कार्यों के गुण और उनकी मात्रा का द्योतक है।[33] भट्ट[34] ने कार्यों की मात्रा

DISTRICT SONBHADRA
SPATIAL DISTRIBUTION OF GROWTH
CENTRES
N
S
Karma
Kakarahi
Pashi
Ghorawal
Shivadwar
Kharuwanw
Hinduari
Shahganj
Parasi
Jamganw
Robertsganj
NaiBazar
Tiyara
Ramgrah
Churk
Amawar
Markundi
Agori
Gurma
Siltham
Salakhan
Chopan
Billi
Obra
Dalla
Phaphara
Telgurawa
Salai Banwa
Paras pani
Bagesurhi
Gurmura
Hathinala
Vindhamganj
Mahuli
Pipri
Renukoot
Dudhi
Mahuariya
Anpara
Renusagar
Govindpur
Jharo
Bina
Muirpur
Saktinagar
Arangpani
Rihandnagar
Jarha
Nadhira
Sangbvdar
Chapki
Chainpur
Asnahar
Babhni
GROWTH CENTRES
0 4 8
FIG 31

एवं गुण के साथ-साथ कार्यों की संभाव्यता को केन्द्रीयता कहा है। किसी भी केन्द्र की केन्द्रीयता का उसके जनसंख्या आकार से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है परन्तु यह अनिवार्य नहीं है। कभी-कभी जनसंख्या आकार तथा केन्द्रीयता मे ऋणात्मक सम्बन्ध भी दृष्टिगत होता है ।

केन्द्रीयता का निर्धारण एक जटिल एवं व्यक्तिनिष्ठ प्रक्रिया है। इसका निर्धारण एक या एक से अधिक आधारों पर किया जा सकता है। क्रिटालर (1933)[35] ने दक्षिणी जर्मनी में टेलीफोन कनेक्सन के आधार पर केन्द्रीयता का निर्धारण किया। डनकन[36], ब्रश[37], स्मैल्स[38], कार्टर[39], उल्मैन[40], हार्टले एवं स्मैल्स[41] तथा कार[42] आदि विद्वानों ने किसी केन्द्र पर पाए जाने वाले सभी चयनित कार्यो के आधार पर केन्द्रीयता का निर्धारण किया। ब्रेसी[43] ने केन्द्रों के आकर्षण शक्ति के आधार पर तथा ग्रीन[44], कैरूथर्स[45] ने आकर्षण शक्ति के साथ-साथ केन्द्रों की विभिन्न केन्द्रों से परिवहन सम्बद्धता को भी ध्यान में रखा है। सिद्दाल ने फुटकर और थोक व्यापार अनुपात तथा एबियोदन[47] ने 1967 में 'बहु-विचर विश्लेषण' (मल्टी वेरीएट एनालिसिस) के द्वारा केन्द्रीयता का निर्धारण किया। 1971 मे प्रेस्टन[48] ने फुटकर व्यापार तथा औसत पारिवारिक आय के आधार पर केन्द्रीयता मॉडल प्रस्तुत किया किन्तु आंकड़ों पर अत्यधिक निर्भरता, इसके व्यावहारिक प्रयोग को सीमित कर देती है। वाशिंगटन के स्नोहिमश काउन्टी के अध्ययन में बेरी और गैरिशन[49] ने 1958 में केन्द्रों के केन्द्रीयता निर्धारण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यों व उसकी कार्याधार जनसंख्या और पदानुक्रम का उपयोग किया ।

भारतीय विद्वानों ने भी केन्द्रीय स्थलों की केन्द्रीयता का निर्धारण अधिकांशत केन्द्रीय कार्यों के संख्या के आधार पर किया है। कार्यों के आधार पर विश्वनाथ (1967)[50] ओ0पी0 सिंह (1971),[51] प्रकाशाराव (1974)[52], जगदीश सिंह (1976)[53] आदि विद्वानों ने सराहनीय कार्य किया है। कार्यों की परस्पर यातायात सम्बद्धता के आधार बहुत कम कार्य हुआ है, फिर भी जैन (1971)[54] तथा ओ0पी0 सिंह (1971)[55] ने उल्लेखनीय कार्य किया है। केन्द्रीयता का निर्धारण सर्वाधिक प्रचलित केन्द्रीय कार्यों के आधार पर किया जाता है। विभिन्न कार्यों को महत्व प्रदान किया जाना स्वविवेक पर आधारित है। जगदीश सिंह (1977)[56]

ने शैक्षिक सेवाओं के लिए निम्न प्रकार से मान निर्धारित किया -

प्राइमरी स्कूल	1
जूनियर हाई स्कूल	2
हायर सेकेन्ड्री/इण्टर कालेज	3
डिग्री कालेज	4
विश्वविद्यालय/उच्च तकनीकी संस्थान	5

इस विधि से विभिन्न कार्यों के महत्व को आंकना सर्वथा उपयुक्त नही होता है। उपर्युक्त विवरण मे विश्वविद्यालय के महत्व को प्राइमरी स्कूल से मात्र 5 गुना अधिक बताया गया है, जो उचित नहीं है। अस्तु प्रस्तुत अध्ययन में उक्त दोषों से बचने के लिए कार्यो के महत्व के अनुसार मान निर्धारण की एक नवीन प्रक्रिया अपनायी गयी है। इस विधि मे सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में चुने गए 35 केन्द्रीय कार्यों मे से सभी कार्य को बराबर महत्व प्रदान करते हुए प्रत्येक कार्य को 100 मान दिया गया है। इन कार्यों के प्रति इकाई महत्व को प्रदर्शित करने के लिए अध्ययन क्षेत्र में पाए जाने वाले प्रत्येक केन्द्रीय कार्य की कुल संख्या से 100 को विभाजित किया गया है। इससे कार्यों के सापेक्षिक महत्व का निर्धारण होता है। उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत अध्ययन में जूनियर बेसिक विद्यालय का मान इस विधि से 0 14 इकाई है तो महाविद्यालय का महत्व 50 इकाई है। विभिन्न कार्यों का मान निर्धारण तालिका 3.5 मे प्रदर्शित है ।

तालिका 3.5

विभिन्न कार्यों का महत्वानुसार मान

क्रम संख्या	केन्द्रीय कार्य	क्षेत्र में उनकी संख्या	क्षेत्र में उनका कुल महत्व	प्रति इकाई महत्व
(क)	**प्रशासनिक कार्य**			
1.	जिला मुख्यालय	1	100	100.00
2	तहसील मुख्यालय	2	100	50.00

1	2	3	4	5
3.	विकास खण्ड केन्द्र	8	100	12.50
4	न्याय पंचायत केन्द्र	66	100	1 52
5.	थाना	12	100	8.33
6.	पुलिस चौकी	7	100	14.29
(ख)	**कृषि एवं पशुपालन**			
7.	शीत भण्डार	1	100	100.00
8.	बीज, कीटनाशक एवं उर्वरक केन्द्र	78	100	1.28
9.	पशु अस्पताल	16	100	6.25
10.	पशु सेवा केन्द्र	20	100	5 00
(ग)	**शिक्षा एवं मनोरंजन**			
11.	महाविद्यालय	2	100	50 00
12.	हायर सेकेन्ड्री विद्यालय	30	100	3.33
13.	सीनियर बेसिक विद्यालय	96	100	1.04
14.	जूनियर बेसिक विद्यालय	715	100	0.14
15.	छवि गृह	5	100	20.00
(घ)	**परिवहन एवं संचार**			
16.	रेलवे स्टेशन हाल्ट सहित	26	100	3.85
17.	बस स्टेशन	18	100	5.56
18.	बस स्टाप	42	100	2.38
19	फेरी घाट	10	100	10.00
20.	डाकघर	136	100	0.74
21.	टेलीफोन एवं तारघर	16	100	6 25
(ड)	**चिकित्सा**			
22	अस्पताल	5	100	20.00
23.	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	29	100	3.45
24.	आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सालय	17	100	5.88

1	2	3	4	5
25	होम्योपैथिक चिकित्सालय	20	100	5.00
26	मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र	118	100	0 85
27	पंजीकृत व्यक्तिगत क्लीनिक एवं उपकेन्द्र	106	100	0.94
28.	पंजीकृत औषधालय	36	100	2.78
(च)	**वित्तीय वर्ष**			
29	राष्ट्रीय बैंक	50	100	2.00
30	भूमि विकास बैंक	2	100	50 00
31	जिला सहकारी बैंक	10	100	10 00
32.	संयुक्त ग्रामीण बैंक	10	100	10.00
(छ)	**व्यापार एवं वाणिज्य**			
33.	फुटकर बाजार	46	100	2.17
34.	थोक बाजार	8	100	12.50
35	साप्ताहिक बाजार	36	100	2 78

पूर्व के अध्ययनों में कार्यों के महत्व के अनुसार ही केन्द्रों के सापेक्षिक महत्व को आंकने का प्रयास किया जाता रहा है किन्तु उनके द्वारा सेवित जनसंख्या से भी केन्द्रो के सापेक्षित महत्व का ज्ञान होता है। सामान्यतया उच्च स्तरीय कार्यों और केन्द्रों द्वारा सेवित क्षेत्र एवं जनसंख्या का आकार बड़ा होता है किन्तु यह आवश्यक नहीं है। [56] छोटे-छोटे प्रशासनिक सेवा केन्द्रों का सेवा क्षेत्र एवं सेवित जनसंख्या का आकार बहुत बड़ा होता है क्योंकि सम्बन्धित प्रशासनिक सेवा केन्द्र के सम्पूर्ण जनसंख्या को अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए उस सेवा केन्द्र का ही आश्रय लेना पड़ता है, भले अन्य सेवा केन्द्र की अपेक्षा वह दूर ही अवस्थित हो। कार्यों के महत्व की तीव्रता का अनुमान किसी केन्द्र द्वारा सम्पादित सम्पूर्ण कार्यों के महत्व को जोड़कर किया गया है तथा इसे 'कार्यात्मक अंक' (फंक्शनल स्कोर) की संज्ञा प्रदान की गयी है। कार्यों के महत्व की तीव्रता क्षेत्र में व्याप्त उनकी संख्या पर निर्भर है जिनका मान तालिका 3 5 में प्रदर्शित

है। अध्ययन क्षेत्र में निर्धारित केन्द्र स्थलों में से सबसे कम कार्यात्मकअक से सभी केन्द्र स्थलो के कार्यात्मक अंकों को भाग देकर कार्यात्मक सूचकांक (फंक्शनल इंडेक्स) प्राप्त किया गया है। प्रत्येक केन्द्र का कार्यात्मक अंक एवं सूचकांक तालिका 3.6 में प्रदर्शित है। प्रत्येक केन्द्र की कुल सेवित जनसंख्या को न्यूनतम जनसंख्या वाले केन्द्र की जनसंख्या से विभाजित करके सेवित जनसंख्या सूचकांक प्राप्त किया गया है। कार्यात्मक सूचकांक की ही भाति सेवित जनसख्या सूचकांक भी सापेक्षित महत्व को उपयुक्त ढंग से व्यक्त करता है। प्रत्येक केन्द्र के कार्यात्मक सूचकांक और सेवित जनसंख्या सूचकांक को जोड़कर उनके केन्द्रीयता अंक निर्धारित किए गए हैं। इस केन्द्रीयता अंक से उपर्युक्त विधि द्वारा केन्द्रीयता सूचकांक परिकलित की गयी है। केन्द्रीयता अंक की अपेक्षा केन्द्रीयता सूचकांक केन्द्रों की सापेक्षिक केन्द्रीयता को व्यक्त करने मे अधिक समर्थ है। तालिका 3 6 में विभिन्न केन्द्रों के केन्द्रीयता सूचकाक प्रदर्शित है।

तालिका 3.6

सेवा केन्द्रों का केन्द्रीयता सूचकांक

क्रम संख्या	विकास केन्द्र	कार्यात्मक अंक	कार्यात्मक सूचकांक	सेवित जनसंख्या	सेवित जनसंख्या सूचकांक	केन्द्रीयता अंक	केन्द्रीयता अंक सूचकांक
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	राबर्ट्सगज	443.85	83.12	1075041	874.01	957.13	478 57
2	दुद्धी	261.49	48.99	404079	328.52	377.51	178.76
3	घोरावल	79.45	14.88	8947	7.27	22.15	11.08
4	रामगढ़	82.84	15.51	67441	54.83	70 34	35.17
5.	बैनी	57.88	10.84	54518	44.32	55.16	27.58
6.	चोपन	83.30	15.60	166693	135.52	151.12	75 56
7.	म्योरपुर	68.49	12.83	192719	156.68	169.51	84 76
8.	बभनी	67.95	12.72	57618	46.84	59.56	29.78
9	चुर्क	53.28	9.98	10394	8.45	18.43	9.22
10.	ओबरा	163.96	30.70	85930	69 62	100.32	50.16.
11.	डाला	33.22	6.22	7856	6.93	12 61	6.31
12.	सलखन	20.78	3.60	8330	6.77	10.37	5.19

1	2	3	4	5	6	7	8
13.	गुरमा	19.82	3.71	6312	5 13	8.84	4.42
14.	रेनूकूट	96.61	18.09	68972	56.07	74 16	37.06
15.	पिपरी	77 83	14.57	15403	12.52	27 09	13 55
16.	अनपरा	111.08	20.80	44350	36 06	56.86	28.43
17.	रेणूसागर	17.20	3.22	8380	6 81	10.03	5 02
18.	बीना	31.22	5.85	7736	6.29	12.14	6.07
19	शक्तिनगर	62.05	11.62	62382	50.71	62.33	31 17
20.	रिहन्द नगर	77.83	14.57	29542	24.02	38.59	19 29
21	खलियारी	22.01	4.12	5233	4.25	8.34	4.17
22	मांची	30.34	5.68	8342	6.78	12.46	6 23
23	पनिकप	6.92	1.30	1840	1.50	2.8	1.4
24	पन्नूगंज	11 45	2.14	67441	54.83	59.77	29 89
25.	तियरा	5.83	1.09	2226	1.81	2.9	1.5
26	सिलथम	13.89	2.60	3832	3.12	5.72	2.86
27.	नई बाजार	11.09	2.08	2638	2.14	4.22	2.11
28.	ककराही	16.06	3.00	6763	5.50	8.50	4 25
29	परासी	18.37	3.44	8988	7.30	11 74	5 87
30.	मारकुण्डी	7.64	1.43	1962	1.60	3.03	1.52
31.	तेलगुड़वा	10.02	1.88	2150	1.75	3.63	1.32
32.	कोन	42.04	7.87	7430	6.04	13.91	6.96
33.	हाथीनाला	16.30	3.05	2316	1.88	4.93	2.47
34.	गुरमुरा	11.97	2.24	3640	2.96	5.2	2.60
35.	सलई बनवा	9.95	15.29	3177	2.55	17 84	8.92
36.	बिल्ली	11.73	2.20	4780	3.86	6.06	3.03
37.	परासपानी	15.69	2.94	5360	4.36	7.30	3.65
38.	फफरा	9.95	1.86	4070	3.31	5.17	2.09

1	2	3	4	5	6	7	8
39	बागे सुर्ती	6.84	1.28	3843	3.12	4.40	2.20
40.	खरूवांव	16.90	3.16	160324	130.34	133.50	66.75
41.	शाहगंज	35 52	6.65	6311	5.13	11 78	5 89
42.	शिवद्वार	10.34	1.95	5411	4.40	6.35	3.18
43.	जमगाव	5.84	1.09	2612	2.12	3 21	1 61
44.	करमा	24.81	4 65	8613	7.0	11.65	5.83
45	पसही	10.23	1 92	9663	7.86	9.78	4 89
46.	गोविन्दपुर	16 23	30 04	6678	5 43	35 47	17 74
47	जरहा	15.62	2.93	14312	11.64	14 57	7 29
48.	सांगोवार	19.44	3 64	13478	10.14	13 78	6 89
49	नधिरा	13.06	2.45	9908	8 06	10 51	5.26
50	विण्ढमगंज	54 55	10 22	15680	12.74	22.96	11.48
51.	महुली	20.64	3.86	10072	8.18	12.04	6.02
52.	अमवार	24.14	4.52	8020	6.52	11 04	5 54
53	चपकी	21.05	3.94	11342	9 22	13.16	6.58
54.	चैनपुर	14.74	2.76	14342	11.66	14.42	7.21
55.	असनहर	16.67	3.12	6204	5.04	22.59	11.30
56	महुअरिया	16.73	3.13	5441	4.42	7.55	3 78
57.	झारो	23.33	4.37	13463	10.95	15.32	7.66
58.	हिन्दुआरी	5.34	1.00	1230	1.00	2.00	1.00
59.	लिलासी	8.82	1.65	6370	5.18	6.83	3.42
60.	आरंगपानी	6.08	1.14	11307	9.19	10.33	5.17
61.	रायपुर	18.69	3.50	3050	2.48	5 98	4 99
62.	चकरिया	6.28	1.17	4310	3.50	4.67	2.34
63.	अगोरी	16.23	3.04	3380	2.74	5.78	2 89

3.6 विकास-केन्द्रों का पदानुक्रम

केन्द्र-स्थलों का पदानुक्रमीय व्यवस्था केन्द्र स्थल सिद्धान्त का सबसे महत्वपूर्ण तथ्य है। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण केन्द्र स्थलों में परस्पर सम्बद्धता तथा कार्यात्मक संश्लिष्टता पायी जाती है। कार्यात्मक संश्लिष्टता के परिणामस्वरूप केन्द्र स्थलों में कार्यात्मक प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हो जाती है, फलत उनमें पदानुक्रमीय भिन्नता उत्पन्न हो जाती है। क्रिस्टालर[57] के अनुसार वस्तुओं एवं सेवाओं का प्रवाह उच्च स्तरीय केन्द्र से निम्न स्तरीय केन्द्र की ओर होता है। इसके साथ ही उच्च स्तरीय केन्द्र निम्न स्तरीय केन्द्रों के कार्यों के सम्पादन के साथ कुछ विशिष्ट कार्यो को भी सम्पादित करते हैं, जो निम्न स्तरीय में नहीं पाए जाते हैं। व्यावहारिक दृष्टि से प्रत्येक केन्द्र स्थल में कुछ कार्यात्मक विशिष्टीकरण पाया जाता है। अत निम्न स्तरीय केन्द्र भी उच्च स्तरीय केन्द्र को सेवा प्रदान करते हैं। केन्द्र स्थल सिद्धान्त के अनुसार कि पदानुक्रम के किसी भी स्तर से सम्बन्धित विभिन्न केन्द्रों की केन्द्रीयता समान होगी, एक आदर्शवादी परिकल्पना है। व्यावहारिक रूप में ऐसा संभव नहीं है। अत प्रस्तुत अध्ययन मे केन्द्रीयता की असमानता को ध्यान में रखकर केन्द्रो का पदानुक्रम निर्धारित किया गया है। केन्द्र स्थलो के पदानुक्रम के विभिन्न स्तरों के निर्धारण के लिए उनके केन्द्रीयता सूचकांक के सातत्य को भंग करने वाले अलगाव बिन्दुओं को सीमा माना गया है। तालिका 3.6 तथा चित्र 3.2से स्पष्टत तीन अलगाव बिन्दु दृष्टिगत होते हैं जिनके आधार पर अध्ययन क्षेत्र के केन्द्र स्थलों के चार पदानक्रमीष व्यवस्था बनायी गयी है। चारों स्तरों से सम्बन्धित केन्द्रीयता सूचकांक वर्ग तथा उनके अन्तर्गत सम्मिलित केन्द्रों की संख्या तालिका 3.7 में प्रदर्शित है ।

तालिका 3.7

केन्द्र स्थलों की पदानुक्रमीय व्यवस्था

पदानुक्रमीय स्तर	केन्द्रीयता सूचकांक वर्ग	केन्द्रों की संख्या
I	178.76 से अधिक	2
II	50.16 से 84.76	4
III	11.08 से 37.08	13
IV	1 से 9.22	44

DISTRICT- SONBHADRA
HIERARCHICAL LEVEL OF SERVICE CENTRES
CENTRALITY INDEX
POPULATION SIZE
ROBERTS GANJ
DUDHI
MUIR PUR
CHOPAN
KHARUWANW
OBRA
RAMGARH
RENUKOOT
PANNUGANJ
ANPARA
SAKTI NAGAR
BABHANI
VAINI
GOVIND PUR
RIHAND NAGAR
VINDHAM GANJ
ASNAHAR
GHORAWAL
PIPRI
I
II
III
IV
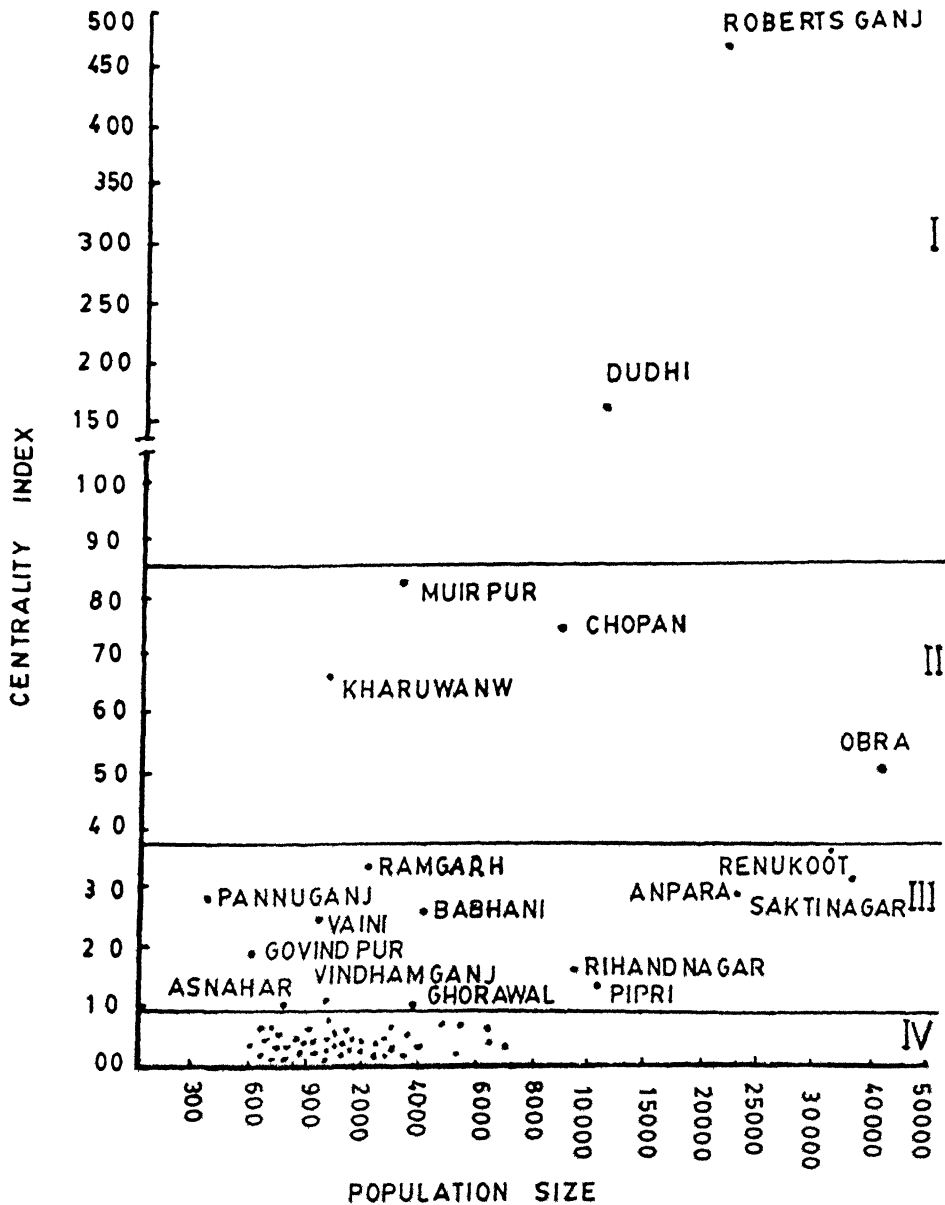
Fig. 3.2

अध्ययन क्षेत्र में प्रथम स्तर के 2 केन्द्र, द्वितीय स्तर के 4 केन्द्र, तृतीय स्तर के 13 केन्द्र तथा चतुर्थ स्तर के 44 केन्द्र विद्यमान है, जिनका प्रदर्शन मानचित्र 3 2 मे किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में कार्यों तथा स्थलो के पदानुक्रमीय व्यवस्था में, साम्यता है दोनो का निर्धारण 'अलगाव बिन्दु' से किया गया है तथा दोनों के पदानुक्रमों मे चार स्तर निर्धारित हुए है ।

3.7 विकास केन्द्रों का स्थानिक वितरण

अध्ययन क्षेत्र में विकास केन्द्रों का स्थानिक वितरण असमान है (मानचित्र 3 1)। आर0 सी0 शर्मा के अनुसार विकास केन्द्रों के वितरण पर जनसंख्या और बस्तियो के घनत्व का प्रभाव पडता है। विकास केन्द्रों का असमान वितरण प्रतिरूप अध्ययन क्षेत्र के किसी एक भाग में नही है वरन् सम्पूर्ण भाग में है। बेलन घाटी में विकास केन्द्रों की संख्या अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक है। बेलन घाटी कृषि प्रधान क्षेत्र है, इसलिए विकास केन्द्रों की संख्या अधिक है। रिहन्द जलाशय के चतुर्दिक विकास केन्द्रो की स्थिति औद्योगीकरण से प्रभावित है। शेष विकास केन्द्रों की स्थिति परिवहन मार्गों से प्रभावित है। हिन्दुआरी, तेलगुड़वा व हाथीनाला का विकास केन्द्रों के रूप में विकास सड़क जंक्शन के कारण ही है। विकास केन्द्र फफरा, बिल्ली, गुरमुरा, झारो, ककराही आदि रेलवे स्टेशन के कारण विकसित हुए। विकास खण्ड म्योरपुर के लगभग सभी विकास केन्द्र (रिहन्द नगर, शक्तिनगर, म्योरपुर, रेनूकूट, पिपरी, अनपरा, रेणूसागर, बीना आदि) औद्योगिक केन्द्र होने के कारण बेलन घाटी के विकास केन्द्रों की अपेक्षा उच्च स्तरीय हैं । वनों, पठारों तथा पहाड़ियों वाले क्षेत्रो में विकास केन्द्र बहुत कम हैं। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र के विकास केन्द्रों के अन्तरालन को नियन्त्रित करने वाले प्रमुख कारक निम्न हैं : -

1. धरातलीय स्वरूप
2. कृषि योग्य भूमि तथा जल की उपलब्धता
3. परिवहन एवं संचार माध्यम
4. औद्योगीकरण

जिन क्षेत्रों में उद्योग स्थापित हुए हैं, अन्य कारकों के विपरीत होने के बावजूद धीरे-धीरे विकास केन्द्रों का स्वतः विकास हो गया है। विकास खण्ड नगवां से दुद्धी के बीच (उत्तर दक्षिण में) बहुत बड़े क्षेत्र में एक भी विकास केन्द्र नहीं है। विकास खण्ड चोपन में ओबरा,

डाला, चोपन व तेलगुड़वा तथा कुछ रेलवे स्टेशन युक्त विकास केन्द्रों को छोडकर पूर्व से पश्चिम मे बहुत बड़े क्षेत्र पर एक भी विकास केन्द्र नहीं है ।

3.8 प्रस्तावित विकास केन्द्र एवं केन्द्रीय कार्य

किसी भी क्षेत्र का विकास सामाजिक आर्थिक सुविधाओं के त्वरित उपलब्धता पर निर्भर करता है। उक्त सुविधाओं के त्वरित उपलब्धता का सुनिश्चयन विकसित सेवा केन्द्रों/ विकास केन्द्रों की मात्रा एवं सुविधाजनक अवस्थिति पर निर्भर करता है। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में विकास केन्द्रों का वितरण उचित एवं पर्याप्त नही है, जिसके कारण पर्याप्त मात्रा में कार्यात्मक रिक्तता विद्यमान है। जूनियर बेसिक विद्यालय, डाकघर तथा मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र जैसी सुविधा भी प्रत्येक बस्ती को नहीं है। अत जनपद मे शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन एवं संचार, कृषि, उद्योग एवं व्यापार आदि सुविधाओं की सुलभता के लिए कुछ नए सेवा केन्द्रों/विकास केन्द्रों को विकसित किए जाने की आवश्यकता है। साथ ही वर्तमान सेवा केन्द्रों को और अधिक विकसित करने की आवश्यकता है। वर्तमान सेवा केन्द्रों एवं प्रस्तावित सेवा केन्द्रों पर प्रस्तावित कार्यों को तालिका 3.8 मे दर्शाया गया है। प्रस्तावित विकास केन्द्रों की अवस्थिति निर्धारित करने में निम्न तथ्यों को ध्यान में रखा गया है -

1. धरातलीय स्थिति
2. बस्तियो की जनसंख्या
3. कार्यात्मकता रिक्तता
4. विकास केन्द्रों की गम्यता सीमा
5. सड़कों की स्थिति एवं स्तर
6. परिवहन साधन तथा
7. विकास केन्द्र होने की संभाव्यता ।

DISTRICT SONBHADRA
PROPOSED GROWTH CENTRES
N
S
BISHAR
PAPI
SIRSAI
PURKHAS
LAHAS
KATHI
DURAWAL
NANDANA
AMDIH
MUNILADIH
RATWAL
PASAUNA
DHANWAL
BABHANAULI
SHIVPUR
SANDI
OBRADIH
BARAGANW
BARDIA
LOHANDI
BHARSAHI
KAJIYARI
WKAULI
NAKON
BHUSAULIYA
NAUDIHA
SEMIYA
BIRGHI
PARARI
CHATARWAR
SORHA
JUGAIL
CHERUI
GARAW
KOTA
SINDURIA
MAGARDAHA
MIRCHADHURI
KACHANARWA
BELHATTHI
RANHOR
WIDAR
KEWAL
PAKARI
BAGHANU
DEWARI
JAMPANI
KORCHI
0 4 8 KM
GOHADA
KIRVIL
MAHUARIYA
KONGA
DUBHI
GHAGHARA
CHAPCHAPKI
PROPOSED GROWTH CENTRES
ARAJHAT
ASANDIH
SATBAHANI

FIG 33

तालिका 3.8

प्रस्तावित विकास केन्द्र

क्रम संख्या	विकास केन्द्र	जनसंख्या
1	ओबराडीह	836
2.	बिसहार	752
3.	मुडिलाडीह	698
4.	वर्दिया	730
5.	दुरावल	905
6	वकौली	511
7	सिरसाई	389
8	मोरसिम	763
9	धनावल	848
10	लोहाडी	972
11	परसौना	761
12	लहास	653
13	पुरखास	1011
14	रतवल	412
15.	बभनौली	930
16.	पापी	878
17.	कैथी	1113
18.	बड़ागाव	1530
19.	सण्डी	523
20.	भरसही	605
21.	सोढ़ा	663
22.	नार्को	317
23	शिवपुर	252

1	2	3
24	भुसौलिया	802
25.	बिर्घी	530
26	पड़री	478
27	नन्दना	992
28	कजियारी	775
29.	गड़ाव	683
30.	नौडीहा	478
31.	चेरूई	1182
32	आमडीह	699
33	आसनडीह	472
34.	डूभा	648
35.	गोहड़ा	1286
36.	घघरा	1278
37.	चप-चपकी	1210
38.	सतबहनी	950
39.	कोंगा	1496
40.	अरझट	868
41.	कोरची	1815
42.	वीडर	1113
43.	केवाल	1315
44.	पकरी	908
45.	बघाड़ू	1400
46.	महुअरिया	1350
47.	किरविल	3355
48.	रणहोर	1747
49.	देवरी	1260

1	2	3
50	बेलाही	850
51	जामपानी	1130
52.	जोगोडीह	2350
53	वेलहत्थी	898
54.	सिन्दुरिया	1138
55	सेमिया	690
56.	जुगैल	963
57	मगरदहा	1560
58	मिर्चाधुरी	1890
59.	चतरवार	1342
60	कचनरवा	2250
61.	कोटा	1740

तालिका 3.8 व 3.9 से स्पष्ट है कि अधिकांश प्रस्तावित केन्द्रों पर निम्न स्तरीय केन्द्रीय कार्यो का ही सम्पादन होता है। चूंकि केन्द्रीय कार्यो में औद्योगिक कार्यो को सम्मिलित नहीं किया गया है इसलिए इन कार्यों को प्रस्तावित नहीं किया गया है। जूनियर बेसिक विद्यालय, डाकघर, फुटकर बाजार, बीज एवं उर्वरक केन्द्र तथा मातृ एवं शिशु कल्याण कार्य की उपस्थिति अधिकांश प्रस्तावित सेवा केन्द्रों पर है। इन सेवा केन्द्रों को और प्रभावी बनाने के लिए कुछ मध्यम स्तर के कार्यों को सम्पादित करने का प्रस्ताव है। अध्ययन क्षेत्र में तीन तहसील (रामगढ़, ओबरा व रेनूकूट) बनाने का प्रस्ताव है। इसके साथ ही पांच विकास खण्ड (रिहन्द नगर, अनपरा, पिपरी, शाहगंज तथा ओबरा) तथा 25 न्याय पंचायत बनाने का प्रस्ताव है। शिक्षा स्वास्थ्य तथा कृषि एवं पशुपालन आदि सुविधाओं की वृद्धि पर विशेष जोर दिया गया है ।

प्रस्तावित 61 विकास केन्द्रों पर केन्द्रीय कार्यो की उपस्थिति को दो चरणों में पूरा कराना चाहिए प्रथम चरण 1995 तक तथा द्वितीय चरण 2000 तक होना चाहिए । इसके बाद प्रस्तावित केन्द्रीय कार्यों के नियोजन की पुन आवश्यकता होगी । इस नियोजन को पूरा करने मे सरकार के विशेष सहयोग की आवश्यकता होगी । प्रस्तावित विकास केन्द्रों की अवस्थितियाँ मानचित्र 3 3 में तथा इन पर प्रस्तावित कार्य तालिका 3.9 में देखी जा सकती है ।

तालिका 3.9

वर्तमान एवं प्रस्तावित सेवा/विकास केन्द्रों पर वर्तमान एवं प्ररतावित सुविधाएं/कार्य

क्रम सं0	विकास /सेवा केन्द्र	वर्तमान सेवाएँ/कार्य	प्रस्तावित सुविधाएँ/कार्य
1	2	3	4
(अ) वर्तमान सेवा केन्द्र			
1.	राबर्ट्सगज	जि.मु.,त.मु.,वि.मु., था., शी.भं., बी.के., उ.के., प.अ., कृ.गर्भा., हा.से., सी.बे.वि., जू.बे.वि., सिने., रे.स्टे., ब.स्टे., डा.घ., दू.भा., अस्पा., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., हो.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., सा.स्वा.के., उ.स्वा.के., प.नि.के, रा.बैं., भू.वि.बैं.,जि.स.बैं., सं.ग्रा.बै., ग्रा.बैं., थो.बा., फु.बा., कु.वि.के.,	पु.चौ., प.से.के., म.वि., त.शि.सं., औ.प्र सं., ब.स्टा., सू.वि.के., भे.वि.के., म.वि.के.,
2.	दुद्धी	त.मु.,वि.मु.,था., बी.के., उ.के., प.अ., कृ.गर्भा., म.वि., हा.से.वि., सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टे., फे.घा., डा.घ., ता.घ., दू.भा., अस्प., प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., पं.नि. के., रा.बैं., भू.वि.बैं., जि.स.बैं., सं.ग्रा.बैं., ग्रा.बैं., थो.बा., फु.बा.,	पु.चौ., शी.भं., प.से.के., त.शि.सं., सिने., आ.यु.चि., सा.स्वा.के.,उ.स्वा. के., कु.पा.के., सू.वि.के., भे.वि.के., म.वि.के.,

1	2	3	4
3.	घोरावल	था., बी.के., उ.के., प.अ., हा.से.,सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टे., डा.घ., ता.घ., दू.भा., प्रा. स्वा.के., हो.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं. औ., रा.बैं., जि.स.बैं., सं.ग्रा.बैं., थो.बा., फु. बा.,	शी.भं., म.वि., सिने., अस्प., आ.यु. चि., कृ.वि.के., सू.वि.के.,भे.वि.के., म.वि.के., सा.स्वा.के.,
4.	रामगढ़	वि.मु., न्या.के., बी.के., उ.के., प.अ., हा. से., सी.बे.वि., जू.बे.वि., डा.घ., ता.घ., आ. यू.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं., जि.स.बैं., सं.ग्रा.बैं., फु.बा., थो.बा.,	त.मु., पु.चौ., शी.भं., म.वि., सिने., रे.स्टे., ब.स्टे., दू.भा., अस्प., प्रा.स्वा. के., हो.चि.,भू.वि.बैं., सा.स्वा.के.,
5.	वैनी	वि.मु., न्या.के., बी.के., उ.के., प.अ., जू.बे. वि., ब.स्टा., डा.घ., प्रा.स्वा.के., हो.चि., मा. के., पं.औ., जि.स.बैं.,स.ग्रा.बैं, फु.बा., ग्रा.बैं,	था.,शी.भं., म.वि., हा.से., सी.बे.वि., ब.स्टे., रे.स्टे., ता.घ., दू.भा., अस्प., आयु.चि., पं.व्य.क्लि., भू.वि.बैं., थो.बा., भे.वि.के., कृ.वि.के.,
6.	चोपन	वि.मु., था., बी.के., उ.के., प.अ., हा.से.,सी. बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टे., डा.घ., ता. घ., दू.भा., प्रा.स्वा.के., हो.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., जि.स.बैं., सं.ग्रा.बैं., फु. बा.,	शी.भे., म.वि., सिने., फे.घा., अस्प., आ.यू.चि., भू.वि.बैं., थो.बा., कृ.गृर्भा., म.वि.के., भे.वि.के., कृ.वि.के., ग्रा.बैं., सा.स्वा.के.,
7.	म्योरपुर	वि.मु., न्या.के., बी.के., उ.के., ए.अ., सी. बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बै., फु.बा., सा.बा., कृ.वि.के.,	पु.चौ., शी.भं., हा.से., दू.भा., ता.घ., अस्प., आ.यू.चि., हो.चि., भू.वि.बैं., सं.ग्रा.बैं., थो.बा., भे.वि.के., सू.वि.के.,
8.	बभनी	वि.मु., न्या.के., पु.चौ., बी.के., उ.के., प. अ., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टे., डा.घ.,ता. घ., प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., रा.बैं.,सं.ग्रा.बैं., फु.बा.,	था., शी.भं., हा.से., दू.भा., अस्प., हो. चि., आ.यू.चि., प.व्य.क्लि., भू.वि.बै., थो.बा., कृ.पा.के., भे.वि.के.,

1	2	3	4
9.	चुर्क	न्या.के., पु. चौ., बी.के., उ.के., हा.से., सी.बे.वी., जू.बे.वि., डा.घ., ता.घ., प्रा.स्वा. के., आ.यू.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं. औ., रा.बैं., फु.बा.,	सिने., दू.भा., जि.स.बैं., स.ग्रा.बैं. थो.बा., कु.वि.के., सा.स्वा.के.,
10.	ओबरा	था., बी.के., उ.के., प.अ., म.वि., हा.से., सी.बे.वी., जू.बे.वि., सिने., रे.स्टे., ब.स्टे., डा.घ., ता.घ., दू.भा., अस्प., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., हो.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं., फु.बा., थो.बा.,	त.मु., वि.मु., शी.भं., फे.घा., जि.स. बैं., सं.ग्रा.बैं., कु.वि.के., सू.वि.के., म.वि.के., ग्रा.बैं., कृ0गर्भा.
11.	डाला	बी.के., उ.के., हा.से., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टे., डा.घ., ता.घ., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., प.औ., रा.बैं., फु.ब.,	प.अ., दू.भा., हो.चि., जि.स.बैं. स.ग्रा.बैं., कु.वि.के., सा.स्वा.के., कृ0 गर्भा.,
12.	सलखन	न्या.के., बी.के., उ.के., प.स.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., आ.यू.चि., मा.शि. के., पं.व्य.क्लि., रा.बैं., फु.बा.,	पु.चौ., हा.से.वि., रे.स्टे., ता.घ., प्रा.स्वा.के., पं.औ., ग्रा.बैं., जि.स.बैं., कु.वि.के., सू.वि.के.,
13.	गुरमा	बी.के., उ.के., हा.से.वि., सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., हो.चि., मा.शि.के., पं.व्य. क्लि., रा.बैं., फु.ब.,	कृ.गर्भा., आ.यू.चि., पं.औ., ग्रा. बैं., भे.वि.के., कु.वि.के., प्रा..स्वा.के.,
14.	रेनूकूट	उ.च., बी.के., उ.के., हा.से.वि., सी.बे.वि., जू.बे.वि., सिने., रे.स्टे., ब.स्टे.,डा.घ., ता.घ., दू.भा., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं., जि.स.बैं., फु.बा., थो. बा., भे.वि.के.	जि.मु.था., वि.मु., शी.भं., प. अस्प., म.वि., फे.घा., अस्प., हो.चि., भू.वि.बैं., कु.वि.के., के., ग्रा. बैं.
15.	पिपरी	था., बी.के., उ.के., प.अ., हा.से.वि., सी.वे. वि., जू.वे.वि., ब.स्टे., फे.घा., डा.घ., ता.	वि.मु., म.वि., अस्प., जि.स.बैं., थो.बा., कु.वि.के., म.वि.के., ग्रा.

1	2	3	4
		घ., दू.भा., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., फु.बा.	बैं., औ.पु.सं.
16.	अनपरा	था., वी.के., उ.के., प.अ., हा.से., सी.बी.वि., जू.बे.वि., सिने., रे.स्टे., ब.स्टे., डा.घ., ता.घ., दू.भा., अस्प., प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., पं.व्य. क्लि., प.औ., रा.बैं., कु.बा., थो.बा.	वि.मू., शी.भं., म.वि., फे.घा., आ.यू.चि., हो.चि., भू.वि.बैं., सं.ग्रा.बैं., कु.वि.के., म.वि.के., सू.वि.के., औ.प्र.सं., त.शि.सं.
17.	रेणूसागर	सी.बे.वि., जू.वे.वि., डा.घ., प्रा.स्वा.के., ता.घ., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं., फु.बा.	उ.चौ., प.से.के., हा.से.वि., सा.स्वा.के., दू.भा., आ.यू.चि., हो.चि., जि.स.बैं., थो.बा., कु.वि.के., म.वि.के., म.वि., वी.के., उ.के., ब.स्टा.
18.	बीना	वी.के., उ.के., हा.से.वि., सी.बे.वि., जू.बे. वि., रे.स्टे., ब.स्टे., डा.घ., ता.घ., प्रा.स्वा.के. मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं., फु.बा.,	पु.चौ., प.से.के., सिने., दू.भा., अस्प., आ.यू.चि., ग्रा.बैं., थो.बा., भे.वि.के., कु.वि.के.
19.	शक्ति नगर	था., बी.के., उ.के., हा.से.वि., सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टे., फे.घा., डा.घ., ता.घ., प्र.स्वा.के., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं., थो.बा., फु.बा.	वि.मु., शी.भं., म.वि., प.अ., कृ.गर्भा.; सिने., दू.भा., अस्प., आ.यू.चि., भू.वि.बैं., जि.स.बैं., सं.ग्रा.बैं., कु.वि.के., म.वि.के., भे.वि.के., औ.प्र.सं.
20.	रिहन्द नगर	था., बी.के., उ.के., प.अ., हा.से.वि., सी.बे. वि., जू.बे.वि., सिने., ब.स्टे., फे.घा., डा.घ., ता.घ., दू.भा., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., मा.शि. के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं., फु.बा.	वि.मु., म.वि., रे.स्टे., अस्प., हो.चि., भू.वि.बैं., जि.स.बैं., सं.ग्रा.बैं., कु.वि.के., म.वि.के., भे.वि.के., थो.बा.
21.	खलियारी	न्या.के. , बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., मा.शि. के., पं.व्य.क्लि., पं.औ., रा.बैं,, फु.बा.	था., प.आ., हा.से.वि., म.वि., सिने., रे.स्टे., ब.स्टे., ता.घ., अस्प., हो.चि., ग्रा.बैं., जि.स.बैं.,

1	2	3	4
			कु.वि.के., भे.वि.के., थो.बा., कृ0गर्भा.
22.	मांची	पु.चौ., बी.के., उ.के., प.से.के., डा.घ., मा.शि.के., फु.बा., सा.बा.	हा.से.वि., सी.बे.वि., ब स्टा., ता.घ., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., भे.वि.के.
23.	पनिकप	सी.बे.वि., जू.वे.वि., आ.यू.चि.,मा.शि.के.	फु.बा., कृ.गर्भा., ग्रा.बैं.,कु.वि.के., न्या.के.
24.	पन्नूगंज	था., ब.स्टा., डा.घ.,म.शि.के.	ता.घ., दू.भा., प्र.स्वा.के., पं.व्य. क्लि., रा.बै., जि.स.बैं., फु.बा., प.स.के., प.नि.के.
25.	सिलथम	हा.से.वि., न्या.के., वी.के., उ.के., प.से.के., डा.घ., मा.शि.के., रा.बै., फु.बा.	पु.चौ., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ग्रा.बैं., कु.वि.के., भे.वि.के. ता.घ., प्रा.स्वा.के.
26.	नई बाजार	बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., रा.बैं., फु.बा.	कृ.गर्भा., हा.से.वि., डा.घ., ता.घ., पं.औ., ग्रा.बैं., कु.वि.के., पु.चौ., न्या.के.
27.	ककराही	प.से.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा. प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., रा.बैं., फु.बा.	न्या.के., वी.के., उ.के., हा.से. वि., डा.घ., सा.स्वा.के., पं.औ., ग्रा.बैं., कु.वि.के.
28.	परासी	न्या.के., बी.के., उ.के., हा.से., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., हो.चि., पं.व्य.क्लि., फु.बा.	कृ.गर्भा., सी.बे.वि., प्रा.स्वा.के., पं.औ., कु.वि.के., प.नि.के., ग्रा.बैं., रा.बैं.
29.	मारकुण्डी	बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., फु.बा.	न्या.के., ब.स्टे., डा.घ., सा.स्वा. के., प.नि.के., भे.वि.के., ग्रा.बैं. म.वि.के.

1	2	3	4
30.	तेलगुड़वा	जू.बे.वि., ब.स्टे., डा.घ., मा.शि.के., पं.व्य. क्लि., फु.बा., सा.बा.	बी.के., उ.के., प.से.के., प्रं.औ., कु.वि.के., ग्रा.बैं., रा.बैं.
31.	कोन	न्या.के., था., बी.के., उ.के., प.अ., हा.से., सी.बे.वि., जू.बे.वि., डा.घ., फे.घ., ब.स्टा., प्रा.स्वा.के., म.सि.के., पं.व्य.क्लि., फु.बा., सा.बा.	म.वि., रा.बैं., ग्रा.बैं., सा.स्वा.के., भे.वि.के., कु.वि.के., सू.वि.के., म.वि.के., थो.बा.
32.	हाथी नाला	बी.के., उ.के., प.से.के., जू.बे.वि., ब.स्टे., डा.घ., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., फु.बा., सा.बा.	न्या.के., पु.चौ., सी.बे.वि., हा.के., ता.घ., दू.भा., थो.बा., उ.स्वा.के., रा.बैं., सं.ग्रा.बैं.
33.	गुरमुरा	बी.के., उ.के., प.अ., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के., प्रं.व्य.क्लि., फु.बा., सा.बा.	न्या.के., हा.से.वि., सी.बे.वि., ता.घ. सा.स्वा.के., प.नि.के., रा.बैं., कु.वि. के., भे.वि.के., सू.वि.के.
34.	सलई बनवा	जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., म.शि.के., प्रं.व्य. क्लि., फु.बा., सा.बा.	रा.बैं., जि.स.बैं., कृ.गर्भा., हो.चि., प.नि.के., भे.वि.के., बी.के., उ.के.
35.	बिल्ली	सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., फु.बा., थो.बा.	प.से.के., बी.के., उ.के., ता.घ., सा. स्वा.के., हो.चि., सा.ग्रा.बैं., भे.वि.के., न्या. के.
36.	परासपानी	जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., हो.चि., मा. शि.के., पं.व्य.क्लि., फु.बा., सा.बा.	सी.बे.वि., बी.के., उ.के., कृ.गर्भा., प.नि.के., उ.स्वा.के., भे.वि.के., प्रं.औ.
37.	फफरा	जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के. पं.व्य.क्लि., फु.बा.सा.ब.	सी.बे.वि., न्या.के., बी.के., उ.के., प.से.के., प.औ., सं.ग्रा.बैं., जि.स.बैं. भे.वि.के.
38.	बागेसुर्ती	जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के.,पं.व्य.क्लि., फु.बा., सा.बा.	बी.के., उ.के., न्या.के., सी.बे.वि., भे.वि.के., जि.स.बैं.

1	2	3	4
39.	खुरूवांव	वि.मु., बी.के., उ.के., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के., फु.बा.	सी.बे.वि., ता.घ., प.अ., सा.स्वा.के., हो.चि., कु.वि.के., भे.वि.के., प.नि.के., रा.बैं., जि.स.बैं.
40.	शाहगंज	न्या.के., पु.चौ., बी.के., उ.के., हा.से.वि., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., प्रा.स्वा.के. मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., रा.बैं., सं.ग्रा.बैं., फु.बा.	वि.मु., पं.औ., गं.अ., कृ.गर्भा.,ता.घ. सा.स्वा.के., म.वि.के., भे.वि.के., कु.वि.के., थो.बा.
41.	शिवद्वार	बी.के., उ.के., प.से.के., जू.बे.वि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., फु.बा.	न्या.के., सी.बे.वि., सा.स्वा.के., प.नि.के., कृ.गर्भा., रा.बैं., ग्रा.बैं., भे.वि.के., प.औ.
42.	जमगांव	न्या.के., बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., मा.शि.के., फु.बा.	ग्रा.बैं., कृ.गर्भा., कु.वि.के., प.नि.के. डा.घ.
43.	करमा	था., बी.के., उ.के., सी.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि.	न्या.के., रा.बैं., उ.स्वा.के., आ.यू.चि., कु.वि.के., प.नि.के., प.से.के.
44.	पसही	बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., फु.बा.	न्या.के., कृ.गर्भा., उ.स्वा.के., कु.वि.के., रा.बैं., ग्रा.बैं.
45.	गोविन्दपुर	डा.घ., हा.से.बि., जू.बे.वि., मा.शि.के., ब.स्टा., रा.बैं., फु.बा., सा.बा.	बी.के., उ.के., ता.घ., सी.बे.वि., ब.स्टे., ग्रा.बैं., भे.बि.के., सू.वि.के., न्या.के.
46.	जरहा	न्या.के., बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., आ.यू.चि., मा.शि.के., फु.बा. सा.बा.	कृ.गर्भा., प.नि.के., प.से.के., ग्रा.बैं., उ.स्वा.के., भे.वि.के., हा.से
47.	सांगोवार	न्या.के., बी.के., उ.के., प.अ., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., फु.बा., सा.बा.	पु.चौ., हो.चि., प.नि.के., भे.वि.के. ग्रा.बैं.

1	2	3	4
48.	नधिरा	बी.के., उ.के., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., आ.यू.चि., फु.बा., सा.बा.	न्या.के., सी.बे.वि., उ.स्वा.के., प.नि.के., प.आ., ग्रा.बैं., कु.वि.के., भे.वि.के.
49.	विण्ढमगंज	पु.चौ., बी.के., उ.के., प.अ., हा.से., सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टे., डा.घ., प्रा.स्वा.के., मा.शि.के., रा.बैं., सं.ग्रा.बैं., फु.बा., सा.बा.	था., न्या.प., कृ.गर्भा., सिने., ता.घ., हो.चि., सू.बि.के., भे.वि.के., कु.वि.के., म.वि.के.
50.	महुली	न्या.के., प.से.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., आ.यू.चि., मा.शि.के., रा.बैं., फु.बा., सा.बा.	बी.के., उ.के., उ.स्वा.के., हो.चि., भे.वि.के., प.अ.
51.	अमवार	प.से.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., आ.यू.चि., मा.शि.के., रा.बैं., फु.बा., सा.बा. फे.घा.	न्या.के., बी.के., उ.के., कु.पा.के., उ.स्वा.के.
52.	चपकी	हा.से., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., आ.यू.चि., हो.चि., मा.शि.के., फु.बा., सा.बा.	सी.वे., बी.के., उ.के., कृ.गर्भा., ग्रा.बैं., कु.वि.के., उ.स्वा.के., न्या.के.
53.	चैनपुर	न्या.के., बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., डा.घ., हो.चि., मा.शि.के., फु.बा., सा.बा.	हा.से., रा.बैं., ग्रा.बैं., उ.स्वा.के., प.नि.के., कृ.गर्भा., भे.वि.के., पं.औ.
54.	असनहर	बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., प्रा.स्वा.के., हो.चि., मा.शि.के., फु.बा. सा.बा.	न्या.के., प.अस्प., सा.स्वा.के., प.औ. भे.वि.के., ग्रा.बैं.
55.	महुअरिया	सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., हो.चि., मा.शि.के., पं.व्य.क्लि., फु.बा., सा.बा.	रा.बैं., बी.के., उ.के., प.से.के., उ.स्वा.के., आ.यू.चि., भे.वि.के.
56.	झारो	न्या.के., बी.के., उ.के., सी.बे.वि., जू.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टा., डा.घ., हो.चि., मा.शि.के., रा.बैं., फु.बा., सा.बा.	प्रा.स्वा.के., हा.से., ता.घ., आ.यू.चि. कृ.गर्भा., ग्रा.बैं., कु.वि.के., भे.वि.के., सू.वि.के.
57.	हिन्दुआरी	बी.के., उ.के., पं.व्य.क्लि., जू.बे.वि., ब.स्टा., डा.घ., मा.शि.के., कु.बा.	सी.बे.वि., रे.स्टे., ब.स्टे., रा.बैं., उ.स्वा.के., सू.वि.के., कु.वि.के., ग्रा.बैं.

1	2	3
58. लिलासी	हो.चि., सी.बे.वि., मा.शि.के., सा.बा.,जू.बे.वि.,	प.नि.के., उ.स्वा.के., ग्रा.बैं., बी.के., उ.के., कृ.गर्भा., कु.वि.के., डा.घ., फु.बा.
59. आरंगपानी	डा.घ., सी.बे.वि., न्या.के., सा.बा., मा.शि.के., जू.बे.वि.	बी.के., उ.के., प.से.के., हो.चि., सा.स्वा.के., पं.औ., ब.स्टा.
60. रायपुर	बी.के., उ.के., पु.चौ., मा.शि.के., डा.घ., ब.स्टा., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., न्या.के., कृ.गर्भा., हो.चि. प.नि.के., ग्रा.बैं.
61. चकरिया	हो.चि., उ.के., जू.बे.वि., मा.शि.के.	बी.के., डा.घ., कृ.गर्भा., प.नि.के., आ.यू.चि., ग्रा.बैं., भे.वि.के., सी.बे.वि., पं.औ.
62. अगोरी	रे.स्टे., ब.स्टा., फे.घा., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., प.नि.के., आ.यू.चि., पं.औ., ग्रा.बैं., कु.वि.के., ता.घ., उ.स्वा.के., भे.वि.के.
63 तियरा	प्रा.स्वा.के., पं.व्य.क्लि , जू.बे.वि.	प.सु.के., मा शि.के., म वि के., कु वि के , डा.घ.

ब. प्रस्तावित केन्द्र

1. ओबराडीह	न्या.के., जू.बे.वि., डा.घ.	उ.के., बी.के., फु.बा., कु.वि.के., सी.बे.वि., हा.से., ग्रा.बैं., आ.यू.चि., प.से.के.
2. बिसहार	जू.बे.वि., उ.के., मा.शि.के.	सी.बे.वि., न्या.के., प.नि.के., कृ.गर्भा.,कु.बी.के., डा.घ., फु.बा. हो.चि.

1	2	3	4
3.	मुड़िलाडीह	जू.बे.वि., आय.यू.चि.	पं.औ., सी.बे.वि., डा.घ., मा.शि.के., बी.के., उ.के., प.नि.के., प.से.के., भे.वि.के., ग्रा.बैं., रा.बैं.
4.	बर्दिया	जू.बे.वि., ब.स्टा., उ.के.	बी.के., आ.यू.चि., हा.से., उ.स्वा.के., ग्रा.बैं., मा.शि.के., डा.घ.
5.	दुरावल	जू.बे.वि., मा.शि.के.	बी.के., उ.के., डा.घ., कृ.गर्भा., हो.चि., कु.वि.के., फु.बा., ग्रा.बैं., सी.बे.वि.
6.	बकौली	न्या.के., मा.शि.के.	जू.बे.वि., सी.बे.वि., डा.घ., ग्रा.बैं., फु.बा., बी.के., उ.के., प्रा.स्वा.के., कु.वि.के.
7.	सिरसाई	बी.के. मा.शि.के.	जू.बे.वि., सी.बे.वि., डा.घ., कृ.गर्भा., प.नि.के., सू.वि.के., फु.बा.
8.	मोरसिम	जू.बे.वि., उ.के., फु.बा.	मा.शि.के., डा.घ., बी.के., प.नि.के., सी.बे.वि., उ.स्वा.के., पं.औ., प.से.के., कु.वि.के., न्या.के.
9.	धनावल	जू.बे.वि., मा.श.के., फु.बा.	सी.बे.वि., हा.से., ग्रा.बैं., पं.औ., कु.वि.के., म.वि.के., प.से.के. डा.घ.
10.	लोहाड़ी	सी.बे.वि., जू.बे.वि.,	उ.के., बी.के., हा.से., प.अस्प., आ.यू.चि., पं.औ. प.नि.के., सू.वि.के., डा.घ., रा.बैं.
11.	परसौना	डा.घ., जू.बे.वि.	प्रा.स्वा.के., सी.बे.वि., प.से.के., रा.बैं., उ.के., बी.के., भे.वि.के., न्या.के.
12.	लहास	मा.शि.के., उ.के., बी.के., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., उ.स्वा.के., प.स.के., ग्रा.बैं., पं.औ., डा.घ.
13.	पुरखास	उ.के., बी.के., जू.बे.वि., डा.घ.	आ.यू.चि., हो.चि., सी.बे.वि., ग्रा.बैं., कु.वि.के., मा.शि.के.
14.	रतवल	जू.बे.वि., न्या.पं.	सी.बे.वि., डा.घ., उ.स्वा.के., मा.शि.के., फु.बा., बी.के., उ.के.

1	2	3	4
15.	बभनौली	उ.के., बी.के., डा.घ., जू.बे.वि.	फु.बा., सी.बे.वि., मा.शि.के., प.से.के., आ.यू.चि., पं.औ., ग्रा.बैं.
16.	पापी	जू.बे.वि., डा.घ.	बी.के., उ.के., मा.शि.के., हो.चि., कृ.गर्भा., फु.बा., सी.बे.वी.
17.	कैथी	जू.बे.वि.	डा.घ., सी.बे.वि., आ.यू.चि., कृ.गर्भा., ब.स्टा., ग्रा.बैं., फु.बा., प.नि.के., उ.के., बी.के.
18.	बड़ागांव	जू.बे.वि., सी.बे.वि.	डा.घ., बी.के., उ.के., मा.शि.के., प.नि.के., हो.चि., कु.वि.के., ग्रा.बैं.
19.	सण्डी	सी.बे.वि., डा.घ., मा.शि.के.	जू.बे.वि., बी.के., उ.के., प.नि.के., प.अस्प., आ.यू.चि., ग्रा.बैं., हा.से. फु.बा.
20.	भरसही	सी.बे.वि.	जू.बे.वि., डा.घ., उ.के., बी.के., मा.शि.के., कु.या.के., फ.बा.
21.	सोढ़ा	सी.बे.वि., जू.बे.वि.	बी.के., उ.के., आ.यू.चि., कु.बा., प्रा.स्वा.के., प.औ., प.से.के., मा.सि.के , कु.वि.के., रा.बै.
22.	नार्को	सी.बे.वि., मा.शि.के.	जू.बे.वि., बी.के., उ.के., उ.स्वा.के., रा.बैं., मा.शि.के., हा.से., प.से.के.
23.	शिवपुर	जू.बे.वि.	उ.के., बी.के., मा.शि.के., कृ.गर्भा., फु.बा.
24.	भुसौलिया	मा.शि.के., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., बी.के., उ.के., फु.बा., हो.चि., कृ.गर्भा., ग्रा.बैं., डा.घ.
25.	वीर्धी	सी.बे.वि., जू.बे.वि.	हा.से., बी.के., उ.के., मा.शि.के., प.से.के., उ.स्वा.के., फु.बा., डा.घ., पं.औ.
26.	पड़री	सी.बे.वि., जू.बे.वि.	डा.घ., हा.से., मा.शि.के., आ.यू.चि., कु.वि.के., कृ.गर्भा., न्या.पं.
27.	नन्दना	जू.बे.वि., मा.शि.के. उ.के.	बी.के., डा.घ., सी.बे.वि., प.नि.के., आ.यू.चि., फु.बा., कु.वि.के., ग्रा.बैं.
28.	कजियारी	मा.शि.के., उ.के.	सी.बे.वि., जू.बे.वि., बी.के., प.अ., डा.घ.,

1	2	3	4
			कु.बा., ग्रा.बैं., भे.वि.के., न्या.पं.
29.	गड़ाव	न्या.पं., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., हा.से.वि., उ.के., बी.के., फु.बा., ग्रा.बैं.,उ.स्वा.के., प.से.के., मा.शि.के., भे.वि.के., म.वि.के.,सू.वि.के.
30.	नौडीहा	न्या.पं., मा.शि.के., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., बी.के., उ.के., फु.बा., कृ.गर्भा., प.नि.के., हो.चि., डा.घ.
31.	चेरूई	जू.बे.वि.	सी.बे.वि., उ.स्वा.के., प.से.के., बी.के., उ.के., फु.बा.,म.सि.के., डा.घ.
32.	आमडीह	जू.बे.वि., ब.स्टा., मा.शि.के., न्या.पं.	सी.बे.वि., हा.से.वि., बी.के., उ.के., प्रा.स्वा.के., रा.बैं., ग्रा.बैं., फु.बा., कु.वि.के., सू.वि.के., डा.घ.
33.	आसनडीह	मा.शि.के., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., कृ.गर्भा., डा.घ., उ.स्वा.के., प.नि.के., फु.बा.
34.	डूभा	हो.चि., जू.बे.वि.,	सी.बे.वि., प.से.के., प.नि.के., मा.शि.के., डा.घ., ता.घ., कु.वि.के., भे.वि.के., उ.के., बी.के.
35.	गोहड़ा	मा.शि.के., जू.बे.वि., डा.घ.	सी.बे.वि., आ.यू.चि., उ.के., बी.के., प.नि.के., कृ.गर्भा., पं.औ.
36.	घघरा	फु.बा., डा.घ., जू.बे.वि.	उ.के., बी.के., हो.चि., प.अस्प., पं.औ., कु.वि.के.,सी.बे.वि., सू.वि.के., ग्रा.बैं., न्या.पं.
37.	चप-चपकी	जू.बे.वि., उ.के., फु.बा., मा.शि.के.	बी.के., न्या.पं., उ.स्वा.के., प.नि.के., प.से.के., डा.घ., ग्रा.बैं.
38.	सतबहनी	डा.घ., जू.बे.वि.	बी.के., उ.के., ब.स्टा., आ.यू.चि., उ.स्वा.के., प.औ., प.से.के., ग्रा.बैं., मा.शि.के.
39.	कोंगा	सी.बे.वि., जू.बे.वि., डा.घ.	उ.के., बी.के., हा.से.वि., पं.औ., हो.चि. प्रा.स्वा.के.,फु.बा., भे.वि.के., ब.स्टे.

1	2	3	4
40.	अरझट	मा.शि.के., जू.बे.वि., फु.बा.	सी.बे.वि., डा.घ., आ.यू.चि., हो.चि., बी.के., उ.के.,कृ.गर्भा., कु.वि.के.
41.	कोरची	जू.बे.वि., डा.घ., मा.शि.के.	उ.के., बी.के., सी.बे.वि., फु.बा., भे.वि.के., सू.वि.के.,म.वि.के., कृ.गर्भा., उ.स्वा.के., ग्रा.बैं.
42.	वीडर	सी.बे.वि., जू.बे.वि., फु.बा.	डा.घ., मा.शि.के., आ.यू.चि., हो.चि., प.नि.के., भे.वि.के., प.से.के.
43.	केवाल	जू.बे.वि., मा.सि.के. डा.घ.	उ.के., बी.के., उ.स्वा.के., हो.चि., फु.बा., ग्रा.बैं., सी.बे.वि., प.से.के.
44.	पकरी	उ.के., बी.के., जू.बे.वि.	सी.बे.वि., प.नि.के., डा.घ., आ.यू.चि., पं.औ., प.से.के., कु.वि.के., सू.वि.के.
45.	बघाडू	सी.बे.वि., जू.बे.वि., मा.शि.के., फु.बा.	डा.घ., हा.से., बी.के., उ.के., प.से.के., पं.औ. उ.स्वा.के.,ब.स्टा., भे.वि.के.
46.	महुअरिया	रे.स्टे., जू.बे.वि., फु.बा.	सी.बे.वि., उ.के., बी.के , प.से.के., उ.स्वा.के. प.नि.के., ग्रा.बैं., कु.वि.के., भे.वि.के., न्य.पं.
47.	किरविल	डा.घ., सी.बे.वि., न्या.पं., जू.बे.वि.	हा.से., पु.चौ., उ.के., बी.के., प्रा.स्वा.के., प.अ., रा.बैं., ग्रा.बैं., ब.स्टा., सू.वि.के., कु.वि.के., भे.वि.के., मा.शि.के.
48.	रणहोर	सी.वे.बि., जू.बे.वि., मा.सि.के.	डा.घ., उ.के., बी.के., प.से.के., उ.स्वा.के. आ.यू.चि.,पं.औ., प.नि.के.
49.	देवरी	उ.के., बी.के., जू.बे.वि., मा.शि.के.	सी.बे.वि., डा.घ., कृ.गर्भा., आ.यू.चि., हो.चि. पं.औ., फु.बा.
50.	बेलाही	जू.बे.वि., फु.बा.	सी.बे.वि., उ.के., बी.के., कृ.गर्भा., उ.स्वा.के. पं.औ.,कु.वि.के., भे.वि.के., डा.घ., मा.शि.के.
51.	जामपानी	जू.बे.वि., उ.के., बी.के., मा.शि.के.	सी.बे.वि., डा.घ., उ.स्वा.के., प.नि.के., प.से.के. फु.बा., कु.वि.के.

1	2	3	4
52.	जोगीडीह	जू.बे.वि., रे.स्टे., सी.बे.वि., फु.बा.	डा.घ., बी.के., उ.के., प.से.के., उ.स्वा.के., मा.शि.के., ग्रा.बैं., न्या.पं.
53	बेलत्थी	जू.बे.वि.	सी.बे.वि., उ.के., बी.के., मा.शि.के., कृ.गर्भा., उ.स्वा.के., भे.वि.के., डा.घ., न्या.पं.
54.	सिन्दुरिया	न्या.पं., जू.बे.वि.	मा.शि.के., सी.बे.वि., हा.से., उ.के., बी.के., भे.वि.के., प्रा.स्वा.के.,पं.औ., ग्रा.बैं., डा.घ., प.से.के., फु.बा.
55.	सेमिया	जू.बे.वि., मा.शि.के.,उ.के.,बी.के.	सी.बे.वि., प.नि.के., उ.स्वा.के., प.से.के., फु.बा., कु.वि.के., भे.वि.के.
56.	जुगैल	जू.बे.वि., मा.शि.के.,फु.बा.	सी.बे.वी., उ.के., बी.के., प.नि.के., हो.चि., उ.स्वा.के., कु.वि.के., कृ.गर्भा., डा.घ.
57.	मगरदहा	जू.बे.वि., रे.स्टे., फु.बा.	बी.के., उ.के., सी.बे.वि., प्रा.स्वा.के., आ.यू.चि., प.से.के., ग्रा.बैं., मा.शि.के., पं.औ., डा.घ.
58.	मिर्चाधुरी	जू.बे.वि., रे.स्टे., मा.शि.के.,बी.के.	उ.के., सी.बे.वि., उ.स्वा.के., प.अ., प.नि.के., कु.वि.के., भे.वि.के., डा.घ., न्या.पं.
59.	चतरवार	जू.बे.वि., सी.बे.वि., बी.के.,उ.के.	डा.घ., मा.शि.के., आ.यू.चि., हो.चि., कृ.गर्भा., न्या.के., सु.वि.के., डा.घ., पं.औ.
60.	कचनरवा	जू.बे.वि., डा.घ., मा.शि.के.	उ.के., बी.के., सी.बे.वि., प.से.के., उ.स्वा.के., प.औ., प.नि.के., कृ.गर्भा., ग्रा.बैं., भे.वि.के., हा.से.
61.	कोटा	जू.बे.वि., मा.शि.के., बी.के., उ.के.	सी.बे.वि., प्रा.स्वा.के., हो.चि., प.अ., डा.घ., भे.वि.के.,ग्रा.बैं., पं.औ., हा.से.

शब्द संक्षेप

जि.मु. — जिला मुख्यालय

त.मु. — तहसील मुख्यालय

शब्द-संक्षेप

वि.मु.	विकास खण्ड मुख्यालय	पं.व्य.क्लि	पंजीकृत व्यक्तिगत क्लीनिक
न्या.पं.के.	न्याय पंचायत केन्द्र	पं.औ.	पजीकृत औषधालय
था	थाना	सा.स्वा.के.	सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र
पु.चौ.	पुलिस चौकी	उ.स्वा.के.	उप स्वास्थ्य केन्द्र
शी.भं.	शीत भण्डार	प.नि.के.	परिवार नियोजन केन्द्र
बी.के.	बीज वितरण केन्द्र	रा.बैं.	राष्ट्रीय बैंक
उ.के.	उर्वरक वितरण केन्द्र	भू.वि.बैं.	भूमि विकास बैंक
प.अ.	पशु अस्पताल	जि.स.बैं.	जिला सहकारी बैंक
प.से.के.	पशु सेवा केन्द्र	सं.ग्रा.बैं.	संयुक्त ग्रामीण बैंक
कृ.गर्भा.	कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र	ग्रा.बैं.	ग्रामीण बैंक
म.वि.	महाविद्यालय	थो.बा.	थोक बाजार
हा.से.	हायर सेकेण्ड्री विद्यालय	फु.बा.	फुटकर बाजार
सी.बे.वि.	सीनियर बेसिक विद्यालय	सा.बा.	साप्ताहिक बाजार
त.शि.सं.	तकनीकी शिक्षण संस्थान	कु.वि.के.	कुक्कुट पालन विकास केन्द्र
औ.प्र.सं.	औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान	सू.वि.के.	सुअर पालन विकास केन्द्र
सिने.	छविगृह	भे.वि.के.	भेड़ पालन विकास केन्द्र
रे.स्टे.	रेलवे स्टेशन	म.वि.के.	मत्स्य पालन विकास केन्द्र
ब.स्टे.	बस स्टेशन	जू.बे.वि.	जूनियर बेसिक विद्यालय
ब.स्टा.	बस स्टाप		
डा.घ.	डाक घर		
ता.घ.	तार घर		
दू.भा.	दूरभाष		
अस्प.	अस्पताल		
प्रा.स्वा.के.	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र		
आ.यू.चि.	आयूर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सालय		
हो.चि.	होम्योपैथिक चिकित्सालय		
मा.शि.के.	मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र		

संदर्भ

1. पद्मनाभन्, अन्नत · 'मनुष्य व वातावरण', राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 79.

2. शर्मा, लक्ष्मी नारायण : 'अधिवास भूगोल', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1983 पृष्ठ 70.

3. *Thaha, A : 'Indentification of Hierarchical Growth centres and Delineating of their Hinterlands', 10th cources of IRD, NICD, Hyderabad, Sept.-Oct. 1977, p.1 (Cyclostyled paper).*

4. *Ahmad, E.: Rural settlement types in Uttar Pradesh, A.A.A.G., vol.42 1952, pp. 223-46.*

5. *Meitzen, R.: Siedlung and Agrawesen der westgermanen und obstgermanen, der Kelten, Romer, Finner and slaven (3 vols. and atlas) (Berlin : W. Herty, 1895).*

6. सिंह, इकबाल : भारत में ग्रामीण विकास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, 1986, पृष्ठ 1.

7. *Pathak, R.K. : Environmental Planning Resources and Development, Chugh Publication, Allahabad, 1990, p. 54.*

8. *Mishra, R.P., Sundram, K.P. and Prakasa Rao, V.L.S. : Regional Development Planning in India: New Strategy, Vikas Publishing House, New Delhi, 1974.*

9. *Babu, R. : Micro-Level Planning : A Case study of Chhibramau Tahsil (Farrukhabad District, U.P.),*

Unpublished Thesis, Geography Department, Allahabad University, 1981.

10. Jefferson, M. : 'The Distrubution of World's City Folks', Geographical Review, Vol. XXI, p. 453.

11. Christaller, W. : Die Zentralen orte in Suddent - Schland, Jena, G. Fisher, 1933, Tramspated by C.W. Basikin, Englewood Cliffes, N.J., 1966.

12. Perroux, F. : 'La Nation de Crossance', Economique Applique, Nos. 1 and 2, 1955.

13. Boudeville, T.R. : Problem of Regional Economic Planning, Edinburgh University Press, 1966.

14. op. cit., fn. 11.

15. Bhat, L.S. : Micro - Level Planning - A Case study of Karanal Area, Haryana, India, Vikas, New Delhi, 1976, p. 45.

16. op. cit. fn.7. p.55.

17. Sen, L.K. : 'Planning of Rural Growth Centres for Integrated Area Development - A Study in Miryalguda Taluka', NICD, Hyderabad., 1971, p.92.

18. op. cit. fn.7, p.61.

19. Haggett, P. etal. : 'Determination of Population Threshold for Settlement Functions by Read Muench Method', Professional Geographer, Vol 16, 1964, pp. 6-9.

20. Roy, P. and Patil, B.R. (eds) : Manual for Block - Level Planning, Mackmillan, New Delhi, 1977, p. 25.

21. Wanmali, S. : 'Regional Planning for social Facilities - A Case Study of Eastern Maharastra', NICD, Hyderabad, 1970, p.45.

22. op. cit., fn. 17, p.92.

23. Nityanand, P. and Bose, S. : 'An Integrated Tribal Development Plan for Keonjhar District Orissa', NICD, Hyderabad, 1976.

24. Kumar, A. and Sharma, N. : Rural Centres of Services', Geographical Review of India, Vol. 39, No. 1, 1977, pp. 19-29.

25. Singh, S.B. : 'Spatial Orgnisation of Settlement Systems', National Geographer, Vol. XI No.2, 1976, pp. 1930-140.

26. Khan, W. etal. : 'Plan for Integrated Development in Pauri Garhwal,' NICD, Hyderabad, 1976, pp. 15-21.

27. Dutta, A.K. : 'Transportation Index in West Bengal - A Means to Determine Central Place Hiearchy', National Geographical Journal of India, Vo. 16. No. 3 and 4, 1970, pp. 199 - 207.

28. Alam, S.M., Gopi, K.N. and Khan, W.A.: 'Planning for Metropolitan Region of Hyderabad - A Case Study', in S.P. Chatterjee, etal. (ed), Proceedings of Symposium on Regional Plannig, National Committee of Georgaphy, Calcutta, 1971.

29. Mishra, G.K. : 'A Methodology for Indentifying Service Centres in Rural Area', Behavioural

Sciences and Community Development, Vo. 6, No. 1, 1972, pp. 48 - 63.

30. Singh, J. : Central Place and spatial Organisation in a Backward Economy - Gorakhpur Region - A Case Study Integrated Regional Development, Uttar Bharat Bhoogol Parishad, Gorakhpur, 1979.

31. op. cit., fn. 15.

32. op. cit., fn. 7, p. 45.

33. Prakasha Rao, V.L.S. : 'Problems of Micro - Level Planning', Behavioural Sciences and Community Development, Vol. 6, No. 1, 1972, p. 151.

34. op. cit., fn. 7, p. 45.

35. op. cit., fn. 11,

36. Duncun, J.S. : 'New - Zealand Towns as Service Centres', N.Z.G., Vol. 11, 1955, pp. 119-38.

37. Brush, J.E. : 'The Hierarchy of Central Places in South - Western Wiscoosin', Geographical Review, Vol. X LIII, No. 3, 1953, pp. 380 - 402.

38. Smailes, A.E. : 'The Urban Hierarchy in England and Wales', Geography, 1944, Vol. 29.

39. Carter, H. : 'Urban Grades and Spheres of Influence in South - West Wales', Scot Geography Mag., Vol. 71, 1955, pp. 43 - 58.

40. Ullman, E.L. : 'Trade Centres and Tributary Areas of Phillippines', Georgaphical Review, Vol. 50, 1960, pp. 203 - 218.

41. *Hartley, G. and A.E. Smailes : 'Shopping Centres in Greater London Areas', Trans. Inst. Br. Geog., 29, 1961, pp. 201 - 213.*

42. *Kar, N.R. : 'Urban Hierarchy and Central Functions Around the City of Calcutta and its Significance', in L. Norgery (ed.), proceedings of the I.G. II. Symposium in Urban Geography, Lund, 1962.*

43. *Bracey, H.E. : 'Town as Rural Services Centres', Trans, Inst. Br. Geog., 19, 1962, pp. 95-105.*

44. *Green, F.H.W. : 'Motor Bus Centres in South - West England Considered in Relation to Population and Shopping Facilities', Trans. Inst. Br. Geo. Vo. 14, 1948, pp. 57 - 69.*

45. *Carruthers, W.I. : 'A Classification of Services Centres in England and Wales', Geographical Journal, Vo. 123, 1957, pp. 371 - 85.*

46. *Siddal, W.R. : 'Wholesale Retail Trade Ratios as Indices of Urban Centrality', Economic Geography, Vol. 37, 1961.*

47. *Abiodeen, J.O. : 'Urban Hierachy in a Developing Country', Economic Geography, Vol. 43 (4), 1967, pp. 347 - 367.*

48. *Preston, R.E. : 'The Structure of Central Place Systems, Economic Geography', Vol. 47 (2), 1971, pp. 136 - 55.*

49. Berry, B.J.L. and Garrison, W.L. : 'The Functional Bases of the Central Places Hierarchy', Economic Geography, Vo. 34 (2), 1958, pp. 145 - 54.

50. Vishwanath, M.S. : A Geographical Analysis of Rural Markets and Urban Centres in Mysore, Ph.D. Thesis, B.H.U. Varanasi.

51. Singh, O.P. : 'Towards Determining Hierarchy of Service Centres - A Methodology for Central Place Studies', N.G.J.I. Vol. XVII (4), 1971, pp. 165 - 177.

52. Rao, V.L.S.P. : 'Planning for An Agricultural Region, in New Strategy, Vikas, New Delhi, 1974.

53. Singh, J. : 'Nodal Accessibility and Central Place Hierarchy - A Case Study in Gorakhpur Region', pp. 101 - 112.

54. Jain, N.G. : 'Urban Hierarchy and Telephone Services in Vadarbh (Maharashtra)', N.G.J.I., Vo. XVII (2 and 3), 1971, pp. 134 - 37.

55. op. cit., fn. 51.

56. op. cit., fn. 30.

57. op. cit., fn. 11.

XXXXXXXXXX

अध्याय 4

कृषि के विकास की पृष्ठभूमि एवं नियोजन

अध्ययन क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र है। यहाँ कुल कार्यशील जनसंख्या का 70.88% भाग कृषि तथा उससे सम्बद्ध कार्यों में लगा हुआ है। सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्र के 26.45% भाग पर कृषि होती है। जबकि देश के लगभग 51% भाग पर कृषि होती है। कृषि क्षेत्र के आधार पर अध्ययन क्षेत्र को कृषि प्रधान क्षेत्र नहीं कहा जा सकता किन्तु कृषि कार्य में लगी कार्यशील जनसंख्या के आधार पर निःसंदेह अध्ययन क्षेत्र को कृषि प्रधान क्षेत्र कहा जा सकता है। आधुनिक वृहद् उद्योगों का विकास भी कृषि के महत्व एवं उस पर निर्भरता को संकुचित नही कर पा रही है । वास्तविक रूप में अध्ययन क्षेत्र की आर्थिक क्रियाकलापों एवं संस्कृति का आधार कृषि ही है। कृषि, यहाँ के लोगों के लिए जीविकोपार्जन का साधन नहीं वरन् जीवन शैली है ।

4.1 कृषि-सम्प्रत्यय

कृषि का प्रारम्भ, नव पाषण युग में हुआ, वेदों तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों में भी कृषि का उल्लेख है। वास्तव में यह एक ऐसा आर्थिक कार्य है जिसका विकास लेखन-कला के पूर्व हुआ था। अनेक प्रौद्योगिकी तथा औद्योगिक विकास के बावजूद कृषि का महत्व अक्षुण्ण है। कृषि उत्पादन की विफलता से सम्पूर्ण आर्थिक तन्त्र अव्यवस्थित हो जाती है। कृषि सम्पूर्ण आर्थिक व्यवस्था की रीढ़ है।

मिट्टी को जोतने-गोड़ने तथा फसल उगाने एवं पशु-पालन करने की कार्य प्रणाली, कला एवं विज्ञान को कृषि कहते हैं।[1] बुकानन (1959)[2] ने कृषि शब्द को मिश्र-शब्द कहा है जिसका बड़ा व्यापक अर्थ है और इसके अन्तर्गत मानव प्रयोग के लिए खाद्य पदार्थ अथवा कच्चे माल उत्पन्न करने के लिए मिट्टी का उपयोग करने वाली अत्यन्त साधारण से लेकर विषम विधियां आती हैं। इसी तथ्य को मेकार्टी (1966)[3] ने सोदेश्य फसलोत्पादन एवं पशुपालन कहा है। कृषि के इस व्यापक अर्थ को अंग्रेजी का 'एग्रीकल्चर' शब्द आंशिक रूप में ही व्यक्त करता है, जिसका अर्थ भूमि को जोतकर फसल पैदा करना है। परन्तु कृषि

के अन्तर्गत फसल उत्पन्न करने के साथ-साथ पशुपालन तथा सिंचाई आदि क्रियाएं भी सम्मिलित की जाती हैं। कृषि ने मानव के घुमक्कड़ प्रवृत्ति को स्थायित्व प्रदान किया। मानव बस्तियों के प्रतिरूप एवं कृषि में घनिष्ठ सह-सम्बन्ध है। जिम्मरमेन[4] के अनुसार कृषि मानव के उन उत्पादक प्रयासों को कहते हैं जिनके द्वारा वह भूमि पर बस कर उसके उपयोग की कोशिश करता है और यथासंभव पौधों एवं पशुओं के प्राकृतिक प्रजनन एवं वृद्धि की प्रक्रिया को तीव्र एवं विकसित करता है। इन सभी कार्यों का उद्देश्य मानव के लिए आवश्यक या उसके द्वारा वांछित वानस्पतिक एवं पशु उपजें उत्पन्न करना है। जसवीर सिंह (1974)[5] ने कृषि की सविस्तार व्याख्या की है; उनके अनुसार, कृषि फसलोत्पादन से अधिक व्यापक है । यह मानव द्वारा ग्रामीण पर्यावरण का रूपान्तरण है जिससे कतिपय उपयोगी फसलों एवं पशुओं के लिए सम्भव अनुकूल दशाएं सुनिश्चित की जा सके। इनकी (फसलों एवं पशुओं की) उपयोगिता सतर्क चयन से बढ़ायी जाती है। इनमें उन सभी पद्वतियों को सम्मिलित किया जाता है , जिनका प्रयोग कृषक कृषि के विभिन्न तत्वों को विवेकपूर्ण ढंग से संगठित करने और अनुकूलतम उपयोग से करता है ।

मानवीय आर्थिक क्रियाओं में कृषि सबसे अधिक प्रचलित और महत्वपूर्ण है।[6] मैक मास्टर[7] द्वारा प्रतिपादित कृषि के भौगोलिक अध्ययन के तीन उपागमों - पारिस्थितिकी भूमि उपयोग तथा सांख्यिकीय में भूमि उपयोग उपागम को अपनाया गया है। आंकड़ों एवं सूचकाओं की अनुपलब्धता के कारण अन्य दो उपागमों पर ध्यान नहीं दिया गया है ।

4.2 कृषि योग्य भूमि

अध्ययन क्षेत्र की 86.61% जनसंख्या गाँवों में रहती है जहाँ उत्पादन का मुख्य स्त्रोत भूमि है। भूमि पर अधिकार आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्तर को व्यक्त करता है। स्वतन्त्रता के बाद भूमि सुधार के लिए किए गए पुनर्वितरण ने सार्वजनिक पद्वति में विशेष स्थान ले लिया है जैसे ग्रामीण उत्पादन पद्वति कृषि पर ही केन्द्रित थी, भूमि सुधार भी कृषि से ही सम्बन्धित था। भूमि पर कृषि-कार्य किया जाना भूमि उपयोग का एक माध्यम है। फाक्स[8] ने भूमि उपयोग के प्रारम्भिक अवस्था को 'भूमि प्रयोग' (लैण्ड यूज) तथा द्वितीय सोद्देश्य उपयोग को 'भूमि उपयोग' (लैण्ड यूटीलाइजेशन) बताया। चौहान[9], वैनजेटी[10] तथा

वुड[11] ने भी सूक्ष्म अन्तर के साथ यहीं विचार व्यक्त किया है ।

भूमि का अपना कोई महत्व नहीं है, इसका मूल्यांकन मानवीय प्रयासों से आंका जाता है - भूमि का उपजाऊ और बंजर रूप में वर्गीकरण उसके सम्भावित सामाजिक उपयोग से है। पारम्परिक रूप में कृषि ही भूमि का सबसे उपयुक्त उपयोग है। इसलिए कृषि-उत्पादकता ही भूमि वर्गीकरण का आधार रहा है। भूमि की उपयोगिता की धारणा स्थिर न होकर आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय परिवर्तन के साथ बदलती रहती है। पारम्परिक रूप में कृषि ही भूमि का सबसे उपयोगी प्रयोग रहा है। फिर भी अध्ययन क्षेत्र में कृषि के लिए उपयुक्त भूमि का एक बड़ा हिस्सा है जिसके समुचित उपयोग की आवश्यकता है ।

कृषि योग्य भूमि के अन्तर्गत शुद्ध बोये गए क्षेत्रफल के अतिरिक्त कृषि योग्य बजर भूमि, वर्तमान परती भूमि तथा अन्य परती भूमि को सम्मिलित किया गया है। इसके अन्तर्गत कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (681928 हेक्टेयर) के 38.61 प्रतिशत भाग समाहित हैं। शेष का 49.11% वन, 8.87% ऊसर एवं कृषि के अयोग्य भूमि, 6.12% कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लायी गयी भूमि, 0.04%, चारागाह तथा 1.24% भाग पर उद्यान वृक्षों का प्रसार है (तालिका 4.1)। सर्वाधिक कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता विकास खण्ड राबर्ट्सगंज, चतरा तथा घोरावल में क्रमशः 75.66%, 65.24%, तथा 60.38% है। सबसे कम कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता विकास खण्ड नगवां, म्योरपुर, दुद्धी, चोपन तथा बभनी में क्रमश· 20.60%, 29.60%, 33.38%, 33.74% तथा 35.39% है (तालिका - 4.1) ।

(अ) शुद्ध बोया गया कृषि-क्षेत्र

शुद्ध बोये गए क्षेत्र के अन्तर्गत केवल वास्तविक कृषित क्षेत्र को सम्मिलित किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र का शुद्ध बोया गया क्षेत्र 180354 हेक्टेयर है जो सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्र का26.45% है तथा कुल कृषि योग्य भूमि का 68.42% है। कुल भौगोलिक क्षेत्र0 का शुद्ध बोया गया कृषि क्षेत्र सबसे अधिक विकास खण्ड राबर्ट्सगंज में 64.28% तथा सबसे कम विकास खण्ड नगवां में 13.23% है। किन्तु कृषि योग्य भूमि का शुद्ध बोया कृषि क्षेत्र सबसे अधिक तथा न्यून क्रमशः विकास खण्ड चतरा में 92.20% तथा म्योरपुर में

49.22% है। कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का शुद्ध बोया गया कृषि क्षेत्र अवनत क्रम में क्रमशः रार्बट्सगंज (64.28%), चतरा (60.15%), घोरावल (48.20%), बभनी (25.14%), दुद्धी (22.76%), चोपन (19.78%), म्योरपुर (14.57%), तथा नगवां (13.23%) है। इसी प्रकार कुल कृषि योग्य भूमि का शुद्ध बोया गया कृषि क्षेत्र अवनत क्रम में क्रमशः विकास खण्ड चतरा (92.20%), रार्बट्सगंज (84.96%), घोरावल (79.83%), बभनी (71.05%), दुद्धी (68.19%), नगवां (59.11%), चोपन (58.62%), तथा म्योरपुर (49.22%) है। स्पष्ट है कि विकास खण्ड वार कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का कुल कृषि योग्य भूमि एवं शुद्ध बोया कृषि क्षेत्र तथा कृषि योग्य भूमि का शुद्ध बोये गए कृषि क्षेत्र का क्रम समान नहीं है। इसका प्रमुख कारण धरातलीय स्वरूप है। अपेक्षाकृत मैदानी भागों में कृषि योग्य भूमि के अधिकतम भाग पर कृषि कार्य होता है ।

(ब) एक से अधिक बार बोया गया कृषि-क्षेत्र

कुछ कृषि क्षेत्रों में विभिन्न समयों में एक से अधिक फसल उगायी जाती है। विभिन्न समयों में एक ही कृषि क्षेत्र में एक से अधिक बार बोये गए क्षेत्र को इसके अन्तर्गत सम्मिलित करते हैं। एक से अधिक बार बोया गया कृषि क्षेत्र बहुफसली क्षेत्र से स्पष्टतः भिन्न है । बहुफसली कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत एक ही समय में एक साथ एक से अधिक फसलों को बोया जाता है जबकि एक से अधिक बार बोये गये कृषि-क्षेत्र के अन्तर्गत फसलों को एक वर्ष में एक से अधिक बार बोया जाता है। किसी क्षेत्र में एक से अधिक बार फसलों का बोया जाना सिंचाई सुविधा, मृदा की उर्वरा शक्ति, नयी टेक्नालजी आदि कृषि निवेश (इनपुट) पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त लघु जोतों के आकार वाले भागों में वृहद् जोतों के आकार वाले भागों की अपेक्षा एक से अधिक बार कृषि क्षेत्र के बोये जाने की सम्भाव्यता अधिक पायी जाती है। इसी प्रकार शिक्षित युवकों द्वारा कृषि कार्य करने पर कृषि क्षेत्र के एक से अधिक बार बोए जाने की सम्भावना बढ़ जाती है। अध्ययन क्षेत्र के कुल शुद्ध बोए गए कृषि क्षेत्र के 41.56% (74966 हेक्टेयर) भाग पर एक से अधिक बार कृषि कार्य होता है। विकास खण्ड रार्बट्सगंज में सबसे अधिक 64.22% भाग पर एक से अधिक बार कृषि कार्य होता है । इसके बाद क्रमशः घोरावल (59.22%), नगवां (48.03%), चतरा (43.25%), चोपन (37.72%), दुद्धी (18.82%), बभनी (15.93%) तथा म्योरपुर (13.18%) का स्थान आता है ।

तालिका 4 I

भूमि उपयोग (हेक्टेयर में) 1990 - 91

विकासखण्ड	भौगोलिक क्षेत्रफल	कुल कृषि योग्य भूमि हेक्टेयर में	कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का कृषि योग्य भूमि प्रति0 में	शुद्ध बोया गया क्षेत्र0	कुल भौगो0 क्षेत्र0 का प्रतिशत	कृषि योग्य भूमि का शुद्ध बोये गए क्षेत्र प्रति0में	कृषियोग्य बंजर भूमि	वर्तमान परती भूमि	अन्य परती भूमि	ऊसर और कृषि के अयोग्य भूमि	कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लायी गयी भूमि	चारागाह	उद्यान वृक्षों का क्षेत्रफल
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	:2	13	14
घोरावल	81873	49433	60 38	39464	48.20	79 83	3290	2481	4198	1381	4057	111	1191
राबर्ट्सगंज	44245	33477	75 66	28442	64.28	84 96	1254	1760	2021	3251	4555	26	436
चतरा	25485	16627	65.24	15330	60.15	92 20	593	240	494	478	4197	3	610
नगवा	91620	20500	22.60	12118	13.23	59.11	4287	1900	2195	1352	5060	2	4540
चोपन	171297	57798	33.74	33885	19.78	58.62	11850	2323	9740	23381	12285	130	1543
म्योरपुर	133789	39614	29.60	19499	14.57	49.22	7704	5584	6827	2048	6114	-	105
दुद्धी	70745	23617	33.38	16104	22.76	68.19	2028	1360	4125	1001	2616	-	11
बभनी	60826	21524	35.39	15293	25.14	71.05	2428	670	3133	318	1528	4	8
योग	**679880**	**262620**	**38.63**	**180135**	**26.50**	**68.59**	**33434**	**16318**	**32733**	**33210**	**40412**	**276**	**8444**
नगरीय योग	2048	**642**	**31.35**	**219**	**10.69**	**34.11**	**31**	**169**	**223**	**52**	**1354**	-	-
जनपद योग	**681928**	**263262**	**38.61**	180354	**26.45**	**68.42**	**33465**	**16487**	**32956**	**33262**	**41766**	**276**	**8444**

स्रोत : साख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 43-43 एवं संगणित ।

DISTRICT SONBHADRA
LAND USE
1990-91
N
S
26485
44245
60826
70745
81873
91620
133789
171297
0 4 8
KM
NET SOWN AREA
CULTIVABLE LAND
OTHERS
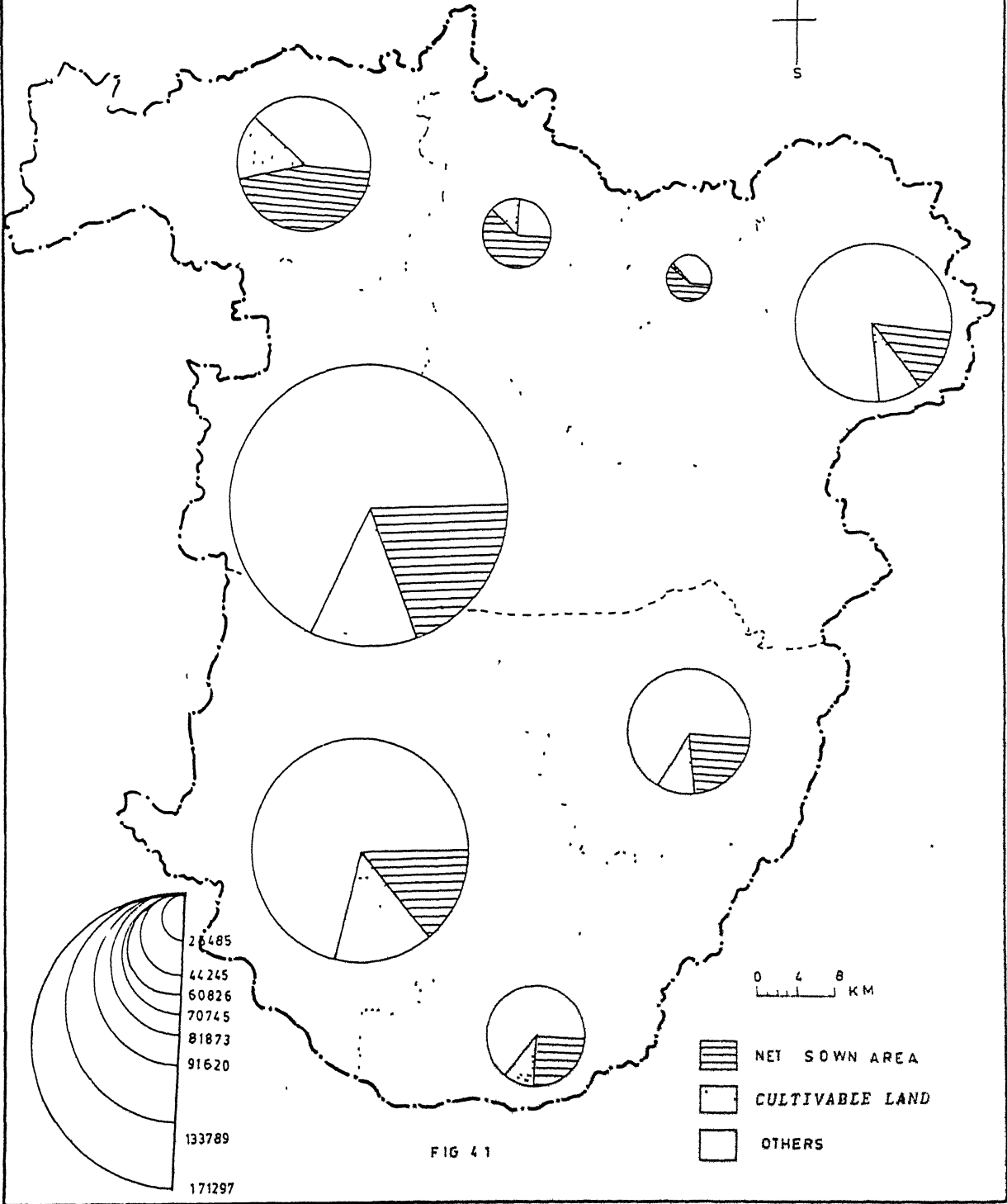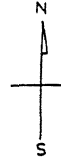
FIG 4 1

DISTRICT SONBHADRA
AGRICULTURAL AREA
N
S
AGRICULTURAL AREA
0 4 8
AGRICULTURAL AREA
FIG 4 2
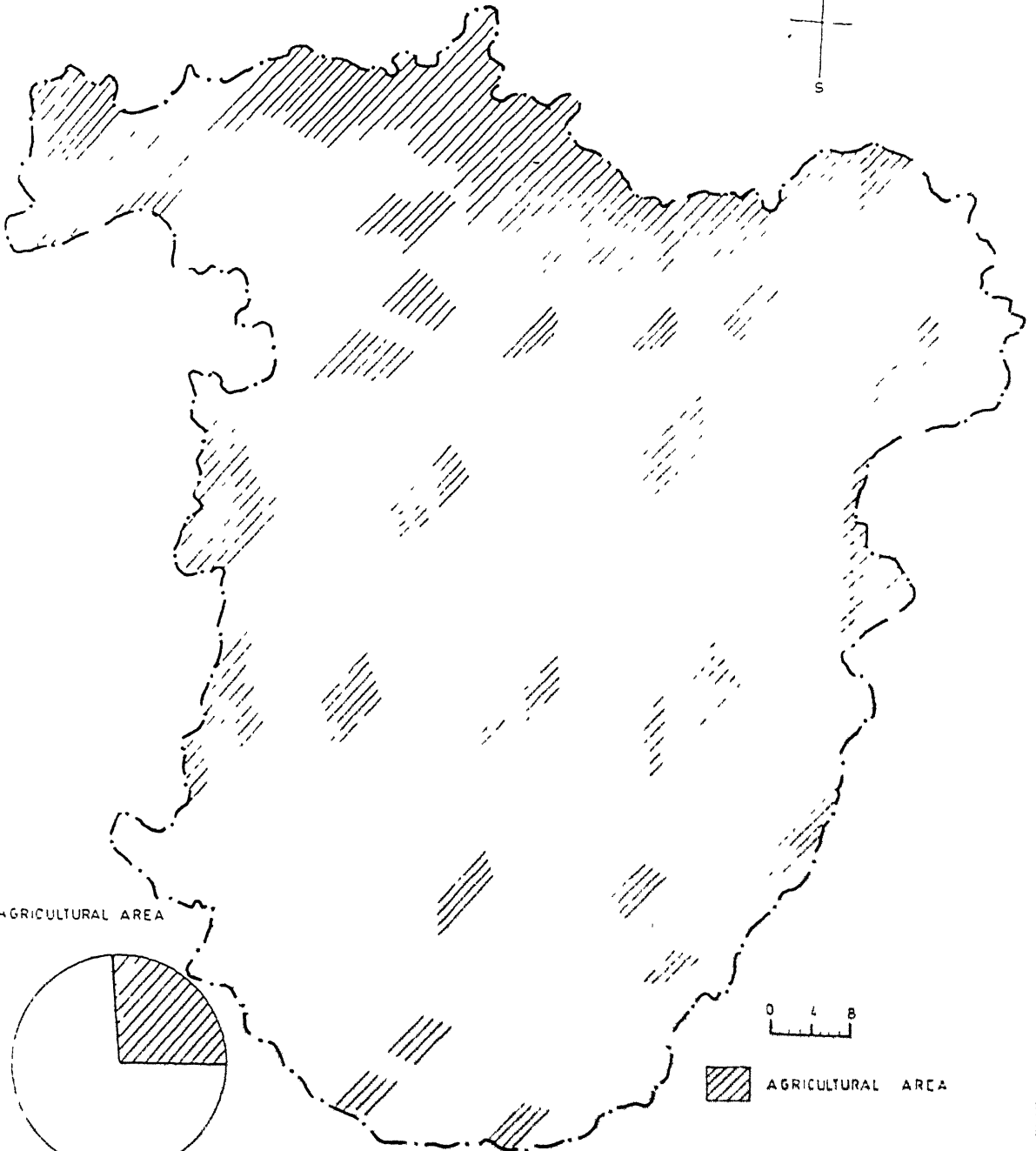
4.3 फसल प्रतिरूप

फसल प्रतिरूप के अन्तर्गत फसलों के स्थानिक एवं कालिक वितरण का अध्ययन किया जाता है। अनेक फसलों के स्थानिक और कालिक वितरण से बने स्वरूप को फसल प्रतिरूप कहते हैं।[12] फसल प्रतिरूप पर भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, तथा संस्थागत कारकों का प्रभाव पड़ता है। अध्ययन क्षेत्र के फसल प्रतिरूप वितरण के लिए कालिक पक्ष को अपनाया गया है क्योंकि इसमें स्थानिक प्रतिरूप का स्वत: समावेश हो जाता है। अध्ययन क्षेत्र में खरीफ एवं रबी दो मुख्य फसलें हैं। जायद फसल की खेती नहीं के बराबर होती है। जायद फसल कुछ सब्जियों एवं फलों तक ही सीमित है। अध्ययन क्षेत्र के खरीफ, रबी एवं जायद फसलों के अन्तर्गत समाहित कृषि क्षेत्र को तालिका 4.2 में प्रदर्शित किया गया है ।

(अ) खरीफ - फसल

जून-जुलाई में मानसून आगमन के समय बोई जाने वाली फसल को खरीफ फसल कहते हैं। चावल, गन्ना, कपास, ज्वार, बाजरा, मक्का, जूट, मूंगफली, तिल, तम्बाकू, मूंग, अरहर, उड़द तथा मोठ आदि खरीफ की फसलें हैं। अध्ययन क्षेत्र में 146153 हेक्टेयर क्षेत्र पर खरीफ की खेती की जाती है जो सकल बोये गए क्षेत्र का 57.24% तथा कृषि योग्य भूमि का 55.52% है। सकल बोये गए कृषि क्षेत्र के सर्वाधिक 80.76% भाग पर विकास खण्ड बभनी में कृषि होती है। खरीफ फसलों का क्षेत्रफल, सकल बोए गए क्षेत्र का अवनत क्रम में विकासखण्ड बभनी, म्योरपुर, दुद्धी, नगवां, चोपन, घोरावल, चतरा तथा राबर्ट्सगंज में क्रमश: 80.76%, 73.29%, 66.07%, 64.73%, 57.50%, 51.24%, 48.40%, तथा 46.40% है। पहाड़ी विकास खण्डों में उच्च प्रतिशत होने का कारण रबी फसल, के लिए आवश्यक सिंचाई व्यवस्था का अत्यन्त अभाव तथा मृदा संरचना है। इन विकास खण्डों में खरीफ फसलों में मक्के का प्रतिशत सबसे अधिक है। जबकि विकास खण्ड चतरा, राबर्ट्सगंज तथा घोरावल (जो अपेक्षाकृत समतल है) में धान की अच्छी खेती होती है। गन्ना, खरीफ एवं रबी दोनों फसल मौसम में होता है, इसलिए इसका विवरण अलग से प्रस्तुत किया गया है। सकल बोए गए कृषि क्षेत्र में धान का प्रतिशत 22.69, ज्वार का प्रतिशत 1.31, मक्का का प्रतिशत 5.34, तथा बाजरा का प्रतिशत 0.19 है (तालिका 4.3) ।

तालिका 4.2

विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल हेक्टेयर में 1991

विकासखण्ड	सकल बोया क्षेत्रफल हे0 मे	प्रतिशत	खरीफ फसल मे बोया गया क्षेत्रफल	प्रतिशत	रबी फसल में बोया गया क्षेत्रफल	प्रतिशत	जायद फसल में बोया गया क्षेत्रफल	प्रतिशत	गन्ना फसल का क्षेत्रफल	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1. घोरावल	62836	24.61	32200	51.24	29955	47.67	64	0.10	617	0.98
2. राबर्ट्सगज	46707	18 29	21594	46.23	24968	53.46	23	0.05	122	0.26
3 चतरा	21961	8.60	10630	48.40	11331	51.60	-	-	-	-
4. नगवां	17939	7.03	11612	64.73	6327	35.27	-	-	-	-
5. चोपन	46666	18.27	26833	57.50	19809	42.00	-	-	24	0.50
6. म्योरपुर	22069	8.64	16175	73.29	5890	26.69	4	0.02	-	-
7. दुद्धी	19134	7.50	12642	66.07	6489	33.91	3	0.02	-	-
8. बभनी	17729	6.95	14318	80.76	3411	19.24	-	-	-	-
ग्रामीण योग	255041	99.89	146004	57.25	108180	42.42	94	0.04	763	0.30
समस्त नगरीय योग	279	.11	149	53.41	130	46.45	-	-	-	-
जनपद योग	255320	100.00	146153	57.24	108310	42.42	94	0.04	763	0.30

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 45-46 एवं संगणित ।

DISTRICT SONBHADRA
CROPPING PATTERN
1990-91
N
S
AREA IN HECTARES
17000
19000
22000
46600
62836
0 4 8
KM
KHARIF
RABI
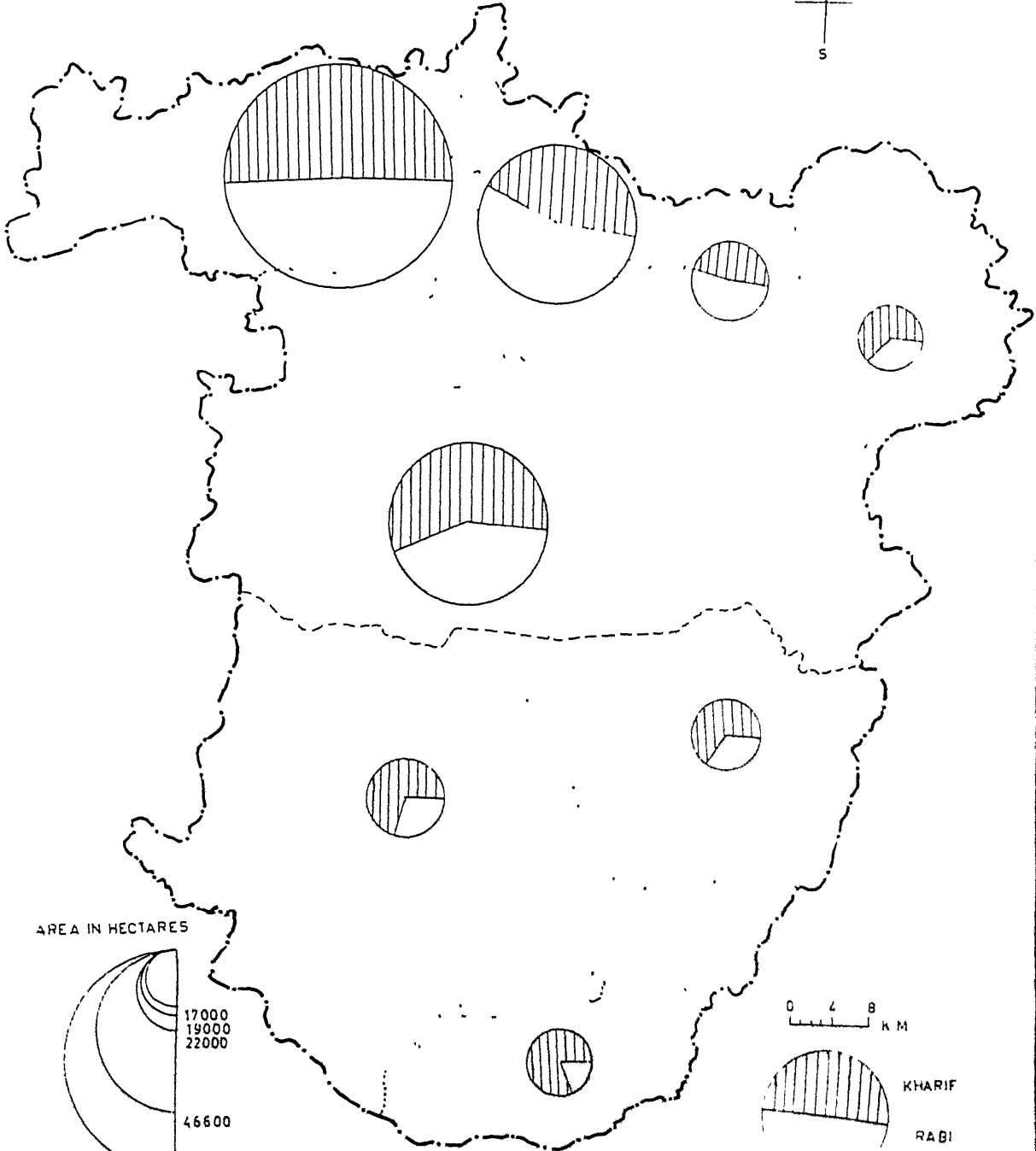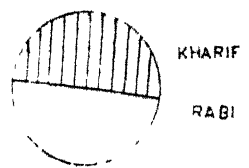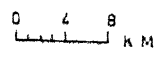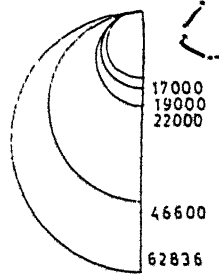
FIG 4.3

तालिका 4.3

खरीफ एवं रबी फसलों के अन्तर्गत प्रयुक्त भूमि का प्रतिशत वितरण 1990-91

फसल	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	सकल बोये गए 255320 हेक्टेयर का प्रतिशत
कुल खाद्यान्न	218016	85.39
कुल धान्य	189722	74.30
कुल दलहन	28294	11.08
कुल तिलहन	20234	7.92
धान	70469	27.69
गेहूँ	47803	18.72
जौ	22223	8.70
ज्वार	3351	1.31
मक्का	13630	5.34
बाजरा	496	0.19
गन्ना	763	0.30
आलू	522	0.20

स्रोतः सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992 से संगणित ।

(ब) रबी-फसल

रबी की फसलों की बुवाई अक्टूबर से दिसम्बर माह तक होती है। इन फसलों की कटाई मार्च-अप्रैल माह में होती है। इन फसलों की उत्पादकता सिंचाई पर निर्भर करती है। गेहूं, जौ, चना, मटर, सरसों, आलू, मसूर, अलसी तथा बरसीम आदि मुख्य रबी की फसलें हैं। अध्ययन क्षेत्र में खरीफ फसलों की तुलना में रबी के फसलों का कम विकास हुआ है । रबी फसलों के अन्तर्गत 108310 हेक्टेयर क्षेत्रफल आता है जो सम्पूर्ण कृषि योग्य भूमि का 41.14%, तथा सकल बोए गए कृषि क्षेत्र का 42.42% है। सकल बोए गए क्षेत्र का विकास खण्डवार रबी फसल में बोए गए क्षेत्र, अवनत क्रम में इस प्रकार हैं -

DISTRICT SONBHADRA
AREA UNDER DIFFERENT CROPS : 1990 - 91
HECTARES IN Thousands
250
200
150
100
50
0
FOODGRAINS
PULSE
OILSEEDS
PADDY
WHEAT
BARLEY
MAIZE
JWAR
BAJARA
SUGARCANE
POTATO
CROPS
Fig 4.4
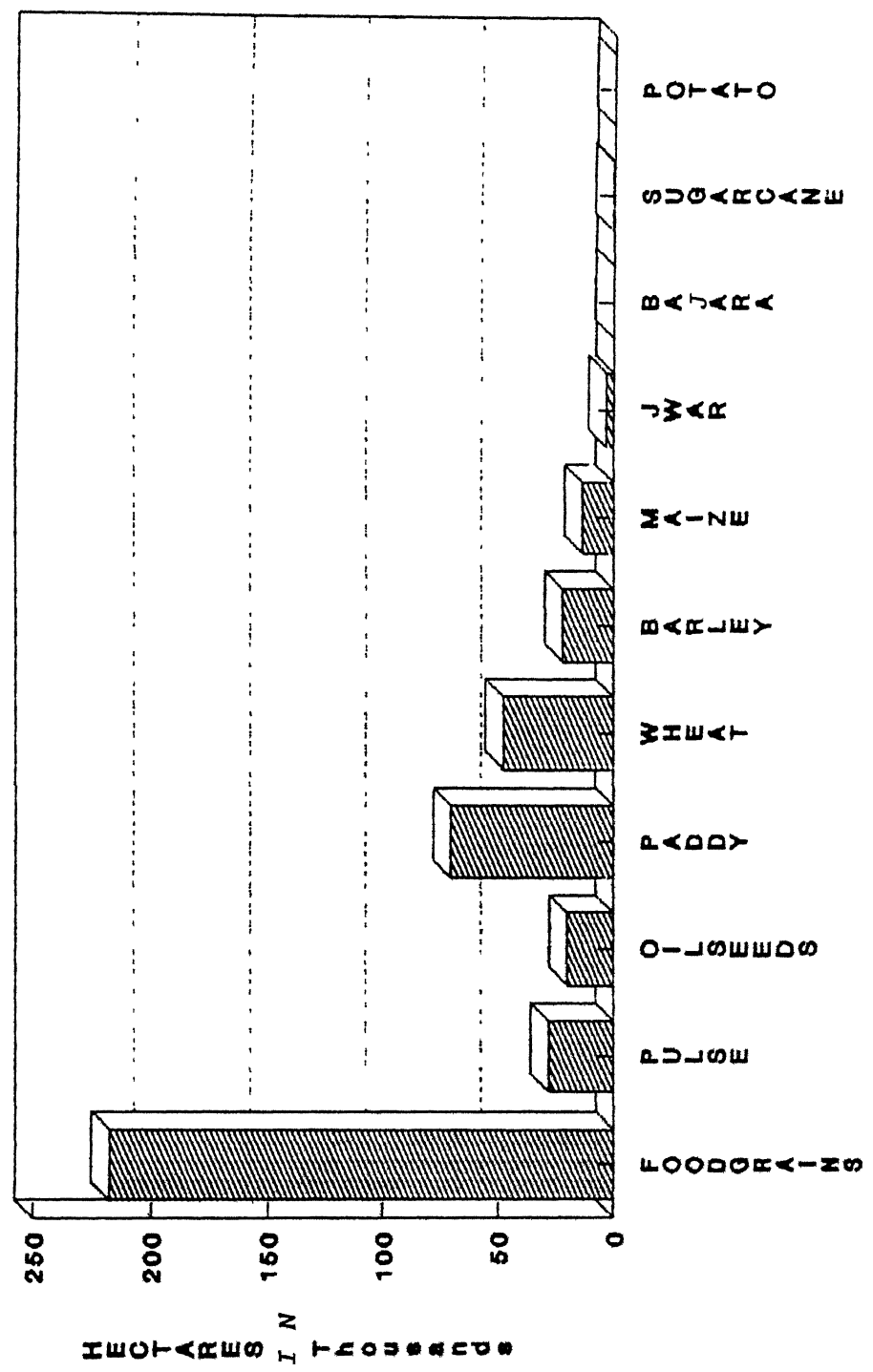
राबर्ट्सगंज (53.46%), चतरा (51.60%), घोरावल (47.67%), चोपन (42.00%), नगवां (35.27%), दुद्धी (33.91%), म्योरपुर (26.69%), तथा बभनी (19.24%) (तालिका 4.2)।

रबी की मुख्य फसल गेहूं है जो सकल बोए गए क्षेत्र के 18.72% भाग परबोई जाती है। जौ की बुवाई 8.70% भाग पर होती है (तालिका 4.3)। गेहूं का कृषि क्षेत्र अवनत क्रम में क्रमशः विकास खण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज, चतरा, चोपन, नगवां, दुद्धी, म्योरपुर तथा बभनी में हैं ।

तालिका 4.3 से स्पष्ट है कि खरीफ एवं रबी फसलों के अन्तर्गत सम्पूर्ण खाद्यान्नों, धान्यों, दलहनों तथा तिलहनों की बुवाई क्रमशः 218016, 189722, 28294 तथा 20234 हेक्टेयर पर की जाती है। सकल बोये गए कृषि क्षेत्र में खाद्यान्नों का प्रतिशत 85.39% है जबकि धान्यों, दलहनों एवं तिलहनों की बुवाई क्रमश· 74.30%, 11.08%, तथा 7.92% भाग पर होती है। गन्ने की बुवाई सकल बोये गए क्षेत्र के 0.30% भाग पर होती है। सम्पूर्ण गन्ना क्षेत्र का 80.87% विकास खण्ड घोरावल में, 15.99% राबर्ट्सगंज में तथा 3.15% चोपन में पाया जाता है। आलू का कृषि क्षेत्र भी अति न्यून (522 हेक्टेयर) है।

(स) जायद - फसल

खरीफ तथा रबी के ग्रीष्मकालीन संक्रमण काल में जायद की कृषि की जाती है, जिसमें उड़द, मूंग, खरबूज, तरबूज, ककड़ी तथा सब्जियों का उत्पादन किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में जायद फसल के अन्तर्गत केवल सब्जियों का उत्पादन होता है। इसके अन्तर्गत क्षेत्रफल अत्यधिक न्यून, 94 हेक्टेयर है, जो सकल बोए गए कृषि क्षेत्र का 0.04% है। सिंचाई सुविधा की कमी इस फसल को निरूत्साहित करती है। कुछ नगरीय क्षेत्रों के आस-पास क्षेत्रों में जायद फसलों का उत्पादन होता है ।

(द) औद्यानिक - फसल

औद्यानिक फसलों के अन्तर्गत उन फसलों को सम्मिलित किया गया है जिनका

उत्पादन उद्यानों के रूप में किया जाता है । खरीफ, रबी तथा जायद फसलों की तरह इसका कोई स्पष्ट विभाजन नहीं है। आधुनिक प्रौद्योगिकी ने इन्हें 'बारहमासा' (वर्ष भर) बना दिया है। इसके अन्तर्गत फलों, सब्जियों, मशालों तथा फूलों को सम्मिलित किया गया है। यद्यपि इनमें से कुछ को खरीफ, रबी एवं जायद फसलों के अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है। अध्ययन की सुविधा की द्रुष्टि से तालिका 4.4 में उल्लिखित फसलों को औद्यानिक फसल की संज्ञा दी गयी है ।

तालिका 4.4

औद्यानिक फसल 1992-93

प्रमुख फल/सब्जी/ मशाला तथा फूल	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	उत्पादन क्विंटल में	उत्पादकता क्विंटल / हेक्टेयर
1	2	3	4
1. फल			
आम	1303	7516.00	57.67
अमरूद	2115	11575.00	54.72
केला	10	40.00	40.00
नीबू प्रजाति	37	172.72	46.48
ऑवला देशी	727	3565.37	49.05
बेर	925	4916.37	53.15
अन्य	3327	13717.22	41.23
योग	8444	41502.25	49.15
2. सब्जियाँ			
आलू	529	6880.00	130.00
टमाटर	517	4924.42	95.25
बैंगन	435	3967.20	91.20
मिर्च	365	2110.68	57.20

1	2	3	4
गोभी प्रजाति	210	1745.10	83.10
कद्दू प्रजाति	874	5943.20	68.00
मटर	403	3304.60	82.00
भिण्डी	517	2505.00	50.00
अन्य	993	8172.39	80.30
योग	4847	39632.59	81.76
3. मशाला			
हल्दी	25	336.84	120.30
मिर्च	217	193.13	8.90
धनिया	435	506.92	11.6
मेथी	315	318.00	12.0
सौंफ	18	20.16	11.2
प्याज	503	6840.80	136.0
लहसुन	85	425.00	50.0
अन्य	103	640.66	62.20
योग	1706	9341.51	54.76
4. फूल			
गुलाब	3	2.46	8.20
गेंदा	4	4.04	10.10
रजनी गंधा	1	0.35	3.50
अन्य	2	1.44	7.20
योग	10	8.29	8.29

स्त्रोत :जिला उद्यान केन्द्र, राबर्ट्सगंज से एकत्रित एवं संगणित ।

तालिका 4.4 से स्पष्ट है कि औद्यानिक फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल बहुत कम है । अमरूद के बाग आम के बाग से अधिक हैं । केला का क्षेत्रफल मात्र 10 हेक्टेयर है। आलू और टमाटर का कृषि क्षेत्र लगभग समान है किन्तु उत्पादन तथा उत्पादकता में महत्वपूर्ण अन्तर है । मशालों में धनिया की खेती सबसे अधिक क्षेत्रफल पर की जाती है । अध्ययन क्षेत्र के 10 हेक्टेयर भूमि पर फूल उगाए जाते हैं, जिनमें गुलाब तथा गेंदा प्रमुख है । तालिका 4.4 में विस्तृत विवरण उल्लिखित है ।

4.4 फसल प्रतिरूप में परिवर्तन

तालिका 4.5 में 1960-61 तथा 1990-91 का फसल प्रतिरूप प्रदर्शित किया गया है जिससे स्पष्ट है कि इन वर्षों के अन्तराल में फसल प्रतिरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है । इस परिवर्तन के प्रमुख कारण शुद्ध बोये गए क्षेत्र में विस्तार, सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि तथा अन्य कृषि निष्टियों (इनपुट्स) एवं विधियों के विकास तथा कृषकों द्वारा उन्हें अपनाए जाने के जागरूकता के कारण संभव हो सका । सर्वाधिक परिवर्तन खाद्यान्नों में हुआ । अध्ययन क्षेत्र की चावल हमेशा प्रमुख फसल रही है । वर्ष 1990 - 91 में भी एक चौथाई से अधिक (27.69%) भाग पर बोई जाती है । सबसे अधिक गुणात्मक परिवर्तन चावल की फसल में

तालिका 4.5

फसल प्रतिरूप में परिवर्तन

फसल	सकल बोये गए क्षेत्र का प्रतिशत		परिवर्तन
	1960-61	1990-91	
चावल	17.31	27.69	+ 10.38
गेहूँ	11.68	18.72	+ 7.04
जौं	16.27	8.70	- 7.57
ज्वार	4.70	1.31	- 3.39
मक्का	11.60	5.34	- 6.26
बाजरा	2.60	0.19	- 2.41
गन्ना	- -	0.30	+ 0.30

दलहन	7.89	11.08	+ 3.19
तिलहन	4.90	7.92	+ 3.02
अन्य	23.05	18.75	- 4.3
योग	100.00	100.00	

स्त्रोत · सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 43-59 एवं जिला गजेटियर, मीरजापुर, 1960 से संगणित ।

ही हुआ है । 1960 - 61 में गेहूँ का स्थान तृतीय तथा जौ का स्थान द्वितीय था । 1990-91 में जौ के क्षेत्र का गेहूँ द्वारा अधिग्रहित कर लिया गया । गेहूँ का अब द्वितीय स्थान हो गया है । उल्लेखनीय है कि गेहूँ तथा जौ के उत्पादन क्षेत्र में क्रमशः धनात्मक व ऋणात्मक परिवर्तन लगभग समान रहा । मक्का के कृषि क्षेत्र में भी उल्लेखनीय परिवर्तन - 6.26% हुआ है जौ, ज्वार, मक्का तथा बाजरा में ऋणात्मक परिवर्तन हुआ है जिससे स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में मोटे अनाजों के अन्तर्गत क्षेत्र में कमी हो रही है । गन्ना की कृषि 1960-61 में नहीं होती थी । तालिका 4.5 को देखने से ऐसा लगता है कि गन्ना के अन्तर्गत कृषि क्षेत्र में विस्तार होगा । दलहन एवं तिहलन फसलों में लगभग समान धनात्मक परिवर्तन हुआ है ।

4.5 फसल - संयोजन

वृहद् जनसंख्या के पोषण के लिए कृषि में खाद्यान्नों की प्रधानता स्वाभाविक है किन्तु इसके साथ अन्य फसलें भी उगायी जाती हैं, इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न विकासखण्डों में विभिन्न फसल संयोजन पाया जाता है । फसल - संयोजन से कृषि की क्षेत्रीय विशेषताओं को समझने में सुविधा होती है । वीवर ने फसल - संयोजन के महत्व को बताते हुए कहा है कि - विभिन्न क्षेत्रों में फसलों के अलग - अलग महत्व को समझने के लिए फसल - संयोजन का महत्व आवश्यक है । साथ ही इस प्रकार के अध्ययन - जो स्वयं (सभी कारकों का) समाकलनात्मक सत्यता है - से फसल - संयोजन प्रदेश का प्रादुर्भाव होता है ।[13]

किसी इकाई क्षेत्र में उत्पन्न की जाने वाली प्रमुख फसलों के समूह को फसल - संयोजन कहते हैं जो वहाँ की प्राकृतिक - आर्थिक दशाओं तथा कृषक की सामाजिक एवं वैयक्तिक गुणों के अन्योन्य क्रिया का परिणाम होता है ।[14]

(अ) फसल - कोटि निर्धारण

फसल- कोटि निर्धारण के अन्तर्गत फसलों का सापेक्षिक महत्व निर्धारित किया जाता है जो सकल बोए गए क्षेत्र के परिप्रेक्ष्य में ज्ञात किया जाता है । प्रस्तुत अध्ययन में सकल बोये गए क्षेत्र से सभी फसलों के बोए गये क्षेत्र का प्रतिशत ज्ञात किया गया है । इसके पश्चात उसे अवनत क्रम में रखकर प्रत्येक विकासखण्ड की फसल - कोटि निर्धारित की गयी है । कोटि निर्धारित करते समय अध्ययन क्षेत्र के सकल बोए गए क्षेत्र का सम्बन्धित फसल का क्षेत्रफल यदि 1.00% से कम है तो छोड़ दिया गया है । यदि सम्बन्धित बोए गए फसल का क्षेत्रफल विकासखण्ड स्तर पर 1.00% से कम है किन्तु जनपद स्तर पर 1.00% से अधिक है तो उसे कोटि - निर्धारण में सम्मिलित किया गया है ।

उपर्युक्त मानदण्डों के आधार पर कोटि - निर्धारण के लिए कुल 10 फसलों (चावल, गेहूँ, मक्का, चना, जौ, मसूर, तिल, अरहर, अलसी तथा ज्वार) का चयन किया गया है । यद्यपि जनपद स्तर पर प्रथम कोटि चावल (27.69%) का, द्वितीय कोटि गेहूँ (18.72%) का, तृतीय कोटि जौ (8.70%) का चतुर्थ कोटि चना (6.05%) का तथा पंचम कोटि मक्का (5.34%) का है । किन्तु विकासखण्ड स्तर पर इसमें काफी विभिन्नता है । सामान्यतौर पर चावल प्रथम कोटि की फसल है । किन्तु विकासखण्ड राबर्ट्सगंज -चोपन तथा म्योरपुर में इसकी द्वितीय कोटि है । एक विकासखण्ड (राबर्ट्सगंज) में गेहूँ की प्रथम कोटि तथा तीन विकासखण्डों (घोरावल - चतरा तथा नगवां) में द्वितीय कोटि है । विकासखण्ड म्योरपुर व दुद्धी में इसकी षष्ट्म कोटि है । विकासखण्ड म्योरपुर में जौ प्रथम कोटि की फसल है । विकासखण्ड दुद्धी व बभनी में मक्का द्वितीय कोटि की फसल है । अलसी को विकासखण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज, चतरा तथा नगवां में क्रमशः तृतीय, चतुर्थ, तृतीय तथा तृतीय कोटि प्राप्त है, जबकि शेष विकासखण्डों मेंमहत्वपूर्ण कोटि नहीं प्राप्त है । तिल, ज्वार, मसूर तथा अरहर को सामान्यतः निम्न कोटि प्राप्त है । उल्लेखनीय है कि मोटे अनाजों को अपेक्षाकृत उच्च कोटि प्राप्त है (तालिका - 4.6) ।

तालिका 4.6

फसल कोटि, जनपद सोनभद्र वर्ष, 1990-91

फसलों की कोटियां एवं उनका एकल बोये गए क्षेत्र से प्रतिशत

विकासखण्ड		1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1.	घोरावल	चा0 38.14	गे0 28.52	अ0 5.87	च0 5.04	जौ0 2.98	म0 2.76	मसू0 1.79	अर0 0.92	ज्वा0 0.62	ति0 0.46
2.	राबर्ट्सगंज	गे0 45.41	चा032.41	च0 5.29	अ0 5.22	मसू0 2.72	जौ 1.80	म0 0.92	ज्वा0 0.76	अर0 0.60	ति0 0.13
3.	चतरा	चा0 46.88	गे0 30.11	अ0 8.08	च0 2.78	जौ. 2.60	मसू0 2.41	म0 0.90	अर0 0.82	ज्वा0 0.24	ति0 0.23
4.	नगवां	चा0 37.70	गे0 12.92	अ0 7.06	जौ 6.48	म0 5.00	अर0 1.91	च0 1.78	ति0 1.30	मसू0 1.11	ज्वा0 0.66
5.	चोपन	च0 23.81	चा0 18.92	म0 15.05	गे0 14.29	ज्वा0 3.66	अर0 3.65	अ0 3.32	ति0 2.45	जौ 1.82	मसू0 0.72
6.	म्योरपुर	जौ 29.15	चा0 13.49	म0 10.81	ति0 6.58	ज्वा0 4.44	गे0 3.97	च0 1.72	अर0 1.26	अ0 0.98	मसू0 0.23
7.	दुद्धी	चा0 20.85	म0 16.50	जौ0 15.45	च0 9.11	ति0 4.17	गे0 3.80	अर0 2.73	अ0 1.60	मसू0 0.62	ज्वा0 0.37
8.	बभनी	चा0 19.69	म0 16.67	जौ 14.71	ति0 8.30	गे0 7.45	अर0 4.08	च0 1.65	अ0 1.20	ज्वा0 0.76	मसू0 0.14

स्रोतः साख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 43-55 से संगणित ।

चा0 चावल
गे0 गेहूं
म0 मक्का
मसू0 मसूर
अ0 अलसी
अर0 अरहर
ति0 तिल
जौ0 जौ
ज्वा0 ज्वार
च0 चना

(ब) फसल - संयोजन प्रदेश

फसल - संयोजन प्रदेश का निर्धारण सांख्यिकीय विधियों पर आधारित है । जानसन [15], थामस,[16] वीवर[17] तथा अय्यर[18] आदि विद्वानों द्वारा निर्धारित सांख्यिकीय विधियाँ महत्वपूर्ण हैं । इसके अतिरिक्त औद्योगिक संरचना के विश्लेषण में दोई[19] द्वारा अपनायी गयी विधि तथा नगरों के कार्यात्मक वर्गीकरण में नेल्सन [20] द्वारा अपनायी गयी सांख्यिकीय विधि भी काफी महत्वपूर्ण है । इनमें वीवर तथा दोई द्वारा अपनायी गयी सांख्यिकीय विधियां सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं तथा कुछ सुधारों के साथ अनेक विद्वानों द्वारा अपनायी जा रही हैं । किन्तु प्रस्तुत अध्ययन में इन विद्वानों द्वारा प्रतिपादित विधियों को नहीं अपनाया गया है, क्योंकि इनकी विधियाँ वहीं प्रयोज्य हो सकती हैं जहाँ सकल बोए गए क्षेत्र के 50% क्षेत्र के अन्तर्गत ही दो या दो से अधिक फसलों का प्रतिनिधित्व हो ।

अत. अध्ययन क्षेत्र को स्पष्ट और उचित फसल - संयोजन में विभक्त करने के लिए अलग विधि को अपनाया गया है । यदि किसी विकासखण्ड में उसके सकल बोये गए भाग के 50 प्रतिशत से अधिक भार पर किसी फसल का अकेला भाग है या अकेला आधिपत्य है तो उसे एक फसली साहचर्य प्रदेश के अन्तर्गत रखा गया है । इसके साथ ही विकासखण्डों के फसल - संयोजन में उतनी ही फसलों को सम्मिलित किया गया है जिनके द्वारा बोए गए क्षेत्रों का योग 75% तक है । उक्त विधि के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन क्षेत्र मे द्विफसली से लेकर 10 फसली तक चार प्रकार के फसल - संयोजन प्रदेश निर्धारित हुए हैं।मानचित्र 4.5 से स्पष्ट है कि एक फसली संयोजन किसी भी विकास खण्ड में नहीं है । विकासखण्ड चतरा में द्विफसली संयोजन है तथा घोरावल एवं राबर्ट्सगंज में चार फसली संयोजन है । विकासखण्ड दुद्धी में सात फसली संयोजन तथा म्योरपुर, चोपन एवं बभनी में दस फसली संयोजन है ।

4.6 फसल - गहनता

कृषि उपज को बढ़ाने के लिए फसल - गहनता बढ़ाना अनिवार्य है । बढ़ती आबादी के भरण - पोषण एवं सीमित कृषि - क्षेत्र की समस्या का समाधान फसल गहनता से ही सम्भव है । फसल - गहनता का अर्थ है - एक ही खेत पर एक वर्ष में अधिक - से - अधिक बार फसलों को उगाना । फसल - गहनता से भूमि उपयोग की तीव्रता का ज्ञान होता

DISTRICT SONBHADRA
CROP-COMBINATION REGION 1990-91
N
S
RWa G
WRGa
RW
RWMma ATB JG
RWMma ATBJG
RMBGTWA
RWMma ATBJG
RWMma ATBJG
RICE R
WHEAT W
MASOOR m
MAIZE M
ALSI a
ARHAR A
TIL T
BARLEY B
JWAR J
GRAM G
TWO CROP COMBINATION
FOUR CROP COMBINATION
SEVEN CROP COMBINATION
TEN CROP COMBINATION
0 4 8 KM
FIG. 4 5
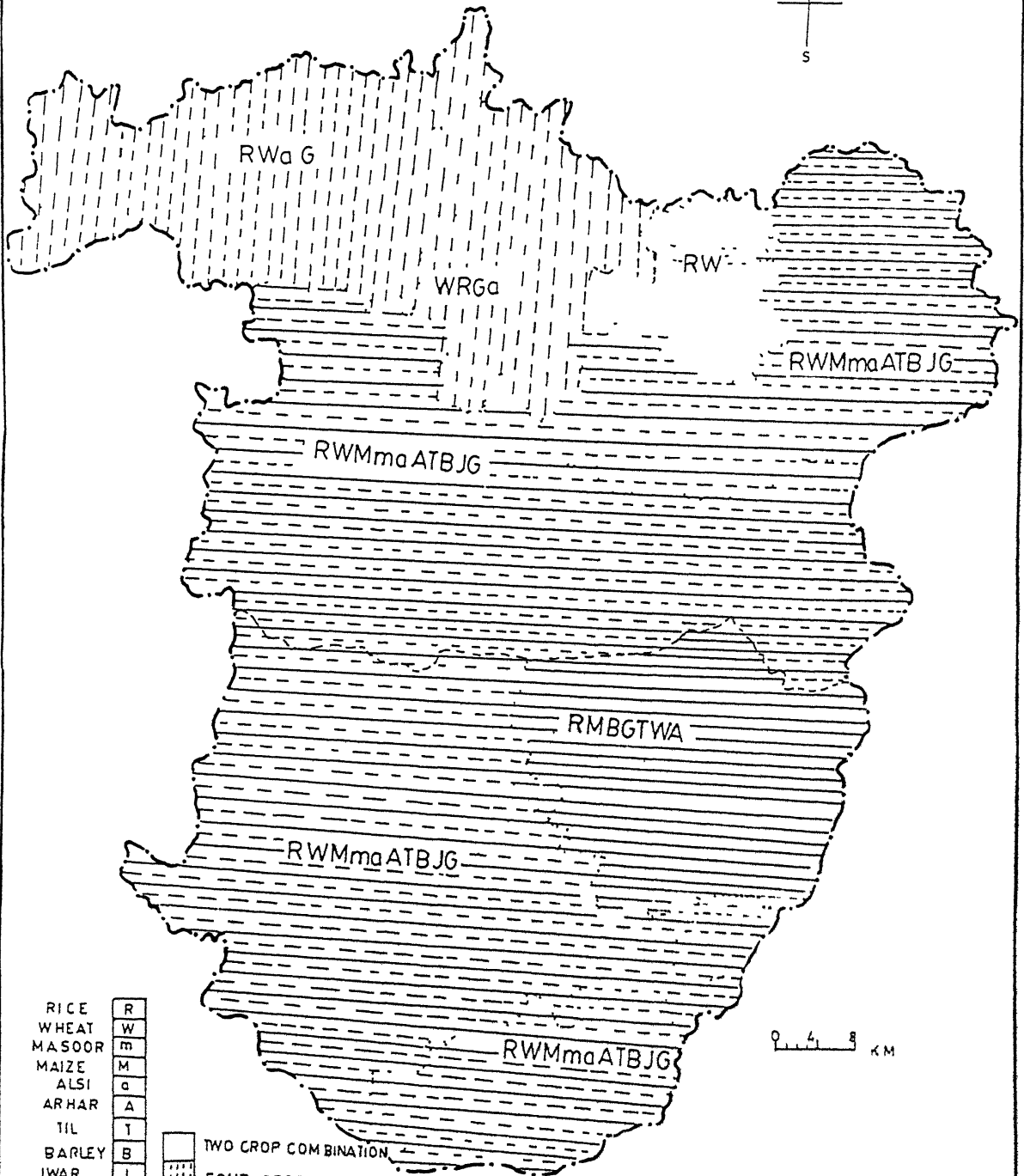
है। किसी भी क्षेत्र मे फसल गहनता को हरित क्रान्ति से बढ़ायी जा सकती है। प्रस्तुत अध्ययन मे फसल गहनता सूचकांको की गणना निम्न सूत्र के माध्यम से की गयी है -

$$\text{फसल - गहनता सूचकांक} = \frac{\text{कुल बोया गया क्षेत्र}}{\text{शुद्ध बोया गया क्षेत्र}} \times 100$$

तालिका 4.7

फसल - गहनता सूचकांक

विकास खण्ड	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	फसल-गहनता सूचकांक
घोरावल	62836	39464	159 22
राबर्ट्सगंज	46707	28442	164 22
चतरा	21961	15330	143.25
नगवां	17939	12118	148.04
चोपन	46666	33885	137.72
म्योरपुर	22069	19499	113 18
दुद्धी	19134	16104	118.82
बभनी	17729	15293	115 93
ग्रामीण योग	255041	180135	141.58
नगरीय योग	279	219	127.39
जनपद योग	**255320**	**180354**	**141.56**

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992 से संगणित ।

DISTRICT SONBHADRA
CROP INTENSITY 1990-91
N
S
CROP INTENSITY
HIGH >150
MODERATE 125-150
LOWER 100-125
0 4 8 KM
FIG. 4.6
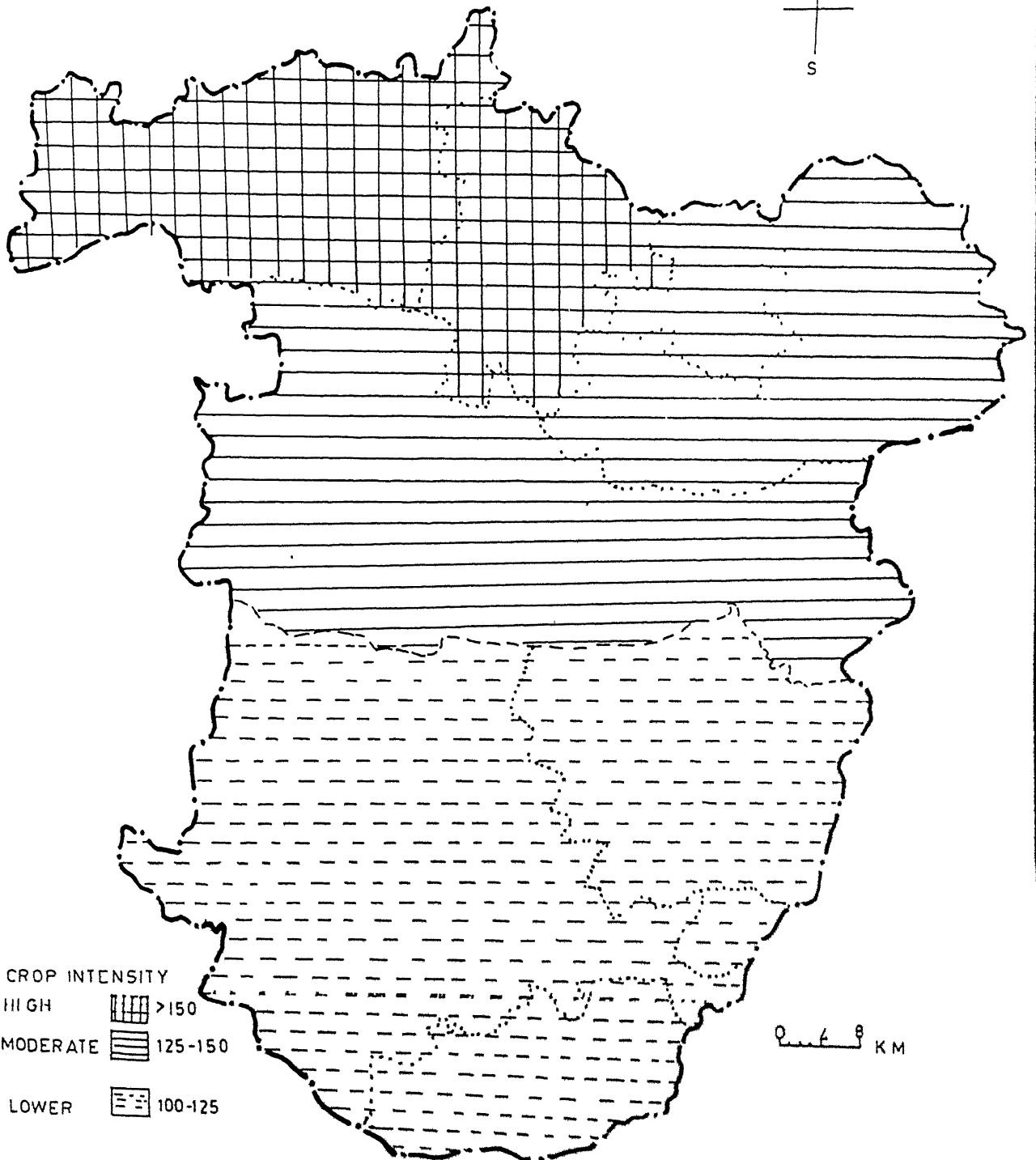
अध्ययन क्षेत्र में औसत फसल-गहनता सूचकांक 141 56 है। किन्तु विकासखण्ड स्तर पर इसमें भिन्नता है। विकासखण्ड राबर्ट्सगंज में फसल गहनता 164.22 तथा घोरावल मे 159 22 है अर्थात 150 से अधिक फसल गहनता वाले केवल दो विकासखण्ड नगवा, चतरा तथा चोपन है। 100 से 125 फसल-गहनता के अन्तर्गत भी तीन विकास खण्ड दुद्धी (118.82), बभनी (115.93) तथा म्योरपुर (113.18) है (मानचित्र 4.6) ।

4.7 सिंचाई

कृषि के लिए जल की आवश्यकता होती है, जिसकी पूर्ति प्राकृतिक तथा कृत्रिम साधनों द्वारा होती है। सिंचाई का प्राकृतिक साधन वर्षा है। वर्षा के अभाव तथा अनिश्चितता के कारण कृत्रिम साधनों द्वारा जल उपलब्ध कराना ही सिंचाई कहलाता है। मानसूनी वर्षा की अनिश्चितता, अनियमितता, असामयिकता तथा विषमता सिंचाई की आवश्यकता को अनिवार्य बना देती है ।

अध्ययन-क्षेत्र में न केवल सिचाई साधनों का वरन सिचाई स्रोतों का भी अभाव है। शुद्ध बोये गए क्षेत्र का 28.81% भाग ही शुद्ध सिंचित क्षेत्र (तालिका 4.8) है। रिहन्द जलाशय के जल का उपयोग सिचाई के लिए नहीं किया जाता है क्योंकि अध्ययन क्षेत्र के सम्पूर्ण जल विद्युत एवं ताप विद्युत गृहों का आधार यहीं जलाशय है। दो प्रमुख बाध कर्मनाशा नदी पर नगवां-सिलहट बांध (जो एक दूसरे से जुड़े हुए हैं) (विकासखण्ड नगवां) तथा घाघर नदी पर धंधरौल बांध (विकासखण्ड चतरा) से ही मुख्यत सिंचाई होती है। नगवा बांध से सिलहट तथा धंधरौल बांध में भी जल की आपूर्ति की जाती है। नगवा एव सिलहट बांध का जलग्रहण क्षेत्र विस्तृत है तथा ये दोनों बाध सलग्न है । सिलहट तथा धधरौल बाध का निर्माण 1918 में पूर्ण हुआ जबकि नगवां बांध 1948 में तैयार हुआ। नगवा बांध की ऊँचाई में वृद्धि की जा रही है,शीघ्र ही रबी फसल में भी सिंचाई सुविधा उपलब्ध हो जाएगी। उल्लेखनीय है कि धधरौल बांध से निकली नहरों द्वारा अधिकाश सिंचित क्षेत्र मीरजापुर तथा वाराणसी जिलो मे हैं ।

विकास खण्ड राबर्ट्सगंज, चतरा एवं नगवां मे उपर्युक्त बांधों के अतिरिक्त अनेक छोटी-छोटी बन्धियां हैं जिनसे 3-4 किलोमीटर नहर निकाल कर या सीधे बांध से खेतों

तालिका 4.8
सिंचाई

क्रमसंख्या	विकासखण्ड	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल हेक्टेयर में	शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल प्रतिशत में	नहर	नलकूप	कूप	तालाब/झील	अन्य
1.	घोरावल	39464	48.39	82.1	1 6	0.8	9.1	6.4
2	राबर्ट्सगंज	28442	54.57	70 9	1.1	0.6	27.4	0 9
3.	चतरा	15330	53.65	66 5	1.7	1.2	28.8	1.8
4.	नगवां	12118	15.60	44.9	-	2.7	45 5	6.9
5	चोपन	33885	0.82	23 3	5.4	4.3	43.3	23.7
6.	म्योरपुर	19499	0 94	53.6	-	13.1	9.8	23.5
7	दुद्धी	16104	7.63	66.1	-	21.7	-	12.2
18	बभनी	15293	0.44	-	-	-	-	100.0
	ग्रामीण योग	180135	25 81	72.7	1.3	1.6	20.1	4 2
	नगरीय योग	219	23 29	-	-	7 8	-	99.2
	जनपद योग	**180354**	**25.81**	**72.7**	**1.3**	**1.5**	**20.1**	**4.3**

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 47-48.

DISTRICT SONBHADRA
IRRIGATION 1990-91
N
S
0 4 8
KM
IRRIGATED AREA IN HECTARES
0
100
200
300
400
SOURCE OF IRRIGATION
CANAL
WELL & TUBE WELL
TANK
OTHERS
FIG. 47
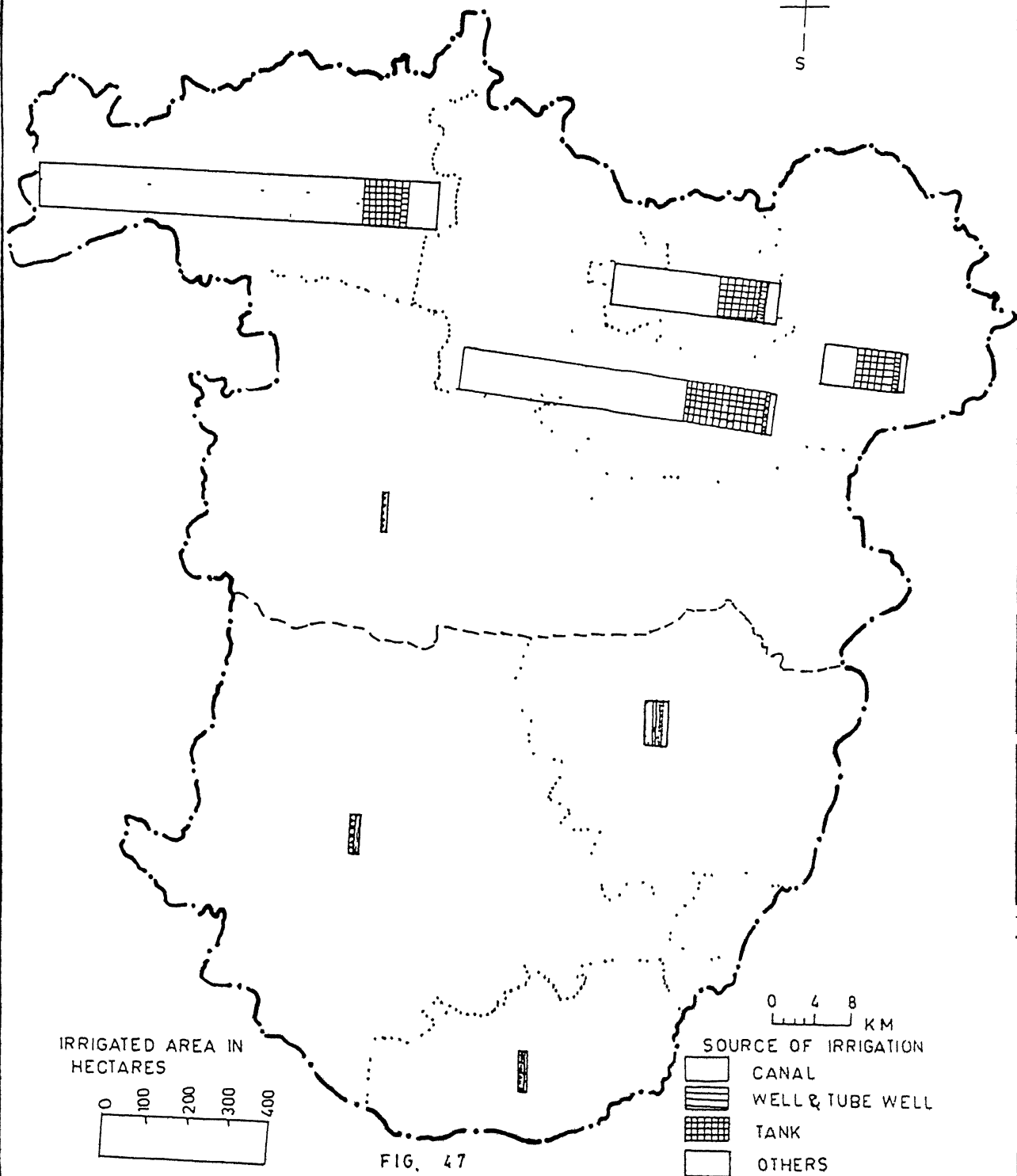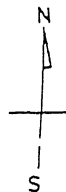
तक जल पहुँचाया जाता है। चोपन के पास सोनपम्प नहर से, जो बारह पम्पों की क्षमता वाली है, विकासखण्ड चोपन में खरीफ एव रबी दोनों फसलो की सिचाई की जाती है। व्यक्तिगत स्तर पर तालाब एव पोखरो से सीमित स्तर पर खरीफ फसलों की सिचाई होती है। अध्ययन क्षेत्र के पठारी स्वरूप तथा जल स्तर अत्यधिक निम्न होने के कारण नलकूप एवं कूप से बहुत कम क्षेत्रों पर सिचाई की जाती है। विकासखण्ड राबर्ट्सगज, चतरा तथा घोरावल के बेलन घाटी तथा चोपन के सोनघाटी क्षेत्र मे सीमित स्तर पर नलकूप द्वारा सिंचाई की सम्भावना है ।

अध्ययन क्षेत्र के शुद्ध बोए गए क्षेत्र के चौथाई भाग पर ही सिचाई होती है। इन सिंचित क्षेत्रो मे से 72.72% भाग पर नहरों से, 13% भाग पर नलकूपों से, 1 5 भाग पर कूपो से, 20 1% भाग पर तालाबों व झीलों से तथा 4.3% भाग पर अन्य साधनों से सिंचाई होती है। शुद्ध बोये गए क्षेत्र के विकास खण्ड राबर्ट्सगज मे 54 57% भाग पर, चतरा मे 53 65% भाग पर, घोरावल में 48 39% भाग पर, नगवां मे 15.60% भाग पर दुद्धी मे 7 63% भाग पर सिंचाई होती है। विकास खण्ड चोपन, म्योरपुर तथा बभनी का सिंचित क्षेत्र एक प्रतिशत से भी कम है (तालिका 4.8)। विकास खण्ड बभनी मे नहरों, नलकूपों, कूपों तथा तालाब आदि से सिचाई नही होती है। विकास खण्ड नगवा म्योरपुर तथा दुद्धी में भी एक भी नलकूप नहीं है (तालिका 4.8)। उल्लेखनीय है कि सिचाई की अधिकांश सुविधाएं खरीफ फसलो को ही उपलब्ध है। बांधों का जल स्रोत वर्षा है इसलिए रबी फसलों के लिए सिंचाई उपलब्ध नहीं हो पाती है। सोन पम्प नहर से सीमित स्तर पर ही रबी फसलो की सिंचाई होती है। भूमिगत जल स्तर, ग्रीष्म ऋतु में अत्यधिक नीचे चला जाता है जिस कारण इससे रबी फसलो के सिंचाई की सम्भावना समाप्त हो जाती है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि के पिछडेपन का प्रमुख कारण सिचाई सुविधाओं का अभाव है ।

4.8 जोतों का आकार

जोत का आशय उस समग्र भूमि से है जिसके समग्र या आंशिक भाग पर कृषि उत्पादन एक तकनीकी इकाई के तहत केवल एक व्यक्ति या कुछ अन्य व्यक्तियों के साथ किया जाता है। तकनीकी इकाई से तात्पर्य उत्पादन के अन्य साधन तथा उनके प्रबन्धन

से है। [21] जोतो के आकार से मानव-भूमि सम्बन्ध का ज्ञान होता है।

तालिका 4.9

जनपद सोनभद्र में जोतों की संख्या एवं आकार

1991-92

आकार (हेक्टेयर में)	संख्या	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत
1	2	3	4	5
1 सीमान्त(1 से कम)	59129	52.19	24802	9.71
2 लघु (1 से 2)	24955	22.09	35930	14.07
3. उपमध्यम्(2 से 3)	9889	8.73	24265	9 50
4 मध्यम् (3 से 5)	9030	7.97	34808	13 63
5. वृहद् (5 से अधिक)	10293	9.08	135515	53 08
योग	**113296**	**100.00**	**255320**	**100.00**

स्रोत : एकीकृत जिला योजना, जनपद सोनभद्र, 1992-93, पृष्ठ 8 एवं उससे सगठित ।

तालिका 4.9 से ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में कुल जोतो की संख्या 113296 है जिसके अन्तर्गत 255320 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र सम्मिलित है। अध्ययन क्षेत्र मे 1 हेक्टेयर से कम क्षेत्रफल की सीमान्त जोतों की संख्या सर्वाधिक (52 19%) है किन्तु इसके अन्तर्गत 9.71% कृषि क्षेत्र ही सम्मिलित है। 1 से 2 हेक्टेयर वाली लघु जोतों के अन्तर्गत 22.09% जोते और 14.07% कृषि क्षेत्र सम्मिलित है। 2 से 3 हेक्टेयर क्षेत्रफल की उपमध्यम जोतें तथा 3 से 5 हेक्टेयर क्षेत्रफल की मध्यम जोतें के अन्तर्गत क्रमश कुल जोतों का 8.73 व 7.97 प्रतिशत तथा कृषि क्षेत्र का 9.50 व 13 63 प्रतिशत भाग सम्मिलित है। 5 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्रफल वाली वृहद् जोतों की संख्या 9 08 प्रतिशत है किन्तु

DISTRICT SONBHADRA
LAND HOLDINGS
LAND HOLDINGS
AREA
PERCENT OF HOLDINGS AND AREA
60
50
40
30
20
10
00
<1
1-2
2-3
3-5
>5
SIZE IN HECTARES
FIG. 4.8
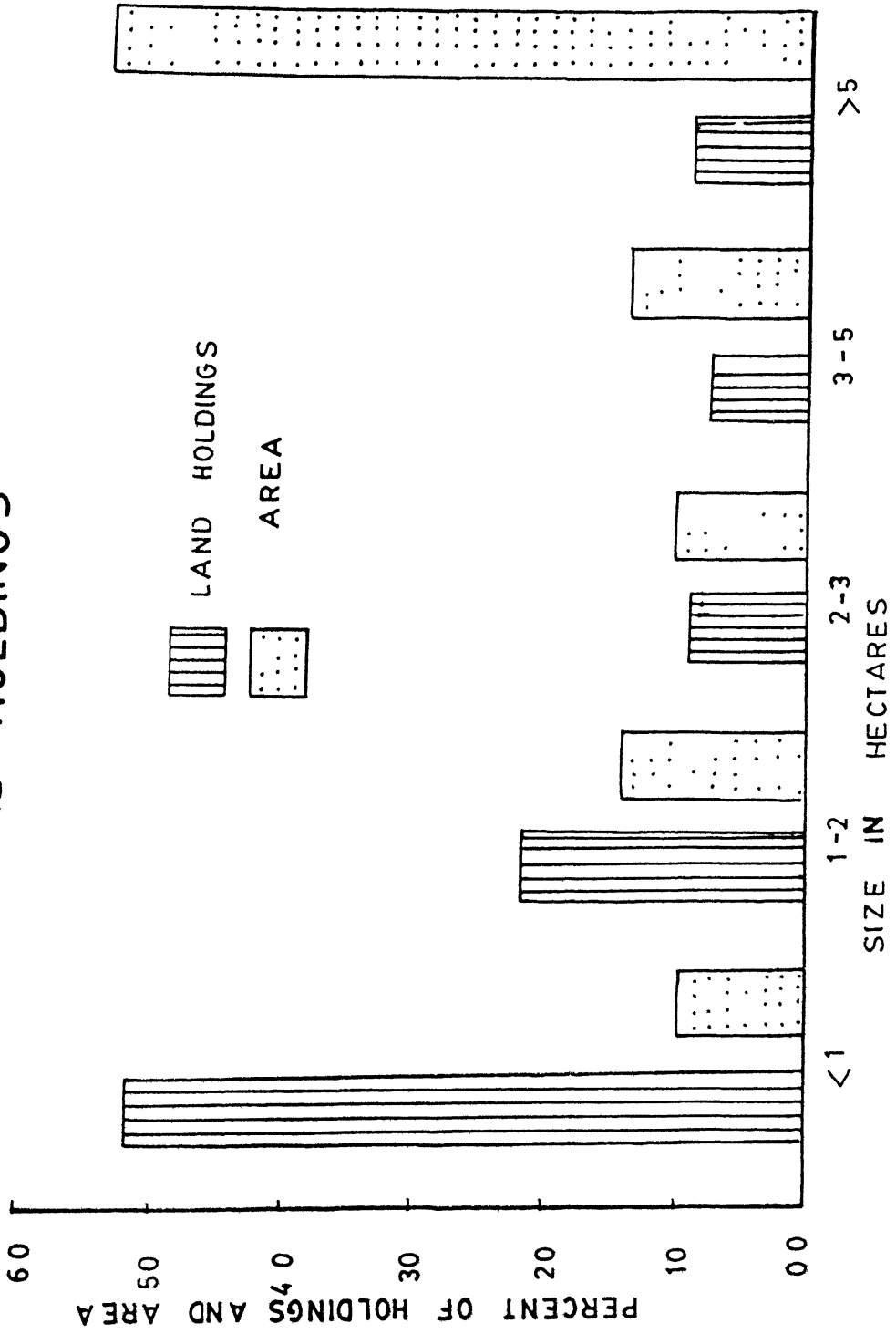
किन्तु इसके अधीन 53.08% कृषि क्षेत्र सम्मिलित है। स्पष्टतः अध्ययन क्षेत्र में सीमान्त एवं लघु जोतों की अधिकता है किन्तु अधिकांश कृषि क्षेत्र वृहद् जोतों के अन्तर्गत है ।

4.9 कृषि का यन्त्रीकरण

प्राय. अल्पविकसित देशों में यह समझा जाता है कि आर्थिक विकास और औद्योगिक विकास को एक ही संदर्भ में विचार करना चाहिए। वस्तुतः कृषि का पिछड़ापन आर्थिक तथा औद्योगिक विकास की धीमी गति का ही परिणाम है।[22] वास्तव मे अर्थव्यवस्था के अन्य प्रक्षेत्रों के विकास के लिए कृषि-विकास एक आधार है।[23] कृषि विकास के सम्बन्ध में तैयार एक नीति के अन्तर्गत अधिकाधिक क्षेत्र मे अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीजों का उत्पादन, सिंचाई सुविधाओं का विकास; विशेषकर भूमिगत जल-स्रोतें का उपयोग, उर्वरको के पर्याप्त एवं संतुलित उपयोग, आवश्यकता पर आधारित पौध संरक्षण उपायो को अपनाया जाना और कृषि के काम आने वाली वस्तुओं, जिसमें संस्थागत एवं अन्य वित्तीय संगठनों से प्राप्त होने वाला ऋण भी सम्मिलित हैं, कि सुव्यवस्थित एवं नियमित आपूर्ति आते हैं।[24] भारतीय कृषि को यन्त्रीकृत करके रूपान्तरित करने का श्रेय हरित क्रान्ति को है। अमरीकी विद्वान विलियम गैड ने सर्वप्रथम हरित क्रान्ति शब्द का प्रयोग करते हुए अधिक उपज देने वाली किस्मों के प्रयोग का उल्लेख किया था। यह जैव प्राविधिकी के विकास का आरम्भिक चरण था।[25]

अध्ययन क्षेत्र में एच0वाई0पी0 (हाई यील्डीग वेरायटीज) किस्म के बीजो के प्रयोग के आंकड़े उपलब्ध नही है। किन्तु इन बीजों का प्रयोग सीमित स्तर पर सीमित फसलों में ही हो रहा है। क्योंकि इसके लिए आवश्यक अन्य सुविधाओं का अभाव है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में 1100 ट्रैक्टर कृषि कार्य हेतु हैं, इनमे से मात्र 37 ट्रैक्टर तहसील दुद्धी में है। लकड़ी के देशी हलों का प्रयोग व्यापक पैमाने पर होता है। सम्प्रति 103588 लकड़ी के देशी हल, 2821 लोहे के हल तथा 4042 उन्नति हैरों तथा कल्टीवेटर का प्रयोग हो रहा है। कुल थ्रेसिंग मशीन की संख्या 1373, स्प्रेयर की संख्या 127 तथा उन्नत बोआई यन्त्र की संख्या 6563 है।[26] तहसील दुद्धी में अभी-भी उन्नत बोवाई यन्त्र, स्प्रेयर तथा हैरो व कल्टीवेटर का प्रयोग नहीं हो रहा है। उपर्युक्त तथ्यों से कृषि में यन्त्रीकरण के अभाव की स्पष्ट जानकारी प्राप्त हो जाती है । कृषि को प्रोन्नति करने मे विभिन्न प्रकार के बैंकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। किन्तु अध्ययन क्षेत्र में बैंकों की नितान्त कमी है(मानचित्र 4.9 व तालिका 3.1) ।

DISTRICT SONBHADRA
SPATIAL PATTERN OF BANKING FACILITIES
N
S
EXISTING (1990 91) PROPOSED
LAND DEVELOPMENT BANKS
DISTRICT COOPERATIVE BANKS
OTHER NATIONALIZED BANKS
NATIONAL GRAMIN BANKS
0 4 8 KM
FIG 4.9
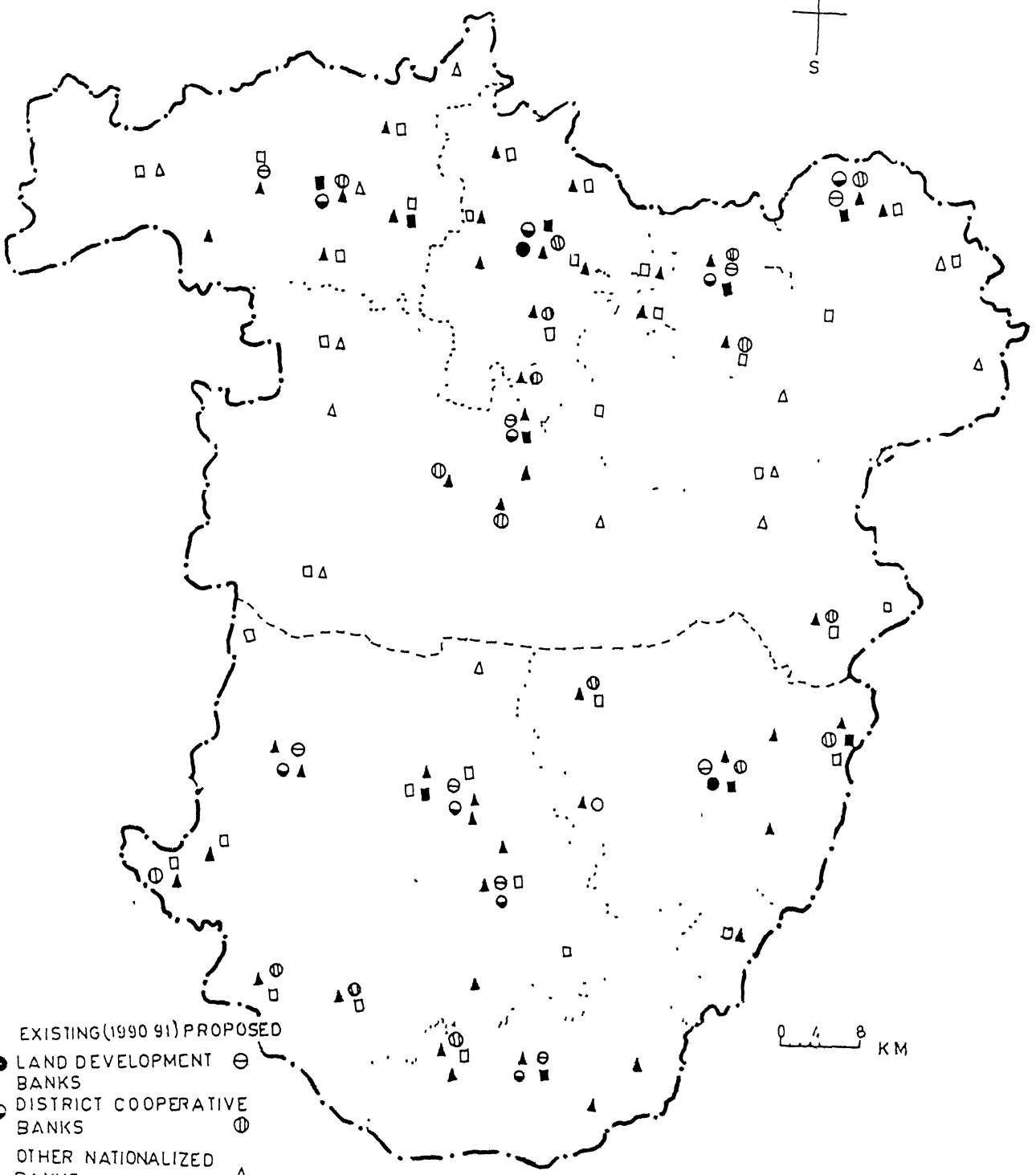
अध्ययन क्षेत्र में 1990-91 में कुल 5898 मीट्रिक टन उर्वरको का वितरण किया गया। इसमें से विकासखण्ड राबर्ट्सगंज, घोरावल, चतरा, नगवां, दुद्धी, बभनी, चोपन तथा म्योरपुर मे क्रमश 2580, 2182, 501, 185, 146, 139, 97 तथा 68 टन कुल उर्वरको का वितरण हुआ।[27] उर्वरको के प्रयोग की दृष्टि से विकास खण्ड राबर्ट्सगज व घोरावल की स्थिति को ही संतोष जनक कहा जा सकता है। कृषि क्षेत्र के चौथाई भाग पर ही सिंचाई होती है इसलिए भी अध्ययन क्षेत्र में हरित क्रान्ति का सपना साकार नहीं हुआ है ।

4.10 पशुपालन

पशुपालन का विकास विविधीकृत कृषि अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न अंग होता है। पशुधन की संख्या का प्रभाव न केवल कृषि के कुल उत्पादन पर अपितु खेत पर भी पड़ता है। पशुधन की विभिन्न नस्लों मे चौपाए ही अधिक प्रमुख हैं, केवल इसलिए नहीं कि इनकी सख्या अधिक है, बल्कि इसलिए भी कि ये पशु कृषि कार्यों और किसान की सम्पन्नता मे अधिक सहयोग देते है। कृषि के लगभग सभी कार्यों के लिए उपलब्ध शक्ति पशु ही हैं। खेत जोतना, खाद लादना, पानी प्राप्त करना, फसल की दांय (मड़ाई) देना और यातायात प्रमुख कृषि कार्य है, जो पशु प्रमुख रूप से करते हैं। माँस, खाल, ऊन, बाल और मुर्गीपालन को छोडकर पशुधन के अन्य सभी कामों मे चौपायों का महत्वपूर्ण स्थान है। पशुओं का गोबर कृषि क्षेत्र की खाद की महत्वपूर्ण आवश्यकता की पूर्ति करता है। ईधन के अन्य साधन उपलब्ध न होने के फलस्वरूप देश में उपलब्ध गोबर का दो - तिहाई भाग ईंधन के रूप में जला दिया जाता है। पशुओं से न केवल कृषि उत्पादन में सहायता मिलती हे, बल्कि दूध और दूध से बने पदार्थों की सहायता से शारीरिक जरूरत के अनुरूप गुणकारी पदार्थ भी मिल जाते हैं ।

तालिका 4.10 से स्पष्ट है कि कुत्ते को छोड़कर कुल पशुओ की सख्या 740402 है जिसमें से 517318 तहसील राबर्ट्सगंज में तथा 223084 दुद्धी में है। पशुओं मे सर्वाधिक संख्या गो जातीय पशुओं की है जिसकी कुल संख्या 481363 है, इसमें से तहसील राबर्ट्सगंज मे 349825 तथा दुद्धी में 131538 है। महिष जातीय पशुओ की सख्या तहसील दुद्धी मे राबर्ट्सगंज की अपेक्षा अधिक है। भेड़ों की अपेक्षा (संख्या 20679) बकरा-बकरियों की संख्या (140150), 6 78 गुना अधिक है। घोड़ो-टट्टुओं तथा सूअरों की संख्या लगभग

तालिका 4.10

जनपद सोनभद्र में पशुओं की संख्या 1988

पशु		रार्बटसगंज तहसील	दुद्धी तहसील	योग
1		2	3	4
1.	कुल गो जातीय पशु	349825	131538	481363
2	कुल महिष जातिय पशु	70105	21166	91271
3	कुल भेंड़	18970	1709	20679
4.	कुल बकरा एवं बकरियां	74419	65731	140150
5.	कुल घोड़े एवं ट्टटू	2206	1097	3303
6	कुल सुअर	1560	1806	3366
7	कुल पशु कुत्ते को छोडकर	517318	223084	740402
8	कुल कुक्कुट	111516	96145	207661

स्रोतः साख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र,

1992, पृष्ठ 73-78.

बराबर है। अध्ययन क्षेत्र में कुक्कुट पालन भी किया जाता है। कुल कुक्कुटो की सख्या 20766। है, इसमे से 11516 कुक्कुट तहसील राबर्ट्सगंज मे तथा 69145 कुक्कुट दुद्धी में पाये जाते है। अध्ययन क्षेत्र में मत्स्य पालन नहीं होता है। नदियों, बाधों, तथा बन्धियों मे कुछ मछलियां पकडी जाती हैं। मत्स्य पालन का अभी व्यावसायीकरण नही हुआ है। अध्ययन क्षेत्र में चराई की सुविधा उपलब्ध है इसलिए पशुपालन की पर्याप्त संभावना है। किन्तु ये अपरदन के सक्रिय कारक हैं इसलिए चराई की बहुत अधिक छूट नहीं दी जा सकती है ।

4.11 कृषि - विकास नियोजन

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र की कृषि अत्यन्त पिछडी हुई है। कृषि - विकास में गति प्राप्त किए बिना समग्र विकास को प्राप्त नही किया जा सकता। कृषि के लिए आवश्यक है कि इसके विकास के लिए उत्तरदायी विभिन्न अवयवो को नियोजित ढग से विकसित किया जाय । इस उद्देश्य की प्राप्ति सुसंगठित प्रयास से ही संभव है जिसमें प्रशासक और योजना निर्माता, शोध करने वाले वैज्ञानिको, प्रसार कार्यकर्ताओं, वित्तीय ऋण उपलब्ध कराने वाली एजेंसियों, जनसंचार माध्यमों तथा कृषको के सहयोग की आवश्यकता है। अध्ययन क्षेत्र के कृषि की सहनशीलता सबसे उल्लेखनीय तथ्य है । लगातार अववर्षण के बावजूद कृषक दैव-अधीन कृषि कार्यों में लगे हुए हैं ।

अध्ययन क्षेत्र की समृद्धि बढाने के लिए समन्वित फसल, पशुधन, मत्स्य-पालन तथा बागवानी जैसे उद्यमों के जरिए कृषि में विभिन्नता लाकर कृषि आमदनी को अधिक-से-अधिक बढ़ाना होगा। कृषि के क्षेत्र में सामान्य वृद्धि से ग्रामीण क्षेत्रों की गरीबी पर सीधे आक्रमण करने की नीति अपनाकर एक सचेष्ट परिवर्तन लाना होगा क्योंकि कृषि विकास के बिना अध्ययन क्षेत्र की गरीबी को दूर करने की कल्पना ही नहीं की जा सकती। हमें कृषि विकास को केवल और अधिक अनाज उपजाने के साधन के रूप में ही नहीं लेना है बल्कि गाँव की आमदनी बढ़ाने और रोजगार की और अधिक अवसर उपलब्ध कराने के माध्यम के रूप में भी लेना है। कृषि विकास नियोजन के लिये भूमि - सुधार, कृषि यंत्रीकरण, पशुधन एवं डेयरी विकास, दलहन एवं तिलहन विकास, औद्योगिक फसलों का विकास, मिश्रित खेती, शुष्कभूमि कृषि, खरपतवार नियन्त्रण, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार तथा कृषि रसायनो एवं उर्वरकों के प्रयोग पर ध्यान देने की आवश्यकता है । इसके अतिरिक्त वित्तीय ऋण उपलब्ध कराने, बचत को

बढावा देने तथा महाजनी ऋण जाल से मुक्ति प्रदान करने के लिए बैंकिंग सुविधाओं में वृद्धि करने की आवश्यकता है।

(अ) भूमि सुधार

भूमि ससाधन हमारी पवित्र ससाधन है। हमारा उत्तरदायित्व है कि हम इसके केवल अक्षुण्ण रूप मे ही नहीं बल्कि सुधरे हुए रूप में आगामी पीढ़ियो के लिए सौंपे । इसके लिए कृषि विकास की प्रक्रिया में भूमि संसाधन की वहन क्षमता तथा इसके सामर्थ्य और पर्यावरण सुरक्षा के पहलुओं की ओर हमें अवश्य ध्यान देना चाहिए। भूमि तथा जल चक्रों के बीच तालमेल का सम्बन्ध बनाने के लिए कार्यक्रम तैयार करने की, उपलब्ध भूमि की उत्पादकता बढाने, उत्पादकता फिर से प्राप्त करने, भूमि का फिर से सुधार करने और कम उपजाऊ भूमि का विकास करने वग्रामीण क्षेत्रों मे जीवन के स्तर में सुधार लाने की आवश्यकता है। भूमि ससाधन के अधिकतम उपयोग तथा सामाजिक आर्थिक उद्देश्यो के सरक्षण आवश्यकताओं को लेकर कृषि तथा इसके अन्य आनुषंगिक माध्यमों से अध्ययन क्षेत्र के लोगों के लिए समृद्धि लायी जा सकती है ।

अध्ययन क्षेत्र के पहाड़ी तथा पठारी धरातलीय स्वरूप होने के कारण कृषि- भूमि को बहुत अधिक नहीं बढ़ायी जा सकती है। अत कृषि उत्पादकता को बढ़ाना तथा कृषि योग्य भूमि को कृषिभूमि में बदलना, यही दो विकल्प हैं। कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के 12.18% (82908 हेक्टेयर) भाग को (बंजर एवं परती भूमि) कृषि भूमि मे, आठवीं पंचवर्षीय योजना तक परिवर्तित करने की आवश्यकता है। 49443 हेक्टेयर परती भूमि को भूमिहीन कृषक मजदूरो मे बांट देने से एक दो वर्ष में ही सम्पूर्ण भूमि उपजाऊ हो जाएगी। 33262 हेक्टेयर ऊसर भूमि को कृषि योग्य भूमि मे बदलने के लिए आधुनिक तकनीक तथा वैज्ञानिक विधि की आवश्यकता है। इसके लिए सरकार को कुछ आर्थिक सहायता प्रदान करनी चाहिए। ऊसर भूमि को कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित कर देने पर कृषि योग्य भूमि में 4 88% और वृद्धि हो जाएगी। शुष्कता, बहुत कम तथा अनिश्चित वर्षा, अत्यन्त कम उर्वरा मृदा, भूमि तथा जल पर भारी जैव दबाव तथा अपर्याप्त भूमिगत जल की समस्या को धीरे - धीरे दूर करने का प्रयास प्रारम्भ कर देना चाहिए ।

कृषि-उत्पादन के लिए भूमि सुधारें को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए चकबंदी, वास्तविक काश्तकारों को भूमि पर कब्जा, भूमि की सीमा निर्धारित करना और सीमा से अधिक भूमि को कमजोर वर्गों मे वितरित करना अत्यन्त आवश्यक है। दूसरी

तरफ ऐसे नये कानून बनाने चाहिए जिससे भूमि के और टुकड़े न हों और कृषि - भूमि को गैर - कृषि प्रयोजनो में न लगाया जाए। इन भूमि - सुधारो के प्रति किसानों के दृष्टिकोंण की समीक्षा होनी चाहिए जिससे यह पता लगाया जा सके कि उनकी सफलता और असफलता के कारण क्या हैं और असफलताओं के निवारण के लिए क्या उपाय किया जाना चाहिए। यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए अध्ययन क्षेत्र में भूमि की स्थिति वर्तमान गरीबी और कृषि की प्रगति दोनों दृष्टियों से अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण है। अत· भूमि सुधारों को उच्च प्राथमिकता देने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं है।

(ब) सिंचाई

अध्ययन क्षेत्र के पहाडी भागों में अनेक छोटी-छोटी बन्धियो का निर्माण करके सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि की पर्याप्त संभावनाएं हैं। इन सभावनाओ को देखते हुए कहा जा सकता है कि अल्प खर्च में सम्पूर्ण कृषि भूमि मे सिंचाई सुविधा उपलब्ध करायी जा सकती है। भूमिगत जल तथा नलकूपों से सिचाई की सीमित सम्भावना है, इसलिए तालाबों, बंधियों एवं बांधों पर सिंचाई को निर्भर करना चाहिए। इनके निर्माण से भूमिगत जल-स्तर भी ऊपर उठेगा। अध्ययन क्षेत्र में बाधों का निर्माण अत्यन्त आसान है। दो पहाडियों के बीच में एक और ऊँची दीवाल खड़ी कर देने से बांध का निर्माण हो जाता है। सिलहट तथा नगवां बांध (नगवां विकास खण्ड) उसी तरह बनाए गए हैं। नहरों के निर्माण के लिए व्यापक सर्वेक्षण की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त निर्माणाधीन अनेक बंधियों का निर्माण कार्य शीघ्र पूरा किया जाना चाहिए ।

सोन, रिहन्द, कनहर, पांडव तथा कर्मनाशा आदि नदियो से पम्प द्वारा जल उठाकर नहरो के माध्यम से वर्ष भर सिंचाई की जा सकती है। चोपन स्थित सोन पम्प नहर की तरह अन्य स्थानों पर भी पम्प नहर बनाने की आवश्यकता है। इस माध्यम से उँची - नीची भूमि पर भी सिचाई सुविधा उपलब्ध करायी जा सकती है। दुद्धी स्थित अमवार कनहर परियोजना, जिसका निर्माणाधीन कार्य 15 वर्ष से ठप पड़ा हुआ है, शीघ्र पूर्ण करने की आवश्यकता है। कोन क्षेत्र के मध्य बहने वाली 'पांडव नदी लिफ्ट योजना' तथा कर्मनाशा नदी पर 'जसौली परियोजना' का निर्माण कार्य शीघ्र प्ररम्भ करने की आवश्यकता है ।

गोविन्दपुर स्थित बनवासी सेवा आश्रम द्वारा बंधी बनाने की एक नयी तकनीक का प्रयोग किया गया है, जिसे व्यापक स्तर पर अपनाए जाने की आवश्यकता है। अध्ययन क्षेत्र के दक्षिांचल में ऊंची - नीची एवं असिंचित क्षेत्र है। जहाँ सरकार द्वारा सिंचाई उपलब्ध कराये जाने के विभिन्न प्रयास किए जा रहे हैं। इसके बावजूद सम्पूर्ण क्षेत्र में सिंचाई की दस प्रतिशत सुविधा भी उपलब्ध होना सम्भव नहीं है। इसी समस्या को ध्यान मे रखते हुए छोटे - छोटे नालों पर छोटे - छोटे बंधियों के निर्माण के प्रथम चरण मे 17 योजनाएं, आश्रम द्वारा ली गयी हैं। इसमें से 5 योजनाओं का निर्माण कार्य पूरा हो चुका है। ऐसी बंधियों को 'लूजरॉक फिल डैम' के नाम से जाना जाता है। जो किसी भी नाले पर सामान्य किस्म के पत्थर को एक लोहे की जाली में बधी के रूप में बांध दिया जाता है और नदी या नाले का पानी रूक जाता है। डूब क्षेत्र अपनी पूरी क्षमता में कायम रहेगा। इन बंधियों के डूब क्षेत्र के दोनों किनारों पर 'किनों' द्वारा पानी खेत में डालकर पर्याप्त खेती की जा रही है ।

अध्ययन क्षेत्र जल संसाधनों की दृष्टि से समृद्ध होते हुए भी सामाजिक - आर्थिक कठिनाईयों के कारण सिंचाई के क्षेत्र में पिछड़ा है। इस क्षेत्र की उत्पादन क्षमता को, उपयुक्त जल-संसाधन प्रबंध-व्यवस्था से बढ़ायी जा सकती है। इसके विकास के लिए जल-निकासी, सिंचाई साधनो का इस्तेमाल तथा विद्युत आपूर्ति का सहारा लेना आवश्यक है। बांधों से खेतों तक पानी ले जाने और वितरण के लिए सिंचाई इंजीनियरों, कृषि विशेषज्ञों तथा कृषकों से सलाह लेनी चाहिए ।

(स) कृषि का वाणिज्यीकरण

फसल प्रतिरूप के अध्ययन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में चावल, गेहूं, तथा मक्का की कृषि बड़े पैमाने पर होती है। शेष फसलो का उत्पादन घरेलू आपूर्ति तक ही सीमित है। गन्ना, तिलहन एवं दलहन फसलों का उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता है। गन्ना की खेती सम्पूर्ण बेलन घाटी में सिंचाई सुविधाओं को उपलब्ध कराकर की जा सकती है। तिलहन फसलों के लिए आरम्भ की गयी 'टेक्नालाजी मिशन' को प्रसारित करने की आवश्यकता है। इसी प्रकार दलहन फसलों के उत्पादन पर भी अधिक बल दिया जाना चाहिए। इससे किसानों की आय बढ़ेगी तथा क्रय शक्ति का विकास होगा। अध्यन क्षेत्र की बन्धियों में मत्स्य

पालन किया जा सकता है तथा औद्योगिक केन्द्रों के निकट व्यावसायिक स्तर पर कुक्कुट पालन की पर्याप्त सम्भावना है। यदि अच्छी नश्ल के पशुओं का पालन करके डेयरी विकास किया जाय तो ग्रामीणों के गरीबी का दुश्चक्र शीघ्र समाप्त हो सकता है। चराई की सुविधा के कारण पशुपालन बेहतर ढंग से किया जा सकता है। इस प्रकार कृषि के विविध क्षेत्रों को वाणिज्यीकृत करके विकासकी प्रक्रिया को तेज की जा सकती है ।

(द) असिंचित भूमि में कृषि

अध्ययन क्षेत्र का 75% कृषि भूमि असिंचित है। सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र में सिंचाई व्यवस्था उपलब्ध कराना कठिन कार्य है। अत: जब तक असिंचित कृषि क्षेत्रों का सही उपयोग नहीं होता तब तक कृषि विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। असिंचित क्षेत्रों के रबी मौसम में नमी की कमी मुख्य समस्या है जिससे रबी फसलों का उत्पादन प्रभावित होता है। अत उक्त ज्वलन्त समस्या के समाधान के लिए खरीफ फसल मे जल का उचित संरक्षण तथा उसका रबी के लिए दक्षतापूर्ण उपयोग नितान्त आवश्यक है। जल संरक्षण के लिए निम्न विधियां अपनायी जानी चाहिए -

1. खेतों को समतल करके मेड़बन्दी करना चाहिए ।
2. ढाल के विपरीत समोच्च रेखा पर कृषि कार्य करना चाहिए ।
3. कठोर पर्त को तोडने के लिए गहरी जुताई करनी चाहिए जिससे जल का नीचे प्रवेश हो तथा अपवाह कम हो ।
4 जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए जो न केवल पोषक तत्वों के लिए आवश्यक है वरन् जल धारण क्षमता बढ़ाने में विशेष सहायक होते हैं।
5. फसलों को ढाल के विपरीत मेड़ों पर बोना चाहिए । अतिवृष्टि में मेड़ों पर फसलें तथा कूड़ों में पानी सुरक्षित रहता है ।
6. अभी हाल ही में वैज्ञानिकों ने 'जल शक्ति' नामक रसायन का विकास किया है जो अपने भार से 100 गुनी पानी सोख कर लम्बी अवधि तक रोकने की क्षमता रखता है। अत: इसका प्रयोग शीघ्र प्रारम्भ करना चाहिए ।
7. वाष्पोत्सर्जन विरोधी 'पारस' रसायन का प्रयोग करके पंक्तियों से वाष्पोत्सर्जन को कम करना चाहिए । पत्तियों पर 'कैओलीन' तथा पौधों पर 'साइकोसिल' का छिड़काव करके

करके ऊपरी बढ़वार को कम करके वाष्पोत्सर्जन को कम करना चाहिए ।

असिंचित कृषि क्षेत्रों में गहरी जड़ों वाली फसल या किस्में विशेष उपयोगी होती है जिससे वे सूखे के समय नीचे की तहों से नमी खींच सके। सूखे की दशा के अनुकूल विभिन्न फसलो की उपयुक्त कुछ प्रमुख प्रजातियों का चयन निम्न प्रकार से करना चाहिए

धान- कावेरी, झोना - 349, साकेत - 4, गोविन्द, नरेन्द्र - I

गेहूं- के - 65, सी- 306, मुक्ता, के - 72, के - 8027

जौ- आजाद, रत्ना, लखन, मंजूला।

ज्वार- वर्षा, मऊ टा 1, मऊ टा. 2, सी. एस. एच - 5.

बाजरा- डब्ल्यू. सी. सी. 75, एम.पी - 15, एम पी - 19, बी के. 560.

मक्का- आजाद उत्तम, कंचन, श्वेता, तरूण, नवीन।

अरहर- बहार, टा. 7, टा. 17, टा 21, यू.पी.ए एस 120

चना- अवरोधी के 468, के 250, टा. 1

अलसी- श्वेता, शुभ्रा, लक्ष्मी 27।

असिंचित कृषि क्षेत्रों में सहफसली खेती एक ऐसी पद्वति है जिससे उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। परम्परागत सहफसली (मिश्रित खेती) का मुख्य उद्देश्य उत्पादन की अनिश्चितता को खत्म करना है। इससे उत्पादन के साथ मृदा की उर्वराशक्ति भी बढ़ती है ।

(य) जायद कृषि

अध्ययन क्षेत्र में जायद फसलों को विकसित करना चाहिए । जायद कार्यक्रम के अन्तर्गत कृषि उत्पादन वृद्धि हेतु उपलब्ध संसाधनों का समुचित एवं सामयिक उपयोग परम् आवश्यक है। आश्वस्त सिंचन सुविधा सम्पन्न क्षेत्रों में जायद के खेत में मूंग, उर्द, सूरजमुखी, मक्का, हरा चारा तथा साग सब्जी की फसलें ली जा सकती हैं, इससे प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक उपज मिलने के साथ-साथ सिंचाई साधनों का भरपूर उपयोग होता है तथा रोजगार के अवसर

भी बढ़ते हैं। आवश्वस्त सिचाई सुविधा निजी नलकूप एवं राजकीय नलकूप पर ही संभव है, नहरी क्षेत्रों को जायद फसल हेतु चुनना विशेष उपयुक्त नहीं होता है ।

अध्ययन क्षेत्र के अधिकांश कृषक उन्नत बीजों, उर्वरकों, कीटनाशक दवाओं तथा नवीन कृषि यन्त्रों का प्रयोग धनाभाव के कारण नहीं कर पाते हैं। इसलिए सरकार को चाहिए कि - कृषकों को रियायती दर पर ऋण सुविधा उपलब्ध कराए । कृषि - विकास नियोजन के लिए निम्न सुविधाओं को उपलब्ध कराया जाना भी आवश्यक है ।

1. कृषकों में शिक्षा व कृषि - शिक्षा का अधिकाधिक प्रसार किया जाए जिससे वे सामाजिक कुरीतियों से मुक्त हों, अन्धविश्वास व भाग्यवाद को त्यागें तथा खेती के आधुनिक तरीके अपनाएं जिससे आर्थिक प्रगति का वातावरण बन सके ।

2. कृषि में उत्पादन बढ़ाने के लिए नवीन यन्त्रों व तकनीको को ग्रामीणों तक पहुँचाना एवं उसके संचालन के लिए समयानुसार सलाहकारी सुविधाओं का प्रबन्ध होना चाहिए ।

3. साख सुविधाओं का यथा ग्रामीण बैकों तथा अन्य बैको की शाखाओं द्वारा जाल बिछाया जाना चाहिए जिससे कृषकों की फसलें नष्ट न हों तथा गरीब एवं मध्यम वर्गीय कृषकों के लिए पर्याप्त साख की व्यवस्था उपलब्ध हो सके ।

4. प्राकृतिक तत्वों यथा सूखा, ओलावृष्टि एवं अन्य कारणों से फसल नष्ट हो जाने पर उसकी क्षति पूर्ति के लिए फसल बीमा योजना को प्रभावी बनाया जाना चाहिए ।

5. सरकार को कृषि विकास के लिए जिला स्तर पर जिला कृषि केन्द्र की स्थापना करनी चाहिए । औद्योगिक सुविधाओं की तरह कृषि सुविधाओं को भी उपलब्ध कराना चाहिए ।

6. कृषि आदाय तत्वों (बीज, खाद, नवीन यन्त्र, कीटनाशक दवाएं) को सीमान्त तथा मध्यम वर्गीय कृषकों तक उपलब्ध कराया जाना चाहिए ।

7 कृषकों को अधिक उत्पादन के लिए पर्याप्त प्रेरणा देने हेतु 'गारण्टी न्यूनतम कीमतों' के रूप मे उचित आय का आश्वासन दिया जाय ।

इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र को वांछित प्रगति के स्तर पर लाने के लिए समुचित वैज्ञानिक तथा तकनीकी सेवाओं, सरकारी नीतियो एव शासन तन्त्र को एक साथ मितव्ययिता के साथ समायोजित करने की सख्त जरूरत है। जब सम्पूर्ण जनपद मे कृषि, ग्रामीण-उद्योग तथा ग्रामीणों की त्रिवेणी का समन्वित विकास किया जायेगा तो निर्माण एव विकास क्रिया का ऐसा महास्रोत उत्पन्न होगा जिससे प्रगति, स्वावलम्बन, पूर्ण रोजगार तथा समृद्धि की धाराएं स्वत. निकल पड़ेंगी। अत कृषि भूमि की उत्पादकता बढ़ाने के लिए नवीन प्रौद्योगिकी की नवीन व्यूह रचना के अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं है। क्योंकि भूमि सीमित है। इसी के द्वारा अध्ययन क्षेत्र की भूख, अभाव, बेरोजगारी तथा पिछड़ापन जैसी भयकर समस्याओं से लोगों का उद्वार किया जा सकता है ।

सन्दर्भ

1. हुसैन, माजिद. 'मानव एवं आर्थिक भूगोल', राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली,1986, पृष्ठ 61.

2. *Buchanan, R.O.: Some Reflections of Agriculture Geography, Geog. 44, 1959, pp.1-13.*

3. *Mc Carty, H.H. and Lindberg, J.B.: A Preface to Economic Geography: Englewood Cliff, N.J.: Prentice Hall, 1966.*

4. *Zimmerman, E.W.: World Resources and Industries, New York, Harper and Brothers, 1951.*

5. *Singh, Jasbir: Agricultural Atlas of India, Kurukshetra, Vishal Publication, 1974.*

6. कुरैशी, एम0एच0 : भूगोल के सिद्धान्त, भाग II, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली, 1989, पृष्ठ 50.

7. Mc Master, D.N.: 'A Subsistance crop Geography of Uganda', The World Land use Survey Occasional Papers No.2, Geographical Publication, 1962. p.IX.

8. Fox, K. and Tanber, R: Spatial Equilibrium Models of the Livestock Feed Economy, American Economic Review, as, 1955, pp. 801-802.

9. Chauhan, D.S.: Studies in Utilization of Agricultural Land, 1966, p.171.

10. Vanzetti, C.: Landuse and Natural Vegetation in International Geography, edited by W.Peter Adams and Frederick, M.Helleiener, Toronto University, 1972, pp.1105-1106.

11. Wood, H.A.: A Classification of Agricultural Landuse for Development Planning, International Geogr. (22, I.G.U., Canada), Univ. of toronto Press, 1972, p.1106.

12. सिंह, ब्रजभूषण: कृषि भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर, 1988, पृष्ठ 165.

13. Weaver, J.C.: 'Crop Combination Regions in the Middle West'. Geographical Review, 44, 1954, p.175.

14. कुमार, पी0तथा शर्मा, एस.के.: 'कृषि भूगोल,' मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1985, पृष्ठ 408.

15. Johnson, B.L.C.: 'Crop Combination Regions in East Pakistan', Geography, 43, 1958, pp. 86-103.

16. Thomas, D.: 'Agriculture in Wales during the Neopleanic War', Cradiff, 1963, pp. 80-81.

17. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 15.

18. Ayyar, N.P.: 'Crop Regions of Madhya Pradesh- A Study in Methodology', Geographical Review of India, 31.1, 1969, pp. 1-19.

19. Doi, K.: 'The Industrial Structure of Japanese Prefecture', Proceedings of I.G.U. Regional Conference in Japan, 1957-59, pp. 310-316.

20. Nelson, H.J.: 'A Service Classification of American Cities', Economic Geography, 31, 1955, pp. 189-200.

21. दत्त, आर0 एवं सुन्दरम, के0पी0एम0: भारतीय अर्थव्यवस्था, एस0चन्द्र एण्ड कम्पनी प्रा0लि0, नई दिल्ली, 1990, पृष्ठ 587.

22. सिंह इकबाल 'भारत में ग्रामीण विकास', राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ 32.

23. कुरैशी, एम0एच0: 'भारत, संसाधन और आर्थिक विकास', राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली 1990, पृष्ठ 49.

24. 'भारत', वार्षिक संदर्भ ग्रन्थ 1986, सूचना और प्रसारण मत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ 378-79.

25. Ramachandran, R.: The Hindu Survey of Indian Agriculture, Madras, 1988.

26. साख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 68

27. वहीं, पृष्ठ 69.

XXXXXXXX

अध्याय 5

औद्योगिक पृष्ठभूमि एवं विकास-नियोजन

सभ्यता के प्रारम्भ से ही उद्योग मानव का सबसे बड़ा सहयोगी रहा है। प्रगति के अनेक सोपानों का निर्माण करते हुए इसने मानव को आदिम गुफाओं की स्थिति से चन्द्रमा तक पहुँचाया। उद्योग मानव जीवन का अभिन्न अंग है। मानव प्रयासों के जिन-जिन क्षेत्रों की ओर हम दृष्टिपात करते हैं, हमें औद्योगिक गति विधियों की अमिट छाप देखने को मिलती है। गत चार दशकों में हुई औद्योगिक प्रगति भारतीय आर्थिक विकास की एक महत्वपूर्ण घटना है। इस अवधि में औद्योगिक उत्पादन में गुणात्मक, परिमाणात्मक व विविधता की दृष्टि से द्रुत गति से विकास हुआ है तथा औद्योगिक आधार में काफी विविधाताएं आयी हैं।[1] साधारणतः आर्थिक भूगोल में 'उद्योग' शब्द का व्यवहार वस्तु निर्माण के लिए किया जाता है। शाब्दिक अर्थ में 'उद्योग' किसी भी व्यवस्थित तथा क्रमबद्ध कार्य को कहते हैं।[2] कच्ची सामग्री को संशोधित और परिवर्तित करके परिष्कृत सामग्री तैयार करना निर्माण उद्योग कहलाता है।[3] विनिर्माण प्रक्रिया के अन्तर्गत वे सभी कार्य आते हैं जिनके द्वारा मानव कच्चे माल का स्वरूप परिवर्तित करके उसको अधिक उपयोगी बनाता है। ऐसे परिवर्तन कार्य कारखानों में होते हैं, जहाँ अनेक स्थानों से कच्चा माल लाकर एकत्र किया जाता है।[4] मिलर[5] तथा एलेक्जेंडर[6] ने वस्तुओं को अधिक मूल्यवान स्वरूप परिवर्तन को ही विनिर्माण उद्योग बताया है। एच0आर0 जैरेट[7] ने उद्योगों को ही विनिर्माण उद्योग कहा है। उनके अनुसार विर्निमाण उद्योग का तात्पर्य उन विभिन्न प्रक्रियाओं से है जिनकी सहायता से व्यापार में बिकने वाली वस्तुओं का निर्माण किया जाता है।

5.1 औद्योगिक स्वरूप

आज के युग में किसी भी समाज की औद्योगीकरण की स्थिति का सीधा सम्बन्ध उसकी अर्थव्यवस्था से है। वास्तव में औद्योगीकरण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार बन गया है। यहीं नहीं, औद्योगीकरण से कृषि के क्षेत्र में भी अभिवृद्धि हुई है। अत: यह अत्यन्त आवश्यक है कि अर्थव्यवस्था सुदृढ़ करने के लिए और विकास स्तर को बढ़ाने के लिए औद्योगिकीकरण की ओर सरकार द्वारा विशेष ध्यान देने के साथ-साथ प्राथमिकता भी दी जाये।[8] औद्योगीकरण के महत्व को सभी स्वीकार करते हैं किन्तु इसके स्वरूप के बारे में एक मत नहीं है। ऐतिहासिक दृष्टि से औद्योगिक स्वरूप तीन अवस्थाओं से गुजरा है। प्रथम अवस्था का सम्बन्ध प्राथमिक वस्तुओं से माल तैयार करना है। द्वितीय अवस्था का सम्बन्ध कच्चे माल के रूप परिवर्तन से है तथा तृतीय में उन मशीनों तथा पूँजी यन्त्रों का निर्माण होता है जो प्रत्यक्ष रूप से किसी तत्कालिक

आवश्यकताओं की संतुष्टि नहीं करती वरन् भावी उत्पादन क्रिया को सुविधाजनक बनाती हैं।

औद्योगिक विकास के रूसी संरचना में सीधे प्रथम अवस्था से द्वितीय अवस्था में प्रवेश किया गया किन्तु ब्रिटिश ढाँचे में धीरे - धीरे विकास किया गया। इसी प्रकार पिछड़े क्षेत्रों में अपनी आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार औद्योगीकरण के विभिन्न स्वरूप विकसित किए जा सकते हैं। पिछड़े क्षेत्रों एवं देशों के औद्योगीकरण के स्वरूप में पूँजी अभाव को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए। श्रम की अधिकता को देखते हुए श्रम प्रधान औद्योगिक स्वरूप अधिक उपयुक्त होता है। अत्यन्त पिछड़े क्षेत्र को विकसित करने के उद्देश्य से चयनित उद्योग ही लगाना चाहिए जिससे वास्तविक रूप में क्षेत्र विकास हो सके। राष्ट्रीय स्तर पर आयात - प्रतिस्थापक एवं निर्यात संवर्धन उद्योग में संतुलन स्थापित करना चाहिए। वास्तव में किसी भी देश या क्षेत्र का औद्योगिक स्वरूप नियोजकों के नियोजन व प्राथमिकता तथा संसाधनों पर आश्रित है ।

अध्ययन क्षेत्र का औद्योगिक स्वरूप पूर्णतया असंतुलित है। जनपद सोनभद्र में बड़े बड़े उद्योगों की स्थापना सार्वजनिक एवं निजी दोनों ही क्षेत्रों में किया गया है। किन्तु लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास बिल्कुल नहीं हो रहा है। कहा जाता है कि एक जनपद के विकास के लिए एक वृहद् उद्योग आवश्यक एवं पर्याप्त है। किन्तु जनपद सोनभद्र में अनेक भारी उद्योगों की उपस्थिति भी पिछड़ेपन को खत्म नहीं कर पा रही है। इसका प्रमुख कारण वृहद् एवं लघु औद्योगिक स्वरूप में सहसम्बन्ध न होना तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों के औद्योगिक स्वरूप एवं विविधता में कोई संवृद्धि न होना है ।

5.2 ऐतिहासिक पर्यवेक्षण

पश्चिमी एशिया के इतिहास में 1000 - 3000 ई0पू0 में बीच की अवधि में पहली औद्योगिक क्रान्ति घटित हुई, क्योंकि इसी अवधि में लोगों ने कृषि का, बुनाई का और पशुओं को पालतू बनाना आदि कलाओं का अविष्कार किया। [9] भारत में उद्योगों की परम्परा सिंधु घाटी सभ्यता से चली आ रही है। यहाँ उस समय सूती वस्त्र, मिट्टी के बरतन तथा कांसे की वस्तुएं आदि बनायी जाती थीं। देश धातु विज्ञान में उन्नत था। अठारहवीं शताब्दी तक भारत जलयान निर्माण में भी आगे था। उत्तम प्रकार के वस्त्र, धातु के बर्तन मसाले तथा

अन्य वस्तुएँ बहुत प्रसिद्ध थीं ।[10] आधुनिक औद्योगिक प्रणाली के विकास के पूर्व, भारतीय निर्मित वस्तुओं का बाजार विश्वव्यापी था । 19वीं शताब्दी से पहले औद्योगिक दृष्टि से एक वृहद् उत्पादक देश था । भारतीय उद्योग न केवल स्थानीय आवश्यकताओं को पूरा करते थे अपितु औद्योगिक उत्पादों का निर्यात भी किया जाता था । भारत के निर्यात की मुख्य वस्तुओं में सूती, रेशमी, सिल्क, ऊनी कपड़ा, चीनी, नमक, तलवारें, तोपें आदि सम्मिलित थे । ब्रिटेन द्वारा भारत को राजनीतिक उपनिवेश बनाने एवं औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् भारतीय हस्तशिल्प उद्योगों का पतन प्रारम्भ हो गया । भारत में मशीनों से निर्मित वस्तुओं की भरमार हो गयी। भारत में हस्तशिल्प उद्योगों के पतन से जो स्थान रिक्त हुआ, उसकी पूर्ति भारत में आधुनिक ढंग से उद्योग स्थापित करके नहीं की गयी क्योंकि ब्रिटिश सरकार की नीति मशीनों द्वारा निर्मित वस्तुओं का भारत में आयात तथा भारतीय कच्चे माल के निर्यात को प्रोत्साहन देने की थी ।

स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय से ही राष्ट्रवादियों ने औद्योगीकरण के महत्व एवं उसके स्थापना की वकालत की । प्रो0 बिपिन चन्द्र[12] के अनुसार शुरूवाती राष्ट्रवादियों में इस मुद्दे पर पूरी तरह आमराय थी कि भारतीय अर्थव्यवस्था को आधुनिक तकनीकी और पूँजीवादी उद्योगों पर आधारित अर्थव्यवस्था में परिवर्तित करना उनकी सभी प्रमुख आर्थिक नीतियों का पहला लक्ष्य है । औद्योगीकरण को उन्होंने बहुत महत्वपूर्ण माना । प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भारतीय उद्योगों को कुछ सीमा तक विकसित होने का अवसर मिला । किन्तु वास्तविक औद्योगिक विकास स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्, सरकार द्वारा अपनायी जाने वाली नीति की घोषणा 6 अप्रैल 1948 और 30 अप्रैल 1956 की औद्योगिक नीति की प्रस्ताव से माना जाता है ।

सन् 1948 के नीति प्रस्ताव में इस बात पर बल दिया गया कि बढ़ते हुए उत्पादन में निरन्तर वृद्धि और समान वितरण के लिए औद्योगीकरण का बहुत महत्व है । साथ ही, राज्यों के कार्यक्रमों में उद्योगों के विकास के लिए उनके सक्रिय योगदान पर बल दिया गया। अध्ययन क्षेत्र में 1954 में चुर्क सीमेण्ट फैक्ट्री की स्थापना करके, औद्योगिक विकास की नींव रखी गयी । 1956 की औद्योगिक नीति में औद्योगीकरण की गति तेज करने, सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार करने तथा निजी क्षेत्र को भी विकास और विस्तार का समुचित अवसर प्रदान

करने पर बल दिया गया ।[13] 1956 की औद्योगिक नीति में समय की माँग के साथ 1973, 1977 तथा 1980 में आवश्यक संशोधन किया गया । 1973 की औद्योगिक नीति में उन बड़े उद्योगों का वर्णन किया गया जिनमें बड़े औद्योगिक घरानों और विदेशी कम्पनियों के विनियोग को अनुमति दी गयी थी । औद्योगिक नीति 1977 में विकेन्द्रीकरण तथा गृह उद्योगों पर विशेष बल दिया गया जबकि 1980 की औद्योगिक नीति ने घरेलू बाजार में प्रतियोगिता को बढ़ावा देने, तकनीकी विकास तथा आधुनिकीकरण पर ध्यान केन्द्रित किया । पुन. औद्योगिक विकास के लिए 1985 और 1986 में औद्योगिक नीति में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए जिससे उद्योगों और उद्यमियों को अधिकाधिक स्वतन्त्रता और विदेशी पूँजी निवेश एवं तकनीकी सहयोग को प्रोत्साहन दिया जा सके । विश्व बाजार में निरन्तर हो रहे परिवर्तनों और आर्थिक स्थिति ने इन नीतियों में आमूलचूल परिवर्तन को अनिवार्य बना दिया था । फलत नवीन औद्योगिक नीति 1991 का उदय हुआ जिसके द्वारा वर्तमान औद्योगिक नीति में क्रान्तिकारी परिवर्तन किए गए हैं । इस नीति में निजी क्षेत्र को बढ़ावा देने तथा प्रदूषणमुक्त औद्योगिक विकास पर विशेष बल दिया गया है ।

अध्ययन क्षेत्र में स्वतन्त्रता के पूर्व से विभिन्न परियोजनाएँ शुरू कर दी गयी थी, जिसका विकास स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ द्रुतगति से हुआ एवं 1954 में रेलवे लाइन चोपन तक पहुँच गई । राज्य सरकार ने चुर्क सीमेण्ट फैक्ट्री की स्था0 1954 में की । डाला सीमेण्ट फैक्ट्री की स्थापना 1965 में की गयी तथा 1972 से उत्पादन प्रारम्भ हो गया । निजी क्षेत्र का अल्यूमिनियम कारखाना 'हिंडालको' की स्थापना 1958 में रेनूकूट में की गयी तथा उत्पादन 1962 में प्रारम्भ हुआ । रिहन्द जलविद्युत गृह से विद्युत उत्पादन भी 1962 में प्रारम्भ हुआ । 'हिंडालको' में विद्युत आपूर्ति के लिए निजी क्षेत्र में 1964 में रेणूसागर ताप विद्युत केन्द्र की स्थापना की गयी, उत्पादन 1967 से प्रारम्भ हुआ । ओबरा ताप विद्युत गृह से भी 1967 में उत्पादन प्रारम्भ हुआ । सिंगरौली सुपर थर्मल पॉवर प्रोजेक्ट, नेशनल थर्मल पॉवर कारपोरेशन (एन.टी.पी.सी.) की पहली परियोजना थी जिसे दिसम्बर 1976 में सरकारी अनुमोदन मिला। इस थर्मल पॉवर से उत्पादन 1982 में प्रारम्भ हुआ । अनपरा थर्मल पॉवर की स्थापना 1978 में तथा उत्पादन 1986 में प्रारम्भ हुआ । रिहन्द सुपर थर्मल पॉवर की स्थापना 1983 में तथा उत्पादन 1991 में प्रारम्भ हुआ । अध्ययन क्षेत्र में औद्योगिक अधिनियम 1984 के अन्तर्गत लगभग 54 उद्योग पंजीकृत हैं । साथ ही लगभग 500 लघु इकाइयाँ भी वर्तमान समय में कार्यरत हैं । चूना उद्योग

कालीन उद्योग, रसायन उद्योग तथा कुटीर उद्योग यत्र - तत्र पाए जाते हैं ।

5.3 उद्योगों का वर्गीकरण

अध्ययन क्षेत्र में अनेक प्रकार के उद्योग पाए जाते हैं जिनका वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया जा सकता है -

(अ) आकार के अनुसार वर्गीकरण

1. वृहद् उद्योग
2. लघु उद्योग
3. कुटीर उद्योग

(ब) उत्पादों के स्वरूप के आधार पर वर्गीकरण

1. आधारभूत उद्योग
2. उपभोक्ता उद्योग

(स) कच्चे माल के आधार पर वर्गीकरण

1. कृषि पर आधारित उद्योग
2. वन - उत्पाद पर आधारित उद्योग
3. धातु उद्योग -
   (क) अलौह - धातु उद्योग
   (ख) लौह - धातु उद्योग
4. रसायनिक उद्योग

(द) स्वामित्व एवं प्रबन्ध के आधार पर वर्गीकरण

1. पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत उद्योग
2. साम्यवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत उद्योग
3. मिश्रित अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत उद्योग

(य) उत्पाद की किस्म के अनुसार वर्गीकरण

1. प्राथमिक उद्योग
2. गौण उद्योग
3. तृतीयक उद्योग

एल्सवर्थ हन्टिंगटन [14] ने उद्योगों को चार भागों में विभक्त किया है -

1. प्रारम्भिक उद्योग
2. साधारण प्रकार का उद्योग
3. समुदाय आधारित उद्योग
4. आधुनिक प्रकार के जटिल उद्योग

प्रस्तुत अध्ययन में उद्योगों को निम्न तीन वर्गों में वर्गीकृत किया गया है -

(अ) बड़े पैमाने के उद्योग

(ब) लघु पैमाने के उद्योग

(स) ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग

(अ) बड़े पैमाने के उद्योग

इस प्रकार के उद्योगों में ऊर्जा चालित मशीनों का प्रयोग किया जाता है, श्रमिक व पूँजी की अधिक आवश्यकता होती है । अध्ययन क्षेत्र में बड़े पैमाने के उद्योगों के अन्तर्गत सीमेण्ट, अल्यूनियिम, ताप विद्युत, जल विद्युत तथा रसायन उद्योग आते हैं ।

(1) सीमेंट उद्योग

सीमेंट आधुनिक विनिर्माण उद्योग का एक महत्वपूर्ण संघटक है । सीमेंट उद्योग, में मूल कच्चे पदार्थो के रूप में चूना पत्थर, मृत्तिका और शेल का उपयोग होता है । इसके अतिरिक्त कोयला और जिप्सम का उपयोग भी सीमेंट विनिर्माण में प्रयुक्त होने वाले अन्य घटकों के साथ किया जाता है ।[15] अध्ययन क्षेत्र में राज्य सरकार के अधीन दो सीमेंट कारखानें चुर्क एवं डाला में है । चुर्क एवं डाला में सीमेंट कारखानों के स्थापना का प्रमुख कारण स्थानीय क्षेत्र गुरमा एवं कजरहट में चूना पत्थर की उपलब्धता है । चूना पत्थर की अधिकता तथा परिवहन लागत में कमी के उद्देश्य से क्षेत्र के सन्निकट ही सीमेंट उद्योग लगाया जाता है। सीमेंट उत्पादन की दो विधि है - आर्द्र विधि (वेट मेथेड) और शुष्क विधि (ड्राई मेथेड) । चुर्क सीमेंट कारखाने से केवल आर्द्र विधि से सीमेंट तैयार किया जाता है । इस कारखाने से उत्पादन 1954 - 55 में प्रारम्भ हुआ । डाला सीमेंट कारखाने से आर्द्र एवं शुष्क दोनों विधियों से सीमेंट बनाया जाता है । आर्द्र विधि से सीमेंट उत्पादन 1970-71 में तथा शुष्क विधि से 1981-82 में प्रारम्भ हुआ । आर्द्र विधि की अपेक्षा शुष्क(ड्राई)विधि को आधुनिक माना जाता है ।

DISTRICT SONBHADRA
INDUSTRIAL UNITS
(LARGE-SCALE)
N
S
CHURK
OBRA
DALLA
RIHAND(PIPRI)
ANPARA T.P.S.
RENUKOOT
RENUSAGAR T.P.S.
SINGRAULI S.T.P.S.
RIHAND S.T.P.S.
THERMAL POWER
HYDEL POWER
ALUMINIUM
CEMENT
CAUSTIC SODA
CHEMICAL
0 4 8
KM
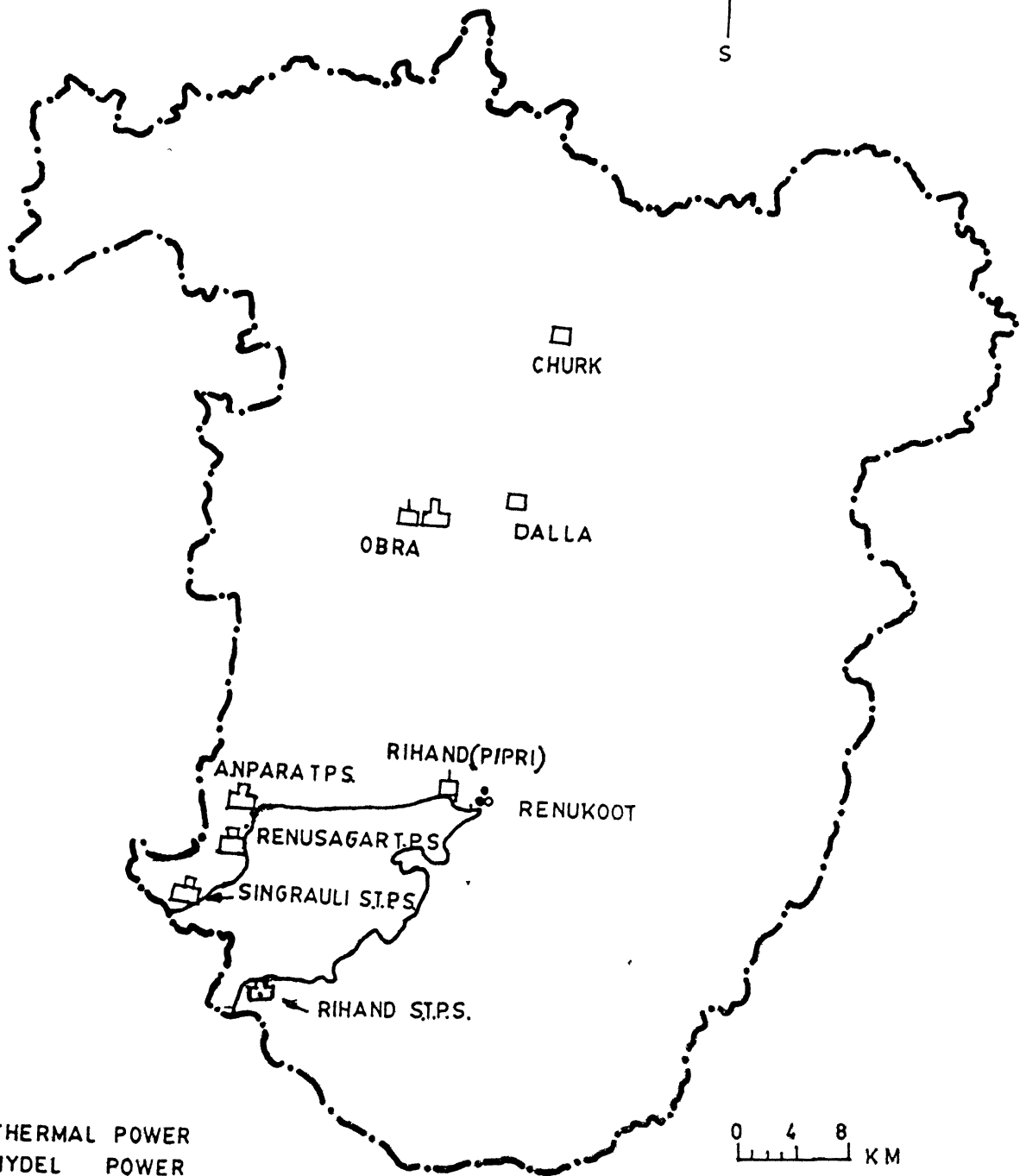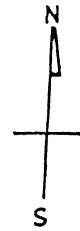
FIG. 5.1

तालिका 5.1
क्लिंकर एवं सीमेंट का उत्पादन

वर्ष	क्लिंकर उत्पादन				सीमेण्ट उत्पादन		
	चुर्क आर्द्र	डाला आर्द्र	शुष्क	योग	चुर्क आर्द्र	डाला आर्द्र एवं शुष्क	योग
1954-55	101887			101887	84459		84459
1959-60	208659			208659	203891		203891
1964-65	329063			379063	410793		410793
1969-70	331380			331380	364116		364116
1970-71	338292	32238		372530	344246	14100	358346
1971-72	328930	163000		491930	362735	108681	471456
1972-73	374418	242300		616718	438437	273237	711674
1973-74	291064	267200		558264	315327	244830	560157
1974-75	301108	201500		502608	302076	228600	530676
1975-76	315750	300500		616250	384495	315960	600455
1976-77	358491	277000		635491	386154	296700	683854
1977-78	315663	270900		586563	336158	270700	606858
1978-79	317984	238200		556184	336314	247000	583314
1979-80	252313	179300		431613	267462	183768	450230
1980-81	273766	228150		401916	303638	212337	515975
1981-82	32988	277400	44477	654865	287002	120274	512975
1982-83	339759	285400	52204	677363	232880	43000	275880
1983-84	306000	233550	216700	756250	212000	85497	297497
1984-85	277000	188921	222003	687924	186000	81976	267996
1985-86	301776	192476	264120	758369	5084	49773	54857
1986-87	326649	201206	278633	806488	66510	33698	100208
1987-88	217182	238868	438972	895022	97288	28656	125944
1988-89	218512	243352	408197	870061	84199	89098	173297
1989-90	167252	226980	365839	760071	11874	8187	20061
1990-91	109756	226335	220062	536153	67856	52244	120100
1991-92	895221	102740	101855	294121			

स्रोतः डाला सीमेंट कारखाने से संग्रहित ।

TOTAL CLINKER AND CEMENT PRODUCTION
OF CHURK AND DALLA CEMENT FACTORY
METRIC TONS IN Thousands
800
600
400
200
0
1955
1960
1965
1970
1975
1980
1985
1990
YEARS
CLINKER
CEMENT
• 1955 Means April 1954 to March 1955 & so on
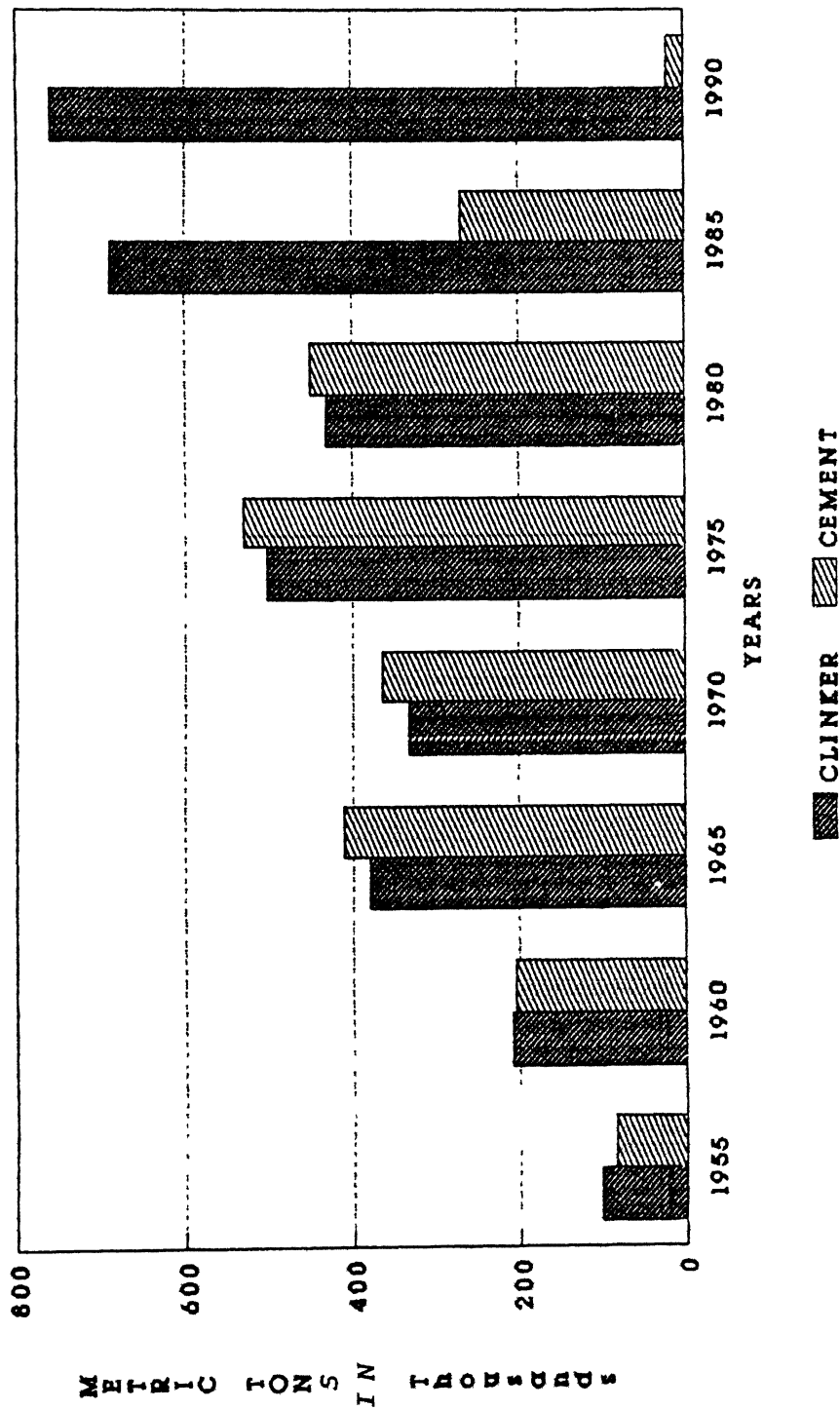
Fig 5.2

क्लिंकर सीमेंट उत्पादन के पूर्व की अवस्था है । चुर्क व डाला में क्लिंकर का निर्माण न केवल स्वयं के कारखाने के लिए बल्कि चुनार स्थित कजरहट सीमेंट कारखाने के लिए भी होता है । उल्लेखनीय है कि डाला के समीप स्थित कजरहट चूना पत्थर क्षेत्र के नाम पर ही चुनार स्थित सीमेंट कारखाने का नाम कजरहट सीमेंट कारखाना है । तालिका 3.1 से स्पष्ट है कि 1954 - 55, 1961 - 62, 1971 - 72, 1981 - 82, तथा 1991 - 92, में कुल क्लिंकर उत्पादन क्रमशः 101887, 218461, 49,930, 654865 तथा 294121 मीट्रिक टन हुआ । इसी प्रकार सीमेंट उत्पादन वर्ष 1954 - 55, 60 -61, 1970 - 71, 1980 - 81, तथा 1990 - 91 में क्रमश· 84459, 244131, 364116, 515975, 120100 मीट्रिक टन हुआ । तालिका 5.1 तथा चित्र 5.1 से स्पष्ट है कि आर्द्र, शुष्क तथा कुल क्लिंकर व सीमेंट उत्पादन में उतार चढ़ाव है ।

(2) अल्यूमिनियम उद्योग

धातु उद्योगों में लौह इस्पात के बाद अल्यूमिनियम उद्योग का प्रमुख स्थान आता है । अध्ययन क्षेत्र में अल्यूमिनियम उद्योग की स्थापना, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में 1958 में स्व. जी.ई. बिड़ला ने 'कैसर अल्यूमिनियम केमिकल कम्पनी' (संयुक्त राज्य अमरीका की कम्पनी) के सहयोग से किया । इस उद्योग की अवस्थिति, जिला मुख्यालय राबर्ट्सगंज से लगभग 72 कि0 मी0 दक्षिण, विकासखण्ड म्योरपुर में रिहन्द जलाशय के तट पर रेनूकूट में है । इस उद्योग का नाम हिन्दुस्तान अल्यूमिनियम कम्पनी लिमिटेड (हिंडालको) रखा गया । अल्यूमिनियम का उत्पादन स्थापना के 4 वर्ष बाद, 1962 में प्रारम्भ हुआ ।

अल्यूमिनियम धातु की प्राप्ति बाक्साइट अयस्क से होती है । बाक्साइट मुख्यतः बिहार से मँगाया जाता है । यद्यपि स्थानीय रूप में निम्न कोटि का बॉक्साइट उपलब्ध है किन्तु कम्पनी के निजी क्षेत्र में होने के कारण उत्तम बाक्साइट गढ़वा व पालामऊ से मंगाया जाता है। यहाँ के बॉक्साइट में 50 से 60% तक अल्यूमिनियम आक्साइड पाया जाता है । बाक्साइट को शुद्ध करने के लिए कास्टिक सोडा रेनूकूट में स्थित कास्टिक सोडा उद्योग से प्राप्त किया जाता है । अल्यूमिनियम उद्योग की स्थापना के लिए अन्य प्रमुख कारक विद्युत शक्ति की प्राप्ति, बिड़ला के ही 'रेणूसागर ताप विद्युत केन्द्र' से की जाती है । उद्योग के लिए आवश्यक

जल की प्राप्ति रिहन्द जलाशय से होती है । एक टन अल्यूमिनियम बनाने के लिए 6 टन बॉक्साइट धातु, 0.44 टन पेट्रोलियम कोक, 0.26 टन कास्टिक सोडा, 0.09 टन चूना, अल्प मात्रा में रसायनों तथा लगभग 18573 किलोवाट विद्युत की आवश्यकता होती है ।[16] वर्तमान समय में कम्पनी 165000 टी0पी0ए0 अल्यूमिनियम, 300000 टी0पी0ए0 अल्यूमिना और 79000 टी0पी0ए0 फ्रेबीकेटेड अल्यूमिनियम उत्पन्न कर रही है ।[17]

(3) विद्युत ऊर्जा

ऊर्जा प्रत्येक आर्थिक गतिविधि को किसी - न - किसी रूप में अवश्य प्रभावित करती है और इसकी उपलब्धता तथा लागत पर राष्ट्र का आर्थिक भविष्य, प्रगति तथा जनता का जीवन स्तर निर्भर करता है । अन्य विकासशील देशों की तरह भारत में भी ऊर्जा की आवश्यकता गैर वाणिज्यिक स्त्रोतों जैसे लकड़ी, उपले, बेकार कृषि पदार्थो आदि और वाणिज्यिक स्त्रोतों जैसे बिजली, कोयला, तेल तथा परमाणु ईंधन, से पूरी होती है । विद्युत, ऊर्जा की सबसे सुविधाजनक और उपयोगी किस्म है । इसलिए अन्य ऊर्जा साधनों की तुलना में इसकी माँग बहुत अधिक तेजी से बढ़ी है ।[18] उद्योग और कृषि दोनों क्षेत्रों में विद्युत की महत्वपूर्ण भूमिका है । अत. बिजली की खपत की मात्रा देश में उत्पादकता और विकास दर की सूचक होती है । इसे देखते हुए विकास कार्यक्रमों में विद्युत - विकास को उच्च प्राथमिकता दी गयी है।

विद्युत, संविधान की समवर्ती सूची में सम्मिलित है, इसलिए इसके विकास की जिम्मेदारी केन्द्र और राज्यों दोनों पर है ।[19] इसके साथ ही निजी क्षेत्र में विद्युत उत्पादन किया जाता है । केन्द्र में विद्युत विभाग विद्युत ऊर्जा के विकास और इसके उत्पादन, संरक्षण, वितरण और संरक्षण का कार्य देखता है । केन्द्र सरकार के अधीन नेशनल थर्मल पॉवर कारपोरेशन (एन.टी.पी.सी.) जिसे राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम भी कहा जाता है, के अधीन अध्ययन क्षेत्र में दो ताप विद्युत केन्द्र की स्थापना की गयी है । इनमें से प्रथम शक्तिनगर में 'सिंगरौली सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन' तथा द्वितीय बीजपुर में 'रिहन्द सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन' के नाम से विख्यात है राज्य सरकार के अधीन भी दो ताप विद्युत घर है, इनमें से प्रथम ओबरा में तथा द्वितीय अनपरा में है । निजी क्षेत्र के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र में एक ताप विद्युत गृह, रेणूसागर में है । अध्ययन क्षेत्र में दो जल विद्युत गृह भी है, इनमें से प्रथम पिपरी (तुर्रा) में तथा द्वितीय ओबरा में है।

1. जल विद्युत - देश में जल विद्युत के विकास के लिए 1975 में राष्ट्रीय जल विद्युत शक्ति निगम (एन.एच.पी.सी.) की स्थापना की गयी । कोयला तथा पेट्रोलियम ऊर्जा, अनव्यकरणीय संसाधन हैं जबकि जल ऊर्जा का नव्यकरणीय संसाधन है । अध्ययन क्षेत्र में जल विद्युत के निम्न दो केन्द्र हैं -

(क) रिहन्द जल विद्युत गृह पिपरी - रिहन्द जलविद्युत गृह की अवस्थिति रेनूकूट से संलग्न तथा ओबरा से लगभग 45 कि0 मी0 दक्षिण में है । इस विद्युत गृह का 300' ऊँचा बांध, रेणू नदी के तट पर कंक्रीट ग्रेविटी पद्धति पर निर्मित है । 180 वर्ग मील में फैला इसका जलाशय (गोविन्द वल्लभ पंत सागर) 8.6 मिलियन एकड़ फीट जल संग्रह कर सकता है । इस जलविद्युत गृह की 6 इकाइयों की उत्पादन क्षमता 300 मेगावाट है (तालिका 5.2) ।

तालिका 5.2

रिहन्द जलविद्युत गृह पिपरी

इकाइयाँ	उत्पादन क्षमता (मेगावाट में)	उत्पादन वर्ष
I	50	मार्च 1962
II	50	फरवरी 1962
III	50	फरवरी 1962
IV	50	मार्च 1962
V	50	मार्च 1962
VI	50	नवम्बर 1966

50 - 50 मेगावाट की मेसर्स इंगलिश इलेक्ट्रिक (यू0के0) की उपर्युक्त 6 इकाइयाँ 45.78 करोड़ की लागत से, विगत् 31 वर्षो से कार्यरत हैं । यह विद्युत केन्द्र 'पीकिंग केन्द्र' है, सामान्यतः प्रातः एवं सायंकाल जल विद्युत की माँग सर्वाधिक होती है, चलाया जाता है इसके जलाशय में अधिकतम 880' तक पानी का स्तर रखा जा सकता है । यह स्तर विगत्

वर्षों में मात्र 4 बार 1964-65, 1971-72, 1987-88 एवं 1991-92 में ही पहुँच पाया है तथा स्पिलिंग किया गया है । इसका न्यूनतम स्तर 830' से नीचे नहीं चलाते हैं । क्योंकि इस जलाशय के चतुर्दिक शक्तिनगर, रिहन्द नगर, विंध्यनगर (मध्यप्रदेश), अनपरा, रेणूसागर आदि थर्मल पॉवर इसी जलाशय से जल लेते हैं ।

तालिका 5.3

रिहन्द जलविद्युत गृह पिपरी

वर्ष	विद्युत उत्पादन (मिलियन यूनिट में)
1985-86	702
1986-87	957
1987-88	866
1988-89	931
1989-90	867
1990-91	619
1991-92	1265
1992-93	388

तालिका 5.3 से स्पष्ट है कि जलविद्युत उत्पादन में प्रति वर्ष काफी असमानता है। इसका प्रमुख कारण वर्षा एवं जल स्तर है । 1991-92 में जल स्तर अधिकतम होने के कारण विद्युत उत्पादन भी सबसे अधिक (1265 मि.यू.) हुआ । 1992-93 में जल स्तर निम्नतम था इसलिए विद्युत उत्पादन भी निम्नतम (388 मि.यू.) रहा । रिहन्द जलाशय के चतुर्दिक ताप विद्युत केन्द्रों को जल उपलब्धता सुनिश्चित करने की दृष्टि से भी, रिहन्द जल विद्युत गृह से सीमित जल विद्युत का ही उत्पादन किया जाता है ।

(ख) ओबरा जल विद्युत गृह- ओबरा जलविद्युत गृह रिहन्द बाँध से जल प्रवाह की दिशा में 32 कि0 मी0 की दूरी पर (उत्तर में) सोन एवं रिहन्द नदी के संगम स्थान से जल प्रवाह की विपरीत दिशा में (दक्षिण) 11 कि0 मी0 की दूरी पर ओबरा ताप विद्युत गृह के समीप स्थित है । यह भी 'पीकिंग' विद्युत गृह है और रिहन्द जलविद्युत से निकले

जल का सदुपयोग करके चलाया जाता है । इसके जलाशय का क्षेत्रफल 18 वर्ग कि0 मी0 है । इस विद्युतगृह में मेसर्स भारत हैवी इलेक्ट्रिकल लिमिटेड (बी.एच.ई.एल.) निर्मित 33 मेगावाट की तीन इकाइयाँ, रू0 27.25 करोड़ की लागत से बनायी गई । ओबरा तापविद्युत गृह के परिचालन के दृष्टिकोण से जलाशय के तल को लगभग 192 से 193 मीटर के मध्य रखना अनिवार्य है । ओबरा जलविद्युत गृह की स्थापना 1963 में हुई और उत्पादन मई 1970 में प्रारम्भ हुआ । तीनों इकाइयों की उत्पादन क्षमता तथा उत्पादन वर्ष तालिका 5.4 में प्रदर्शित है ।

तालिका 5.4

ओबरा जलविद्युत गृह

इकाइयाँ	विद्युत उत्पादन क्षमता (मेगावाट में)	उत्पादन वर्ष
I	33	मई 1970
II	33	दिसम्बर 1970
III	33	अप्रैल 1974

तालिका 5.5

ओबरा जलविद्युत गृह

वर्ष	विद्युत उत्पादन (मिलियन यूनिट में)
1974-75	185
1975-76	182
1976-77	448
1977-78	313
1978-79	339
1979-80	323
1980-81	309
1981-82	280

1982-83	243
1983-84	198
1984-85	331
1985-86	250
1986-87	342
1987-88	299
1988-89	216
1989-90	302
1990-91	222
1991-92	454
1992-93	153

स्रोतः जल विद्युत गृह से संग्रहित एवं संगणित ।

तालिका 5.5 में विभिन्न वर्षों में जलविद्युत उत्पादन को प्रदर्शित किया गया है । तालिका से स्पष्ट है कि जलविद्युत उत्पादन में स्थिरता एवं समरूपता का अभाव है । इसका प्रमुख कारण जलाशय का जल स्तर एवं ओबरा ताप विद्युत गृह को जल उपलब्धता सुनिश्चित करना है ।

2. ताप विद्युत - कोयला, डीजल तथा जल पर आधारित ताप विद्युत गृहों की स्थापना से देश में विद्युत उत्पादन में बहुत वृद्धि हुई है । देश का 60% विद्युत ताप विद्युत गृहों से प्राप्त किया जाता है । कोयला एवं डीजल के क्षयशील संसाधन होने के बावजूद ताप विद्युत ही निरन्तर साधन है । जलविद्युत का उत्पादन अनावृष्टि काल में अविश्वसनीय है। 'काश्मीर की बेटी' कही जाने वाली धरती का वह भू-भाग जिसे सिंगरौली स्टेट के नाम से जाना जाता था,[20] के कोयला पर आधारित 6 तापविद्युत गृह ऊर्जा को निरन्तर उत्पादित कर रहे हैं । इनमें से एक (विंध्याचल सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन) मध्य प्रदेश में है तथा शेष पाँच अध्ययन क्षेत्र में अवस्थित हैं । दो ताप विद्युत गृहों, रिहन्द सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन तथा अनपरा ताप विद्युत गृह का निर्माण अभी भी जारी है ; इसे दीर्घ अवधि में पूरा किया जाना है । शेष तीन ताप विद्युत गृहों का निर्माण कार्य पूरा हो चुका है । ओबरा ताप विद्युत

HYDRO ELECTRICITY GENERATION
RIHAND POWER HOUSE
OBRA POWER HOUSE
MILLION UNITS
1500
1400
1300
1200
1100
1000
900
800
700
600
500
400
300
200
100
OD
1985-86
1986-87
1987-88
1988-89
1989-90
1990-91
1991-92
1992-93
YEARS
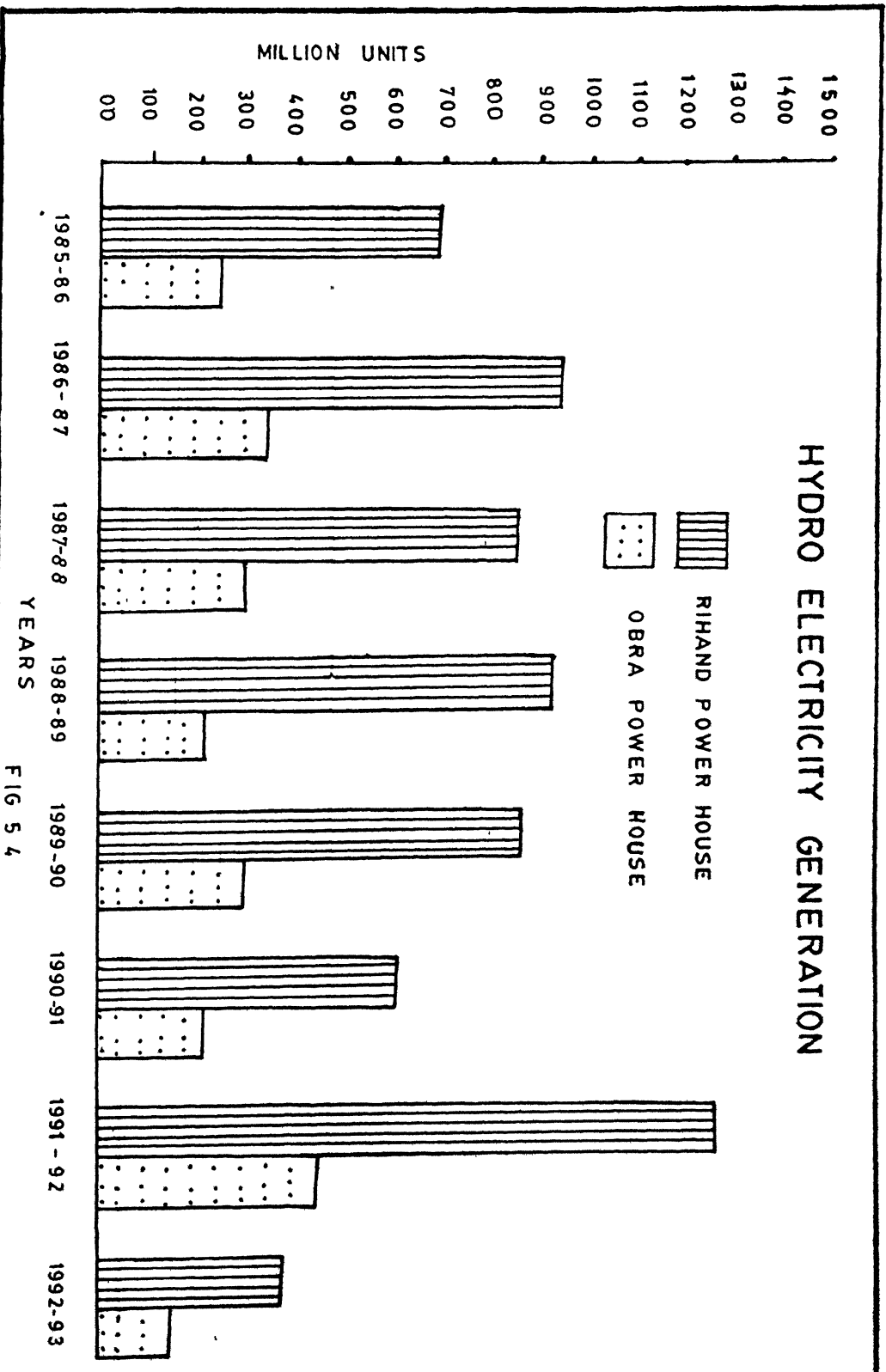
FIG 5 4

गृह को छोड़कर सभी ताप विद्युत गृह नित् नये कीर्तिमान स्थापित कर रहे हैं । उल्लेखनीय है कि ओबरा ताप विद्युत गृह सबसे प्राचीन है तथा प्रशिक्षण गृह के रूप में प्रयुक्त होता रहा है । अपेक्षाकृत नूतन टेक्नालजी का प्रयोग ओबरा ताप विद्युत में नहीं हो पाया है ।

(क) **सिंगरौली सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन** - एन.टी.पी.सी. की यह पहली परियोजना थी जिसे दिसम्बर, 1976 में सरकारी अनुमोदन मिला । आरम्भ में 200 मेगावाट की तीन इकाइयों के लिए (कुल 600 मेगावाट) इसके विस्तार चरण को, जिसमें 200 मेगावाट की दो इकाईयाँ और 500 मेगावाट की दो इकाईयाँ सम्मिलित थी, जुलाई, 1979 में स्वीकृति मिली और इस प्रकार इसकी कुल क्षमता 2000 मेगावाट हो गयी ।

देश के विद्युत उत्पादन क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले एन.टी.पी.सी. के सिंगरौली वृहत् ताप विद्युत गृह ने 13 फरवरी, 1992 को अपनी पहली इकाई के उत्कृष्ट उत्पादन का सफलतापूर्वक एक दशक पूरा किया । वर्ष 1982 की इसी तारीख को एन.टी.पी.सी. व सिंगरौली की पहली इकाई शुरू (सिंक्रोनाइज) हुई थी । एन.टी.पी.सी और सिंगरौली के इतिहास में यह तारीख इसलिए भी सर्वाधिक महत्व रखती है क्योंकि इसी दिन विद्युत उत्पादन की आधारशिला रखी गयी थी । इसके पश्चात् 200 मेगावाट की चार तथा 500 मेगावाट की दो इकाईयों को एक के बाद एक शुरू किया गया ।

शैशवावस्था से ही सिंगरौली का उत्पादन स्तर ऊँचा रहा है । इस दशक में इसने एक के बाद एक कई कीर्तिमान स्थापित किये और उल्लेखनीय पुरस्कार अर्जित किये जहाँ तक विद्युत उत्पादन का प्रश्न है, जनवरी 1992 के अन्त तक सिंगरौली विद्युत गृह का इन दस वर्षो का औसतन पी.एल.एफ. 73.13% (वाणिज्यिक) रहा है । सिंगरौली और भी ज्यादा उत्पादन कर सकता था परन्तु ग्रिड प्रतिबन्धों के कारण करीब 6.5% पी.एल.एफ. की क्षति हुई । इसकी सफलता का आंकलन इसी से लगाया जा सकता है कि गत् दशक की अवधि में देश के विभिन्न ताप विद्युत गृहों का औसत पी.एल.एफ. 48.6% से लेकर 56.5% के बीच ही रहा । इसकी उपलब्धियों के क्रम में 200 मेगावाट की चौथी इकाई द्वारा वर्ष 1986-87 में 1710 मिलियन यूनिट के उत्पादन का कीर्तिमान अंकित है जो कि 76.6% पी.एल.एफ. के बराबर है ।

तेल खपत की दृष्टि से भी सिंगरौली विद्युत गृह का प्रदर्शन सर्वोत्कृष्ट रहा है । जहाँ तक एक दिनी उत्पादन का प्रश्न है इस विद्युत गृह ने 25 अक्टूबर, 91 को 48.91 मिलियन यूनिट विद्युत उत्पन्न कर अपना अधिकतम उत्पादन का कीर्तिमान बनाया है।

सिंगरौली सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन एक नजर में -

1. कुल क्षमता (मेगावाट) -2000
2. अनुमोदित क्षमता (मेगावाट) - 2000
3. ट्रांसमिशन प्रणाली 400 के.वी. सर्किट किलोमीटर - 2337
4. कोयला प्राप्ति का स्त्रोत - जयन्त /बीना खदान
5. कूलिंग वाटर स्त्रोत/प्रणाली - रिहन्द जलाशय (200 क्यूसेक पानी की खपत)
6. लाभान्वित होने वाले राज्य - उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, हिमांचल प्रदेश एवं दिल्ली ।
7. अनुमोदित पूँजीनिवेश करोड़ रूपया - 1374.93
8. चालू हो चुकी इकाइयाँ 5×200+2×500 मेगावाट
9. इकाइयों के चालू होने का कार्यक्रम

बिजलीघर	**चालू करने की वास्तविक तिथि**	**ट्रांसमिशन**
यूनिट 1 (200 मेगावाट)	फरवरी 1982	सिंगरौली - ओबरा
यूनिट 2 (200 मेगावाट)	नवम्बर 1982	सिंगरौली - कानपुर I
यूनिट 3 (200 मेगावाट)	मार्च 1983	सिंगरौली - लखनऊ
यूनिट 4 (200 मेगावाट)	नवम्बर 1983	लखनऊ - मुरादाबाद
यूनिट 5 (200 मेगावाट)	फरवरी 1984	मुरादाबाद - मुरादनगर
यूनिट 6 (500 मेगावाट)	दिसम्बर 1986	मुरादनगर - पानीपत
यूनिट 7 (500 मेगावाट)	नवम्बर 1987	सिंगरौली - कानपुर II

10. कोयले की खपत - पूर्ण क्षमता के लिए 8.4 मिलियन टन प्रति वर्ष
11. कोयले की आपूर्ति - 17कि0मी0 लम्बी मेरी-गो-राउण्ड प्रणाली

12. पानी के प्रदूषण का समाशोधन -

वायु एवं पानी के प्रदूषण की स्वीकृति प्राप्त 1989 के नवीनीकरण की प्रक्रिया चालू

13. कर्मचारियों की संख्या -

कार्यपालक 582, अकार्यपालक 1964, योग = 2546

14. अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय सहायता -

600 मेगावाट · 150 मिलियन अमरीकी डालर आई.डी.ए. से 171.20 मिलियन डी.एम.के.एफ. डब्ल्यू. से

1400 मेगावाट : 300 मिलियन अमरीकी डालर आइ.डी.ए. से 240 मिलियन डी.एम.के.एफ. डब्ल्यू. से

(ख) रिहन्द सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन - यह विद्युत गृह रिहन्द जलाशय के दक्षिणी - पश्चिमी तट पर बीजपुर में स्थित है । 19.2.83 को स्थापित इस विद्युत गृह से 1991 में विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हुआ । इस ताप विद्युत गृह को, तीन चरणों में (2×500, 2×500 एवं 2×500) विस्तारित करके 3000 मेगावाट विद्युत क्षमता प्रदान करने का उद्देश्य है । प्रथम चरण 2×500 (1000 मेगावाट) का कार्य पूर्ण हो गया है । वर्ष 1991 में 6282.72 मिलियन यूनिट तथा वर्ष 1992 में 6090.29 मिलियन यूनिट विद्युत उत्पादन हुआ । रिहन्द सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन ने तीसरी बार अद्वितीय प्रदर्शन करते हुए मार्च 1993 में 100% से अधिक प्लाण्ट लोड फैक्टर पर विद्युत उत्पादन एवं 100% संयन्त्र उपलब्धता प्राप्त करके एक नया राष्ट्रीय कीर्तिमान स्थापित किया है । यह उत्पादन परियोजना के प्रथम चरण में 500 मेगावाट की दो इकाइयों द्वारा प्राप्त किया गया है जिसने 100.53% प्लाण्ट लोड फैक्टर एवं लगभग 100% उपलब्धता पर 7479 लाख विद्युत इकाई का उत्पादन किया है । प्रथम इकाई ने 3772 लाख विद्युत इकाई का उत्पादन 100.32% प्लाण्ट लोड फैक्टर पर तथा द्वितीय इकाई ने 3747 लाख विद्युत इकाई का उत्पादन 100.75% प्लाण्ट लोड फैक्टर पर किया । इसके पूर्व जनवरी 1992 में 100.84% एवं फरवरी 1993 में 100.22% प्लाण्ट लोड फैक्टर पर विद्युत उत्पादन का कीर्तिमान स्थापित किया जा चुका है ।[21] रिहन्द सुपर थर्मल पॉवर प्रोजेक्ट को सरकार द्वारा वर्ष 1991 के लिए विशिष्ट उत्पादकता पुरस्कार से सम्मानित किया गया । सम्भवतः यह

देश का प्रथम विद्युत गृह है, जिसने विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में देश के इस सर्वोच्च पुरस्कार को अपने व्यावसायिक उत्पादन के प्रथम वर्ष में ही प्राप्त किया है ।[22]

रिहन्द सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन एक नजर में -

1. कुल क्षमता (मेगावाट)	3000
प्रथम चरण	2×500 मेगावाट
द्वितीय चरण	2×500 मेगावाट
तृतीय चरण	2×500 मेगावाट
2. अनुमोदित क्षमता (मेगावाट)	1000
3. ट्रांसमिशन प्रणाली 400 के.वी.	1410/910
सर्किट किलोमीटर	600
4. कोयला प्राप्ति का स्त्रोत	सिंगरौली कोयला क्षेत्र के अमलोरी खान से
5. जमीन की आवश्यकता	5000 एकड़
6. जल स्त्रोत	रिहन्द जलाशय
7. लाभान्वित होने वाले राज्य	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, जम्मू एवं काश्मीर, हिमांचल प्रदेश, दिल्ली एवं चण्डीगढ़
8. अनुमोदित पूँजी निवेश (करोड़ रूपये)	1614.70
9. स्थापित की जाने वाली इकाइयों का आकार	6×500
10. चालू हो चुकी इकाइयाँ	2×500
11. इकाइयों के चालू होने का कार्यक्रम	1988 - 89 में 1×500 मेगावाट मार्च 1988 में तथा 1989-90 में 1×500 मेगावाट जुलाई 1989 में
12. अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय सहायता	ब्रिटेन सरकार से 344 मिलियन डालर की निर्यात ऋण सुविधा तथा 117 मिलियन डालर की वित्तीय सहायता
13. अधिकतम कोयला खपत	31000 मीट्रिक टन / प्रतिदिन
14. कोयला परिवहन का माध्यम	मेरी-गो-राउण्ड-सिस्टम

15. अधिकतम पानी की आवश्यकता	4500 क्यूसेक्स
16. खपत की आवश्यकता	300 क्यूसेक्स
17. सीमेंट आवश्यकता	280000 मीट्रिक टन
18. स्टील आवश्यकता	61400 मीट्रिक टन
19. चिमनी की ऊँचाई	224.5 मीटर

(ग) ओबरा ताप विद्युत गृह - ओबरा ताप विद्युत परियोजना जनपद मुख्यालय राबर्ट्सगंज से लगभग 37 कि0 मी0 दक्षिण में है । यह परियोजना तीन चरणों में प्रस्तावित थी । प्रथम चरण में 5×50 मेगावाट की इकाइयाँ 1967-71 के बीच रूस की सहायता से स्थापित हुई । द्वितीय चरण में 3×100 मेगावाट की इकाइयाँ 1973-76 के बीच बी.एच.ई.एल. की सहायता से स्थापित की गयी । तृतीय चरण में 5×200 मेगावाट की इकाइयाँ 1978-82 के बीच बी.एच.ई.एल. की सहायता से स्थापित की गई थी । इस प्रकार ओबरा ताप विद्युत गृह की कुल उत्पादन क्षमता 1550 मेगावाट है । 550 मेगावाट (5×50 + 3×100 मेगावाट) की इकाई को ओबरा 'अ' ताप विद्युत गृह तथा 1000 मेगावाट (2×200 मेगावाट) की इकाई को ओबरा 'ब' ताप विद्युत गृह कहते हैं । 100 एवं 200 मेगावाट क्षमता की भारत की यह प्रथम इकाई थी । सम्पूर्ण इकाइयों के प्रारम्भ होने का वर्ष तालिका 5.6 में प्रदर्शित है ।

तालिका 5.6

ओबरा ताप विद्युत गृह

इकाई संख्या	स्थापित क्षमता(मेगावाट)	प्रारम्भ होने का दिनांक
1.	50	29.6.67
2.	50	12.2.68
3.	50	25.8.68
4.	50	11.6.69
5.	50	7.6.71
6.	100	18.7.73
7.	100	14.12.74
8.	100	15.9.75
9.	200	13.3.80
10.	200	6.3.79
11.	200	14.3.78

इस परियोजना के लिए कोयला सिंगरौली कोयला क्षेत्र से तथा पानी रिहन्द जलाशय से प्राप्त किया जाता है । रिहन्द जलाशय का पानी पिपरी स्थित रिहन्द जलविद्युत गृह द्वारा प्रयुक्त रिहन्द नदी के माध्यम से, ओबरा जलविद्युत गृह के जलाशय में आता है । पुन इस जलाशय के पानी का प्रयोग जल विद्युत के साथ - साथ ताप विद्युत गृहों में भी किया जाता है । तालिका 5.7 में 1967-68 से 1992-93 तक के विद्युत उत्पादन का विवरण दिया गया है । 1988-89 में 7894 तथा 1987-88 में 7260 मिलियन यूनिट विद्युत उत्पादन हुआ । फलतः ओबरा ताप विद्युत गृह को 1987 एवं 1988 में 'श्रेष्ठ उत्पादकता पुरस्कार से, भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया था ।

तालिका 5.7

ओबरा ताप विद्युत गृह

वर्ष	550 मेगावाट का उत्पादन(मिलियन यूनिट)	1000 मेगावाट का उत्पादन (मिलियन यूनिट)	योग
1	2	3	4
1967-68	153		153
1968-69	695		695
1969-70	846		846
1970-71	1159		1159
1971-72	1389		1389
1972-73	1356		1356
1973-74	1468		1368
1974-75	2058		2058
1975-76	2458		2458
1976-77	2780		2780
1977-78	2730		2730
1978-79	2216		2216
1979-80	2030		2030
1980-81	2046		2046
1981-82	2036		2036
1982-83	2081		2081
1983-84	2190	2663	4853
1984-85	1596	2438	4034
1985-86	1749	3135	4884
1986-87	1471	3657	5128
1987-88	1677	5583	7260
1988-89	2181	5713	7894
1989-90	2295	4710	7005

1990-91	2170	6062	6232
1991-92	1617	4947	6564
1992-93	1624	5440	7064

स्रोतः ओबरा ताप विद्युत गृह से संग्रहीत ।

(घ) अनपरा ताप विद्युत गृह

अनपरा ताप विद्युत परियोजना की स्थापना 1978 में की गयी। इसकी अवस्थिति रिहन्द जलाशय के उत्तरी किनारे पर रेणूसागर के समीप है। यह परियोजना सिंगरौली कोयला क्षेत्र के समीप हे। अनपरा 'अ' ताप विद्युत गृह की तीनों इकाइयों (3×210 मेगावाट) का उत्पादन क्रमशः 24.3.86, 28.2.87 तथा 12.3.88 को प्रारम्भ हुआ। अनपरा 'ब' ताप विद्युत गृहकी दो इकाइयों (2×500 मेगावाट) में से प्रथम इकाई का उद्घाटन 28.7.93 को हुआ । 'ब' तापीय परियोजना का निर्माण भारत एवं जापान के सहयोग से किया जा रहा है। इस परियोजना का प्रथम चरण जिसकी उत्पादन क्षमता 3×210 मे0वा0 है, पहले ही पूरा किया जा चुका है। 'अ' परियोजना अपने उत्कृष्ट उत्पादन के लिए लगातार तीन वर्षों से राष्ट्रपति पुरस्कार अर्जित करता चला आ रहा है ।

'ब' परियोजना नवम्बर 1993 से व्यावसायिक उत्पादन में लायी जानी है। दूसरी निर्माणाधीन इकाई सम्भवतः मार्च 1994 में पूर्ण हो जाएगी। जिस प्रकार से वित्तीय संकट आ रहा है, उसे देखते हुए द्वितीय इकाई को समय से पूर्ण होने में संदेह है। अनपरा 'ब' परियोजना का निर्माण कार्य सितम्बर 1989 में प्रारम्भ हुआ था। इस परियोजना के पूर्ण होने से लगभग 50000 नलकूपों 10000 गाँवों एवं 10000 लघु उद्योगों को बिजली दी जा सकेगी, जो राष्ट्रीय विकास की एक मजबूत कड़ी होगी।[23]

अनपरा 'ब' तापीय परियोजना के 2×500 मेगावाट के प्रथम 500 मेगावाट के सभी संयन्त्र एवं दोनों इकाइयों के लिए सामान्य उपकरण एवं पद्धतियों की आपूर्ति मितसुई एण्ड कम्पनी जापान द्वारा ओ0ई0सी0 एफ0 के पैकेट के अन्तर्गत की जा रही है। दूसरी इकाई के संयन्त्रों की आपूर्ति जापान के ही एक्जिम बैंक की सहायता से मितसुई एण्ड कम्पनी द्वारा की जा रही है। विद्युत गृह के लिए कोयला नार्दर्न कोल फील्ड (एन0सी0एल0) के खड़िया बीना एवं ककरी खान से प्राप्त की जाती है। खड़िया, खान से कोयला लाने के लिए

'मेरी-गो-राउण्ड', का निर्माण भारत सरकार के उपक्रम 'इरफान' द्वारा कराया जा रहा है। इस विद्युत गृह में 36 लाख टन कोयला प्रतिवर्ष खपता है। इस परियोजना से निकलने वाली राख के विसर्जन हेतु वर्तमान में परियोजना से 2 किमी0 दूर 10 लाख घन मीटर धारक क्षमता के बांध का निर्माण किया गया है। इसके अतिरिक्त 10 किमी0 दूर ग्राम वेलवादह के पास भस्म तालाब तक राख निस्तारण का कार्य प्रस्तावित है।

इस परियोजना की अनुमानित लागत 2432 करोड़ रूपये थी जो अब 3825 करोड़ हो गयी। परियोजना को ओ0ई0सी0एफ0 जापान द्वारा 2020 करोड़ रूपये, एक्जिम बैंक जापान द्वारा 620 करोड़ रूपये तथा भारत सरकार एवं उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 1185 करोड़ रूपये वित्तीय सहायता प्रदान किया गया है। जून 1993 तक परियोजना पर 3100 करोड़ रूपया व्यय हो चुका है।[24]

अनपरा तापीय परियोजना की चिमनी की ऊँचाई 275 मीटर है, जो अब तक देश में लगी सभी परियोजनाओं की चिमनिओं से ऊँची है। परियोजना के द्वितीय चरण के पूर्ण होने पर तृतीय चरण (2×500 मेगावाट) की शुरूवात होगी है। सम्पूर्ण इकाइयों की स्थापना के बाद अनपरा ताप विद्युत गृह की संस्थापित क्षमता 2650 मेगावाट हो जाएगी ।

तालिका 5.8

अनपरा ताप विद्युत गृह

वर्ष	उत्पादन मिलियन यूनिट में
1987-88	1509
1988-89	2217
1989-90	3342
1990-91	3743
1991-92	3929
1992-93	4109

स्रोतः अनपरा ताप विद्युत से गृह से संग्रहित ।

THERMAL ELECTRICITY GENERATION PLANTWISE

OBRA

MILLION UNITS

8000
7000
6000
5000
4000
3000
2000
1000
00

1967 68 1972 73 1977 78 1982 83 1987 88 1992 93

YEARS
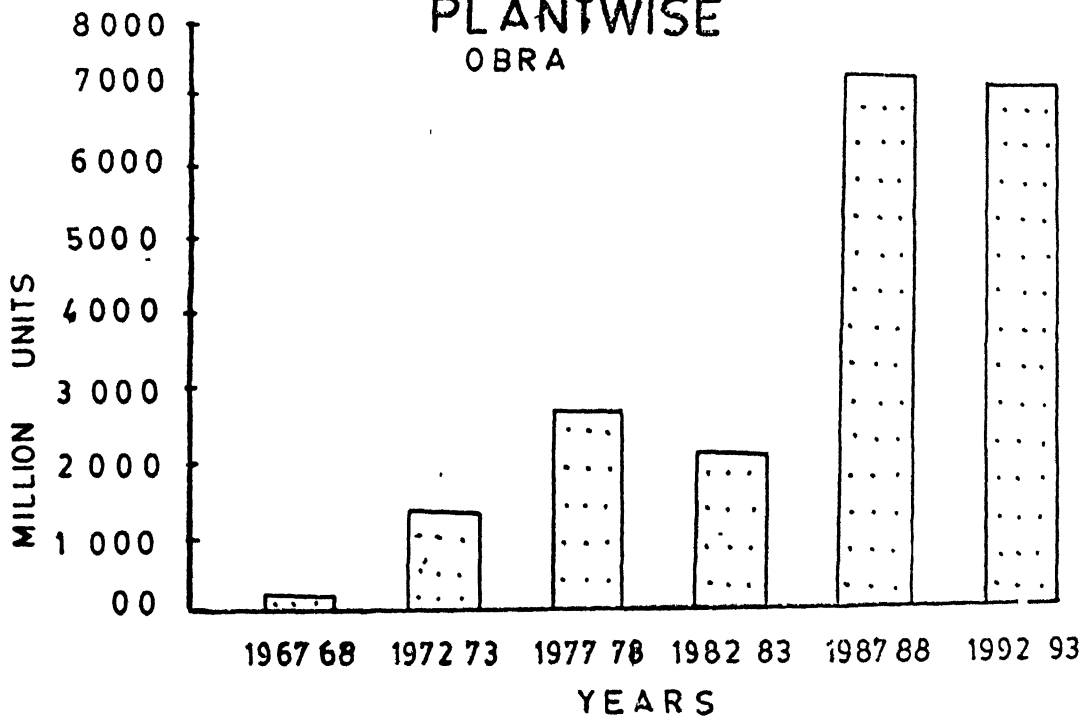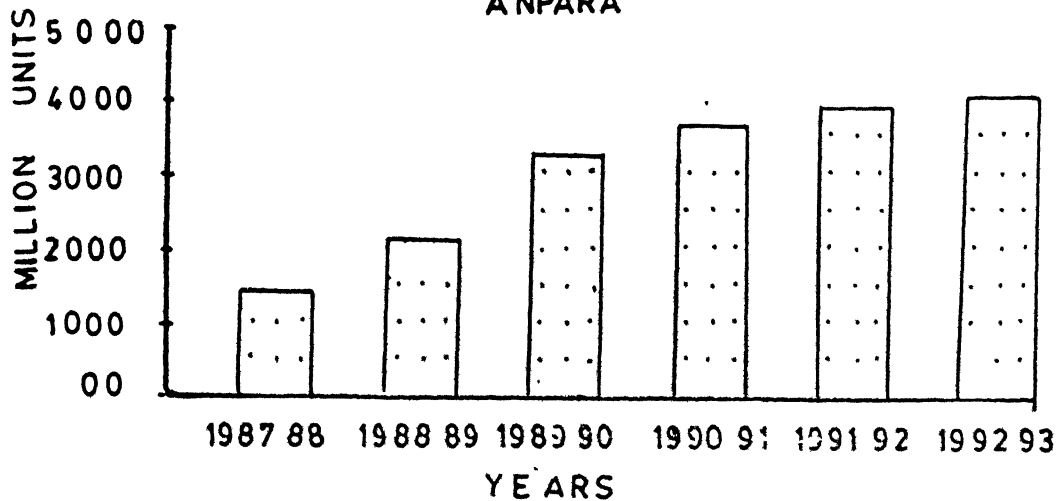
FIG. 5.5.A

FIG. 5.5.B

तालिका 5.8 से स्पष्ट है कि अनपरा ताप विद्युत गृह से विद्युत उत्पादन लगातार बढ़ रहा है तथा पिछले कीर्तिमानों को भंग करता जा रहा है। इन वर्षों में लक्ष्य से अधिक उत्पादन हो रहा है ।

(ङ) रेणूसागर ताप विद्युत गृह

इस परियोजना की स्थापना 6 मार्च 1964 को हुई। इसकी अवस्थिति रिहन्द जलाशय के तट पर अनपरा के समीप है। इस विद्युत गृह से रेनूकूट अल्यूमिनियम कारखाने को बिजली प्रदान की जाती है। कोयले की आपूर्ति रज्जु मार्ग से सिंगरौली कोल फील्ड के झिंगुरदह खान से तथा जल की आपूर्ति रिहन्द जलाशय से होती है। डीजल की आपूर्ति इंडियन आयल के मुगलसराय केन्द्र से होती है। इस विद्युत गृह के पांच इकाइयों एव पाच ब्वायलर के प्रारम्भ होने का समय तालिका 5.9 में प्रदर्शित है ।

तालिका 5.9

रेणूसागर ताप विद्युत गृह

इकाई		प्रारम्भ होने का दिनांक
I	इकाई	4.10.68
II	इकाई	9.9.67
III	इकाई	2.11.81
IV	इकाई	9.4.83
V	इकाई	31.3.89
I	ब्वायलर	17.6.67
II	ब्वायलर	22.11.67
III	ब्वायलर	8.6.82
IV	ब्वायलर	1.2.83
V	ब्वायलर	18.9.81

रेणूसागर ताप विद्युत गृह से वर्ष 1990-91, 1991-92 तथा 1992-93 में क्रमश. 2603, 2851 तथा 2740 मिलियन यूनिट विद्युत का उत्पादन हुआ ।

तालिका 5.10

रेणूसागर ताप विद्युत गृह से विद्युत उत्पादन

वर्ष	वास्तविक उत्पादन (एम0डब्ल्यू0एच0 में)
1967	98341
1968	630706
1969	1019093
1970	944335
1975	959540
1980	1023923
1985	2197784
1990-91	2602662
1991-92	2850669
1992-93	2739672

स्रोतः रेणूसागर ताप विद्युत गृह से संग्रहित ।

(ब) लघु पैमाने के उद्योग

लघु पैमाने के उद्योग की परिभाषा विभिन्न औद्योगिक नीति में भिन्न-भिन्न रही है। वर्तमान औद्योगिक नीति में लघु उद्योग में 5 लाख से अधिक तथा 60 लाख से कम निवेश वाले उद्योगों को सम्मिलित किया गया है। निर्यातोन्मुखी इकाइयों में यह सीमा 75 लाख तक कर दी गयी है। मशीनों का प्रयोग लघु उद्योग को कुटीर उद्योग से अलग कर देती है । अध्ययन क्षेत्र में लघु उद्योग अपेक्षाकृत कम है। प्रमुख, लघु पैमाने के उद्योग निम्न हैं -

(1) **चूना उद्योग-** मारकुण्डी से सोननदी के तट तक चूने की अनेक भट्ठियाँ लगी हुई हैं। सलखन एवं पटवध चूना उद्योग के प्रमुख केन्द्र हैं। चूना पत्थर की स्थानीय उपलब्धता इस उद्योग की स्थापना के प्रमुख कारण हैं ।

RENUSAGAR THERMAL POWER HOUSE
ELECTRICITY GENERATION
(FROM 1967 - 92)
UNITS OF ELECTRICITY
3000
2500
2000
1500
1000
500
0
1967 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92
YEARS
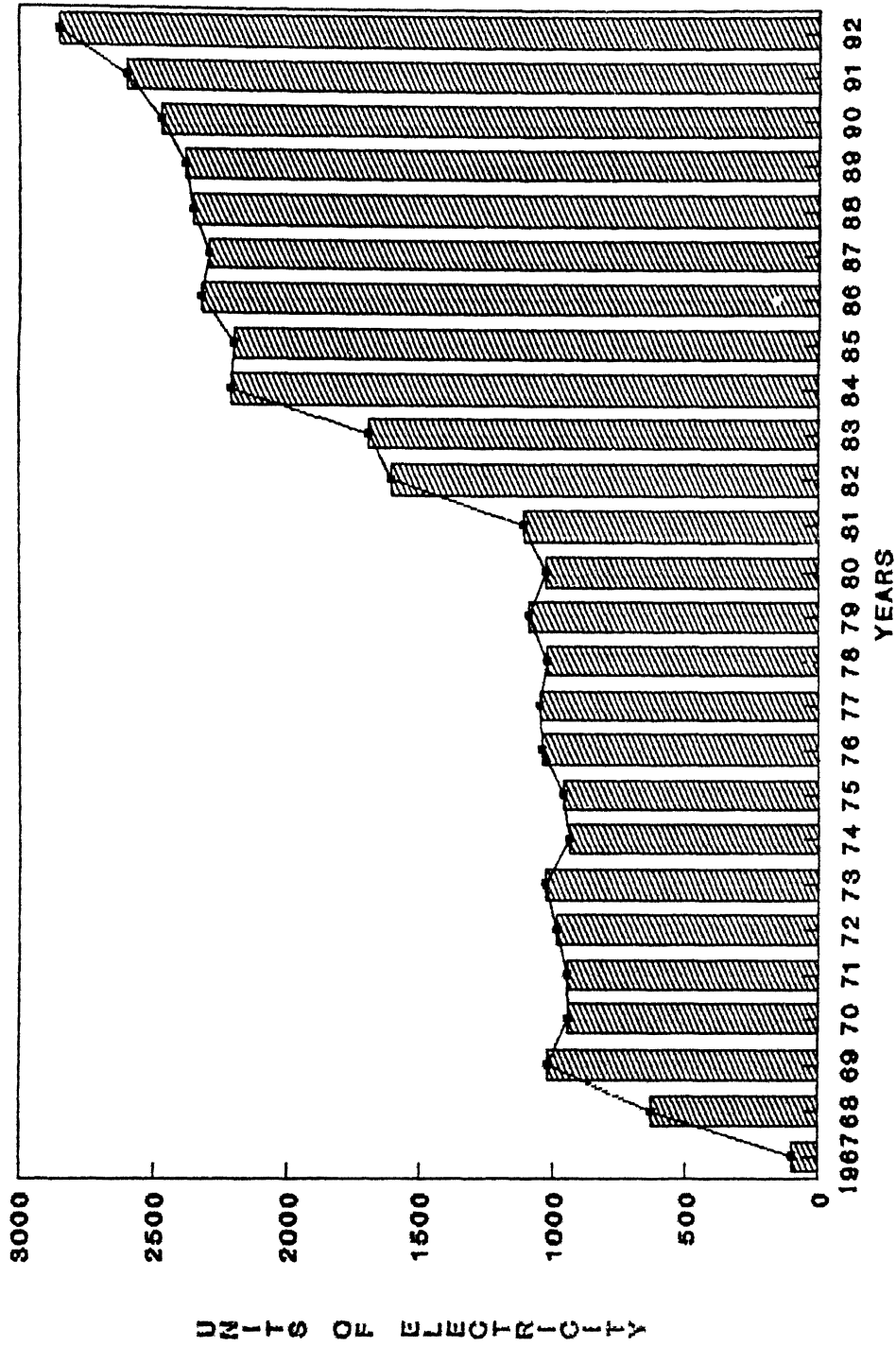
Fig 5.6

(2) **ऊनी कालीन उद्योग–** ऊनी कालीन उद्योग मुख्यत. भदोंही एवं मिर्जापुर जनपद में पाया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में भी ऊनी कालीन उद्योग का विकास हो रहा है। सस्ते श्रम की उपलब्धता तथा बेरोजगारी इस उद्योग के स्थापना के प्रमुख कारण हैं। इस उद्योग के प्रमुख केन्द्र उरमौरा, बैराही, गुरमा, घुआस, ककराही, जूडी, पसही, पुरौली, बहुअरा, दुरावल कला, पापी, बसुहा, गुलख, पापीरा, कसया कला, शिवखरी, जमगांव, शिवद्वार, घोरावल, मुड़िलाडीह, बकौली, चुर्क, चोपन, ओबरा, शक्तिनगर, चपकी, सिंदुरिया, जगदीशपुर आदि हैं । इस उद्योग ने एक ओर बाल श्रम को बढ़ावा दिया है तो दूसरी ओर रोजगार के अवसर प्रदान किये हैं।

(3) **बजरी-बालू एवं मोरंग उद्योग–** अध्ययन क्षेत्र का यह प्रमुख उद्योग है। बजरी तोड़ने के लिऐ चोपन, ओबरा तथा डाला क्षेत्र में हजारों 'क्रैशर उद्योग' लगे हुए हैं। इन क्षेत्रों की सम्पूर्ण पहाड़ियों को तोड़कर समतल रूप प्रदान किया जा रहा है। यहाँ की बजरी भवनों, परियोजनाओं , औद्योगिक भवनों, पुलों तथा सड़कों आदि के निर्माण के लिए दूर दूर तक जाती है। बजरी की ढुलाई ट्रकों व ट्रैक्टरों से की जाती है। इससे परिवहन उद्योग में काफी वृद्धि हुई है ।

अध्ययन क्षेत्र की सभी नदियां (सोन, कर्मनाशा, कनहर, रिहन्द आदि) पहाड़ी हैं। इन नदियों से निर्मित बालू की मात्रा एवं गुण उत्तम प्रकार का है। यहाँ के बालू के कड़ बड़े तथा चमकीले हैं, जिसका उपयोग बांधों, भवनों, कारखानों, पुलों आदि में किया जाता है। यहाँ की बालू अपनी उत्तमता के कारण अन्य प्रदेशों में भी भेजी जाती हैं, जो ट्रकें अन्य स्थानों से सामान लेकर सोनभद्र आती हैं उन्हें 'वापसी कार्य' के रूप में बजरी बालू एवं मोरम मिल जाता है। बालू से परिवहन एवं निर्माण उद्योग का विकास हो रहा है ।

अध्ययन क्षेत्र के सभी विकासखण्डों में मोरम की खानें पायी जाती हैं। इसका उपयोग रंग बनाने, पेंट बनाने तथा सड़क निर्माण में किया जाता है। स्थानीय कच्ची एवं खड़ंजा सड़कों पर मोरम बिछाकर सड़कों को आवागमन के अनुकूल बनाया गया है।

(4) **फर्नीचर उद्योग–** प्रकाष्ठ की माँग बढ़ जाने तथा लकड़ी चिराई (आरा) मशीनों की स्थापना से सोनभद्र में इस उद्योग का विकास तेजी से हो रहा है । अनेक औद्योगिक केन्द्रों की स्थापना से इस उद्योग को स्थानीय बाजार भी उपलब्ध है। रेनूकूट के समीप मुर्धवा लकड़ी चिराई एवं फर्नीचर उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र है। इसके अतिरिक्त राबर्ट्सगंज, चोपन,

ओबरा, रेनूकूट, अनपरा व शक्तिनगर अन्य प्रमुख केन्द्र हैं। पर्यावरण संतुलन से साम्य स्थापित करते हुए फर्नीचर उद्योग को और अधिक विकसित किया जा सकता है। वनों से बिना चीरी लकड़ी (बल्ली, एवं गोला) निकाली जाती है। मुर्धवा एवं दुद्धी प्रमुख प्रकाष्ठ मण्डियाँ हैं। साल, असना, सिद्धा, हल्दू, धौ, सलई, सिरिस, साल आदि इस उद्योग में प्रमुखत प्रयुक्त होती हैं।

(5) **ईंट उद्योग-** जनपद के औद्योगिक विकास से इस उद्योग का स्वत· विकास हो गया । विकास खण्ड चोपन, म्योरपुर तथा दुद्धी में अनेक ईंट के भट्ठे चल रहे हैं। कोयले की प्राप्ति सिंगरौली कोयला क्षेत्र से हो जाती है तथा स्थानीय रूप से उपलब्ध सस्ते श्रमिक व स्थानीय बाजार इस उद्योग के विकास के प्रमुख कारण हैं ।

उपर्युक्त उद्योगों के अतिरिक्त निम्न लघु उद्योग अध्ययन क्षेत्र में यत्र-तत्र फैले हुए हैं -

- दाल मिल
- खाद्य तेल मिल
- आटा पीसने का उद्योग
- बेकरी उद्योग
- मोमबत्ती उद्योग
- चमड़ा उद्योग
- एल्यूमिनियम के सामान

(स) ग्रामीण एव कुटीर उद्योग

ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग को साधारणतया एक समान माना जाता है। यद्यपि काल एवं स्थान के अनुसार इनमें सूक्ष्म भेद बताया जाता है। कुटीर उद्योग ऐतिहासिक दृष्टिकोण से आधुनिक निर्माण उद्योग का आधार है। इसके अन्तर्गत दस्तकार अपनी पैतृक दक्षता के आधार पर अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से घर में ही वस्तुएं बनाता है। इस उद्योग की प्रमुख विशेषता स्थानीय कच्चे माल का प्रयोग है। इनके उत्पादों की उपादेयता स्थानीय लोगों के लिए अधिक होती है। इन उद्योगों का उत्पादन छोटे स्तर पर होता है तथा बहुत साधारण औजारों

एव्रं उपकरणों का प्रयोग किया जाता है।[25] विस्तृत अर्थों में ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों में उन सभी उद्योगों को सम्मिलित किया जा सकता है। जो ग्रामीणों द्वारा आंशिक या पूर्णकालिक व्यवसाय के रूप में किये जाते हैं। ये उद्योग जातिगत अथवा परम्परागत उद्योग के रूप में हो सकते हैं।[26] अध्ययन क्षेत्र में कृषि एवं वनों पर आधारित अनेक लघु उद्योग पाये जाते हैं, जिनमें प्रमुख निम्न हैं -

(1) **तेंदू पत्ता-** तेंदू के पत्ते का उपयोग बीड़ी बनाने में किया जाता है। तेंदू पत्ता व्यापार अधिनियम 1972 के लागू हो जाने के उपरान्त समस्त तेंदू पत्ते का व्यापार शासन ने अपने हाथ में ले लिया है। सन 1983 से यह कार्य उ0प्र0 वन निगम द्वारा सम्पन्न हो रहा है। तेंदू पत्ते का संग्रहण स्थानीय श्रमिकों द्वारा किया जाता है और पचास-पचास पत्ते की गड्डियां बनायी जाती हैं। इस प्रकार बांधी गयी एक हजार गड्डियों से एक मानक बोरा बनता है। तेदूं पत्ते का निर्गम, मानक बोरों या छोटे-छोटे बोरों जिन्हें 'झाल' कहते हैं, में किया जाता है। तेंदू पत्ता का संग्रहण वन निगम के निर्धारित डिपो मुर्धवा, दुद्धी, तथा विण्ढमगंज में किया जाता है।

सोनभद्र के वन प्रभाग के राजस्व का लगभग 3/4 भाग तेंदू पत्ते से प्राप्त होता है। जिस वर्ष गर्मी अधिक पड़ती है तथा 'लू' अधिक चलती है, उस वर्ष तेदूं पत्ता अच्छी तरह पनपता है। पत्तियों को तोड़ने का कार्य मई से मध्य जून तक होता है। अध्ययन क्षेत्र में तेंदू पत्ते की उपलब्धता को देखते हुए बीड़ी उद्योग की पर्याप्त सम्भावनाएं हैं।

(2) **ईंधन एकत्रीकरण**

ईंधन के रूप में लकड़ियों की स्थानीय माँग पिपरी, रेनूकूट, दुद्धी, विण्ढमगंज शक्तिनगर, अनपरा, रेणूसागर, रिहन्द नगर, ओबरा, डाला, चुर्क तथा राबर्ट्सगंज आदि में बढ़ती जा रही है। मिर्जापुर, इलाहाबाद तथा वाराणसी इसकी प्रमुख मण्डियां हैं। ईंधन के रूप में धौ, ककोर, सिद्धा तथा बेर की लकड़ियां अच्छी समझी जाती हैं। पर्यावरण संतुलन की समस्या को देखते हुए ईंधन एकत्रीकरण के उद्योग के विकास को प्रश्रय नहीं दिया जा सकता है। पुराने तथा बेकार वृक्षों की लकड़ियों का प्रयोग ईंधन के रूप में अवश्य किया जा सकता है।

(3) मिट्टी के बर्तनों का उद्योग-

अध्ययन क्षेत्र में कुम्हार जाति द्वारा घड़ा, सुराही, कुल्हड़ आदि मिट्टी के बर्तन बनाये जाते हैं। दीपावली के अवसर पर दीपक तथा खिलौने बनाए जाते हैं। मिट्टी के बर्तन बनाने का उद्योग बरसात के दिनों में नहीं होता है। कच्चे बर्तनों एवं खिलौनों को पकाकर तैयार किया जाता है तथा उन्हें बाजार में विक्रय हेतु लाया जाता है।

(4) **ग्रामीण चमड़ा उद्योग-** इस उद्योग में मृत जानवरों की खाल निकालना, सफाई करना तथा उससे जूता, चप्पल तथा उपयोगी वस्तुएं बनायी जाती हैं। इस कार्य में अध्ययन क्षेत्र के कुछ विशिष्ट लोग ही लगे हुए हैं।

(5) **चावल उद्योग-** अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड चतरा, राबर्टसगंज व घोरावल की अधिकांश ग्राम सभाओं में 'हालर' द्वारा धान की कुटाई की जाती है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में एक भी चावल मिल नहीं है ।

(6) **बगई घास-** यह एक विशिष्ट प्रकार की घास है, जिसका उपयोग रस्सी बनाने में होता है। जनपद सोनभद्र में बगई घास लगभग सभी विकासखण्डों में पायी जाती है। किन्तु विकासखण्ड नगवां चोपन, म्योरपुर, बभनी व दुद्धी में यह अधिक पायी जाती है। बगई घास की अधिकता को देखते हुए रस्सी बनाने के कुटीर उद्योग विकसित करने की पर्याप्त संभावना है। यद्यपि स्थानीय निवासियों द्वारा हाथ से बनायी गयी रस्सी, कुछ जरूरतों की पूर्ति करती है। कुछ उपयोग मीरजापुर, अहरौरा, चुनार व राबर्ट्सगंज, के क्षेत्रों में किया जाता है। बगई घास का उपयोग कागज उद्योग में भी किया जाता है। इस हेतु कुछ घासों का निर्यात डेहरी आनसोन, डालमिया नगर आदि स्थानों को भी होता है। इस तरह सोनभद्र में कागज उद्योग स्थापित करने की पर्याप्त संभाव्यता है ।

(7) **कम्बल उद्योग-** पठारी क्षेत्र होने के कारण भेड़पालन पर्याप्त रूप में होता है। चरवाहों द्वारा भेड़ों का उपयोग दूध के अतिरिक्त बालों से कम्बल बनाने व भेड़ों के मल मूत्र से खाद बनाने के रूप में किया जाता है। कम्बल, कुछ चरवाहों के परिवार

स्वयं बनाते हैं जबकि कुछ चरवाहे बालों को बेचकर धन अर्जित करते हैं। कम्बल बनाने में दक्षता का अभाव होने के कारण उत्तम कोटि का कम्बल तैयार नहीं हो पाता है, जिससे कम्बलों का बाजार स्थानीय है । इन कम्बलों का उपयोग यहाँ के मूल निवासियों द्वारा न केवल शीत ऋतु में होता है वरन् ग्रीष्म ऋतु में भी 'लू' से बचने व 'पूजा' आदि में भी किया जाता है । भेड़ों के मलमूत्र से उत्तम कोटि की खाद बनती है। यहाँ भेड़ों के झुण्ड को 'उर्वरक-कारखाना' कहा जाता है। किन्तु रसायनिक उर्वरकों के कारण इन 'प्राकृतिक उर्वरक कारखानों' का महत्व घटता जा रहा है। खाद के रूप में इसे पुनः प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता है, जो वैज्ञानिक प्रेरणा से ही सम्भव है। अपनी गुणवत्ता की तुलना में भेड़ों की खाद बहुत सस्ती है।

(8) **रस्सी उद्योग (बकेल)**- पलास के क्षैतिज जड़ों से निर्मित बकेल मजबूत एवं टिकाऊ होती है। यद्यपि इसका उपयोग बारीक कार्मो में नहीं होता है फिर भी पशुओं के बांधने की रस्सी (पगहा, पसेल, खोंचा व छान आदि), कुओं से पानी खींचने की रस्सी (लेजूर), चारपाई कसने की रस्सी, कच्चे मकानों के छाजन आदि घरेलू उपयोग में किया जाता है । बकेल पलास का जड़ होता है, जिसे अप्रैल से जून माह में 2'-3' तक जमीन में खुदाई करके निकाला जाता है, पुनः इसके रेशों को अलग कर लिया जाता है । बकेल से रस्सी बनाने का काम स्थानीय लोगों द्वारा स्थानीय उपयोग के लिये किया जाता है। जनपद सोनभद्र में पलास की अधिकता को देखते हुए बकेल से रस्सी बनाने के काम को कुटीर उद्योग के रूप में विकसित किया जा सकता है ।

(9) **सींक उद्योग**- स्थानीय रूप से पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध 'जूर' से उत्पन्न सींक का उपयोग झपोली, कुरूई व झाड़ू बनाने में किया जाता है। सींक से झाड़ू बनाने का कार्य सोनभद्र व उसके समीपवर्ती क्षेत्र को छोड़कर भारत में कहीं नहीं होता है। झपोली, कुरूई व झाड़ू सोनभद्रवासियों द्वारा अपने अतिथियों को उपहार में दी गयी विशिष्ट वस्तु मानी जाती है । सींक से निर्मित वस्तुओं को कुटीर व हस्तकला उद्योग के रूप में विकसित करने की पर्याप्त संभावनाएं हैं । एक ऐसा उद्योग जिसमें पूँजी की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है, केवल श्रम की आवश्यकता है। कृषक अनभिज्ञता वस 'जूरों' को समाप्त करते जा रहे हैं।

अतः इसे रोकने की आवश्यकता है । थोड़ी सी रूचि व दक्षता के प्रयोग से मींकों से अनेक कलात्मक वस्तुएं बनायी जा सकती हैं , जो नगरों व महानगरों के भवनों में सजावटी वस्तुओं के रूप में प्रयुक्त हो सकती हैं। इससे न केवल आय में वृद्धि होगी वरन् कला का भी विकास होगा तथा महिलाओं के रोजगार में विशेष वृद्धि होगी ।

(10) **बांस-निर्मित वस्तुएं** - बांस से घरेलू उपयोग की अनेक वस्तुएं यथा डलिया, दौरी, पंखा, सूप आदि का निर्माण विशेषत· धरकार व डोम जातियों द्वारा किया जाता है। सोनभद्र में बांस पर्याप्त रूप में पाया जाता है किन्तु इससे निर्मित वस्तुओं का सम्बन्ध विशिष्ट जाति से होने के कारण विकास कम हो पाया है। जरूरत है इसे कुटीर उद्योग के रूप में विकसित करने की । डोम, धरकार चलते-फिरते निर्माण केन्द्र के रूप में कार्य करते हैं।

(11) **बांसुरी व शहनाई का निर्माण** - सीमित पैमाने पर डोम व धरकार जाति द्वारा किया जाता है। उचित प्रोत्साहन देकर कुटीर उद्योग के रूप में विकसित कर, इसके बाजार क्षेत्र को राज्य व राष्ट्र स्तरीय बनाया जा सकता है ।

(12) **डफला वाद्ययन्त्र** - इसे धरकार लोग सीमित स्तर पर बनाते हैं। इसे कुटीर उद्योग के में विकसित कर,आय व रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं।

(13) **चरखा उद्योग** - दुद्धी तहसील में 'पनिका' जाति के लोग चरखा का निर्माण करते थे तथा स्वयं कपास की खेती कर सूत कातने कपड़ा बुनने का कार्य करते थे। इस तरह कपड़ा उद्योग में वे पूर्णतया आत्मनिर्भर थे। किन्तु मशीनीकृत वस्त्रों के भरमार व इस क्षेत्र में बड़े उद्योगों की स्थापना से पनिका जाति के लोग पुश्तैनी धंधे का परित्याग कर अन्य कार्यों में लग गये हैं। वर्तमान समय में 'गोविन्दपुर आश्रम' के स्वावलम्बी अर्थव्यवस्था के प्रोत्साहन के फलस्वरूप आश्रम द्वारा स्वयं व उसके आसपास के क्षेत्रों में सीमित स्तर पर चरखे से कपड़ा बुनाई का काम किया जा रहा है। इस उद्योग में रोजगार के पर्याप्त अवसर हैं। अतः कपास की खेती को विकसित कर, चरखा बनाने व उससे सूत कातने तथा कपड़ा बुनने के उद्योग को पुनर्जीवित करना चाहिए ।

(14) **गोदना उद्योग** - विशेषतः अनुसूचित जाति एवं जनजाति में प्रचलित है। गोदना गोदने का काम 'वादी' जाति के लोग करते हैं। हाथ-पांव में गोदना से निशान बनाकर अनेक उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। **प्रथम** - गोदना परिचय - पत्र का कार्य करता है। अशिक्षित लोगों में यह विशेष तौर पर कारगर होता है। गोदना अपने प्रिय की याद व पहचान के रूप में भी कराया जाता है। **द्वितीय** - गोदना के निशान लोगों के आभूषण की महत्वाकांक्षा की पूर्ति करते हैं। **तृतीय** - कहा जाता है कि गोदना से अनेक रोग नहीं होते हैं। अतः यह टीकाकरण के उद्देश्य की भी पूर्ति करता है। **चतुर्थ** - स्वयं में एक कला है । गोदना के साथ - साथ कानों व नाकों में छिद्र करने की भी प्रथा है। कान व नाक में छिद्र करने की प्रथा न केवल सोनभद्र में बल्कि नगरों व महानगरों में भी सामान्य तौर पाया जाता है। शास्त्रों में तो नाक व कान छेदने को, संस्कार के रूप में वर्णित किया गया है। 'गोदना' चीनी चिकित्सा पद्वति 'एक्यूपंचर' विधि से साम्य रखती है। अतः ऐसा लगता है कि गोदना उद्योग प्राचीन काल से ही फल-फूल रहा है। गोदना को समाज में विशेष मान्यता नहीं है, फिर भी इसके कलात्मक रूप आज भी दर्शनीय हैं व इसे उद्योग के रूप में प्रसारित किया जा सकता है ।

(15) **कत्था उद्योग** - कत्था मुख्यतः दुद्धी तहसील में पाया जाता है। दुधिया कत्था की वाराणसी तथा मिर्जापुर में और साधारण कत्थे की कानपुर मुख्य मण्डी है। इस क्षेत्र में दोनों प्रकार का कत्था बनता है। सोनभद्र में कत्था निर्माण उद्योग को और विकसित किया जा सकता है ।

(16) **गोंद** - खैर, धौ, कुर्लू तथा पीपल के वृक्षों से निकाला जाता है। इसकी मण्डी अहरौरा, हाथरस तथा दिल्ली में हैं ।

(17) **कोरैया** - मण्डी में कोरैया शब्द का प्रयोग दोनों प्रजातियों होलोराइना तथा राइटिया के लिए होता है। यह खिलौना बनाने के लिए बहुत ही उपयुक्त लकड़ी है। इसका निर्यात वाराणसी तथा अहरौरा को किया जाता है। लकड़ी के निर्यात की जगह सोनभद्र वासियों द्वारा खिलौना बनवा कर निर्यात करना चाहिए। इस कुटीर उद्योग से आय व रोजगार

में वृद्धि होगी ।

(18) **रेशम एवं टसर उद्योग** - रेशम के कीट असना (टर्मिनेलिया अलाटा) शहतूत (मोरस इण्डिका) के वृक्षों पर पाले जाते हैं जिनसे देश का कोआ प्राप्त किया जाता है। इसी प्रकार टसर के कीट अर्जुन या कहवा (टर्मिनेलिया अर्जुना) के वृक्षों पर पाले जाते हैं। दुद्धी तहसील में इसके विकास की पर्याप्त संभावनाएं हैं। असना के वृक्ष कोन रेंज में अधिक पाये जाते हैं जहाँ पर रेशम विकास विभाग की सहायता से रेशम उत्पादन को बढ़ावा दिया जाना चाहिए । अर्जुन के शुद्ध रोपण टसर उत्पादन के उद्देश्य से किये जा रहे हैं। ऐसे क्षेत्रों में टसर के उत्पादन को बढ़ावा देने से स्थानीय निवासियों, आदिवासियों को रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे ।

(19) **रेशम कीट पालन एवं कोया उत्पादन** - कीटोण्डों से प्रस्फुटित रेशम कीट अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। इसलिए इस अवस्था में इनके पोषण में बहुत ही सावधानी बरतनी पड़ती है। समस्त कोयों की बिक्री उचित दरों पर रेशम विभाग द्वारा करायी जाती है। उचित मात्रा में कर्षण कार्य तथा खाद एवं पानी उपलब्ध कराकर प्रति एकड़ पत्ती उत्पादन और बढ़ाया जा सकता है। फलस्वरूप कोया उत्पादन में भी वृद्धि अवश्यम्भावी है। इसके अतिरिक्त यदि कृषक अपने उत्पादित कोया से चरखा द्वारा धागाकरण प्रारम्भ कर दे तो उनकी आय बढ़ जायेगी। क्योंकि प्रति 10-12 किलोग्राम कोया से लगभग 1 किलोग्राम रेशम धागा प्राप्त होता है, जिसका बाजार मूल्य लगभग 450-550 रू0 प्रति किलोग्राम है ।

(20) **मधुमक्खी पालन** - उ0प्र0 खादी ग्रामोद्योग द्वारा प्रकाशित एवं प्रचारित पुस्तक 'मधुमक्खी पालन उद्योग' से मौन पालन सम्बन्धी संक्षिप्त रूप रेखा प्रस्तुत है जो कि इस क्षेत्र के आदिवासियों व स्थानीय निवासियों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए एक महत्वपूर्ण लघु उद्योग के रूप में विकसित किया जाता है । इस जनपद में अनेक उगाई जाने वाली एवं जंगली वनस्पतियां ऐसी हैं, जो मधुमक्खियों के लिए उपयोगी हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है - जामुन, तुन, रीठा, जकरेन्डा, खैर, दालचीनी, वाटल बुश, आंवला, सहजन, नीम, इमली, कचनार, साल, अर्जुन, जंगली जलेबी, जंगली बेर तथा अमरूद आदि ।

5.4 ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों का महत्व

बढ़ती हुई जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध कराने, गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली जनसंख्या का जीवन स्तर ऊपर उठाने, आर्थिक विषमता को कम करने एवं बढ़ती शहरी करण की समस्या के समाधान का एकमात्र विकल्प है - ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों का विकास । तेजी से बढ़ती हुई ग्रामीण जनसंख्या को कृषि-क्षेत्रों में रोजगार के सीमित अवसर को देखते हुए सबको काम नहीं दिया जा सकता । इन उद्योगों का सबसे महत्वपूर्ण लाभ यहीं है कि प्राकृतिक रूप से श्रमिकों को अपने अनुकूल वातावरण में कार्य मिल जाता है। जिससे आन्तरिक सुख प्राप्त होता है। उनके सामर्थ्य, इच्छा, और रूचि के अनुरूप तथा व्यक्तिगत योग्यता एवं प्रवृत्ति के अनुसार व्यवसाय चलाने की सम्भावना भी बन जाती है। अध्ययन क्षेत्र में कच्चा माल, स्थानीय योग्यता और स्थानीय आवश्यकता के अनुरूप ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। अध्ययन क्षेत्र में श्रम के बाहुल्य तथा पूँजी के अभाव को देखते हुए कुटीर उद्योगों का बहुत अधिक महत्व है। ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों का महत्व निम्न तथ्यों के कारण लगातार बढ़ता जा रहा है।

1. गाँव के कच्चे माल पर आधारित ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग, ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए उपयुक्त हैं।

2. ग्रामीण क्षेत्रों मेंइन उद्योगों की स्थापना करके ग्रामीण क्षेत्र की जनसंख्या को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराकर अर्द्ध बेरोजगारी अदृश्य बेरोजगारी की समस्या का समाधान किया जा सकता है ।

3. ग्रामीण अर्थव्यवस्था के आय स्तर को सुधारने हेतु क्षेत्रीय प्राकृतिक और मानवीय संसाधन का प्रयोग किया जा सकता है ।

4. इन उद्योगों की स्थापना से बहुसंख्यक ग्रामीणों की क्रय शक्ति में सुधार होगा, फलस्वरूप उद्योगों पर आधारित वस्तुओं की माँग में वृद्धि होगी और उनके जीवन स्तर में सुधार होगा ।

5. ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना करके गाँवों से नगरों की ओर जनसंख्या के पलायन को रोका जा सकता है ।

6. इन उद्योगों से कृषि एवं उद्योगों के सहयोग से संतुलित विकास की प्राप्ति हो सकेगी ।

7. ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना से कुछ सीमा तक उद्योगों का विकेन्द्रीकरण किया जा सकता हे ।

8. धन एवं आय की असमानता को समाप्त किया जा सकता है ।

9. ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों से शीघ्रातिशीघ्र उत्पादन किया जा सकता है क्योंकि इसमें तकनीकी ज्ञान की कम आवश्यकता होती है और इन्हें यथाशीघ्र प्रारम्भ किया जा सकता है ।

5.5 औद्योगिक समस्याएँ

अध्ययन क्षेत्र में बड़े उद्योगों में जहाँ प्रबन्धन की प्रमुख समस्या है वहीं लघु एवं कुटीर उद्योगों में संसाधनों तथा वित्तीय अनुपलब्धता की समस्या है। जब तक सभी उद्योगों के समस्याओं का समाधान नहीं हो जाता तब तक समन्वित औद्योगिक विकास नहीं किया जा सकता। चुर्क एवं डाला में स्थित सीमेंट कारखाने की समस्या उसके निजी क्षेत्र में हस्तान्तरण के प्रस्ताव से उत्पन्न हुयी थी। श्रमिकों एवं कर्मचारियों के हड़ताल से कई वर्ष उत्पादन शिथिल रहा। सरकार द्वारा इसे निजी क्षेत्र में हस्तान्तरण का प्रमुख कारण 'घाटा' बताया गया था। किन्तु उचित प्रबन्धन तथा संसाधनों की समुचित आपूर्ति से इस घाटे की समस्या को समाप्त किया जा सकता है ।

चूँकि सभी कोयला क्षेत्र केन्द्र सरकार के अधीन है, इसलिए राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम (एन0टी0पी0सी0) के अन्तर्गत आने वाले ताप विद्युत गृहों (रिहन्द नगर तथा सिंगरौली

सुपर थर्मल पॉवर स्टेशन) को उत्तम कोटि का बिट्यूमिनस कोयला प्रदान किया जाता है, जबकि राज्य सरकार के अधीन अनपरा एवं ओबरा ताप विद्युत गृह को सब-बिट्यूमिनस कोयले की आपूर्ति की जाती है । राष्ट्रीय हित में इस तरह की समस्याओं को कम किया जाना चाहिए। निजी क्षेत्र के रेणूसागर ताप विद्युत गृह को भी उच्च मूल्य पर बिट्यूमिनस कोयले की आपूर्ति की जाती है । ओबरा ताप विद्युत गृह में कोयले की उचित मात्रा सही समय पर न पहुँचने से प्रायः बहुत कम विद्युत उत्पादन होता है । अध्ययन क्षेत्र में उर्जा के वृहद् स्रोत होने के बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत आपूर्ति बहुत कम होती है, जिससे लघु उद्योग सबसे अधिक प्रभावी होता है। कुटीर व ग्रामीण उद्योग भी बिजली की अनुपलब्धता से सौर्य प्रकाश पर ही निर्भर करते हैं। इससे दस्तकारों व श्रमिकों का समय नष्ट होता ही है, समुचित उत्पादन भी नहीं हो पाता है ।

परिवहन के साधनों का अभाव लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास में सबसे बड़ी बाधा है। इसके अभाव में इन उद्योगों का बाजार से सम्पर्क नहीं हो पाता है जिससे उचित मूल्य मिलने में एवं औद्योगिक उत्पादों के प्रसार में बाधा पहुँचती है। नयी टेक्नालॉजी का अभाव व पूँजी का अभाव अध्ययन क्षेत्र के औद्योगिक गति को अवरूद्ध कर रहे हैं। पूँजी के अभाव में अनेक बेरोजगार युवक कुटीर एवं लघु उद्योग नहीं स्थापित कर पा रहे हैं। इसके अभाव में अध्ययन क्षेत्र के संसाधनों का समुचित उपयोग नहीं हो पा रहा है। फलतः इस क्षेत्र के संसाधनों से अन्यत्र औद्योगिक विकास हो रहा है। उदाहरणार्थ तेदूं पत्ते की प्रचुरता के बावजूद बीड़ी उद्योग का विकास नहीं हो पाया है। धान की प्रचुरता के बावजूद चावल मिल की स्थापना नहीं हो पायी है।

उल्लेखनीय है कि अध्ययन क्षेत्र में जो भी उद्योग हैं, वे सार्वजनिक क्षेत्र तथा बाहर के बड़े-बड़े पूँजीपतियों के हाथ में है। इस क्षेत्र के लोगों के पास श्रम के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। अतः यदि इस समस्या पर समय से ध्यान नहीं दिया गया तो स्थानीय लोगों का असन्तोष विद्रोह के रूप में प्रस्फुटित होगा। उद्योगों में श्रमिकों की भागीदारी न होना विपणन के लिए सड़कों एवं बाजार का अभाव तथा कुछ सरकारी नीतियां अनेक रूपों में औद्योगिक समस्याएं उत्पन्न कर रहीं हैं ।

इसके अतिरिक्त वृहद् उद्योगों द्वारा पर्यावरण प्रदूषण स्थानीय लोगों की प्रमुख समस्या है। डाला में यह लोकोक्ति प्रचलित है कि 'सीमेंट के लिए कारखाने में मत जाओ बल्कि किसी पेड़ को हिला दो पर्याप्त सीमेंट मिल जायेगा।' इसी प्रकार सोनपार के क्षेत्रों में यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि 'सरकार सबसे अधिक धूम्रपान की सुविधा दी है जिसका पैसा भी नहीं लेती है'। इन लोकोक्तियों से अध्ययन क्षेत्र में उद्योगजनित समस्याओं का चित्र उभड़ता है। वास्तव में हमारी सम्पूर्ण विकास नीति द्वंद में फंस गयी है। उद्योगों की स्थापना एवं विकास की समस्या को दूर करने के लिए जहाँ अनेक योजनाएं व नीतियां हैं, वहीं उद्योग जनित समस्याओं के समाधान के लिए प्रभावी नीतियों का सर्वथा अभाव है ।

5.6 औद्योगिक संभाव्यता एवं विकास नियोजन

अध्ययन क्षेत्र में खनिज संसाधन तथा वन संसाधन की प्रचुरता को देखते हुए अनेक नये उद्योगों की स्थापना की जा सकती है। कृषि उपजों को संशोधित करने हेतु अनेक उद्योगों की स्थापना की आवश्यकता है। वनस्पतियों तथा जड़ी बूटियों से आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति को सुदृढ़ बनाया जा सकता है। अनेक प्रकार के पत्थरों, क्रिस्टलों तथा कंकड़ों से उपयोगी वस्तुएँ बनायी जा सकती हैं। वर्तमान में बड़े उद्योगों पर आधारित उनके सह-उत्पाद से कुटीर एवं लघु उद्योगों की स्थापना की जा सकती है। अध्ययन क्षेत्र में कुछ ऐसे औद्योगिक उत्पादों की आवश्यकता है जिसे स्थापित करने के लिए नियोजन की आवश्यकता है। अध्ययन क्षेत्र के वर्तमान औद्योगिक स्वरूप के वर्णन से स्पष्ट है कि बड़े उद्योगों का पर्याप्त विकास हो चुका है। किन्तु लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना की पर्याप्त आवश्यकता है जिससे कुटीर, लघु व बड़े उद्योगों तथा कृषि एवं उद्योगों में सह-सम्बन्ध स्थापित हो सके। अध्ययन क्षेत्र में पर्यटन उद्योग के विकास की पर्याप्त संभाव्यता है। क्योंकि यहाँ प्राचीन किलों, मन्दिरों, जल प्रपातों, नदी-नालों, पर्वतों की सुरम्य घाटियों, बड़े बड़े झीलों जलाशयों तथा उद्योगों की अधिकता है।

(अ) पर्यटन उद्योग

अध्ययन क्षेत्र में सड़कों की सुदृढ़ व्यवस्था, होटलों का निर्माण व पर्यटक स्थलों का पुनरूद्धार करके पर्यटन उद्योग को उच्च स्तर पर विकसित किया जा सकता है। मारकुण्डी मोड़ की घुमावदार सड़कों से संलग्न पहाड़ियां तथा घाटियां, गोविन्द वल्लभ पन्त सागर की प्राकृतिक छटा तथा घंघरौल, नगवां व सिलहट बांध किसी भी पर्यटक को आकृष्ट

करने में सक्षम हैं। इन जलाशयों में नौकायन की व्यवस्था करके पर्यटकों को लुभाया जा सकता है। सभी ताप विद्युत, जल विद्युत, सीमेंट उद्योग तथा अल्यूमिनियम उद्योग को सीमित पैमाने पर पर्यटकों को देखने के लिए छूट देने पर पर्यटन उद्योग को और विस्तृत किया जा सकता है। पर्यटकों को आकृष्ट करने के लिए प्राकृतिक स्थलों के अतिरिक्त ऐतिहासिक स्थल महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अध्ययन क्षेत्र के प्रमुख ऐतिहासिक स्थलों, गढ़, किला, मन्दिरों आदि का विवरण निम्न प्रकार है ।

(1) विजयगढ़ किला

रावर्टसगंज से 15 किमी0 दक्षिण पूर्व में है। यह किला काशी नरेश राजा चेत सिंह के आधिपत्य में अंग्रेजों के आने के समय तक रहा है । यह किला चारों ओर से दीवारों से घिरा है, जिस पर तोपची निशाना लगाए बैठे रहते होंगे। किले के मुख्यद्वार को सीढ़ियों से जोड़ा गया था जो अब टूट चुकी है। कहते हैं कि यह तिलस्मी किला है तथा इसके नीचे भी एक किला छिपा है, ऐसा देखने से प्रतीत होता है ।

मुख्य द्वार से आगे बढ़ने पर रानी का महल है। रानी के महल में पत्थर की कलात्मक कलाकारी की गयी है। मजार के चारों ओर अब दीवार बनायी जा रही है जिसमें चुने दो पत्थरों को देखने से पता चलता है कि वहाँ एक शिला पर कुछ लिखा है जो हिन्दू परम्परा तथा धर्म से सम्बन्धित है। इस मकबरे के पास एक बड़ा तालाब है जिसका पानी साफ है। आगे चलकर राम सागर तालाब है। इसके साथ ही राजा का महल है। खिड़की का दरवाजा बन्द कर दिया गया था जिसे फिर खोलकर उधर से चढ़ने उतरने का रास्ता बनाया गया है। रास्ते में एक गणेश की प्रतिमा है। वर्तमान में गर्मी के दिन में यहाँ पर मेला लगता है। किले की मरम्मत करके तथा वहाँ तक पक्का मार्ग बनाकर विदेशी पर्यटकों को भी आकृष्ट किया जा सकता है। इसके पास ही में 'कैमूर वन्यजीव विहार' भी है।

(2) अगोरी गढ़

राबर्टसगंज से 25 किमी0 दक्षिण, चोपन से 7 किमी0 पश्चिम, अगोरीगढ़ का भग्नावशेषरेड़, विजुल एवं सोन नदी से घिरा है। इस किले में कहावत के अनुसार बहुत सम्पदा

है एवं यह भी तिलस्मी किला है । मोलागत राजा से लोरिक का युद्ध यहीं पर हुआ था। इस किले में देवी दुर्गा की कलात्मक मूर्ति आंगन के द्वार पर है। कोठियां एवं छत गिरते जा रहे हैं । यहाँ एक कुआँ है जो बहुत गहरा है तथा सोन नदी से इसका सम्बन्ध बताया जाता है । यहाँ भी दुर्गा जी की एक कलात्मक मूर्ति स्थापित है । यहाँ पर देवी की पूजा करने लोग दूर-दूर से आते हैं । दुर्ग को चारों ओर से नालों तथा खाई से सुरक्षित किया गया है दुर्ग से निकलने पर एक गेरूआ पहाड़ दिखता है, लोग कहते है इस पहाड़ पर लाखों वीरों की तलवार की धार उतारी गयी थी । सोननदी की धारा में एक हाथी की शक्ल का पत्थर है इसे लोग मोलागत राजा का 'कममिल' हाथी बताते हैं जो लोरिक द्वारा मारा गया था ।

(3) **सोढ़री गढ़** - घोरावल से आठ कि0 मी0 उत्तर - पश्चिम में शिवद्वार मन्दिर के पहले यह दुर्ग भग्नावशेष के रूप में मौजूद है । इसके चारों ओर गहरी खाई है । इसकी खुदाई में बहुत सी मूर्तियाँ मिली हैं जिनमें से कुछ खण्डित है जो शायद मुगल काल में तोड़ दी गयी होगी । यहाँ गहड़वाल राजाओं का कभीं राज्य था ।

(4) **शिवद्वार** - राबर्ट्सगंज से 30 कि0 मी0 घोरावल से 8 कि0 मी0 पश्चिम - उत्तर में शिवद्वार गाँव से 1.5 कि0 मी0 पहले ही शिवद्वार का शिव मन्दिर है । इस मन्दिर में शिव पार्वती की सृजन की एक काले पत्थर की करीब तीन फीट की प्रतिमा है । इसका मूल्य आजकल करोड़ों में आंका जाता है । इसी के समीप भग्न अन्य मूर्तियाँ भी हैं । कलात्मकता की दृष्टि से ये मूर्तियाँ महत्वपूर्ण हैं ।

(5) **गौरी - शंकर** - राबर्ट्सगंज से करीब 7 कि0 मी0 उत्तर यह मूर्ति घोरावल रोड पर एक खुले मन्दिर में स्थित है । पंचमुखी, गौरीशंकर, कन्डाकोट तथा रौप के मन्दिर के 'शिवलिंग' चारों दिशाओं में स्थित तथा एक ही काल के राजा के एक ही कारीगर द्वारा बनाये गये हैं।

(6) **दधिया नाला** - एक प्राचीन मन्दिर मऊ गाँव के आगे धंधरौल बांध से करीब 4 कि0 मी0 पर स्थित है । इसकी शिवलिंग करीब 1.5' से 2' व्यास का 3' ऊँचा है । इसी मन्दिर के साथ खुले में दो और शिवलिंग है जो एक ही मोटाई तथा ऊँचाई के हैं एक पर सहस्रनाग

की प्रतिमाएं बनी हैं । सहस्रनाग शिवलिंग का भग्नावशेष शिवद्वार में भी देखा गया है परन्तु वह करीब एक फीट का ही है । यहाँ पर काले पत्थर की एक अष्टभुजी की प्रतिमा है।

(7) **कण्डाकोट** - राबर्ट्सगंज से दक्षिण - पश्चिम कोण पर लगभग 12 कि0 मी0 की दूरी पर यह दुर्ग स्थित है । इसके प्राचीर ध्वंसावशेष हैं । यहाँ पर कण्डेश्वर महादेव का मन्दिर तथा कई गुफाएं हैं, जहाँ पर शैलाश्रित गुहा चित्र देखे जा सकते हैं । दुर्ग के चारों ओर खाई तथा हरे जंगल हैं । शिवरात्रि एवं बसंत पर यहाँ मेला लगता है । यहाँ से दो कि0 मी0 पर कुंडारी देवी का मन्दिर एवं गुफाएँ हैं ।

(8) **द्वार घाटी शिवगुफा** - डाला से ओबरा जाने वाली सड़क पर रेलवे फाटक से एक कि0 मी0 बॉये, पहाड़ी पर स्थित यह गुफा हाल ही में ज्ञात हुई है । कहते हैं कि स्टोन क्रशर को लगाते समय , इस गुफा का उद्‌भव हुआ । करीब 15 मीटर लम्बी इस गुफा के साथ अन्य गुफाएं भी जुड़ी मालूम पड़ती हैं । जिसके अन्तिम छोर पर एक नन्दी-नुमा तथा दो पत्थर लम्बे आकार के गोल पत्थर, इन्हें शिव तथा पार्वती का रूप माना जाता है, विद्यमान है । विशेष बात यह है कि यहाँ पर बहुत सी चट्‌टाने लटकी पड़ी हैं, परन्तु किसी से धात्विक ध्वनि नहीं आती है । केवल एक ही ऐसा पत्थर है जिसे हाथ से ठोकने पर डमडम की धात्विक ध्वनि आती है । इसी से प्रतीत होता है कि आदिकाल में शिव की आराधना यहाँ के लोग करते रहे होंगे और उसी के लिए इस प्रकार के स्थान का चुनाव करके शिव प्रतिमा, नन्दी आदि स्थापित किये होंगे । यहाँ के पत्थर पानी गिरने से अनोखे प्राकृतिक रूप धारण कर लेते हैं जो पर्यटक का मन मोह लेते हैं । सरकार द्वारा यहाँ कोई प्रबन्ध नहीं है जबकि इस प्रकार का स्थान कदाचित ही मिलता है ।

(9) **बरकन्हरा** - शिवद्वार मार्ग से 5 कि0 मी0 तथा घोरावल से 13 कि0 मी0 पर बरकन्हरा गाँव स्थित है । यहाँ पर एक पाकड़ के पेड़ के नीचे छोटे मन्दिर में माँ अष्टभुजी की काले पत्थर की करीब 3 फीट ऊँची प्रतिमा है जो ऐसा लगता है कि उसी काल की बनी है जब शिवद्वार की शिव पार्वती की प्रतिमा बनायी गयी होगी । भगवान विष्णु की सफद पत्थर की 1.5 फीट की बहुत सुन्दर प्रतिमा भी मिली है । इसे वहीं स्थापित करने हेतु मन्दिर का निर्माण हुआ है । उसकी कीमत लगभग डेढ़ से दो करोड़ तक आंकी गयी है ।

(10) **ज्वाला देवी** - सुदूर दक्षिणांचल में राबर्ट्सगंज से करीब 140 कि0 मी0 पर यह स्थान है । यहाँ पर ज्वाला देवी का अति प्राचीन शक्तिपीठ है । यहाँ बस द्वारा जाया जा सकता है । मन्दिर के पास ही 1 कि0 मी0 पहाड़ी पर गुफा है, जिसमें प्राचीन कलाकृतियां बनी हैं । मंदिर के द्वार पर अष्टभुजी की काले पत्थर की सुन्दर प्रतिमा दर्शनीय है ।

इसके अतिरिक्त मुखादरी, कडिया ताल - अगोरी किले की देवी, अमिला भवानी, मच्छरमारा भवानी एवं औढी महाबीर आदि की प्रतिमाएं प्राचीन एवं दर्शनीय है । साथ ही रेनूकूट में बिडला द्वारा नया स्थापित रेणुकेश्वर महादेव का मन्दिर, दैवी सम्पदा मंडल का राधा - कृष्ण मन्दिर एवं ओबरा का गीता मन्दिर आदि अत्यन्त सुन्दर है जो पर्यटकों का मन मोह लेते हैं । अध्ययन क्षेत्र में अनेक गुफाए व प्रपात हैं । इनका अति संक्षिप्त विवरण निम्न है -

(11) **ओबरा गुफा**- ओबरा में पानी हेतु टंकी तथा पाइप लाइन बिछाने का कार्य चलते समय ये गुफाएं मिली । वैसे तीन गुफायें स्पष्ट दिखाई देती हैं । प्रमुख गुफा गरीब 20' गहरी 10' ऊँची तथा 20' चौड़ी है जिसको देखने से यह प्रतीत होता है कि जब भौगर्भिक हलचल या भूकम्प आया होगा तो कठोर चट्टानों के चटकने से इनका निर्माण हुआ होगा ।

(12) **मुखादरी जल प्रपात** - जनपद में सबसे सुन्दर जल प्रपात मुखादरी है जो शिवद्वार से करीब 8 कि0 मी0 पश्चिम में बेलन नदी पर स्थित है । बीच रास्ते में कडिया ताल है जिसे विकसित कर झील का रूप दिया जा सकता है, जहाँ नौका बिहार एवं होटल, पर्यटक दृष्टि से प्राभावी होगा । मुखा-दरी की गुफाओं में बहुत से शैलाश्रित गुहा चित्र हैं जो प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण हैं । यहीं देवी की प्रतिमा तथा मन्दिर है ।

(13) **हाथीनाला जल प्रपात** -यह राबर्ट्संगज से करीब 60 कि0 मी0 दक्षिण- पूर्व में दुद्धी मार्ग पर अंग्रेजों द्वारा निर्मित कृत्रिम प्रपात है । यहाँ पर ठहरने के लिए 'हट' भी निर्मित है जिसका उपयोग पर्यटकों के लिए किया जाता है । इससे करीब 35 कि 0 मी0 पर म्योरपुर के पास नदी में भी एक प्रपात दर्शनीय है ।

(14) **पेड़ के कटे तने पत्थर हो गए** - राबर्ट्सगंज पिपरी मार्ग पर सलखन नामक स्थान पर मुख्य मार्ग से 1 कि0 मी0 पश्चिम मरगजवा पहाड़ी है । यहाँ पर पेड़ के कटे तनों की आकृति

की चट्टानें अभी हाल ही में पायी गयी हैं । इसके विषय में कहा जाता है कि इस पेड़ के कटे तने लगभग डेढ़ अरब वर्ष पुराने हैं जो कालान्तर परत-दर-परत चढ़ने पर पत्थर की आकृति में परिवर्तित हो गए ।

(ब) चिकित्सा उद्योग

अध्ययन क्षेत्र में चिकित्सा उद्योग विशेषतः आयुर्वेदिक चिकित्सा के विकास की पर्याप्त संभाव्यता है । सोनभद्र में ऐसे अनेक पेड़-पौधे तथा जड़ी-बूटियाँ है जिनका प्रयोग स्थानीय लोगों द्वारा किया जाता है । इस क्षेत्र के वनस्पतियों, जड़ी-बूटियों, वैद्यों के अनुभव तथा कुछ आधुनिक आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति में साम्य बैठाया जाय तो अनेक असाध्य रोगों की भी दवा दी जा सकती है । वास्तव में उत्तम स्वास्थ्य विकास का एक प्रमुख लक्षण है। कुछ प्रमुख जड़ी-बूटियों तथा वनस्पतियों के औषधीय गुण निम्न है, जिन्हें पहचानने, प्रयोग करने एवं प्रसारित करने की महती आवश्यकता है ।

1. **कुचिला** - अगोरी के पास गोठानी क्षेत्र में पर्याप्त रूप में मिलता है । इससे निर्मित दवा वायुविकार में प्रयोग की जा सकती है ।

2. **गुरूचि** - यह एक प्रकार की लता है जो बुखार में प्रयुक्त होती है ।

3. **पथर चट्टी** - धातु सम्बन्धी समस्त रोगों में गुणकारी होती है ।

4. **मदह पुरना** - पीलिया रोग की अमोघ दवा है ।

5. **हड़-जोड़** - टूटी हुई हड्डी को जोड़ने के काम में आता है ।

6. **धतूर की पत्ती** - इसे गर्म सरसों के तेल में डालकर, बरसात के मौसम में सड़ी उँगुलियों में लगाया जाता है । इसका दूध दर्द-निवारक है ।

7. **नीम का तेल** - चर्मरोगों में प्रयुक्त होता है ।

8. **महुआ का तेल** - अध्ययन क्षेत्र में इसे डोरी का तेल भी कहते हैं । इसका प्रयोग शुष्क अंगों को मुलायम बनाने तथा सर्दी-जुकाम में होता है । महुआ का वृक्ष सर्वत्र विद्यमान है ।

9. **कूटज** - इसका वृक्ष कर्मनाशा नदी के किनारे बड़ी संख्या में पाया जाता है । यह पेचिस के रोग में उपयोगी होता है ।

10. कहवा (अर्जुन) - इसकी छाल को दूध में पकाकर सेवन करने से हृदय रोग कभी भी नहीं हो सकता । यह सोनभद्र के सभी विकास खण्डों में पाया जाता है । इसके वृक्ष म्योरपुर, बभनी, नगवां व चोपन में अधिक संख्या में पाये जाते हैं ।

11. आँवला - आँवला में अनेक औषधीय गुण होते हैं । इससे च्यवनप्राश, त्रिफला का चूर्ण आदि बनाया जाता है । आँवला आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति का आधार है।

12. हर्र (हरण) - इसके बारे में कहा जाता है कि माता कुपित हो सकती है किन्तु हर्र का सेवन मिथ्या नहीं हो सकता । हर्र का चूर्ण पाचक होता है तथा खांसी की उपयुक्त दवा है ।

13. बहेरा - यह त्रिफला का घटक है तथा कफ निस्सारक है । हर्र व बहेरा के वृक्ष पर्याप्त पाए जाते हैं ।

14. कचनार - गलगंड रोग में प्रयुक्त होता है । फरवरी - मार्च में इसका फूल देखने योग्य होता है । इन फूलों का प्रयोग सब्जी के रूप में भी होता है ।

15. चिरौंजी - 'पियार' का फल खाने में स्वादिष्ट होता है तथा इसकी गुठली से चिरौंजी निकाली जाती है । चिरौंजी पीस कर बच्चों को लगाने से, चर्मरोग नाशक तथा हड्डी को मजबूत करने वाला होता है ।

16. भिलावा - इसका प्रयोग रासायनिक दग्ध (केमिकल काटराइज) के रूप में किया जाता है । इन क्षेत्रों में लोग इससे त्वचा को दागकर (जलाकर) रोगों को दूर करते हैं ।

17. करवन - इसका न केवल फल खाया जाता वरन् इसके जड़ को पीसकर, ज्वर में पीने से ज्वर समाप्त हो जाता है ।

18. खादिर (खैर) - इससे कत्था बनाया जाता है । खादिर रक्तशोधन, कुष्टरोग तथा खांसी में प्रयुक्त होता है ।

19. पलास के बीज का प्रयोग मनुष्य एवं जानवरों के उदर में कृमि नाशक के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

20. सतावरी - दूध व शक्ति बढ़ाने के लिए विशेषतः जानवरों को पीस कर पिलाया जाता है ।

21. लिसोढ़ा - इसके पत्ते का काढ़ा बनाकर पीने सें खांसी - जुकाम समाप्त हो जाता है ।

22. **शिवनाक** - दस्तावर के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

23. जंगली जानवरों के हड्डी, चमड़ा, सींग तथा अनेक जड़ी - बूटियों व पत्थरों का प्रयोग चिकित्सा के लिए किया जाता है ।

(स) प्रस्तर उद्योग

अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के प्रस्तर (पत्थर) पाए जाते हैं । इन पत्थरों से पेन्ट, भवन निर्माण सामग्री तथा मूर्तियों का निर्माण, ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग के रूप में किया जा सकता है । इन पत्थरों का उपयोग करने के लिए सरकार को छूट या लाइसेंस देने की आवश्यकता है । इस क्षेत्र के पत्थरों से कुटीर उद्योग के रूप में निम्न वस्तुएं बनायी जा सकती है ।

1. **हरे रंग का पत्थर** - इसे पीस कर हरा रंग तैयार किया जा सकता है।

2. **रॉक एवं कैल्शियम क्रिस्टल** - यह पहाड़ियों में बहुतायत रूप में है । इससे 'नग' एवं अन्य आभूषण बनाया जा सकता है । इससे न केवल धनार्जन होगा वरन् एक विशिष्ट कला का भी विकास होगा ।

3. **रेड ऑक्साइड (गेरू)** - पेन्ट के रूप में इसका इस्तेमाल प्राचीन काल से किया जा रहा है । प्रागैतिहासिक कालीन चित्र इसी से पेन्ट किए गए थे जो आज तक अपनी अमिट छाप छोड़ रहे हैं । गेरू की रंगाई से जंग नहीं लगता है । अतः गेरू से रंग एवं पेन्ट बनाने का काम लघु एवं कुटीर उद्योग में विकसित किया जा सकता है । शहरों में गमलों एवं गाँवों में दीवालों की रंगाई (पुताई) गेरू से ही किया जाता है । उल्लेखनीय है कि अध्ययन क्षेत्र में गेरू बहुतायत में उपलब्ध है ।

4. **चाइना क्ले (चीनी मिट्टी)** - यह दुद्धी क्षेत्र में प्रचुर रूप में उपलब्ध है चुनार की तरह यहाँ भी चीनी मिट्टी के बर्तन व खिलौने बनाने का लघु एवं कुटीर उद्योग प्रारम्भ किया जा सकता है । इस उद्योग को विकसित करने की प्रमुख समस्या दक्ष कारीगरों को आकृष्ट करने की है ।

5. **मोरंग** - इसका वितरण सर्वत्र है । इसका उपयोग रंग व पेन्ट बनाने में किया जा सकता है ।

6. **संगमरमर** - यह दुद्धी व शक्तिनगर क्षेत्र में पाया जाता है । यहाँ का संगमरमर उत्तम कोटि का नहीं है, फिर भी फर्स बनाने व मुजैक के रूप में प्रयोग किया जा

सकता है । इन्हें श्रमिकों व कारीगरों द्वारा उपयुक्त आकार देने की आवश्यकता है ।

7. **चूना पत्थर** - कैमूर पहाड़ी के दक्षिणी भाग में, बसुहारी क्षेत्र में चूना पत्थर के विशाल भण्डार हैं । यहाँ सीमेण्ट उद्योग के रूप में एक बड़ा उद्योग तथा चूना उद्योग के रूप में लघु उद्योग स्थापित किया जा सकता है । इससे उद्योगविहीन एवं पिछड़े विकासखण्ड नगवां में विकास की लहर दौड़ जाएगी हैं ।

8. अध्ययन क्षेत्र के लाल एवं बलुआ पत्थर से 'पटिया' बनाने की पर्याप्त संभावना है । उचित प्रोत्साहन देने पर चुनार की तरह 'पटिया' निर्माण का केन्द्र हो सकता है ।

9. पहाड़ी नदियों में बिखरे पत्थरों को कुटीर उद्योगों में तराशकर मूर्तियाँ, अलंकारिक वस्तुएं, 'पेपर वेट' व अन्य उपयोगी वस्तुएं बनायी जा सकती है ।

(द) हस्तकला उद्योग

इस प्रकार के उद्योगों में ऊनी दरी, चांदी के आभूषण, पत्थर के आभूषण, म्यूजिकल इन्स्ट्रूमेंट्स, बेंत, बांस व लकड़ी के खिलौने, फैन्सी आइटम, जरी, पीतल के बर्तन तथा अन्य उत्कृष्ट उत्पादों के विकास की पर्याप्त संभावनाएं है ।

(य) खादी तथा हैण्डलूम उद्योग

सूती तथा ऊनी कपड़े, पाली खादी, बनारसी साड़ी, सिल्क साड़ी तथा खादी ग्रामोद्योग द्वारा चीनी मिट्टी के बर्तन, काष्ठ कला, लौह कला तथा चर्मशोधन के इकाईयों को स्थापित करने की आवश्यकता है ।

(र) कृषि आधारित उद्योग

खाद्य तेल मिल, दाल मिल, चावल मिल, आटा मिल, गन्ना मिल, फल संरक्षण, पोल्ट्री फार्म, डेयरी उद्योग, मकई एवं रागी का प्रशोधन आदि के लिए उद्योगों को स्थापित करने तथा औद्योगिक इकाइयों में वृद्धि की आवश्यकता है ।

(ल) वन आधारित उद्योग

बीड़ी उद्योग, माचिस उद्योग, फर्नीचर, अगरबत्ती, कत्था निर्माण, गोंद और रेजिन निर्माण, लाख निर्माण, कागज के प्याले, पत्तियों के प्याले व तश्तरी, खस की टट्टी, झाडू

निर्माण, वनोत्पाद का संग्रह, प्रशोधन और पैकिंग आदि उद्योगों का विकास किया जा सकता है ।

(व) फाइवर आधारित उद्योग

इस प्रकार के उद्योगों में हथकरघा उद्योग को छोड़कर होजरी, नायलान के मोजे, इम्ब्रायडरी जूट के उत्पाद आदि सम्मिलित हैं । इन उद्योगों के विकास की पर्याप्त सम्भावनाएं हैं ।

(श) रासायनिक तत्वों पर आधारित उद्योग

डिटर्जेन्ट सोप, चमड़े के सामान, रबर एवं रैक्सीन के सामान, पी0वी0सी0 पाइप, कैन्डिल, मोम पर आधारित उद्योग, सौंदर्य प्रसाधन, हेयर आयल, ग्लास केयर आदि उद्योगों के विकास की पर्याप्त सम्भावना तथा आवश्यकता है ।

(ष) खनिज पदार्थों पर आधारित उद्योग

पाटरी, स्टोन क्रेशर, सीमेंट जाली, सीमेट पाइप, पत्थरों पर नक्कासी, प्लास्टर आफ पेरिस की मूर्तियाँ, वाशिंग पाउडर, डिस्टेम्पर, इस्टेन्सिल केमिकल, टाइल्स, स्लेट, पेन्ट, रंजक आदि उद्योगों के विकास की आवश्यकता है ।

(ह) सामान्य इंजिनियरिंग उद्योग

इस प्रकार के उद्योगों में विद्युत सामान, स्टील ट्रंक, अल्यूमिनियम ईगाट, कटिदार तार, आटो रिपेयरिंग, डिजल इंजन रिपेयरिंग आदि उद्योग आते हैं, जिनके विकास की आवश्यकता है ।

औद्योगिक नियोजन में केवल उद्योगों के स्थापना पर ही विशेष बल देना उपयुक्त नहीं है । उद्योगों की स्थापना के साथ - साथ पर्यावरण सुरक्षा पर भी विशेष ध्यान देने की आवश्कयता है । मनुष्य एवं पर्यावरण के बीच संतुलन वृहद् उद्योगों के कार्यसूची का प्रमुख विषय होना चाहिए । सभी उद्योगों को अपने आसपास के क्षेत्रों में पर्यावरण प्रभाव का अध्ययन करना चाहिए । उच्च क्षमता वाले 'इलेक्ट्रोस्टेटिक प्रेसीपिटेटर', चिमनी से निकलने वाले धुएं

में व्याप्त कणों की रोकथाम के लिए लगाया जाना चाहिए । चिमनी की ऊँचाई अधिकतम होनी चाहिए । जिससे प्रदूषण का प्रभाव कम हो । विभिन्न परियोजनाओं को स्वयं वृक्षारोपण कराना चाहिए । यद्यपि ओबरा, अनपरा, रेणूसागर, शक्तिनगर एवं रिहन्द नगर में व्यापक पैमाने पर वृक्षारोपण किया गया है ।

संयन्त्र से निष्कासित रॉख को सावधानी पूर्वक 'ऐश बैंक' में जमा करना चाहिए। इन रॉखों से ईंट निर्माण उद्योग की स्थापना की जा सकती है । इन रॉख क्षेत्रों को अवांछनीय क्षेत्र समझा जाता है, इसलिए इसे हरित क्षेत्र में परिवर्तित करने के लिए शोध की आवश्यकता है । यद्यपि रामागुंडम सुपर थर्मल पॉवर परियोजना के राख क्षेत्रों में यूकेलिप्ट्स ग्लोब्युलस, अकेसिया औरीक्यूलीफोरमिस, इपोमिया कारनोसा और न्यूसीना ग्लोका आदि प्रजातियों का सीमित स्तर पर रोपण किया जा रहा है ।

उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए तथा सभी औद्योगिक आवश्यकताओं को एक ही छत के नीचे पूर्ति के लिए सरकार ने 1977 में जिला उद्योग केन्द्र कार्यक्रम की शुरूवात की थी । इसे और अधिक प्रभावी बनाने के लिए अध्ययन क्षेत्र के प्रत्येक विकासखण्ड मुख्यालय पर 'विकासखण्ड उद्योग केन्द्र' के स्थापना की आवश्यकता है । अध्ययन क्षेत्र में औद्योगिक संभाव्यता बहुत अधिक है जिसे एक केन्द्र (राबर्ट्सगंज) से पूरा करना असम्भव है । अध्ययन क्षेत्र में औद्योगिक विकास के अवरूद्धता का प्रमुख कारण वित्तीय एवं तकनीकी अनुपलब्धता है । अतः इसे सरकारी प्रोत्साहन, ऋण तथा छूट आदि से समाप्त करने की आवश्यकता है। कुशल कारीगरों तथा दस्तकारों को आकृष्ट करके लघु एवं कुटीर उद्योग में परिमाणात्मक एवं गुणात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है ।

5.7 प्रस्तावित उद्योग

अध्ययन क्षेत्र के औद्योगिक संभाव्यता के वर्णन से स्पष्ट है कि कुछ उद्योगों को संस्थापित करने की अत्यधिक आवश्यकता है । प्रत्येक विकासखण्ड में निम्न प्रस्तावित उद्योग हैं ।

राबर्ट्सगंज - चावल मिल, फर्निचर, स्टोन ग्रिट्स, चर्मशोधन, चूना, जनरल इंजिनियरिंग टायर रिट्रेडिंग, आटो मोबाइल सर्विसिंग, साबुन, फिनायल, कागज/दफ्ती आदि के कारखाने स्थापित करने की आवश्कता है ।

घोरावल - आरामशीन से लकड़ी की चीराई, फर्निचर, बांस की टोकरी, बीड़ी उद्योग, चर्मकला, बेकरी, तेल मिल, ईंट भट्ठा तथा जनरल इंजिनियरिंग आदि ।

चोपन - स्टोन ग्रिट्स, चूना, मुजैक टाइल्स, आर0 सी0 सी0 पाइप, सेनेटरी फिटिंग्स, बीड़ी, साबुन, फिनायल, चर्मकला तथा जनरल इंजिनियरिंग आदि ।

नगवां - सीमेंट उद्योग, चूना, बीड़ी, दाल मिल, तेल मिल, चावल मिल, दियासलाई साबुन, क्राफ्ट पेपर तथा स्ट्रावोर्ड आदि ।

चतरा - चावल मिल, ईंट, स्टोन ग्रिट्स, हथकरघा, आइसकैण्डी, बेकरी, साबुन तथा फिनायल आदि ।

दुद्धी - कत्था उद्योग, रस्सी उद्योग, तेल उद्योग, आरामशीन व लकड़ी के फर्निचर, बीड़ी, कागज व स्ट्राबोर्ड, दियासलाई, स्टोनग्रिट्स, कालीन व दरी, कृषि यन्त्र तथा तेल मिल आदि ।

म्योरपुर - कत्था उद्योग, दियासलाई की तिली, स्टोनग्रिट्स, मार्बल चिप्स, कालीन एवं दरी, चर्मकला, इण्डस्ट्रियल गैसेज प्लाण्ट, नट वोल्ट, वायरनेल्स, फेरिक एलम, स्टील पाइप, जनरल इंजिनियरिंग वर्कशाप तथा अल्यूमिनियम के बर्तन आदि ।

बभनी - दरी, लाख, चर्मकला, काष्ठकला, बाँस की टोकरी, आरामशीन व लकड़ी के फर्निचर, जनरल इंजिनियरिंग, आइस फैक्ट्री, अल्यूमिनियम के बर्तन तथा साबुन उद्योग ।

इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में उपर्युक्त लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना करके औद्योगिक विकास को विस्तृत आधार प्रदान कर, विकास प्रक्रिया की गति को तीव्र की जा सकती है ।

संदर्भ

1. 'भारत' प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, 1988-89, पृष्ठ 388.

2. सिंह, काशीनाथ एवं सिंह, जगदीश : 'आर्थिक भूगोल के मूलतत्व', वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, 1984, पृष्ठ 296.

3. कौशिक, एस.डी. : 'आर्थिक भूगोल के सरल सिद्धान्त', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ, 1980-81, पृष्ठ 188.

4. *Richards, T. : 'The Geography of Economic Activity', Mc Graw Hill Book Co, Inc. 1962, p.456.*

5. *Miller, E. Willard : A Geography of Manufacturing, prentice Hall, Inc. Englewood Cliffs, N.J. 1962, p.1*

6. *Alexander, J.W. : 'Economic Geography', p. 288.*

7. *Jarret, H.R. : A Geography of Manufacturing (Second edition), Macdonald and Evans Estover Plymouth, 1977, p. VII.*

8. 'उत्तर प्रदेश वार्षिकी', सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश, 1990-91 व 1991-92, पृष्ठ 109.

9. शर्मा, आर.एस. : प्राचीन भारत का इतिहास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, पृष्ठ 21.

10. दास, शिवतोष: 'भारत स्वतन्त्रता के बाद', प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 1987, पृष्ठ 115.

11. माहेश्वरी, श्री कृष्ण . 'भारत में आयोजन और आर्थिक विकास', हिन्दी माध्यम, कार्यान्वयन निदेशालय, नई दिल्ली, 1980, पृष्ठ 261.

12. चन्द्र, बिपिन : भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम, कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1990, पृष्ठ 65.

13. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या -1

14. लोढ़ा, राजमल : औद्योगिक भूगोल , राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1990.

15. कुरैशी, एम.एच. : 'भारत, संसाधन और प्रादेशिक विकास', राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, 1990, पृष्ठ 71.

16. चौहान, वीरेन्द्र सिंह एवं गौतम, अलका. 'भारत का भूगोल', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ, 1990-91, पृष्ठ 336.

17. केशरी, अर्जुनदास: लोकनार्थ, पर्यावरण विशेषांक, सेवाश्रम प्रिटिंग प्रेस, हरतीरथ, वाराणसी.

18. 'भारत,' सूचना और प्रसारण मंत्रालय, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ 457.

19. वहीं, पृष्ठ 458.

20. दैनिक जागरण, वाराणसी प्रकाशन, 28 जुलाई 1993, पृष्ठ 9.

21. वही, 5 अप्रैल 1993, पृष्ठ 9.

22. वही, 28 अप्रैल 1993, पृष्ठ 9.

23. वही, 28 जुलाई, पृष्ठ 9.

24. वही.

25. कुरैशी, एम0एच0: भूगोल के सिद्धान्त, भाग-2, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, 1989, पृष्ठ 78 एवं 79.

26. सिंह, इकबाल· 'भारत में ग्रामीण विकास', राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ 75.

xxxxxxxxxx

अध्याय 6

परिवहन एवं संचार व्यवस्था की पृष्ठभूमि एवं नियोजन

परिवहन तन्त्र आर्थिक विकास का मुख्य आधार है। देश के लगभग 6 लाख गाँवों के लिए एक अच्छी परिवहन प्रणाली का होना आवश्यक है। देश में कृषीय और औद्योगिक उत्पादन, कार्यक्षम परिवहन व्यवस्था के विकास से सम्बद्ध है। परिवहन स्वयं उत्पादन की प्रक्रिया का एक चरण है क्योंकि विभिन्न प्रकार के उत्पादों को देश भर में फैले हुए उपभोक्ताओं तक पहुँचाना होता है, जो कि परिवहन के साधनों से ही सम्भव है।[1] विकसित परिवहन व्यवस्था से कृषि-विकास और औद्योगीकरण में भी सहायता मिलती है। परिवहन व्यवस्था का एक अन्य पहलू भी है। प्राय. परिवहन के साधनों का पर्याप्त विकास होने पर देश के सामाजिक जीवन में कुछ ऐसे परिवर्तन होते हैं, जिनसे आर्थिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार होता है।[2] किसी भी देश, प्रदेश या क्षेत्र के सतुलित विकास के लिए एकीकृत परिवहन तन्त्र की आवश्यकता होती है। परिवहन एवं संचार माध्यमों से 'क्षेत्रीय विशिष्टीकरण' का लाभ पिछड़े क्षेत्रों को भी मिल जाता है। 'इस प्रकार परिवहन जाल, पिछड़े क्षेत्रों में भी संसाधनों के उपयोग को बल देकर वृद्धि एवं विकास की स्थिति उत्पन्न करेगा।'[3] आर्थिक विलगन, राजनैतिक विखण्डन और सामाजिक दूरियों को एकीकृत एवं समन्वित परिवहन एवं संचार माध्यमों से खत्म किया जा सकता है। उपभोग एवं उत्पादन बिन्दुओं में संयोजन, गाँव एवं शहर से सम्बन्ध स्थापित करने तथा प्राकृतिक आपदा के समय ये बहुत ही सार्थक सिद्ध होते हैं। परिवहन तन्त्र न केवल राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को एकीकृत करता है वरन् स्थानीय बाजारों को राष्ट्रीय बाजार से और राष्ट्रीय बाजार को अन्तर्राष्ट्रीय बाजार से जोड़ता है।[4] विश्व स्तर पर आर्थिक विकास एवं परिवहन साधनों के विकास में समानता मिलती है।[5] प्राय. सोनभद्र के जिन क्षेत्रों में सड़कों का विकास हुआ है, उन भागों का अपेक्षाकृत आर्थिक विकास अधिक हुआ है।

अध्ययन क्षेत्र जनपद सोनभद्र अत्यन्त पिछड़ा है किन्तु विकास के लिए उत्तरदायी अधिकांश संसाधनों की बहुलता है। किन्तु संसाधनों का प्रमुख संयोजक तत्व परिवहन एवं संचार का अत्यन्त अभाव है। जल परिवहन की सीमित सम्भावना है । वायु परिवहन के माध्यम नहीं है। रेलमार्गों का अभाव है। रेलमार्ग इकहरा है तथा यात्री रेलगाड़ियों का अभाव है । अव्यवस्थित तथा अविकसित सड़कें परिवहन के मुख्य साधन हैं। जनपद की संचार प्रणाली

भी अविकसित है। अस्तु प्रस्तुत अध्याय में वर्तमान परिवहन एवं संचार माध्यमों का विश्लेषण कर भावी परिवहन एवं संचार के विकास के लिए संतुलित नियोजन प्रस्तुत करना है। अध्ययन की स्पष्टता के लिए प्रस्तुत अध्याय दो खण्डों में विभक्त है। प्रथम भाग में परिवहन एवं द्वितीय भाग में संचार के वर्तमान स्थिति का विश्लेषण एवं भावी संतुलित नियोजन प्रस्तुत किया गया है ।

6.1 परिवहन माध्यम का प्रतिरूप

'माध्यम' का अर्थ 'मार्ग' जैसे सड़क, रेल, समुद्र, नदी, वायुमार्ग माना गया है जबकि 'साधन' का प्रयोग यातायात हेतु प्रयुक्त विविध वाहनों जैसे 'बस', ट्रक, कार, मालगाड़ी, सवारी-गाड़ी, नाव, जलयान, टैन्कर आदि के लिए किया जाता है। 'आधुनिक युग में तीनों मण्डलों (स्थल मण्डल, जल मण्डल व वायु मण्डल) का उपयोग परिवहन के लिए किया जा रहा है। स्थल मण्डल में रेलमार्ग, सड़कें, रज्जुमार्ग तथा भूमिगत नलिकाएं (टनेल पाइप लाइन्स) परिवहन के माध्यम हैं। जलमण्डल में समुद्र के साथ नौगम्य नदियों तथा नहरों का प्रयोग परिवहन के माध्यम के रूप में होता है तो वायुमण्डल मात्र वायुयान परिवहन तक ही सीमित है। स्थानीय यातायात के लिए इन माध्यमों में रेलमार्गों एवं सड़कों का विशेष महत्व है जिनके द्वारा क्षेत्र में सामाजिक सेवाओं के पहुँचाने का कार्य सर्वाधिक किया जाता है।[7] जनपद सोनभद्र में परिवहन माध्यमों का विवरण इस प्रकार है -

(अ) जल परिवहन

जल परिवहन एक सस्ता परिवहन माध्यम है जो भारी सामान ढोने के लिए अत्यन्त उपयुक्त है।[8] सोनभद्र में जल परिवहन का विकास नगण्य है। पठारी क्षेत्र व ग्रीष्म ऋतु में जल का अति अभाव, जल परिवहन के लिए सबसे बड़ी बाधा है। बेलन, कर्मनाशा, कनहर, पाण्डु आदि नदियाँ जल परिवहन के लिए उपयुक्त नहीं हैं। सोन नदी में जल परिवहन की अल्प सम्भावना है। जल परिवहन के लिए सर्वाधिक उपयुक्त रिहन्द जलाशय है। रिहन्द नगर से शक्तिनगर के बीच लगभग 18 किमी0 जलमार्ग की दूरी स्टीमर द्वारा तय किया जाता है। वर्तमान समय में दिन में एक ही स्टीमर तीन बार शक्तिनगर से रिहन्द नगर तथा तीन बार रिहन्द नगर से शक्तिनगर जाता है। इससे वस्तुओं एवं यात्रियों का परिवहन किया जाता है।

सोन नदी सोनभद्र के मध्य से, पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर प्रवाहित है। सोन नदी द्वारा विभक्त सोनभद्र के उत्तरी व दक्षिणी क्षेत्र को जोड़ने के लिए अनेक स्थानों से वर्ष भर नावें चलती हैं। नाव चलने वाले प्रमुख घाट हैं - गुरूदह, अगोरी करगरा, ससनई, कोन, चकरिया, हरदी, अमवार, गढ़ाव व बसुहारी आदि। बेलन, कर्मनाशा, पाण्डु व कनहर नदी मे 15 अक्टूबर से 15 जून तक जल प्रवाह की न्यूनता के कारण कुछ खास स्थलों पर लोग पैदल ही इन नदियों को पार कर जाते हैं। इन नदियों का तल पथरीला व कड़ा होने के कारण भारी वाहनों (बसों, ट्रकों आदि) को भी उक्त समय में पार करने में कठिनाई नहीं होती है। किन्तु 15 जून से 15 अक्टूबर तक इन नदियों पर पुलों के अभाव के कारण लोग नावों का सहारा लेते हैं किन्तु वाहनों के आवागमन में बाधा पहुँचती है। इन नदियों के बरसाती स्वभाव (एकाएक बाढ़ आना) तथा उबड़ खाबड़ तल होने के कारण नौका परिवहन खतरनाक होता है।

(ब) रेल परिवहन

जनपद में विशाल औद्योगिक केन्द्रों तथा खनिज संसाधनों व औद्योगिक उत्पादों के परिवहन क्षमता को देखते हुए रेलमार्गों का विकास कम हुआ है। कोयला, सीमेंट, अल्यूमिनियम, क्लिंकर, बजरी आदि के दूरवर्ती क्षेत्रों में ले जाने के लिए रेलमार्गों व रेलों के अभाव के कारण ट्रकों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। अध्ययन क्षेत्र में 'ब्राड गेज' की 103.6 किमी0 लम्बी रेलवे लाइन है । सम्पूर्ण रेलवे लाइन 17 स्टेशनों (करमा, खैराही, पसही, राबर्ट्सगंज, चुर्क, अगोरी, चोपन, बिल्ली, सलैयाडीह, रेनूकूट, म्योरपुर, झारोखास, दुद्धी, विण्ढमगंज, अनपरा (औड़ीमोड़), बीना तथा शक्तिनगर से युक्त इकहरी है । जनपद का मुख्यालय राबर्ट्सगंज, चुनार (मीरजापुर) व गढ़वा रोड (पलामू, बिहार) नामक दो जंक्शन स्टेशन से जुड़ा हुआ है । चुनार से पटना व इलाहाबाद की ओर तथा गढ़वा रोड से पटना व हावड़ा की ओर जाया जा सकता है । बिल्ली स्टेशन से एक रेलवे लाइन कटनी (मध्य प्रदेश) जंक्शन में मिलती है । यहीं रेलवे लाइन करैला रोड (मध्य प्रदेश) से अलग होकर मध्य प्रदेश के सीमा से होती हुई शक्तिनगर को जाती है ।

अध्ययन क्षेत्र से होकर 3 एक्सप्रेस रेलगाड़ी-(1) त्रिवेणी एक्सप्रेस - शक्तिनगर से लखनऊ (2) मूरी एक्सप्रेस - हटिया से अमृतसर तथा (3) शक्तिपुंज - शक्तिनगर से हावड़ा, अप में तथा डाउन में जाती है तथा 4 पैसेंजर रेलगाड़ी-(1) चोपन से मिर्जापुर (2) चोपन से गढ़वा रोड (3) चुनार से गढ़वा रोड तथा (4) चोपन से कटनी, गुजरती है । अध्ययन क्षेत्र के तीन विकासखण्ड (बभनी, चतरा व नगवां) रेलवे लाइन रहित हैं । रेलवे लाइन की सर्वाधिक लम्बाई विकासखण्ड चोपन में तथा सबसे कम घोरावल में है । प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 क्षेत्र में रेलमार्गों की लम्बाई अध्ययन क्षेत्र में जहाँ 1.51 कि0 मी0 है वहीं उत्तर प्रदेश में 2.93 कि0 मी0 है । अर्थात प्रदेश के औसत से अध्ययन क्षेत्र मे लगभग 50% कम रेलवे लाइन है । उत्तर प्रदेश में प्रतिलाख जनसंख्या पर 7.78 कि0 मी0 लम्बी रेलवे लाइन का औसत है, जनपद सोनभद्र में यह औसत 9.6 कि0 मी0 है । स्मरणीय है कि उत्तर प्रदेश की अपेक्षा (476 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0 मी0) सोनभद्र में जनसंख्या घनत्व (157 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0 मी0) विरल है ।

(स) रज्जु मार्ग (रोप-वे)

अध्ययन क्षेत्र सोनभद्र में परिवहन का अनोखा माध्यम रोप-वे है, जिस पर ट्रालियाँ चलती हैं । विषम स्थलाकृति वाले क्षेत्रों में यह सबसे उपयुक्त माध्यम है । विद्युत स्तम्भों से संयुक्त मोटे विद्युत तारों से हजारों की संख्या में लटकते हुए इन ट्रालियों से कोयला, चूना पत्थर व क्लिंकर की ढुलाई होती है । रोप-वे ट्राली से परिवहन रेणूसागर, डाला व चुर्क में होता है । सिंगरौली कोयला क्षेत्र से कोयले की ढुलाई रेणूसागर ताप विद्युत केन्द्र के लिए इसी प्रणाली से होती है । डाला व चुर्क सीमेण्ट फैक्ट्री के लिए कजरहट व गुरमा क्षेत्र से चूना पत्थर की ढुलाई इसी माध्यम से होती है । इसमें मानव शक्ति की कम आवश्यकता पड़ती है, परिवहन अबाध गति से चलता है तथा प्रदूषण नहीं होता है । इस प्रणाली से विद्युत खर्च होता है किन्तु विषम भ्वाकृतिक क्षेत्रों में जहाँ सड़क व रेल लाइन बनाना दुष्कर हो यह परिवहन प्रणाली सर्वाधिक उपयुक्त है । जनपद सोनभद्र में इस प्रणाली की आवश्यकता को देखते हुए अल्प विकास हुआ है ।

(द) यातायात की धमनियाँ - सड़क परिवहन

किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए प्रथमतः सड़कें बनायी जाती हैं । ये सड़के

DISTRICT SONBHADRA
TRANSPORT NETWORK
N
S
TO MARIHAN
TO RAJGARH
TO MIRZAPUR
TO VARANASI
TO NAUGARH
KARMA
GHORAWAL
HNDUARI
SHAHGANJ
ROBERTS-GANJ
VANI
KHALIYARI
RAMGARH
CHURK
SALKHAN
CHOPAN
OBRA
DALLA
KON
PHAPHARA KHURD
MAGARDAHA
HATHI NALA
VINDHAM GANJ
MIRCHADHURI
JOGIDIH
ROAD
TO GARHA WA ROAD
ANPARA
PIPRI
RENUKUT
DUDHI
TO KATNI & SINGRAULI
BINA
SHAKTI NAGAR
GOVIND PUR
MUIR PUR
RAIL WAY LINE
METALLED ROAD
KHARANJA ROAD
RIHANDNAGAR
0 4 8
KM
CHAPAKI
SABHANI
TO AMBIKAPUR

FIG. 6.1

यातायात की धमनियाँ कहलाती है । सिंधु - घाटी की सभ्यता, जो नगर सभ्यता कहलाती थी, में लम्बी, चौड़ी व समकोण पर काटने वाली सड़कें थी । रामायण व महाभारत काल में न केवल सड़कों का उल्लेख है वरन्, सड़कों के बनाने की विधि का भी उल्लेख है । कौटिल्य के अर्थशास्त्र में तो विभिन्न कार्यों के लिए विभिन्न वर्गों की सड़कें बनाने का प्रावधान है । 200 बी.सी. से 200 ए.डी. तक जो आर्थिक समुन्नत का काल था, विभिन्न व्यापारिक मार्गों का उल्लेख किया गया है । विभिन्न क्षेत्रों में पुरातात्विक खुदाई से प्राप्त अवशेषों से पता चलता है कि प्राचीन काल में शहरों एवं कस्बों में सड़कों के आश्चर्यजनक ढंग से योजनाबद्ध संजाल बने हुए थे ।

प्राचीन काल से अठारहवीं शताब्दी तक (मौर्यकाल को छोड़कर) सम्पूर्ण भारत के एक शासनतन्त्र के नियन्त्रण में न रहने के प्रमुख कारणों में से एक था, सड़कों एवं संचार माध्यमों की कमी । शेरशाह सूरी ने कई सड़कों और सरायों का निर्माण कराया, जिससे सभी क्षेत्रों का केन्द्र स्थलों से सीधा सम्बन्ध हो गया । उसकी चार सड़कें अत्यन्त प्रसिद्ध हुई । इनमें सबसे लम्बी सड़क थी - पूर्वी बंगाल में सोनार गाँव से आगरा दिल्ली और लाहौर होते हुई सिन्धु नदी तक सड़क-ए-आजम अर्थात् ग्रांड ट्रंक सड़क । ब्रिटिश शासन काल में भी सड़कों के निर्माण पर विशेष बल दिया गया । भारत सरकार ने 1919 के अधिनियम के अन्तर्गत सड़कें प्रांतों के अधिकार क्षेत्र में आती थीं और प्रान्तीय सरकार सड़कों के काफी बड़े हिस्से की जिम्मेदारी स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को सौंप देती थी । देशभर के प्रान्तों और बड़ी रियासतों के मुख्य इंजीनियरों का दिसम्बर 1943 में एक सम्मेलन नागपुर में बुलाया और सम्पूर्ण भारत के लिए सड़क विकास की एक समग्र योजना निर्धारित की गयी तथा एक प्रतिवेदन (रिपोर्ट) तैयार किया गया । इसी रिपोर्ट को 'नागपुर रिपोर्ट' कहा जाता है, इसमें सड़कों की निम्न श्रेणियाँ बनायी गयी -

1. राष्ट्रीय राजमार्ग
2. प्रान्तीय राजमार्ग
3. जिला सड़कें
4. ग्रामीण सड़कें

राजमार्गों के इन्जीनियरों की संस्था 'भारतीय सड़क कांग्रेस परिषद्' ने 'सड़क विकास योजना' तैयार की है जिसमें सन् 2001 तक देश के सभी गाँवों तक सड़क पहुँचाने का लक्ष्य

तय किया गया है । इससे देश में कुल 27 लाख कि0 मी0 लम्बी सड़के हो जाएगी । इस योजना पर लगभग 64250 करोड़ रूपया खर्च होगा । योजना में राष्ट्रीय राजमार्गों, राज्यों के राजमार्गों तथा ग्रामीण सड़कों सहित सभी सड़कों के संतुलित विकास के साथ - साथ बेहतर सड़कों से ईंधन की बचत, सड़क सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण, निर्माण प्रौद्योगिकी के आधुनिकीकरण तथा अनुसंधान गतिविधियों जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं पर जोर दिया गया है ।

6.2 सड़क परिवहन का महत्व

अपेक्षाकृत कम लागत के कारण रेल मार्गों की तुलना में सड़कों का अधिक विकास हुआ है । सड़क परिवहन रेल परिवहन की तुलना में प्राचीन है । सड़कों पर परिवहन साधनों की विविधता तथा मात्रा के कारण सड़कों के स्वरूप में पर्याप्त अन्तर मिलता है । वाराणसी से शक्तिनगर तक के सड़कें को जहाँ वर्तमान चौड़ाई से भी तिगुना अधिक करने का प्रस्ताव है, वहीं अल्पविकसित क्षेत्रों में सड़क के नाम पर मात्र समतल धरातल की संकीर्ण पट्टियाँ ही मिलती हैं । रेल मार्गों की तरह सड़कों की कोई मानक चौड़ाई के अभाव के कारण विभिन्न न्याय पंचायतों व ब्लाकों की सड़क - दूरी का तुलनात्मक अध्ययन कठिन होता है । लेकिन न्यूनतम स्तर पर यदि मोटरगाड़ी चलने योग्य मार्ग को सड़क मान लिया जाय तब कहीं सभी विकासखण्डों में उपलब्ध 'मार्ग लम्बाई' के आँकड़ों का विश्लेषण किया जा सकता है ।

सड़कों का आधुनिक महत्व इसी शताब्दी के आरम्भिक वर्षों से बढ़ा जब मोटरगाड़ियों के अत्यधिक प्रचलन से द्रुत सड़क परिवहन रेल परिवहन की बराबरी करने में समर्थ हुआ। अब दोनों ही परिवहन माध्यम (सड़क व रेलमार्ग) एक दूसरे के पूरक हो गए हैं । भारी खनिजों एवं औद्योगिक पदार्थों का अपेक्षाकृत दूर तक यातायात रेलगाड़ियों से होता है किन्तु कम मात्रा में तथा स्थानीय माल को गन्तव्य स्थान तक सावधानीपूर्वक पहुँचाने में सड़कों का विशेष महत्व है । अनपरा, शक्तिनगर, रिहन्द नगर आदि ताप विद्युत गृहों में, समीप के सिंगरौली क्षेत्र से कोयले की ढुलाई सड़कों से ही होती है । सोनभद्र जैसे पहाड़ी व विखरे गाँवों में सड़कों का विशेष महत्व है । प्रत्येक विकास केन्द्र को रेलमार्गों से जोड़ना असम्भव है किन्तु प्रत्येक विकास केन्द्र को सड़कों से जोड़ा जा सकता है । रेलमार्गों को सड़कों से जोड़कर अभिगम्यता और बढ़ायी जा सकती है । इसलिए लोच, विश्वसनीयता एवं गति को सड़क परिवहन की मुख्य विशेषता बताया गया है ।[9] सोनभद्र की अधिकांश जनसंख्या कृषि एवं वनोपज पर आधारित

है । अत· ऐसी अर्थव्यवस्था वाले क्षेत्रों में सड़कें विशेष लाभदायक होती हैं । भारत में सड़क निर्माण की दिशा में सर्वप्रथम प्रयास 1943 में 'नागपुर योजना' का आधार यह था कि विकसित कृषि क्षेत्रों में कोई गाँव किसी भी मुख्य सड़क से 5 मील (8 कि0 मी0) से अधिक दूर तथा अन्य प्रकार की सड़कों से 2 मील (3 कि0 मी0) से अधिक दूर न रहे एवं प्रमुख सड़क से औसत दूरी 2 मील से कम ही रहे । इसी प्रकार अकृषि क्षेत्रों में किसी गाँव की दूरी क्रमश 20 मील तथा 5 मील से अधिक न रहे तथा औसत दूरी 6.7 मील रहे । किन्तु रियासतों के कारण यह उद्देश्य पूरा नहीं हो सका । इसके बाद 1961 - 81 तक के लिए सड़क निर्माण से सम्बन्धित 20 वर्षीय योजना प्रारम्भ की गयी, जिसके अनुसार विकसित कृषि क्षेत्र में कोई गाँव किसी पक्की सड़क से 6.5 कि0 मी0 से अधिक दूर न रहे तथा किसी सम्पर्क सड़क से 2.5 कि0 मी0 से अधिक दूर न हो । इसके अनुसार 1981 तक प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 क्षेत्र में 32 कि0 मी0 सड़क होनी चाहिए । किन्तु तालिका 6.3 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के 12.67% (170 गाँव) गाँव ही पक्की सड़कों पर स्थित हैं । पक्की सड़क से 1 कि0 मी0 की दूरी तक 9.54% (128 गाँव) तथा 1 - 3 कि0 मी0 की दूरी तक 15.95% (214 गाँव) गाँव अवस्थित हैं । पक्की सड़क से 3 कि0 मी0 की दूरी तक 38.15% (512 गाँव) गाँव है तथा 3 कि0 मी0 से अधिक दूर स्थित गाँवों का प्रतिशत 61.85% (830 गाँव) हैं ।

तालिका 6.1 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 पक्की व खड़ंजा सड़कों का घनत्व 12.75 कि0 मी0 है । पक्की सड़कों का घनत्व 7.24 कि0 मी0 प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 है । अतः राष्ट्रीय मानक के अनुसार कि प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 में 32 कि0 मी0 पक्की सड़क होनी चाहिए , के तुलना में सोनभद्र में सड़कों का घनत्व बहुत कम है ।

अध्ययन क्षेत्र में सड़कों का वितरण असमान है । जनपद में कुल सड़कों की लम्बाई 935 कि0 मी0 है जिसमें से 494 कि0 मी0 (52.83%) पक्की सड़क तथा 441 कि0 मी0 (47.17%) खड़ंजा सड़क है (तालिका 6.2) । 494 कि0 मी0 पक्की सड़क में 68 कि0 मी0 नगरों में तथा 426 कि0 मी0 ग्रामीणी क्षेत्रों में है । सर्वाधिक 97 कि0 मी0 पक्की

तालिका 6.1

जनपद सोनभद्र में सड़क अभिगम्यता एवं घनत्व

विकासखण्ड	क्षेत्रफल वर्ग कि0मी0	जनसंख्या 1991	अभिगम्यता क्षेत्रफल %	अगम्य क्षेत्रफल %	सड़क लम्बाई कि0 मी0	सड़क घनत्व कि0 मी0 - प्रति 100 वर्ग कि0 मी0	प्रति 100000 जनसंख्या
1	2	3	4	5	6	7	8
1. घोरावल	818.73	155963	44.46	55.54	118	14.41	75.66
2. राबर्ट्सगंज	442.45	137889	62.83	37.17	86	19.44	62.37
3. चतरा	254.85	67441	40.23	59.77	70	27.47	103.79
4. नगवां	916.20	54518	24.20	75.80	89	9.71	163.25
5. चोपन	1712.97	166693	33.10	66.90	204	11.91	122.38
6. म्योरपुर	1337.89	192719	48.73	51.27	137	10.24	71.09
7. दुद्धी	707.45	96533	70.39	29.61	121	17.10	125.35
8. बभनी	608.26	57618	16.77	83.23	42	6.90	72.89
समस्त विकासखण्ड	6798.80	929374	41.93	58.07	867	12.75	93.29
वन क्षेत्र	-	1584	-	-	-	-	-
ग्रामीण योग	6798.80	930958	41.93	58.07	867	12.75	93.29
नगरीय योग	20.48	144083	-	-	68	-	47.19
जनपद योग	**6819.28**	**1075041**	**41.93**	**58.07**	**935**	**12.75**	**86.97**

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 28, 29 एवं मानचित्र संख्या 6.1 व 6.4 से परिकलित ।

सड़क की लम्बाई विकासखण्ड म्योरपुर में है, इसके बाद क्रमशः विकासखण्ड दुद्धी में 71 कि0 मी0, राबर्ट्सगंज में 66 कि0 मी0, घोरावल में 61 कि0 मी0, चोपन में 54 कि0 मी0, बभनी में 31 कि0 मी0, नगवां में 24 कि0 मी0 तथा चतरा में 22 कि0 मी0 पक्की सड़क है । खड़ंजा सड़कों की सर्वाधिक 150 कि0 मी0 लम्बाई विकास खण्ड चोपन में तथा सबसे कम 11 कि0 मी0 विकास खण्ड बभनी में है (तालिका 6.2) । पक्की व खड़ंजा सड़कों की संयुक्त सर्वाधिक लम्बाई विकासखण्ड चोपन में 204 कि0 मी0 है तथा सबसे कम विकासखण्ड बभनी में 42 कि0 मी0 है (तालिका 6.2) ।

तालिका 6.2

जनपद सोनभद्र में सड़कों की लम्बाई

क्रम संख्या	विकासखण्ड	कुल पक्की सड़क कि0मी0	कुल खड़ंजा मार्ग कि0मी0	सम्पूर्ण सड़क कि0 मी0
1	2	3	4	5
1.	घोरावल	61	57	118
2.	राबर्ट्सगंज	66	20	86
3.	चतरा	22	48	70
4.	नगवां	24	65	89
5.	चोपन	54	150	204
6.	म्योरपुर	97	40	137
7.	दुद्धी	71	50	121
8.	बभनी	31	11	42
	ग्रामीण योग	426	441	867
	नगरीय क्षेत्र	68	-	68
	सम्पूर्ण योग	494	441	935

स्रोत : मानचित्र संख्या 6.1 से परिकलित ।

प्रमुख सड़क मार्ग करमा से शक्तिनगर के सड़क की लम्बाई 156 कि0 मी0, खलियारी से घोरावल की लम्बाई 66 कि0 मी0 तथा हाथीनाला से विण्ढमगंज की लम्बाई 45 कि0 मी0 है । जनपद मुख्यालय राबर्ट्सगंज से प्रमुख सेवा केन्द्रों, बस स्टेशनों एवं बस स्टापों की दूरी तालिका 6.6 में दी गयी है । इस तालिका से विभिन्न सेवा केन्द्रों के बीच स्थित पक्की सड़कों की लम्बाई ज्ञात की जा सकती है ।

6.3 सड़क घनत्व

सड़क परिवहन का अधिकाधिक प्रयोग अपेक्षाकृत कम दूरी के यातायात के लिए किया जाता है । पिछड़े क्षेत्र के आर्थिक तन्त्र के प्रादेशिक सन्तुलन के लक्ष्यपूर्ति को रेल की अपेक्षा सड़क अधिक उपादेय सिद्ध होती है । किन्तु सड़कों के उपादेयता के विश्लेषण में उनकी लम्बाई की अपेक्षा सघनता का प्रयोग अधिक समीचीन प्रतीत होता है । सड़कों के घनत्व का आर्थिक विकास, क्षेत्रीय विस्तार, जनसंख्या तथा आर्थिक कार्यकलापों के वितरण प्रतिरूप एवं वैकल्पिक परिवहन साधनों के विकास के जटिल रूप में अन्तर्सम्बन्धित हैं । अध्ययन क्षेत्र में सड़क घनत्व अत्यधिक न्यून है । सापेक्षिक दृष्टि से सड़क घनत्व उन्हीं भागों में अधिक है, जहाँ जनसंख्या एवं आर्थिक कार्यकलाप की सघनता है ।

प्रस्तुत अध्ययन में सड़क घनत्व की गणना दो प्रकार से की गयी है । प्रथम विकासखण्ड स्तर पर प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 क्षेत्रफल पर तथा द्वितीय 100000 की मानक जनसंख्या पर (विकासखण्ड स्तर पर)। इसका प्रदर्शन क्रमशः मानचित्र 6.2 व 6.3 में किया गया है । इन मानचित्रों से सड़क घनत्व को आसानी से प्रत्यक्षीकृत किया जा सकता है ।

तालिका 6.1 से स्पष्ट है वि अध्ययन क्षेत्र में प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 क्षेत्र में सड़कों (पक्की एवं खड़ंजा) का घनत्व 12.75 कि0 मी0 है । विकासखण्ड चतरा में सड़कों का सर्वाधिक घनत्व 27.47 कि0 मी0 प्रति 100 वर्ग कि0 मी0 क्षेत्र में है । पुनः अवरोही क्रम में क्रमशः विकास खण्ड राबर्ट्सगंज (19.44 कि0 मी0), दुद्धी (17.10 कि0 मी0), घोरावल (14.41 कि0 मी0), चोपन (11.91 कि0 मी0), म्योरपुर (10.24 कि0 मी0), नगवां (9.71 कि0 मी0) तथा बभनी (6.90 कि0 मी0) का स्थान आता है (तालिका 6.1)।

25°
82°45′
83°
15′
30′
25°
DISTRICT SONBHADRA
ROAD DENSITY
PER HUNDRED Km^2
N
45′
30′
15′
24°
ROAD DENSITY
IN Km^2
5 – 10
10 – 15
15 – 20
> 20
0 4 8 Kms
82°45′
83°
15′
30′
FIG 6.2
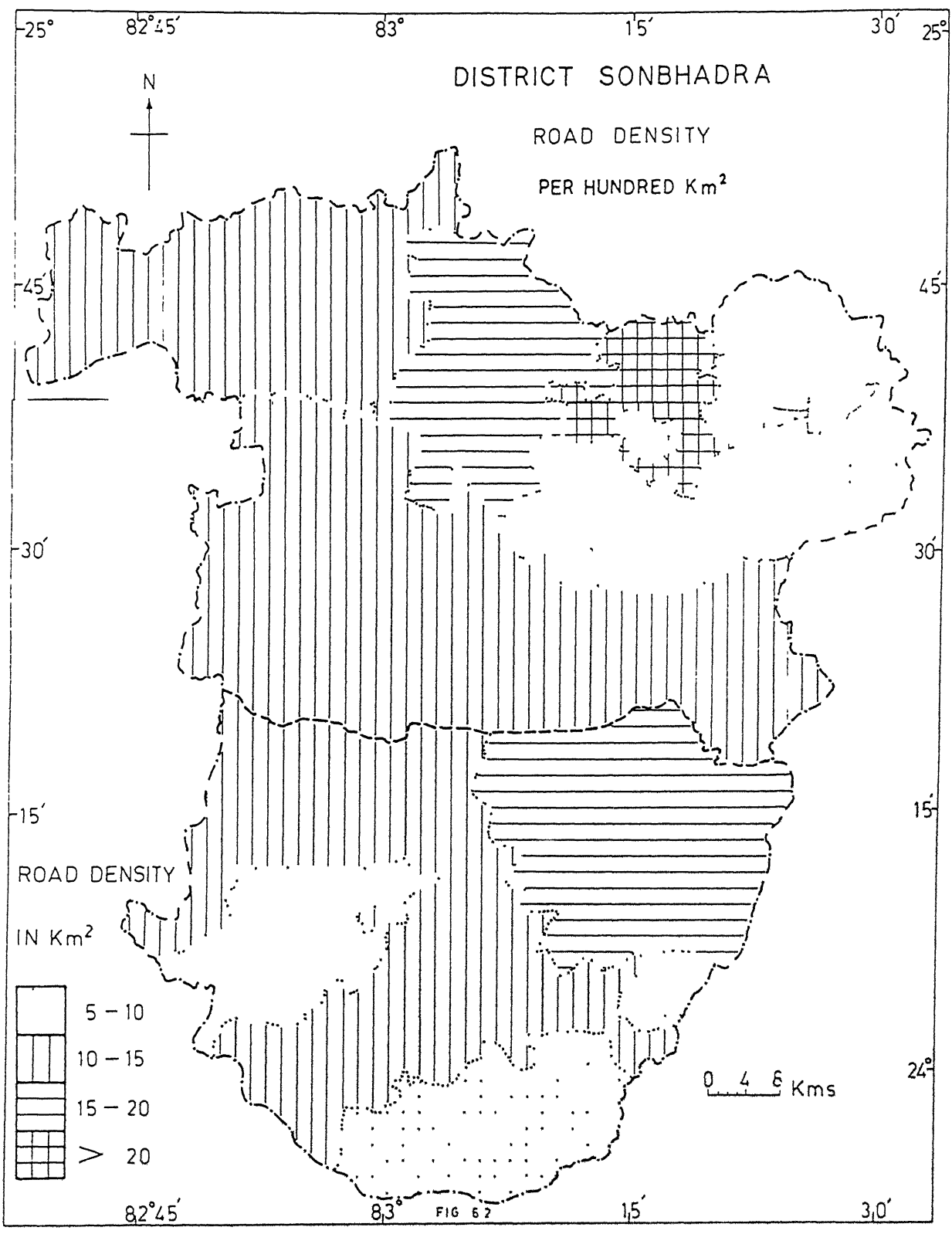
तालिका 6.3
सोनभद्र में पक्की सड़क से बस्तियों की दूरी

क्रमसंख्या	विकासखण्ड	ग्राम में	1किमी0 से कम	1-3 किमी0	3-5 किमी0	5 किमी0 से अधिक	योग
1.	घोरावल	14	24	30	48	221	337
2.	राबर्ट्सगंज	51	56	85	43	94	329
3.	चतरा	31	33	61	20	23	168
4.	नगवां	16	4	7	6	95	128
5.	चोपन	15	6	9	16	45	91
5.	म्योरपुर	12	-	8	7	93	120
7.	दुद्धी	19	4	12	4	49	98
8.	बभनी	12	1	2	8	48	71
	योग	**170** (12.67%)	**128** (9.54%)	**214** (15.95%)	**162** (12.07%)	**668** (49.78%)	**1342**

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ156.

DISTRICT - SONBHADRA
ROAD DENSITY
PERLAKH POPULATION
N
S
82°45′
83°
15′
30′
25°
45′
30′
15′
24°
0 4 8
KM
ROAD DENSITY IN K.M
50-75
75-100
100-125
>125
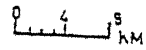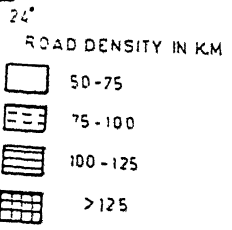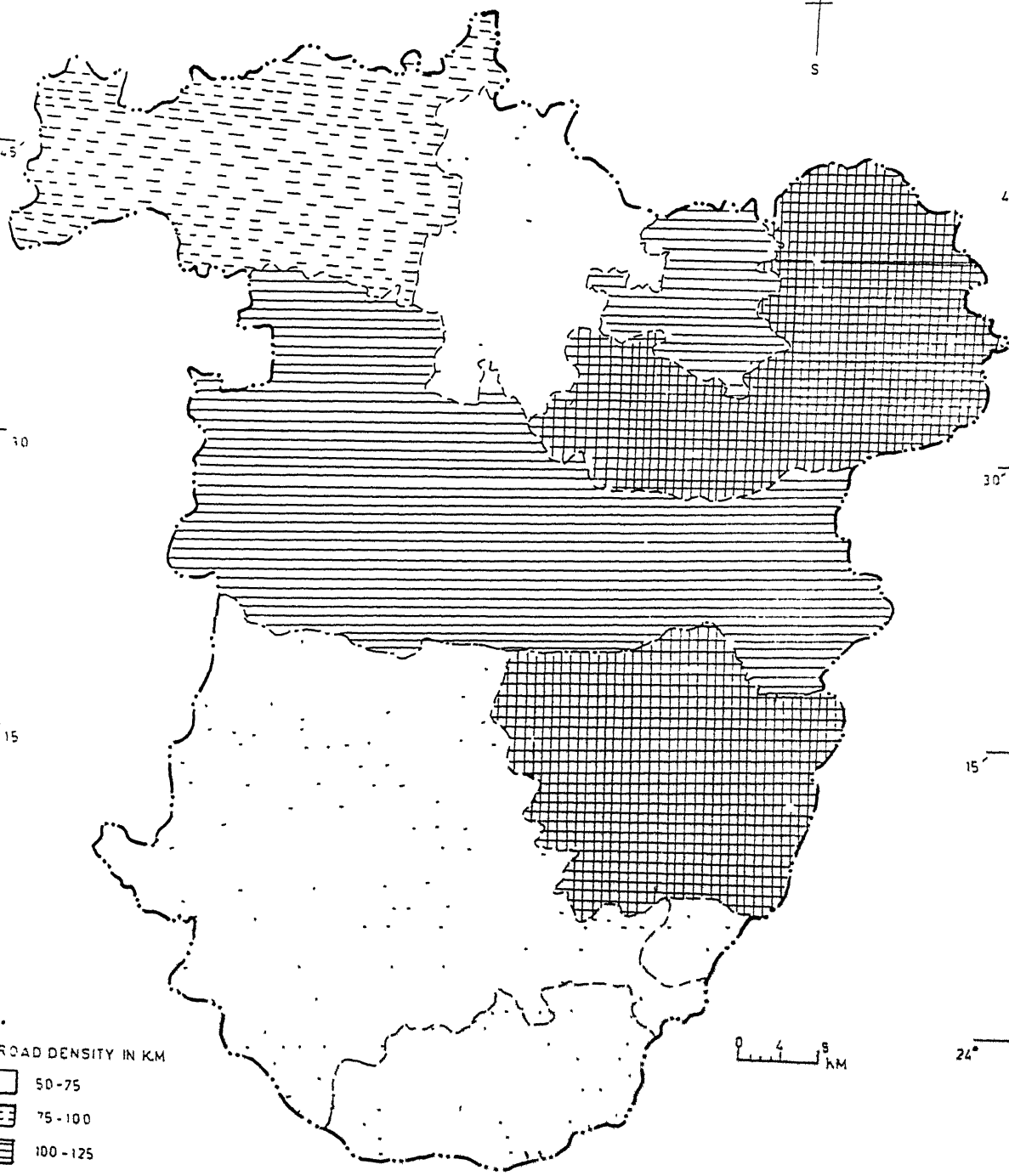
FIG 6 3

मानचित्र 6.3 को देखने से भी स्पष्ट होता है कि जनपद के दक्षिणी तथा उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में सड़कों का घनत्व सबसे कम है सम्पूर्ण पश्चिमी भाग में घनत्व अति न्यून से थोड़ा अधिक है।

प्रतिलाख जनसंख्या पर सड़कों का औसत घनत्व 86.97 किमी0 है। नगरीय क्षेत्र में सड़कों का घनत्व 47.19 किमी0 तथा ग्रामीण क्षेत्र में 93.29 किमी0 है (तालिका 6.1)। विकास खण्ड स्तर पर प्रति लाख जनसंख्या पर सड़कों का घनत्व अवरोही क्रम में इस प्रकार है - नगवां (163.25 किमी0), दुद्धी (125.35 किमी0), चोपन (122 किमी0), चतरा (103 किमी0), घोरावल (75.66 किमी0), बभनी (72.89 किमी0), म्योरपुर (71.09 किमी0) तथा राबर्टसगंज, (62.37 किमी0)। मानचित्र 6.4 से भी स्पष्ट है कि जनपद के दक्षिण-पश्चिम तथा मध्य उत्तर में प्रति लाख जनसंख्या पर सड़क घनत्व सबसे कम तथा उत्तर-पूर्व व मध्य पूर्व क्षेत्र में सड़क घनत्व सबसे अधिक है। शेष भागों में सड़क घनत्व अपेक्षाकृत औसत है !

6.4 सड़क अभिगम्यता

प्रायः मानव लक्ष्य की प्राप्ति में,कम-से-कम समय तथा शक्ति का उपयोग करता है। लेकिन इसकी सम्भाव्यता सड़कों की अभिगम्यता की तीव्रता पर निर्भर है। सड़क अभिगम्यता का तात्पर्य यथा सम्भव कम समय तथा कम शक्ति के व्यय पर निर्वाध गति से सुगमतापूर्वक किसी सड़क या सेवा केन्द्र पर पहुँचने से है। सड़कों की अभिगम्यता से सड़कों की सघनता तथा गमनागमन की सुविधा का ज्ञान होता है। साथ ही इसकी तीव्रता से किसी क्षेत्र के विकास का स्तर एवं सड़क जाल की प्रभावोत्पादकता का मापन होता है। सामान्यतया मार्ग जाल की गम्यता परिवहन मार्गों से एक विशेष दूरी द्वारा प्रकट की जाती है। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में एक ही दूरी को अभिगम्यता का मानक मापदण्ड नहीं माना जा सकता। अभिगम्यता का मापदण्ड साधारणतया व्यक्तिनिष्ठ होता है। सड़क तन्त्र विकसित होने पर अगम्य क्षेत्र लुप्तप्राय हो जाता है। भारत में सड़कों की अभिगम्यता मान में 'नागपुर योजना' तथा 'बम्बई योजना' द्वारा निर्धारित मानदण्ड इस प्रकार है : -

तालिका 6.4

नागपुर तथा बम्बई योजनाओं द्वारा निर्धारित सड़क अभिगम्यता मानदण्ड

क्रमसंख्या	क्षेत्र विवरण	किसी भी गाँव की अधिकतम दूरी (किमी0)	
		किसी भी सड़क से	मुख्य सड़क से
1.	नागपुर योजना		
	I. कृषि क्षेत्र	3.22	8.05
	II. कृषितर क्षेत्र	8.05	32.10
2.	बम्बई योजना		
	I. विकसित कृषि क्षेत्र	4.83	12.87
	II. अविकसित कृषि क्षेत्र	8.05	19.31
	III. विकसित कृषि क्षेत्र	2.41	6.44

राष्ट्रीय स्तर पर सड़क परिवहन के विश्लेषण में अधिकांशतया उपर्युक्त मानदण्डों को ही अपनाया जाता है किन्तु कृषि प्रधान, पठारी एवं कुछ बड़े उद्योगों से युक्त पिछड़े इस जनपद के लिए उक्त मानदण्ड उपयुक्त नहीं है। इसके दो प्रमुख कारण हैं। प्रथम, इस मानदण्ड के आर्थिक विकास के स्तर से सम्बन्धित होने के कारण सूक्ष्म स्तरीय क्षेत्रों में आर्थिक विकास के स्तर के अतिरिक्त भौतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर विभिन्नता पायी जाती है। तथा द्वितीय यह मापदण्ड अत्यधिक प्राचीन है। आज के बदले हुए भौगोलिक परिवेश में सोनभद्र जनपद में सड़कों की अभिगम्यता मापन के लिए उपर्युक्त मापदण्ड उपयुक्त प्रतीत नहीं होता है। अतः व्यावहारिक अभिगम्यता को देखते हुए इस भाग में सड़क अभिगम्यता के मापन के लिए निम्नलिखित को अभिगम्य माना जा सकता है -

1. मुख्य पक्की सड़कों से 3 किमी0 की दूरी पर स्थित बस्तियाँ,
2. अन्य पक्की सड़कों से 2 किमी0 दूरस्थ सभी बस्तियाँ और

3. किसी भी कच्चे मार्ग या खड़ंजा मार्ग से 1 किमी0 दूर तक स्थित बस्तियाँ।

उपर्युक्त मानदण्डों के आधार पर जनपद में वर्षभर परिवहन योग्य सड़कों का अभिगम्यता मानचित्र का निर्माण किया गया है(6.4) ।

मानचित्र 6.4 को देखने से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र की अभिगम्यता अच्छी नहीं है। जनपद के मध्य में उत्तर से दक्षिण में जाने वाली मुख्य पक्की सड़क के कारण मध्यवर्ती क्षेत्र में अभिगम्यता संतोष जनक कही जा सकती है। सोनभद्र में अनेक ऐसे पठारी तथा जंगली क्षेत्र हैं जहाँ सड़कों से अभिगम्यता स्थापित करना दुष्कर हैं। पूर्वी घोरावल सम्पूर्ण नगवां, बभनी, म्योरपुर, चोपन व दुद्धी विकास खण्ड में सड़कों से अभिगम्यता स्थापित करना अत्यन्त खर्चीला है। वर्तमान सड़क तन्त्र के आधार पर (मानचित्र 6.2) तालिका 6.1 में अभिगम्यता परिकलित की गयी है। सोनभद्र का 41.93% भाग अभिगम्य तथा 58.07% भाग अगम्य है। सर्वाधिक अभिगम्यता विकास खण्ड दुद्धी में (70.39%) है। इसके बाद क्रमश राबर्ट्सगंज, म्योरपुर, घोरावल, चतरा, चोपन, नगवां, तथा बभनी में क्रमश. 62.83%, 48.73%, 44.46%, 40.23%, 33.10%, 24.20%, तथा 16.77% है। जनपद के औसत अभिगम्यता से विकास खण्ड दुद्धी, राबर्ट्सगंज, म्योरपुर तथा घोरावल में अधिक तथा चतरा, चोपन, नगवां व बभनी में निम्न है (तालिका 6.1) ।

6.5 सड़क सम्बद्धता

सड़कों की आपस में सम्बद्धता, सड़क परिवहन के विश्लेषण का एक अद्वितीय माध्यम हैं। परिवहन व्यवस्था की सुगमता, सड़क तन्त्र के विकास का स्तर तथा सघनता का बोध सड़क सम्बद्धता से ही स्पष्ट होता है। जिन क्षेत्रों में सम्बद्धता अधिक होती है, उन क्षेत्रों में सड़कों की सघनता तथा गम्यता अधिक होती है। पिछड़ी अर्थव्यवस्था के सड़क जाल प्रायः सुसम्बद्ध नहीं होते हैं जबकि विकसित अर्थव्यवस्था वाले क्षेत्रों में सड़क सम्बद्धता अधिक पायी जाती है। जहाँ सड़कें इस प्रकारवितरित हों कि कोई भी सड़क किसी आन्तरिक बिन्दु पर जाकर अकस्मात समाप्त नहीं होती है वरन उसके दोनों छोर अन्य सड़कों से सम्बन्धित हो तो उसे सुसम्बद्ध सड़क जाल कहा गया है। दूसरी ओर, जहाँ प्रमुख सड़कों से आबद्ध क्षेत्र

के मध्य अन्य सड़कें अकस्मात किसी बिन्दु पर समाप्त हो जाती है अर्थात उनके द्वारा हर दिशा में यात्रा बिना वापस लौटे नहीं की जा सकती तो उसे असम्बद्ध सड़क जाल कहा गया है। इन दोनों के बीच की स्थिति को सामान्य सम्बद्धता की दशा मानी गयी है जो सड़क जाल जितना ही सुसम्बद्ध होगा उसमें परिक्रमता उतनी ही कम होगी।[12] सोनभद्र में यह सम्बद्धता दो माध्यमों से ज्ञात की गयी है एक प्रमुख सेवा केन्द्र के संदर्भ में तथा दूसरा सड़क जाल संरचना के परिप्रेक्ष्य में।

(अ) सेवा केन्द्रों की सम्बद्धता

सेवा केन्द्रों की सम्बद्धता के द्वारा इस तथ्य को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि जनपद सोनभद्र के प्रमुख सेवा केन्द्र आपस में कितने सेवा केन्द्रों से जुड़े हुए हैं। इस सड़क सम्बद्धता को ज्ञात करने में केवल पक्की सड़कों को ही आधार माना गया है। यद्यपि कच्ची सड़कों द्वारा भी सेवा केन्द्रों में सम्बद्धता पायी जाती है किन्तु जनपद के पठारी क्षेत्र होने के कारण, नालों पर पुल न होने से बरसात के दिनों में सम्बद्धता भंग हो जाती है। अस्तु सेवा केन्द्रों की सम्बद्धता विश्लेषण में समरूपता लाने के लिए कच्ची सड़क एवं खड़ंजा मार्गों को छोड़ दिया गया है ।

अध्ययन क्षेत्र के प्रमुख विकास केन्द्रों की आपस में पक्की सड़क से सम्बद्धता जानने के लिए मानचित्र 6.1 के आधार पर 'कनेक्टिविटी मैट्रिक्स बनाया गया है। जिसे तालिका 6.5 के रूप में देखा जा सकता है। जनपद का सबसे सम्बद्ध क्षेत्र राबर्ट्सगंज है। यह प्रत्यक्षतः चार केन्द्रों (शाहगंज, करमा, रामगढ़ व चुर्क) से जुड़ा हुआ है। चोपन, डाला, हाथीनाला, दुद्धी अनपरा, गोविन्द्पुर, म्योरपुर, रेनूकूट तीन केन्द्र में सीधे जुड़े हैं तथा जनपद मुख्यालय के बाद इन केन्द्रों की सम्बद्धता द्वितीय - स्थान पर है । शाहगंज, रामगढ़, बैनी, चुर्क, सलखन, ओबरा, विण्ढमगंज, पिपरी, बीना, रिहन्द नगर, बभनी दो सेवा केन्द्रों से सीधे जुड़े हुए हैं जबकि कोन, घोरावल, करमा, खलियारी, रेणूसागर व शक्तिनगर की सम्बद्धता मात्र एक केन्द्र से है ।

TABLE 6.5

METALLED ROAD CONNECTIVITY MATRIX

TO

FROM

<table>
<tr><th>SC</th><th>GW</th><th>SG</th><th>RB</th><th>KM</th><th>RG</th><th>VN</th><th>KR</th><th>CK</th><th>SK</th><th>CH</th><th>OB</th><th>DL</th><th>HN</th><th>DH</th><th>VG</th><th>RK</th><th>PR</th><th>AN</th><th>BN</th><th>RS</th><th>SN</th><th>GP</th><th>MP</th><th>RN</th><th>BH</th><th>KN</th><th>T</th></tr>
<tr><td>GW</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>1</td></tr>
<tr><td>SG</td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>RB</td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td>|</td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>4</td></tr>
<tr><td>KM</td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>1</td></tr>
<tr><td>RG</td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>VN</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>KR</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>1</td></tr>
<tr><td>CK</td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>SK</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>CH</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>OB</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>DL</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>HN</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>DH</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>VG</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td>2</td></tr>
<tr><td>RK</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>PR</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>AN</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>BN</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>RS</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>1</td></tr>
<tr><td>SN</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>1</td></tr>
<tr><td>GP</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>MP</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td>|</td><td></td><td>3</td></tr>
<tr><td>RN</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td>|</td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>BH</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td>|</td><td></td><td></td><td>2</td></tr>
<tr><td>KN</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>|</td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td></td><td>1</td></tr>
<tr><td>T</td><td>1</td><td>2</td><td>4</td><td>1</td><td>2</td><td>2</td><td>1</td><td>2</td><td>2</td><td>3</td><td>2</td><td>3</td><td>3</td><td>3</td><td>2</td><td>3</td><td>2</td><td>3</td><td>2</td><td>1</td><td>1</td><td>3</td><td>3</td><td>2</td><td>2</td><td>1</td><td>56</td></tr>
</table>

SC Service Centre
GW Ghorawal
SG Shahganj
RB Robertsganj
KM Karma
RG Ramgarh
VN Vaini
KR Khaliyari
CK Churk
SK Salakhan
CH Chopan
OB Obra
DL Dalla
HN Hathinala
DH Dudhi
VG Vindhamganj
RK Renukoot
PR Pipri
A N Anpara
BN Bina
RS Renusagar
SN Shaktinagar
GP Govindpur
MP Muirpur
RN Rihandnagar
BH Babhani
KN Kon
T Total

(ब) मार्ग-जाल की सम्बद्धता

मार्ग जालों के वस्तुनिष्ठ विश्लेषण के लिए कई मापकों का उपयोग किया जाता है। इस विश्लेषण विधि में किसी भी मार्ग जाल को एक ग्राफ के रूप में माना गया है। जिसमें बिन्दु (वर्टिक्स) तथा बाहु (एजेज) दो मुख्य तत्व होते हैं। किसी भी परिवहन माध्यम के मार्ग जाल में जितने भी उद्गम, संगम तथा अंतिम या प्रमुख विकास केन्द्र होते हैं, उन्हें बिन्दु तथा इनको सीधे सम्बन्धित करने वाले मार्गों को बाहु के रूप में माना जाता है। इसमें दो बिन्दुओं के बीच की दूरी अर्थात बाहुओं की लम्बाई पर ध्यान नहीं दिया जाता है। अध्ययन क्षेत्र में पक्की सड़कों के जाल के संदर्भ में प्रमुख बिन्दुओं की संख्या 27 है। इन बिन्दुओं एवं बाहुओं के माध्यम से सड़क जाल सम्बद्धता को प्रदर्शित करने वाले अल्फा (α) बीटा (β) तथा गामा (γ) निर्देशांकों की गणना की गयी है ।

'अल्फा निर्देशांक' से मार्ग जाल के सम्बद्धता स्तर का बोध होता है। इस निर्देशांक का मान 0-1.00 के मध्य होता है। पूर्णतः असम्बद्ध मार्ग जाल का मान 0 होता है। पूर्णतः सुसम्बद्ध मार्ग जाल का निर्देशांक 1.00 होता है। इस निर्देशांक की गणना निम्न लिखित सूत्र से की गयी है[13]-

$$\alpha = \frac{e-v+g}{2v-5}$$

जहाँ

α = अल्फा निर्देशांक

e = बाहुओं की संख्या

v = बिन्दुओं की संख्या तथा

g = असम्बद्ध ग्राफों की संख्या

अध्ययन क्षेत्र के सड़क जाल का यह निर्देशांक 0.04 है। इससे स्पष्ट होता है कि सड़क जाल न तो पूर्णतः सुसम्बद्ध है और न ही पूर्णतः असम्बद्ध है। इस निर्देशांक (0.04) में 100 से गुणा करके सम्बद्धता को प्रतिशत में भी अभिव्यक्त किया जा सकता है। इस प्रकार जनपद का मार्ग जाल 4.00% सम्बद्ध है ।

'बीटा निर्देशांक' से किसी मार्ग - जाल के बाहुओं एवं बिन्दुओं के अनुपात का बोध होता है। इस निर्देशांक के अनुसार असमबद्ध मार्ग जालों का मान 1.00 से कम होता है। एक ही चक्र में विभिन्न केन्द्र बिन्दुओं को मिलाने वाले मार्ग जाल का मान 1.00 तथा केन्द्र बिन्दुओं के मध्य कई विकल्प वाले मार्ग जाल का मान 1.00 से अधिक होता है। इस निर्देशांक की गणना निम्नलिखित सूत्र द्वारा की जाती है[14] -

$$\beta = \frac{e}{v}$$

जहाँ

β = बीटा निर्देशांक,

e = बाहुओं की संख्या तथा

v = बिन्दुओं की संख्या।

अध्ययन क्षेत्र के सड़क जाल के इस निर्देशांक का मान 1.04 है, जिससे स्पष्ट होता है कि सड़क जाल बहुत ही कम सम्बद्ध है।

'गामा निर्देशांक' से किसी मार्ग जाल के बाहुओं और बिन्दुओं के अनुपात का बोध होता है, किन्तु यह बीटा निर्देशांक से भिन्न है। यह निर्देशांक विद्यमान बाहुओं का अधिकतम बाहुओं के गुणांक का द्योतक है। इस निर्देशांक की गणना निम्नलिखित सूत्र से की जाती है[15] -

$$\gamma = \frac{e}{3(v-2)}$$

जहाँ

γ = गामा निर्देशांक,

e = बाहुओं की संख्या तथा

v = बिन्दुओं की संख्या।

इस निर्देशांक का मान 0-1.00 के मध्य होता है। पूर्ण सम्बद्ध मार्ग जालों का मान 1.00 तथा अपूर्ण सम्बद्धता वाले मार्ग जालों का मान 1.00 से कम आता है। जनपद में सड़क जाल का गामा निर्देशांक 0.3733 है। इसमें 100 का गुणा करने पर सम्बद्धता

प्रतिशत में ज्ञात हो जाता है। इस प्रकार सड़क जाल सम्बद्धता 37·33% है। गामा निर्देशांक तथा अल्फा निर्देशांक के सम्बद्धता प्रतिशत में अन्तर का कारण है, अल्फा निर्देशांक उन्हीं सड़क जालों के लिए उपयुक्त है जिनमें कई असम्बद्ध ग्राफ हों ।

6·6 यातायात प्रवाह

यातायात प्रवाह से न केवल परिवहन की कार्यात्मक विशिष्टताएं स्पष्ट होती हैं अपितु क्षेत्रीय आर्थिक कार्यकलाप, आर्थिक अन्तर्सम्बन्ध प्रतिरूप एवं आर्थिक विकास का स्तर भी ज्ञात होता है। साधारणतः यातायात प्रवाह के अन्तर्गत वस्तुओं एवं यात्रियों के आवागमन प्रतिरूप का अध्ययन किया जाता है। इस विश्लेषण के अन्तर्गत तीन बातों का अध्ययन किया जा सकता है। प्रथम, वस्तुओं के उद्गम गन्तव्य स्थलों पर आने-जाने से व्यापारिक स्वरूप का बोध होता है; द्वितीय, प्रतिदिन, प्रति सप्ताह या प्रतिमाह परिवहन मार्ग पर कुल यातायात घनत्व का पता चलता है तथा तृतीय, परिवहन के साधनों तथा परिवहित वस्तुओं की संरचना के बारे में जानकारी मिलती है। परिवहित वस्तुओं के संरचना में परिवर्तन का प्रभाव परिवहन साधनों पर पड़ता है ।

यातायात प्रवाह के उपर्युक्त तथ्यों के विश्लेषण से इस क्षेत्र के वर्तमान यातायात प्रवाह के स्वरूप की व्याख्या की जा सकती है। किन्तु किसी निर्धारित मापदण्ड के अभाव में यह निश्चित कर पाना कठिन है कि विद्यमान यातायात प्रवाह घनत्व की स्थिति पिछड़ी अर्थव्यवस्था का द्योतक है या विकसित अर्थव्यवस्था का; दूसरे, संसाधनों की कमी तथा समय के अभाव में इनके प्रवाह के आंकड़ों का संग्रहण संभव नहीं हो सका ।

चूंकि सोनभद्र विविधता युक्त जनपद है तथा इसमें समरूपता का अभाव है। इसलिए यातायात प्रवाह का विशेष महत्व है। अध्ययन क्षेत्र के तीन विकास खण्डों (चतरा, राबर्ट्सगंज व घोरावल) में अच्छी खेती होती है, इसे कृषि प्रधान विकास खण्ड कहा जा सकता है। तीन विकास खण्ड (म्योरपुर, चोपन व राबर्टसगंज) बड़े उद्योगों से युक्त है तथा जनपद का अधिकांश हिस्सा जंगली तथा पठारी है। म्योरपुर विकासखण्ड में कोयले की खानें हैं। औद्योगिक

क्षेत्रों में खाद्यान्नों, सब्जियों तथा दुग्ध आदि की आपूर्ति कृषि प्रधान विकास खण्डों से सड़क परिवहन से होता है। ताप विद्युत गृहों के लिए कोयले की आपूर्ति, सीमेंट उद्योग के लिए चूना पत्थर की आपूर्ति, अल्यूमिनियम उद्योग के लिए बाक्साइट की आपूर्ति तथा विनिर्मित वस्तुओं यथा सीमेंट, अल्यूमीनियम, केमिकल्स, सोडा व चूना आदि को दूरवर्ती क्षेत्रों में भेजने के लिए अधिकांशत: ट्रकों का उपयोग किया जाता है। बालू व बजरी का परिवहन न केवल स्थानीय आवश्यकता के लिए किया जाता है वरन् अन्तर्प्रादेशिक क्षेत्रों में भी भेजा जाता है। बड़े उद्योगों की स्थापना से यात्रियों का आवागमन दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। बाहर से जनपद में आने वाली वस्तुओं तथा जनपद से बाहर जाने वाली वस्तुओं के लिए ट्रकों व रेलगाड़ियों का उपयोग होता है। बंधियों, सड़कों के निर्माण तथा भूमि के समतलीकरण के लिए मिट्टी को ट्रैक्टर व ट्रकों द्वारा ढुलाई की जाती है। पहाड़ी क्षेत्रों में मुख्य सड़कों से गाँवों को जोड़ने के प्रमुख साधन बैलगाड़ी है। इक्का, साइकिलों, बैलगाड़ियों, ट्रैक्टरों, टैक्सी आदि का उपयोग यात्रियों एवं वस्तुओं के एकत्रीकरण व विकेन्द्रीकरण के लिए होता है। मौसम के अनुसार यातायात में परिवर्तन दृष्टि गोचर होता है।

किन्तु यातायात प्रवाह के उपर्युक्त आंकड़ों का एकत्रीकरण निश्चित समय के अन्दर असम्भव है। दूसरे, यातायात प्रवाह में परिवर्तन बहुत अधिक होता है। वास्तव में यातायात प्रवाह अनेक परिवर्त्यों पर निर्भर करता है। इसलिए यात्रियों के आवागमन के आधार पर यातायात प्रवाह का विश्लेषण किया गया है। यात्रियों का यह प्रवाह सड़कों पर चलने वाले व्यक्तिगत तथा सरकारी बसों के माध्यम से मापने का प्रयास किया गया है। सड़कों पर चलने वाली बसों की गणना व्यक्तिगत सर्वेक्षण पर की गयी है। बसों की सम्पूर्ण संख्याओं का योग उनके (बसों के) आने व जाने के संदर्भ में किया गया है। सोनभद्र में बसों का प्रवाह मानचित्र 6.5 में प्रदर्शित है ।

राबर्ट्सगंज से रेनूकूट तक प्रतिदिन लगभग 100 यात्री बसों का आवागमन होता है। मीरजापुर से व वाराणसी से आने वाली बसें हिन्दुआरी तिराहे से होकर राबर्ट्सगंज में प्रवेश करती हैं, इनमें से अधिकांश शक्तिनगर, रिहन्द नगर के लिए जाती हैं। अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक यातायात प्रवाह इसी मार्ग पर सम्पन्न होता है।

DISTRICT SONBHADRA
FREQUENCY OF BUSES
N
S
TO MARIHAN
TO MIRZAPUR
TO RAJGRAH
TO VARANASI
TO NAUGARH
GHORAWAL
KHALIYARI
ROBERTSGANJ
SALAKHAN
CHOPAN
DALLA
OBRA
KON
HATHINALA
VINDHAMGANJ
ANPARA
DUDHI
SHAKTI NAGAR
GOVINDPUR
MUIRPUR
RIHAND NAGAR
BABHANI
TO AMBIKAPUR
0 4 8
KM
FREQUENCY OF BUSES
10
20
30
40
50
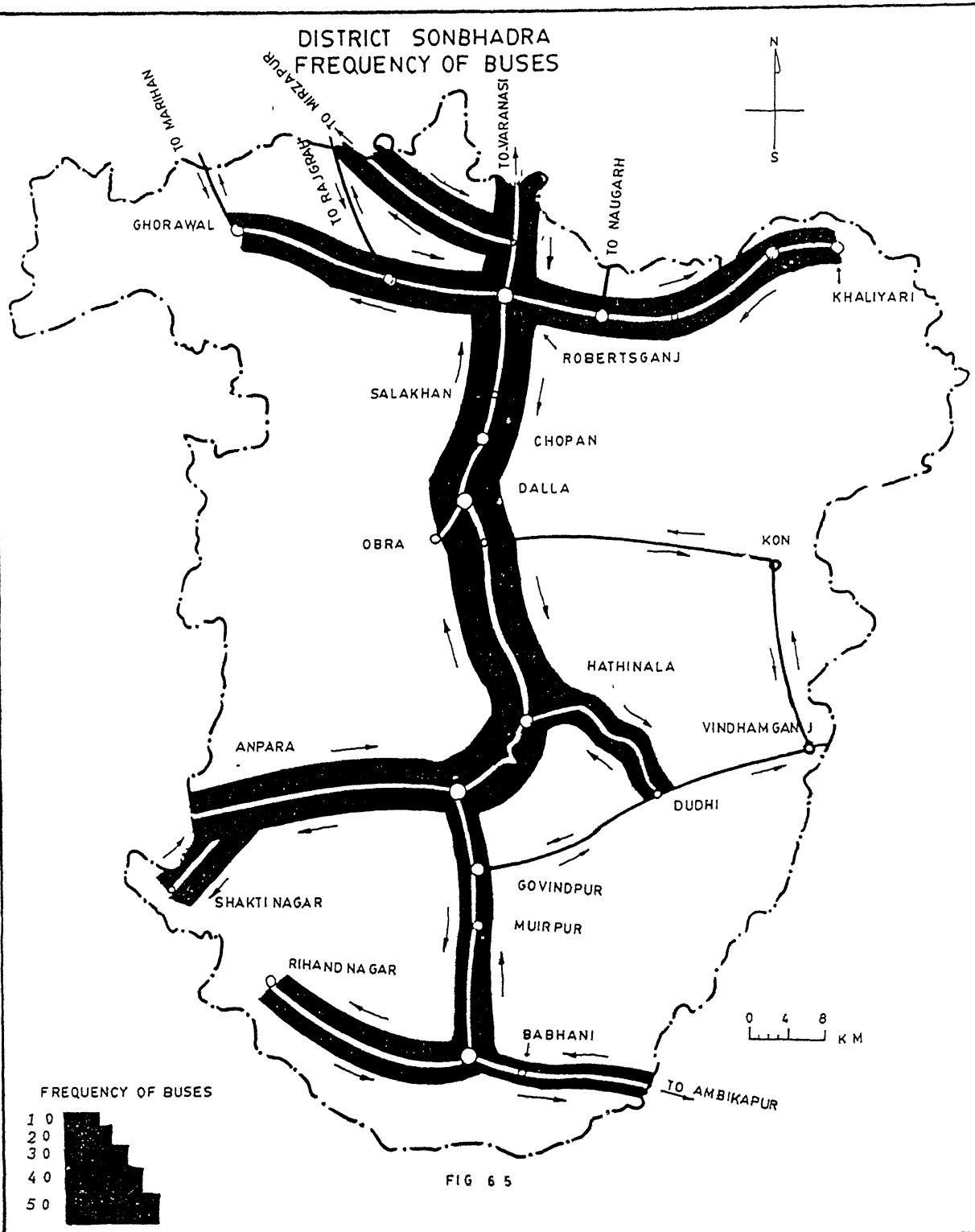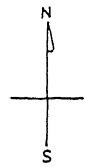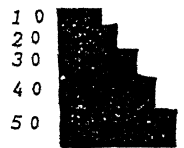
FIG 6 5

रेनूकूट से अनपरा, बीना से होते हुए शक्तिनगर मार्ग पर लगभग 70 बसे प्रतिदिन गुजरती हैं। खलियारी से घोरावल मार्ग पर भी लगभग 65-70 बसों का आवागमन होता है। उल्लेखनीय है कि इस मार्ग पर केवल प्राइवेट बसें ही चलती हैं। जनपद का मुख्यालय दोनों ही सेवा केन्द्रों (खलियारी व घोरावल) के लगभग मध्य में पड़ता है। रेनूकूट से रिहन्द नगर मार्ग पर प्रतिदिन लगभग 50 बसों का आवागमन होता है। हाथीनाला से दुद्धी मार्ग पर लगभग 40 बसों का, शाहगंज से राजगढ़ मार्ग पर 10 बसों का, घोरावल से मड़िहान मार्ग पर 16 बसों का, विण्ढमगंज से दुद्धी मार्ग पर 25 बसों का, विण्ढमगंज से कोन मार्ग पर 20 बसों का तथा बभनी मार्ग पर भी 20 बसों का आवागमन होता है ।

तालिका 6.6

जनपद मुख्यालय राबर्ट्सगंज से प्रमुख सेवा केन्द्रों व बस स्टेशनों की दूरी

क्रमसंख्या	सेवाकेन्द्र/बस स्टेशन/बस स्टाप	राबर्टसगंज से दूरी किमी0 में
1.	पसही	8
2.	ककराही	13
3.	खैराही	16
4.	करमा	23
5.	चुर्क	8
6.	मारकुण्डी	16
7.	सलखन	21
8.	चोपन	27
9.	डाला	37
10.	ओबरा	39
11.	हाथीनाला	58
12.	रेनूकूट	72
13.	पिपरी	75
14.	अनपरा मोड़	105
15.	बीना	127
16.	शक्तिनगर	142
17.	दुद्धी	79
18.	विण्ढमगंज	144

19.	गोविन्दपुर	92
20.	म्योरपुर	104
21.	बभनी	142
22.	रामगढ़	18
23.	रिहन्द नगर	172
24.	खलियारी	36
25.	घोरावल	30

स्रोत : राबर्ट्सगंज बस स्टेशन की पट्टिका से संग्रहित ।

6.7 परिवहन तन्त्र का नियोजन

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में जल परिवहन नगण्य है। वायु परिवहन नहीं होता है, यद्यपि म्योरपुर के निकट हवाई पट्टी है। साथ ही रेल व सड़क परिवहन का भी समुचित विकास नहीं हुआ है। रज्जुमार्ग का प्रयोग सीमित स्तर पर होता है। अध्ययन क्षेत्र में अनेक ऐसे सेवा-केन्द्र हैं जो पक्की सड़कों से जुड़े हुए नहीं है। जनपद के समाकलित विकास के लिए परिवहन सुविधाओं का बढ़ाया जाना आवश्यक है, बड़े औद्योगिक केन्द्रों को अच्छी सड़कों से जोड़ दिया गया है परन्तु जनपद का अधिकांश भाग स्वतन्त्रता के 45 वर्ष बाद भी सड़कों से अभिगम्य नहीं है। परिवहन के विकास के लिए आवश्यक है कि एक समन्वित कार्य योजना तैयार किया जाय। अध्ययन क्षेत्र का 10 वर्षीय परिवहन नियोजन प्रस्तुत है। प्रस्तुत अध्ययन में ग्रामीण कच्ची तथा खड़ंजा सड़कों की समस्याओं को देखते हुए उनके विकास के लिए विशेष बल दिया गया है ।

(अ) रेल मार्ग

अध्ययन क्षेत्र में अवस्थित सम्पूर्ण इकहरी रेलवे लाइन को दोहरी (डबल) रेलवे लाइन में बदलने की आवश्कता है, जिससे यात्री गाड़ी व माल गाड़ी परिचालन में व्यवधान न हो। दिन- प्रतिदिन, चलने वाली मालगाड़ियों की बढ़ती संख्या को देखते हुए यह और भी आवश्यक हो गया है ।

राबर्ट्सगंज से रामगढ़ पन्नूगंज, बैनी, खलियारी होते हुए सहसाराम (बिहार) तक एक नयी रेलवे लाइन बनाने की जरूरत है। इसके लिए कर्मनाशा नदी (सोनभद्र व भभुआ की सीमा)पर एक पुल बनाने की आवश्यकता है। प्रस्तावित रेलमार्ग का सम्पूर्ण क्षेत्र समतल तथा कृषि प्रधान क्षेत्र है। अतः निर्माण में अधिक आर्थिक विनियोग की भी आवश्यकता नहीं है।

(ब) जल मार्ग

180 वर्ग मील क्षेत्र में फैले रिहन्द जलाशय के चारों तरफ फैले औद्योगिक नगरों (रिहन्द नगर, अनपरा, रेणूसागर, शक्तिनगर, पिपरी, रेनूकूट व मध्य प्रदेश स्थित विंध्यनगर) के बीच जल परिवहन की पर्याप्त सम्भावनाएं हैं। इससे न केवल यात्रियों बल्कि वस्तुओं का भी परिवहन किया जा सकता है। वर्तमान समय में मात्र रिहन्द नगर से शक्तिनगर के बीच जल परिवहन की सुविधा है। रिहन्द जलाशय में जल परिवहन की सुविधा बढ़ने से समय तथा दूरी दोनों की बचत होगी। इसके अतिरिक्त अध्ययन क्षेत्र में जल परिवहन के नाम पर, पुलों के अभाव में नदियों को पार करना मात्र है। पुलों का निर्माण करके नावों का चलाना बन्द करना आवश्यक है। क्योंकि नदियों के पहाड़ी व बरसाती स्वभाव में कारण बहुधा दुर्घटनाएं होती रहती हैं ।

(स) वायु मार्ग

म्योरपुर के निकट स्थित हवाई पट्टी को आधुनिक हवाई अड्डे के रूप में परिवर्तित करके साप्ताहिक वायु परिवहन शुरू करना चाहिए। निकट भविष्य में अध्ययन क्षेत्र वृहद् औद्योगिक पेटी के रूप में विकसित होगा इसे देखते हुए वायु परिवहन का विकास करना आवश्यक है ।

(द) रज्जु मार्ग

शक्तिनगर, अनपरा, ओबरा में भी रज्जुमार्ग सेकोयले की ढुलाई करना सुविधा जनक होगा। समीप के सिंगरौली कोयला क्षेत्र से उपर्युक्त ताप विद्युत गृहों के लिए कोयले की ढुलाई से, सड़कों पर न केवल परिवहन साधनों का दबाव कम होगा बल्कि मानव शक्ति की बचत व प्रदूषण से मुक्ति भी मिलेगी ।

(य) **सड़क मार्ग**

अध्ययन क्षेत्र में सड़क मार्ग परिवहन तन्त्र का आधार है। सर्वप्रथम वर्तमान पक्की सड़कों में सुधार की आवश्यकता है। करमा- शक्तिनगर मार्ग, रेनूकूट - रिहन्द नगर मार्ग तथा हाथीनाला - विण्ढमगंज मार्ग को और चौड़ा करने की जरूरत है क्योंकि इन पर बसों के अतिरिक्त ट्रकों का प्रवाह दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है ।

घोरावल से खलियारी सड़क मार्ग को चौड़ा करके दुगुना करने की जरूरत है। इस इकहरे सड़क मार्ग पर बसों का प्रवाह, अत्यधिक है। खलियारी से पूर्व की ओर कर्मनाशा नदी पर पुल बनाकर घोरावल खलियारी मार्ग को पक्की सड़क से बिहार स्थित भभुवा से जोड़ने की आवश्यकता है। घोरावल से वर्दिया होते हुए कैमूर पहाड़ियों को पार करके वर्दिया से मध्य प्रदेश स्थित देउरा गाँव तक 9 किमी0 लम्बी सड़क बनाने से घोरावल का रींवा से सम्पर्क हो जाएगा । सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में स्थित कुल 441 किमी0 खड़ंजा सड़कों को पक्की सड़कों में बदलने की आवश्यकता है, क्योंकि बरसात के दिनों में अपरदन से बस्तियों की सड़कों से अभिगम्यता और कम हो जाती है। विगत दो वर्षों में जवाहर रोजगार योजना के अन्तर्गत अनेक गाँवों को खड़ंजा मार्ग से पक्की सड़कों से जोड़ा गया। किन्तु मार्गों पर जैविक अपरदन (पशुओं से) व यान्त्रिक अपरदन (ट्रैक्टर व बैलगाड़ी से) होने से, उद्देश्यों को पूरा करने में असफल हैं। अतः इन सभी लघु सम्पर्क मार्गों को पक्की सड़क में बदलने की जरूरत है। दुद्धी के पास कनहर नदी पर खलियारी के पास कर्मनाशा नदी पर कोन के पास पाण्डु नदी पर तथा सोन नदी पर गुरूदह, ससनई, चकरिया, हरदी में पुल बनाने की आवश्यकता है। चोपन में सोन नदी पर बने पुल की मरम्मत करने व एक नया पुल बनाने की आवश्यकता है।

ग्रामीण सड़क मार्ग

ग्रामीण सड़क ग्रामीण विकास का आधार है। अध्ययन क्षेत्र की 87% ग्रामीण जनसंख्या को नगरों, औद्योगिककेन्द्रों, विकासकेन्द्रों तथा मुख्यसड़कों से जोड़ने के लिए सड़कों का जाल होना आवश्यक है। कृषि उपज तथा कुटीर उद्योगों के उत्पादों की विपणनीय सुविधाएं, ग्रामीण सड़कों पर बहुत निर्भर करती है। गाँवों को, सड़कों द्वारा मण्डियों से जोड़कर गाँवों का बहुमुखी विकास किया जा

सकता है। अध्ययन क्षेत्र के पिछड़ेपन को ग्रामीण सड़कों के अभाव ने और पिछड़ा बना दिया है। ग्रामीण सड़कों से सम्बन्धित निम्न सुझाव प्रस्तुत है -

1. ग्रामीण यातायात के प्रमुख साधन बैलगाड़ी में तकनीकी दृष्टि से सुधार करना चाहिए जिससे ग्रामीण सड़कों को क्षति न पहुँचे ।

2. गाँवों को मुख्य सड़क से जोड़ने वाली सहायक खड़ंजा सड़कों को पक्की सड़क में बदला जाय ।

3. बैलगाड़ी के साथ-साथ अब मोटर परिवहन साधन भी गाँवों में तेजी से पहुँच रहे हैं। अत सड़कों की मरम्मत की व्यवस्था नियमित होनी चाहिए ।

4. ग्रामीण क्षेत्रों में यूँ तो कच्ची सड़कों को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए किन्तु पक्की सड़कों से जुड़ने वाले सम्पर्क मार्ग को पक्की होनी चाहिए।

5. ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों का विकास करने के लिए ऐच्छिक श्रम अर्थात श्रमदान को प्रोत्साहित करना चाहिए । राष्ट्रीय सेवा योजना आदि के द्वारा भी ग्रामीण सड़कों का निर्माण सरलतापूर्वक किया जा सकता है ।

6. सड़क जाल इस प्रकार होनी चाहिए कि सभी गाँवों का सम्पर्क सेवा केन्द्रों से हो जाय।

7. राज्य सरकार को ग्रामीण सड़कों के निर्माण में स्वैच्छिक संस्थाओं से सहयोग लेना चाहिए। सड़कों के नियमित भाग के रख-रखाव की जिम्मेदारी बाँटी जा सकती है। ग्राम पंचायतों एवं सहकारी संस्थाओं का इसमें व्यापक सहयोग लिया जा सकता है ।

6.8 संचार व्यवस्था

पिछड़े क्षेत्रों के विकास में संचार साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। संचार माध्यमों से नवीनताओं का प्रसरण होता है जो पिछड़ेपन को दूर करने में सहायक होता है।

विकसित संचार सेवाएं आधुनिक समय की अनिवार्य आवश्यकता है। राजनैतिक जीवन, सरकारी प्रशासन, राष्ट्रीय सुरक्षा, व्यावसायिक प्रबन्ध, कृषि तथा अन्य विस्तार सेवाएँ, उन्नत शैक्षिक प्रविधियाँ, विज्ञापन, उद्योग, मनोरंजन क्रियाएं, समाचार-पत्र और व्यक्तिगत मामलों का संचालन आदि सभी संचार के अधिक साधनों की माँग करते हैं।[16]

संदेश, विचार एवं सूचनाओं इत्यादि के आदान-प्रदान को संचार कहते हैं। विकास के लिऐ परिवहन जैसा सचार भी आवश्यक है। संचार माध्यमों को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है, प्रथम - व्यक्तिगत संचार माध्यम तथा द्वितीय जनसंचार माध्यम । व्यक्तिगत संचार माध्यम के अन्तर्गत, डाक, तार तथा दूरभाष आदि आते है। ये वैयक्तिक सेवाएं प्रदान करने के साथ उद्योगों को बढ़ावा देते हैं। रेडियो, दूरदर्शन, पत्र-पत्रिकाएं तथा सिनेमा आदि जनसंचार के माध्यम हैं जो सूचना, ज्ञान, विचारों, भवनाओं तथा शिल्प आदि का संकेत-चिन्हों, शब्दों, चित्रों तथा आरेखों द्वारा प्रभावशाली प्रसारण करते हैं।[17]

(अ) व्यक्तिगत संचार

सम्प्रति जनपद में 136 डाकघर, 16 तारघर, 43 पी0सी0ओ0 (पब्लिक काल आफिस) तथा 1258 दूरभाष सेवा सम्पर्क है ।

तालिका 6.7

सोनभद्र जनपद में उपलब्ध संचार सेवाएं

वर्ष	डाकघर	तारघर	पब्लिक काल आफिस	दूरभाष सेवा
1.	2	3	4	5
1989-90	133	13	24	1153
1990-91	133	13	24	1175
1991-92	136	16	43	1258

1	2	3	4	5
विकास खण्ड 1991-92				
1. घोरावल	16	-	1	20
2. राबर्ट्सगंज	17	1	4	15
3. चतरा	11	1	2	12
4. नगवां	11	-	1	-
5. चोपन	21	1	8	32
6. म्योरपुर	22	5	8	350
7. दुद्धी	16	-	2	16
8. बभनी	11	-	1	-
योग ग्रामीण	125	8	27	445
योग नगरीय	11	8	16	813
योग जनपद	**136**	**16**	**43**	**1258**

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 108.

(1.) डाक सेवा

भारत में आधुनिक डाक प्रणाली सर्वप्रथम 1837 में प्रारम्भ हुई। 1854 में डाक विभाग तथा 1880 में मनीआर्डर प्रणाली प्रारम्भ हुई। रेलवे डाक सेवा 1907 तथा हवाई डाक सेवा 1911 में प्रारम्भ हुई । फलस्वरूप द्रुत डाक सेवा, अंकित डाक सेवा (रिकार्डेड डिलीवरी) और द्रुतगामी डाक सेवा (स्पीड पोस्ट) जैसे कार्यक्रम शुरू किये गये हैं किन्तु सोनभद्र इससे अभी तक अछूता ही है। जनपद सोनभद्र में कुल डाकघरों की संख्या 1991-92 में 136 थी। भारत में एक डाकघर से औसतन 4731 लोगों को सेवाएं उपलब्ध होती है जबकि सोनभद्र जनपद में एक

डाकघर से लगभग 7904 लोगों को सेवाएं उपलब्ध होती है अर्थात देश की तुलना मे 60% अधिक लोगों को डाक सेवा उपलब्ध कराना पड़ता है। इस प्रकार देश के औसत की तुलना में सोनभद्र में डाकघरों की संख्या अल्प है। इसी प्रकार देश में एक डाकघर से 22.69 वर्ग किमी0 क्षेत्र की सेवा होती है जबकि सोनभद्र में 50.1 वर्ग किमी0 क्षेत्र की सेवा होती है। अत: उपर्युक्त दोनों तथ्यों से सोनभद्र के पिछड़ेपन का ज्ञान होता है ।

डाकघर खोलने के लिए गाँवों के एक समूह को चुना जाता है और इस समूह में से डाकघर की स्थापना के लिए एक उपयुक्त गाँव का चयन किया जाता है। गाँवों के समूह की कुल आबादी पहाड़ी, पिछड़े हुए और जनजातीय क्षेत्रों में 1,500 या इससे अधिक तथा अन्य ग्रामीण क्षेत्रों में 3,000 या इससे अधिक होनी चाहिए। अध्ययन क्षेत्र में इस मानक के अन्तर्गत बहुत ही कम गाँव सम्मिलित हैं।

1989-90 में सोनभद्र में कुल 133 डाकघर थे जो 1991-92 में बढ़कर 136 हो गए, इसमें से 125 ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 11 नगरीय क्षेत्रों में है। डाकघरों की सर्वाधिक संख्या म्योरपुर, विकासखण्ड में 22 है, पुनः अवरोही क्रम में क्रमशः चोपन (21), राबर्ट्सगंज (17), घोरावल (16), दुद्धी (16), चतरा (11), नगवां (11) तथा बभनी (11) (तालिका 6.7) का स्थान आता है। जनपद के केवल 9.31% गाँवों में डाकघर की सुविधा उपलब्ध है। गाँवों में ही उपलब्ध प्रत्येक विकास खण्ड में डाक सुविधा इस प्रकार है - म्योरपुर में 22, चोपन में 21, राबर्टसगंज में 17, दुद्धी में 16, चतरा, नगवां व बभनी प्रत्येक में 11 डाकघर है। 3.42% गाँवों के लोगों को डाकघर की सुविधा 1 किमी0 से कम दूरी पर, 13.19% लोगों को 1-3 किमी0 की दूरी पर 16.77%, लोगों को 3-5 किमी0 की दूरी पर तथा 57.30% लोगों को 15 किमी0 से अधिक दूरी पर डाकघर सुविधा उपलब्ध है।

औद्योगीकरण, जनसंख्या और साक्षरता की दर में वृद्धि के कारण डाक आवागमन में भी अत्यधिक बढ़ोत्तरी हुई है। देश में डाक स्थल और वायु दोनों मार्गों से ले जायी जाती है। स्थल मार्ग से डाक ले जाने के लिए रेल, मोटरगाड़ी, नाव, ऊँट, घोड़ा सायकिल आदि का प्रयोग किया जाता है। ऊँट का प्रयोग अध्ययन क्षेत्र में नहीं होता है।

अध्ययन क्षेत्र में हवाई मार्ग व हवाई अड्डा न होने के कारण सीधे हवाई डाक सेवा उपलब्ध नहीं है ।

(2) तार सेवा

अध्ययन क्षेत्र में कुल 16 तारघर हैं । कुल तारघरों में से 50% (8) तारघर नगरीय क्षेत्र में तथा 50% (8) तारघर ग्रामीण क्षेत्रों में है । तारघरों की अवस्थिति नगरीय क्षेत्रों में राबर्ट्सगंज, घोरावल, दुद्धी, चुर्क, चोपन, ओबरा, रेनूकूट व पिपरी में है । अन्य तारघरों की अवस्थिति शक्तिनगर, अनपरा, रिहन्द नगर, रेणू सागर, बीना , डाला, रामगढ़ व बढ़ौली में है । जनपद के 89.49% (1201) गाँव तारघरों की सुविधा से 5 कि0 मी0 दूर स्थित है (तालिका 6.9)। विकासखण्ड नगवां, घोरावल, दुद्धी व बभनी के ग्रामीण क्षेत्र में एक भी तारघर उपलब्ध नहीं है (तालिका 6.7) । उपर्युक्त तथ्य से तारसेवा की अभावग्रस्तता एवं पिछड़ेपन का ज्ञान होता है ।

(3) दूरभाष सेवा

वर्तमान समय में दूरभाष सेवा को आदिवासी क्षेत्र सहित ग्रामीण क्षेत्र तक बढ़ाया जा रहा है । सरकार की नीति का उद्देश्य यह है कि प्रत्येक गाँव से 5 कि0 मी0 की दूरी के अन्दर एक दूरभाष सेवा दी जाय । तालिका 6.6 से स्पष्ट है कि जनपद सोनभद्र में कुल 1258 दूरभाष सेवा सम्पर्क है, इसमें से 445 (35.35%) ग्रामीण क्षेत्र में तथा 813 (64.65%) नगरीय क्षेत्र में है । सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र के दूरभाष सेवा सम्पर्क का 78.65% (350) विकासखण्ड म्योरपुर में है, जबकि नगवां व बभनी में एक भी नहीं है (तालिका 6.7)। अध्ययन क्षेत्र के 87.48% (1174) गाँव दूरभाष सेवा सम्पर्क से, 5 कि0 मी0 से अधिक दूर स्थित हैं (तालिका 6.9) । उपर्युक्त तथ्य से जनपद के पिछड़ेपन का संकेत मिलता है। अध्ययन क्षेत्र के नगरीय क्षेत्र में पी.सी.ओ. (पब्लिक कॉल आफिस) की कुल संख्या 16 है, जिसमें से राबर्ट्सगंज में 2, चुर्क में 1, ओबरा में 2, रेनूकूट में 4, पिपरी में 1, शक्तिनगर में 2, अनपरा में 2, चोपन में 1 तथा रिहन्द नगर में 1 है । जनपद के अन्य ग्रामीण क्षेत्र के विकास केन्द्रों में पी.सी.ओ. की संख्या 27 है जिसमें से विकास खण्ड म्योरपुर व चोपन में आठ - आठ, सबर्ट्सगंज में चार, चतरा व दुद्धी में दो - दो, घोरावल, नगवां व बभनी में एक - एक है ।

तालिका 6.8

सोनभद्र जनपद के गाँवों में उपलब्ध संचार सेवाएं 1991-92

क्रमसंख्या	विकासखण्ड	सुविधाएं	गाँव में उपलब्ध	1किमी0 से कम दूरी	1-3किमी0 की दूरी	3-5किमी0 की दूरी	5किमी0 से अधिक	योग
1	घोरावल	डाकघर	46	11	33	38	239	337
		तारघर	-	-	-	14	323	337
		दूरभाष	1	22	19	35	260	337
2	राबर्ट्सगंज	डाकघर	17	8	91	85	128	329
		तारघर	1	-	34	34	260	329
		दूरभाष	4	2	12	21	290	329
3.	चतरा	डाकघर	11	12	9	45	91	168
		तारघर	1	3	3	8	153	168
		दूरभाष	2	3	3	8	152	168
4	नगवां	डाकघर	11	2	1	15	99	128
		तारघर	-	-	-	-	128	128
		दूरभाष	1	-	-	-	127	128
5	चोपन	डाकघर	21	9	10	11	48	91
		तारघर	1	-	2	1	87	91
		दूरभाष	-	-	-	-	91	91
6	म्योरपुर	डाकघर	22	-	10	14	74	120
		तारघर	5	-	1	8	106	120
		दूरभाष	-	-	-	7	105	120
7	दुद्धी	डाकघर	16	4	21	17	40	98
		तारघर	-	-	13	12	73	98
		दूरभाष	2	-	12	5	79	98
8.	बभनी	डाकघर	11	-	2	-	58	71
		तारघर	-	-	-	-	71	71
		दूरभाष	1	-	-	-	70	71
योग जनपद		**डाकघर**	**125**	**46**	**177**	**225**	**769**	**1342**
		तारघर	**8**	**3**	**53**	**77**	**1201**	**1342**
		दूरभाष	**19**	**27**	**46**	**76**	**1174**	**1342**

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 157, 158 व 159.

तालिका 6.9

सोनभद्र जनपद के गाँवों में उपलब्ध संचार सेवाएं 1991-92

क्रमसख्या	विकासखण्ड	सुविधाएं	उपलब्ध सेवाओं वाले गाँवों का प्रतिशत					
			गाँव में उपलब्ध	1किमी0 से कम दूरी	1-3किमी0 की दूरी	3-5किमी0 की दूरी	5किमी0 से अधिक	योग
1.	घोरावल	डाकघर	4.75	3.26	9 79	11.28	69 92	100
		तारघर	-	-	-	4.15	95 85	100
		दूरभाष	0.30	6.53	5 68	10.39	77 15	100
2	राबर्ट्सगज	डाकघर	4.75	3.26	9 79	11.28	70.92	100
		तारघर	0.03	-	10.33	10.33	79 03	100
		दूरभाष	1.22	0 61	3 65	6.38	88 15	100
3	चतरा	डाकघर	6.55	7.14	5.36	26.79	54.17	100
		तारघर	0 60	1.79	1.79	4.76	91.07	100
		दूरभाष	1 19	1.79	1.79	4 76	90 48	100
4	नगवा	डाकघर	8.59	1 56	0.78	11 72	77 34	100
		तारघर	-	-	-	-	100 00	100
		दूरभाष	0.78	-	-	-	99.22	100
5	चोपन	डाकघर	23.08	9 89	10.99	12 09	52 75	100
		तारघर	1.10	-	2.20	1.10	95 60	100
		दूरभाष	-	-	-	-	100 00	100
6	म्योरपुर	डाकघर	18.33	-	8.33	11.67	61 67	100
		तारघर	4 17	-	0.83	6.67	88.33	100
		दूरभाष	6.67	-	-	5.83	87 50	100
7	दुद्धी	डाकघर	16.33	4.08	21.42	17 35	40.82	100
		तारघर	-	-	13.27	12.24	74 49	100
		दूरभाष	2.04	-	12.24	5 10	80.61	100
8.	बभनी	डाकघर	15.49	-	2.82	-	81.69	100
		तारघर	-	-	-	-	100.00	100
		दूरभाष	1 41	-	-	-	98.59	100
योग सम्पूर्ण जनपद		**डाकघर**	**9.31**	**3.42**	**13.19**	**16.77**	**57.30**	**100**
		तारघर	**0.60**	**0.22**	**3.95**	**5.74**	**89.49**	**100**
		दूरभाष	**1.42**	**2.01**	**3.42**	**5.66**	**87.48**	**100**

स्रोत : तालिका 6.8 से संगणित ।

(ब) जनसंचार

इलेक्ट्रानिक तथा मुद्रण जनसंचार के प्रमुख माध्यम है । इलेक्ट्रानिक्स के अन्तर्गत रेडियो, दूरदर्शन तथा चलचित्र प्रमुख हैं । संगीत, मनोरंजन, शिक्षा, समाचार, विज्ञापन, संवाद, सूचना आदि के प्रसारण के लिए रेडियो एक सशक्त माध्यम है । खेलों, स्वतन्त्रता दिवस, गणतन्त्र दिवस व अन्य प्रमुख घटनाओं के आँखो देखा हाल का प्रसारण रेडियो को और जीवन्त बना देता है । बम्बई और कलकत्ता के दो निजी स्वामित्व वाले ट्रांसमीटरों की सहायता से सर्वप्रथम 1927 में रेडियो प्रसारण प्रारम्भ हुआ । 1930 में सरकार ने इसे अपने हाथ मे लेकर 'भारतीय प्रसारण सेवा' प्रारम्भ किया। 1936 में इसका नाम बदलकर 'आल इण्डिया रेडियो' रखा गया और 1957 के बाद से इसे 'आकाशवाणी' कहा जाता है । सोनभद्र जनपद के सम्पूर्ण भाग पर रेडियो प्रसारण पहुँचता है किन्तु इसका लाभ लगभग 20% परिवार ही ले पाते हैं गरीबी व अशिक्षा के कारण लोगों को रेडियो सेट उपलब्ध नहीं है ।

दूरदर्शन दृश्य - श्रव्य माध्यम है । दूरदर्शन से उपर्युक्त तथ्यों को न केवल सुना जाता है वरन् देखा भी जाता है । भारत में दूरदर्शन की शुरूवात सितम्बर 1959 में हुई जब एक प्रायोगिक परियोजना के रूप में दिल्ली में दूरदर्शन केन्द्र खोला गया । अध्ययन क्षेत्र का सम्पूर्ण क्षेत्र दूरदर्शन प्रसारण के अन्तर्गत आता है किन्तु आर्थिक विपन्नता व विद्युतीकरण के अभाव के कारण कुछ सम्पन्न वर्ग ही इस सुविधा का उपयोग कर रहे हैं । ओबरा (विकासखण्ड चोपन) में हाल मे ही दूरदर्शन स्टुडियो केन्द्र खोला गया है जिसे शीघ्र ही कार्यरूप (फंक्शन) में आने की सम्भावना है ।

चलचित्र भी जनसंचार का सशक्त माध्यम है । इससे सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनीतिक व धार्मिक समस्याओं तथा निदान के अभिप्रेरण हेतु उसका चित्रण लोगों तक पहुँचाया जाता है । जनपद में इस समय 5 चलचित्र घर (सिनेमाघर) चल रहे हैं । राबर्ट्सगंज ओबरा, रेनूकूट, अनपरा तथा रिहन्दनगर में एक - एक सिनेमाघर है । जनपद के 21 विकास केन्द्रों में कई विडियो हाल चल रहे हैं ।

जनसंचार का एक प्रमुख माध्यम मुद्रण भी है । जनपद में दैनिक जागरण, आज, जनमोर्चा, स्वतन्त्र भारत, नवभारत टाइम्स दैनिक समाचार पत्र प्राप्त किए जा सकते हैं।

जनपद मुख्यालय राबर्ट्सगंज तथा ओबरा, रेनूकूट, शक्तिनगर व रिहन्द नगर आदि प्रमुख औद्योगिक केन्द्रों में अंग्रेजी में छपने वाले दैनिक अखबार (हिन्दुस्तान टाइम्स, टाइम्स ऑफ इण्डिया) भी एक दिन बाद प्राप्त किया जा सकता है । साक्षरता प्रतिशत कम होने के कारण इन अखबारों का उपयोग बहुत कम होता है । जनपद से किसी स्थानीय अखबार या पत्रिका का मुद्रण नहीं होता है । दैनिक जागरण में प्रतिदिन सोनभद्र समाचार छपता है ।

6.9 संचार नियोजन

किसी भी क्षेत्र के विकास में संचार माध्यमों की प्रभावी भूमिका होती है। सर्वप्रथम जनपद में डाक सेवा को कार्यक्षम बनाने के लिए प्रत्येक बस्ती से 5 कि0 मी0 की दूरी के अन्दर डाकघर सेवा उपलब्ध करायी जानी चाहिए । सभी डाकघरों को पक्की सड़क से जोड़ना चाहिए । नदी - नालों पर पुल बनाकर डाक वितरण की समस्या को कुछ हद तक कम किया जा सकता है । पहाड़ी भागों में डाक वितरण के लिए पोस्टमैन को कुछ अतिरिक्त सुविधा या पैसा प्रदान कराना चाहिए । डाक वितरण प्रतिदिन हो, इसके लिए प्रत्येक ग्राम सभा में ग्राम प्रधान के पास एक उपस्थिति रजिस्टर होना चाहिए, जिस पर पोस्टमैन स्वयं आकर हस्ताक्षर करे और पत्र वितरण करे । प्रत्येक गाँव में एक पत्र पेटिका अवश्य लगानी चाहिए। प्रत्येक न्याय पंचायत में कम - से - कम एक टेलीफोन केन्द्र अवश्य होना चाहिए । जनपद के सभी लोग दूरदर्शन की सुविधा को प्राप्त कर सकें, इसके लिए सर्वप्रथम प्रत्येक गाँव में विद्युत उपलब्ध करानी चाहिए, तत्पश्चात् सरकार की ओर से प्रत्येक ग्राम सभा में दो टेलीविजन सेट उपलब्ध कराना चाहिए ।

समाचार पत्रों के मुद्रण के उद्देश्यों पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। अध्ययन क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों में औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के बावजूद आज भी वास्तविक सोनभद्र गाँवों में बसा है । लगभग 87% लोग गाँवों में रहते हैं तथा ऐसे लोगों का प्रतिशत भी काफी है जो नगरों में रहते हुए या काम करते हुए भी गाँवों से सम्पर्क बनाए रखते हैं। इसलिए पत्रकारिता के क्षेत्र में ग्रामीण रिपोर्टिंग का महत्व काफी है । लेकिन अखवारी क्षेत्रों में ग्रामीण रिपोर्टिंग को खास महत्व नहीं दिया जा रहा है । गाँवों के बारे में समाचार देने की दिखावटी प्रशंसा भले ही की जाती है और कुछ पत्रकार नियमित रूप से समाचार लेने के लिए गाँवों में जाते भी हैं किन्तु सामान्य तौर पर पत्रकारिता की प्राथमिकताओं की सूची में

ग्रामीण रिपोर्टिंग का स्थान बहुत नीचे है । चुनाव, किसान रैलियों तथा अन्य राजनीतिक समाचारों को ही अधिक महत्व मिलता है । इन राजनीतिक समाचारों की भी अच्छी रिपोर्टिंग के लिए पत्रकारों का नियमित रूप से गाँवों में जाना अनिवार्य है । पत्रकारों का ग्रामीण रिपोर्टिंग का मुख्य उद्देश्य गाँवों के लोगों, विशेषकर वहाँ के कमजोर वर्गों की वास्तविक सामाजिक आर्थिक समस्याओं की ओर ध्यान दिलाना तथा उन उपायों का मूल्याँकन करना होना चाहिए जो इन समस्याओं को हल करने और कमजोर वर्गों की सामाजिक, आर्थिक दशा सुधारने के लिये किये जा रहे हैं ।

संचार आयोजना के लिए जरूरी है कि हमें अपनी सांस्कृतिक विरासत, विशिष्टता और प्रभुसत्ता का भान सदैव रहना चाहिए । इसमें आधुनिकीकरण और सामाजिक परिवर्तन को ग्रहण करने के साथ - साथ परम्परा की निरन्तरता को जीवन्त बनाए रखना चाहिए । प्रेस की वास्तविक शक्ति जिला या मण्डल स्तर पर उस क्षेत्र की भाषा मे प्रकाशित होने वाले पत्र-पत्रिकाओं के विकास में निहित है । रेडियो, दूरदर्शन और फिल्म के विपरीत प्रेस जैसे माध्यम को स्थापित होने में कुछ समय लगेगा क्योंकि आधारभूत ढाँचे का विस्तार ही इसके विकास के लिए आवश्यक नहीं है । इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है, प्रकाशित सामग्री को पढ़ने के लिए क्षमता और रूचि का विकास करना । प्रेस के लिए यह आवश्यक है कि हमारी स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समुचित विकास हेतु साक्षरता के आधार को व्यापक बनाया जाए । केरल के मलयालम प्रेस से यह साबित होता है कि साक्षरता के कारण ही पत्र - पत्रिकाओं की प्रसार संख्या में वृद्धि होती है । जनसम्पर्क माध्यम और सम्प्रेषण प्रौद्योगिकी प्रासंगिक और लचीली, गैर विशिष्ट वर्गीय और सहभागिता के दृष्टिकोण वाली होनी चाहिए । पिछड़े क्षेत्र के लोगों को सहभागी लोकतन्त्र के लिए सक्षम बनाने तथा विकासोन्मुखी समाज की शुरूआत करने के लिए संचार नियोजन और जनसम्पर्क माध्यमों की नीति को प्राथमिकता दी जानी चाहिए ।

सन्दर्भ

1. कुरैशी, एम0एच0 : भारत का भूगोल, संसाधन तथा प्रादेशिक विकास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 1978, पृ0 100.

2. मिश्र, एस0के0 व पुरी, वी0के0 · भारतीय अर्थव्यवस्था, 1991, पृष्ठ 867.

3. कुरैशी, एम0एच0 : भारत संसाधन और प्रादेशिक विकास राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, 1990, पृष्ठ 102.

4. वही, पृष्ठ 101.

5. सिंह, जगदीश: परिवहन तथा व्यापार भूगोल, 1977, पृष्ठ 4.

6. वही, पृष्ठ 38.

7. Thomas, R.L. : 'Transportation and Development of Malaya', A.A.A.G. Vol. 65, No.2, P.67.

8. Qureshi, M.H.: India: Resources and Regional Development, N.C.E.R.T., New Delhi, 1990, p. 67.

9. Op.cit., fn. 3 p.66.

10. Singh, J.: Parivahan and Vyapar Bhoogol, Uttar Pradesh Hindi Sansthan, Lucknow, 1977, p.48.

11. Prasad, U.: River Transport in U.P. Unpublished Ph.D. Thesis, Geography Deptt. B.H.U., Varanasi, 1943, cited in Environmental Planning Resources and Development by R.K. Pathak, Chugh Publication, Allahabad, 1990, p.181.

12. Op.cit., fn. 10, 149.

13. Babu, R.: Micro-level Planning - A case study of Chhibramau Tahsil, Unpublished Ph.D.Thesis, Geography Deptt., Allahabad University, 1981, p.244.

14. Ibid, p.245.

15. Ibid. p.

16. गिल0के0यस0: भारतीय अर्थव्यवस्था का विकास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली पृष्ठ 204.

17. Parakh, Bhalchandra Sadashive: India: Economic Geography, N.C.E.R.T., New Delhi, P.151.

XXXXXXXXXXXX

अध्याय 7

सामाजिक सुविधाओं की पृष्ठभूमि एवं विकास - नियोजन

आर्थिक विनियोग के कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जिससे तत्काल व प्रत्यक्ष लाभ दृष्टिगत होता है तथा कुछ क्षेत्रों में विनियोग से अप्रत्यक्ष लाभ मिलता है। यह अप्रत्यक्ष विनियोग विकास का आधार स्तम्भ है तथा विकास की दीर्घकालीन रणनीति इन्हीं विनियोगों पर आश्रित होती है। अप्रत्यक्ष व अनुत्पादक विनियोगों में शिक्षा, स्वास्थ्य तथा मनोरंजन जैसे सामाजिक सुविधाएं प्रमुख हैं। किन्तु ये क्षेत्र मनुष्य की कार्यकुशलता की वृद्धि में अभिप्रेरण होने के कारण इस तरह का विनियोग महत्वपूर्ण तथा उत्पादक विनियोग के अन्तर्गत गिना जाने लगा है।[1] इन सामाजिक सुविधाओं को विकास का सूचक माना गया है। इसलिए सामाजिक सुविधाओं के नियोजन को सम्पूर्ण विकास के नियोजन का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है। मानव के सांस्कृतिक एवं भौतिक विकास प्रत्यक्ष रूप से शिक्षा एवं स्वास्थ्य से सम्बन्धित सुविधाओं से प्रभावित होता रहता है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए संविधान निर्माताओं ने शिक्षा एवं स्वास्थ्य से सम्बन्धित तथ्यों को मौलिक अधिकारों एवं राज्य की नीति निर्देशक तत्वों के अन्तर्गत समाहित किया है।[2] जिसकी प्राप्ति हेतु सरकार ने छठीं पंचवर्षीय योजना में संशोधित न्यूनतम आवश्यक कार्यक्रम को अपनाने पर बल दिया है।[3]

'भोजन, कपड़ा और मकान' के बाद मनुष्य की आवश्यक आवश्यकताओं में शिक्षा और स्वास्थ्य का प्रमुख स्थान है। उत्तम स्वास्थ्य व शिक्षा से संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है, सीमित संसाधनों को विकसित किया जा सकता है तथा नये संसाधनों को खोजा जा सकता है। अतः प्रस्तुत अध्याय में इन्हीं दो तथ्यों (शिक्षा एवं स्वास्थ्य) को नियोजन हेतु प्रस्तुत किया गया है । शिक्षा एवं स्वास्थ्य के नियोजन हेतु जनपद में उसके वर्तमान प्रतिरूप का योजना आयोग के लक्ष्यों से सहसम्बन्धित कर विश्लेषित किया गया है।

7.1 शिक्षा

शिक्षा वह सम्बल है, जिसके सहयोग से मानव विकास प्रक्रिया में अपनी सही भूमिका का चयन और निर्वहन करता है तथा समाज व राष्ट्र के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान देकर 'सत्यं, शिवं और सुन्दरम्' के महान आदर्श की स्थापना में सहभागी बनता है। शिक्षा को देश की विकास प्रक्रिया का अभिन्न अंग होने के कारण, आयोजन की प्राथमिकताओं

में उच्च प्राथमिकता दी गयी है।[4] अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए आवश्यक नवीन आर्थिक क्रियाओं में आधुनिक विधियों तथा तकनीकी का प्रयोग शिक्षा के माध्यम से ही संभव है।[5] शिक्षा एक महत्वपूर्ण सामाजिक प्रक्रिया है, जो समाज को बनाए रखने तथा उसके विकास के लिए अति आवश्यक है। देश में ग्रामीण क्षेत्र की अधिकांश जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है, जिसका प्रमुख कारण अशिक्षा है।[6] शिक्षा के नियोजन के लिए कृषि, उद्योग एवं अन्य क्षेत्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। किसी क्षेत्र के विकास हेतु नियोजन के लिए, स्थानीय शिक्षा का स्तर एवं आवश्यकता, छात्र-शिक्षक अनुपात, विभिन्न स्तर के शिक्षण संस्थाओं की स्थिति तथा प्रौढ़ शिक्षा प्रसार व निरक्षरता उन्मूलन पर अवश्य ध्यान देना चाहिए । प्रस्तुत अध्ययन में भी इन तथ्यों को लेकर विश्लेषण किया गया है।

7.2 साक्षरता

न्यूनतम शैक्षिक निपुणता को साक्षरता कहते हैं। साक्षरता के आधार एव परिभाषा भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न अपनायी गयी है किन्तु सर्वत्र निम्न दो तथ्यों में से किसी न किसी को अवश्य स्वीकार किया गया है। इनमें से प्रथम है - विद्यालयी शिक्षा अवधि तथा द्वितीय - किसी भी प्रचलित भाषा में समझ के साथ पढ़ने व लिखने की योग्यता। 'संयुक्त राष्ट्र संघ जनसंख्या आयोग' ने किसी भी भाषा में साधारण संदेश को समझ के साथ पढ़ने और लिखने की योग्यता को साक्षरता निर्धारण का आधार माना है।[7] भारतीय जनगणना में लगभग इसी परिभाषा के स्वीकारोक्ति के साथ कहा गया है कि वह व्यक्ति जो किसी भाषा में समझ के साथ लिख और पढ़ सकता है, साक्षर है। वह व्यक्ति जो केवल पढ़ सकता है लेकिन लिख नहीं सकता साक्षर नहीं है। साक्षर होने के लिए आवश्यक नहीं है कि सम्बन्धित व्यक्ति ने औपचारिक रूप से शिक्षा प्राप्त की है या निम्नतम स्तर की कोई परीक्षा उत्तीर्ण की है। 1981 की जनगणना की परिभाषा के अनुसार 0-4 आयु समूह के बच्चों को निरक्षर माना गया था। किन्तु 1991 की जनगणना के अनुसार 0-6 आयु समूह के बच्चों को निरक्षर माना गया है।

सम्पूर्ण सोनभद्र का साक्षरता प्रतिशत 1991 की जनगणना के अनुसार 34.40% है, जिसमें पुरूषों की साक्षरता 47.56% तथा महिलाओं की साक्षरता मात्र 18.65% है। उत्तर

तालिका 7.1

जनपद सोनभद्र में साक्षर व्यक्ति व साक्षरता प्रतिशत

वर्ष/जनपद/ विकास खण्ड	साक्षर व्यक्ति			साक्षरता प्रतिशत		
	पुरूष	स्त्री	योग	पुरूष	स्त्री	योग
1971	239734	59104	298838	29.60	8.08	19.39
1981	120919	39534	160453	29.13	10.90	20.62
1991	218171	71458	289629	47 56	18 65	34.40
विकासखण्ड वार 1991						
1 घोरावल	25093	5849	30942	38.69	10.28	25.42
2. राबर्ट्सगज	26296	6637	32933	45.40	13.09	30.32
3. चतरा	13602	3062	16664	47.91	12.08	31.04
4. नगवा	6802	1137	7939	29.55	5.56	18.27
5. चोपन	21938	4771	26709	31 47	8.07	20.73
6 म्योरपुर	44697	16232	60929	54.07	25.01	41.29
7. दुद्धी	14256	2789	17045	36.05	8 02	22.94
8. बभनी	7381	1129	8510	31.66	5.42	19.28
वनग्राम	308	55	363	46.06	9.68	29.34
ग्रामीण योग	160373	41661	202034	41.12	12 49	27.92
नगरीय योग	57798	29797	87595	84.08	60.20	74.08
सम्पूर्ण जनपद योग	**218171**	**71458**	**289629**	**47.56**	**18.65**	**34.40**

DEVELOPMENT BLOCKWISE LITERACY
OF DISTRICT SONBHADRA : 1991
LITERACY IN PERCENTS
60
50
40
30
20
10
0
GHORAWAL
R.GANJ
CHATARA
NAGAWA
CHOPAN
MUIRPUR
DUDHI
BABHANI
DEVELOPMENT BLOCKS
TOTAL
MALE
FEMALE
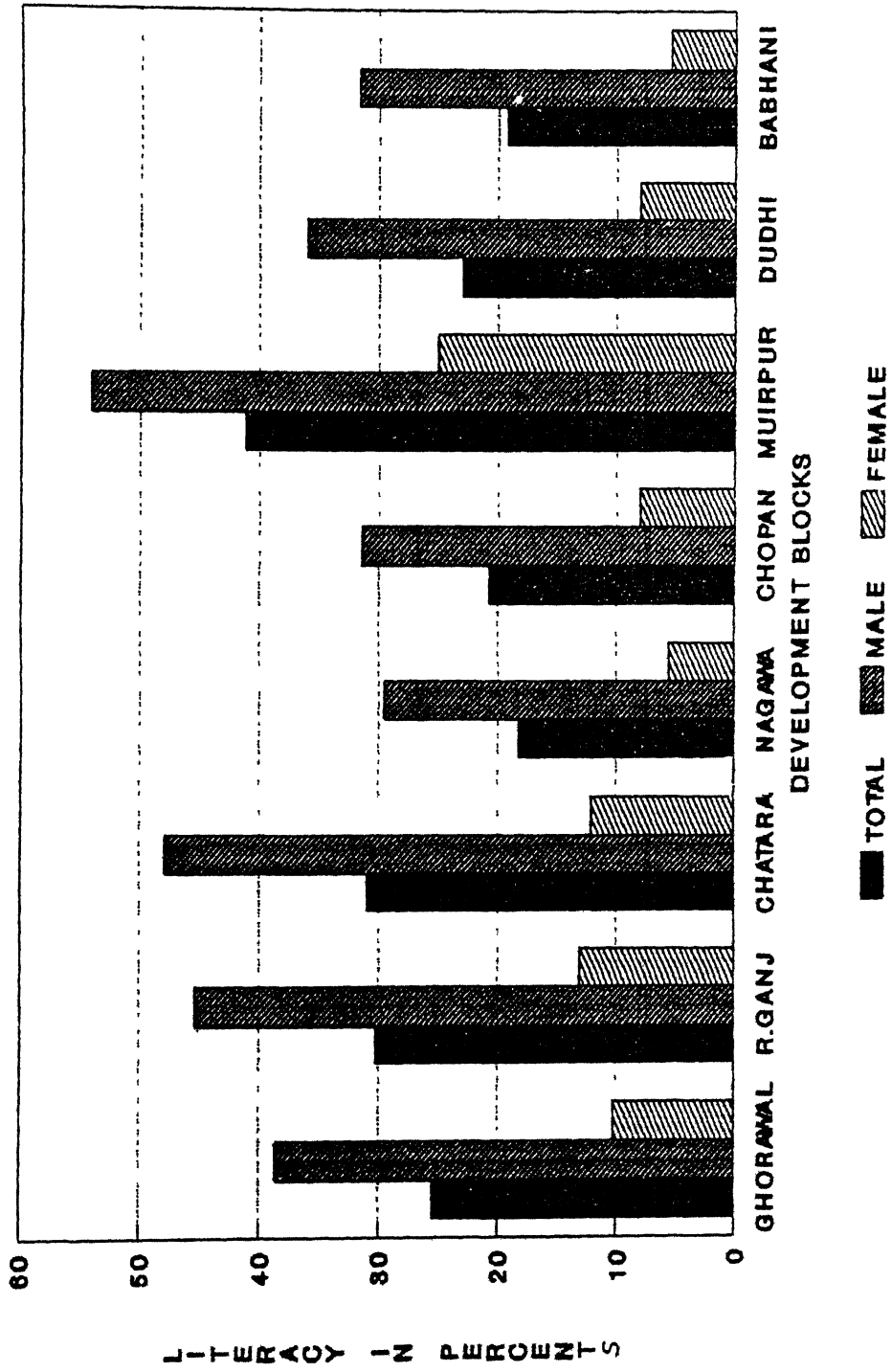
Fig 7.2

प्रदेश में 41.71% तथा भारत में 52.11% लोग साक्षर हैं। दोनों से तुलना करने पर सोनभद्र का साक्षरता प्रतिशत बहुत ही कम है। भारत में पुरूषों की साक्षरता 63.86% तथा महिलाओं की साक्षरता 39.42% है, जबकि उत्तर प्रदेश में महिलाओं की साक्षरता प्रतिशत 26.02% है। इसकी तुलना में सोनभद्र के पुरूषों व स्त्रियों की साक्षरता प्रतिशत अल्प है।

अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण साक्षरता 27.92% ही है, इसमें महिलाओं की साक्षरता मात्र 12.49% है। नगरीय साक्षरता 74.08% है जिसमें पुरूषों की साक्षरता 84.08% तथा स्त्रियों की साक्षरता 60.20% है। सोनभद्र जनपद में सर्वाधिक साक्षरता विकास खण्ड म्योरपुर (41.29%) की है तथा सबसे कम साक्षरता नगवां विकास खण्ड (18.27%) की है। इसके अतिरिक्त बभनी, चोपन, दुद्धी, घोरावल, राबर्ट्सगंज व चतरा विकास खण्डों में साक्षरता प्रतिशत क्रमशः 19.28, 20.73, 22.94, 25.42, 30.32, तथा 31.04 है(तालिका 7.1 व मानचित्र 7.1)।

7.3 औपचारिक शिक्षा का प्रतिरूप

औपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत केवल स्कूली शिक्षा को सम्मिलित किया जाता है। इसके अन्तर्गत स्कूल के बाहर दी जाने वाली शिक्षा पद्वति नहीं आती है। इसमें प्रौढ़ शिक्षा, स्त्री शिक्षा, घरेलू प्रशिक्षण, आश्रम शिक्षा तथा स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली आदि को समाहित नहीं किया गया है। औपचारिक शिक्षा में जूनियर बेसिक स्कूल, सीनियर बेसिक स्कूल, हायर सेकेन्ड्री विद्यालय तथा महाविद्यालय आदि का वर्णन किया गया है।

(अ) जूनियर बेसिक विद्यालय

देश-प्रदेश के जन-मानस में शैक्षिक प्रचार-प्रसार की दृष्टि से प्राथमिक शिक्षा, जगत की मूल श्रृंखला एवं आधारशिला है। उक्त के परिप्रेक्ष्य में इसे सर्वाधिक वरीयता प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है। प्राथमिक शिक्षा के स्तर में प्रत्याशित अभिवृद्धि सुधार, परिवर्द्धन के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु विविध प्रयास किये जा रहे हैं, जिसका एक अंश शिक्षा नीति में परिवर्तन भी है।[8] सम्पूर्ण सोनभद्र जनपद में जूनियर बेसिक विद्यालयों की

संख्या 1991-92 में 715 थी, जिसमें से 658 ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 57 नगरीय क्षेत्रों में है। विकास खण्ड स्तर पर जूनियर बेसिक स्कूलों की सर्वाधिक सख्या चोपन ब्लाक में 114 (15.95%) है तथा सबसे कम नगवां में 52 (7.27%) है (तालिका 7.2) । आरोही क्रम में जूनियर बेसिक विद्यालयों की संख्या इस प्रकार है - विकास खण्ड नगवां 52 (7.27%), चतरा - 53 (7.41%), बभनी 59 (8.25%), दुद्धी 69 (9.65%), राबर्टसगंज 100 (13.98%), घोरावल 102 (14.26%), म्योरपुर 109 (15.24%), तथा चोपन में 114 (15.94%) है (तालिका 7.2)। प्रतिलाख जनसंख्या पर जनपद में जूनियर बेसिक विद्यालयों की औसत संख्या 1991-92 में 70.8 थी। जनपद के तीन विकास खण्डों में औसत से कम तथा पांच विकास खण्डों (राबर्टसगंज, चतरा, नगवा, दुद्धी व बभनी) में औसत से अधिक संख्या है (तालिका 7.2)।

जनपद के सभी जूनियर बेसिक विद्यालयों में 1991-92 में 99776 छात्र पजीकृत हैं इनमें से 84886 ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में शेष 14890 नगरीय क्षेत्रों के विद्यालयों में पंजीकृत हैं। कुल छात्रोंमें 57732 बालक तथा 42044 बालिकाएं हैं। इनमें अनुसूचित जाति एवं जनजाति केबालक व बालिकाओं का प्रतिशत क्रमश· 34.03 व 19.21 है, जो तालिका 7.2 से स्पष्ट है। छात्रों की सर्वाधिक संख्या विकास खण्ड राबर्टसगंज (15225) में है। द्वितीय स्थान घोरावल का है, जबकि सबसे कम नगवां विकास खण्ड में छात्र हैं। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बालक एवं बालिकाओं की सबसे अधिक संख्या क्रमश· विकास खण्ड म्योरपुर (17.32%) व चोपन (16.49%) में है। कुल छात्रों तथा बालक-बालिकाओं की संख्या के साथ अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बालक व बालिकाओंकी अलग-अलग संख्या व प्रतिशत को प्रस्तुत किया गया है। साथ ही साथ इसका विवरण नगरीय व ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में दिया गया है। नगरों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रों का अनुपात ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में कम है। इससे स्पष्ट है कि विकास के सूचक नगरीय क्षेत्रों में ये बहुत कम उन्मुख हुए हैं। एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि बालक व बालिकाओं के ग्रामीण व नगरीय अनुपात में बहुत कम अन्तर है। ग्रामीण क्षेत्र में यह अन्तर 1.37% का तथा नगरीय क्षेत्रों में भी 1.37% का अन्तर है। जनपद में छात्र - स्कूल अनुपात जहाँ 139.5 है वहीं राज्य में यह अनुपात 167 है। छात्र-विद्यालय अनुपात तालिक 7.3 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 7.2

जनपद सोनभद्र का शैक्षिक विवरण

विकासखण्ड		जनसंख्या घनत्व प्रति वर्ग किमी0 1991	अनुसूचित जाति एवं जनजाति का जन0 में प्रतिशत 1991	साक्षर व्यक्तियों का कुल जन0में प्रति0 1991	प्रति लाख जन0पर जू0बे0स्कू0 की संख्या 1991-92	प्रति लाख जन0पर सी0बे0स्कू0 की संख्या 1991-92	प्रति लाख जन0पर हा0से0स्कू0 की संख्या 1991-92	जू0बे0स्कू0 की संख्या 91-92	%	सी0बे0स्कू0 की संख्या 91-92	%	हा0से0 स्कूल की संख 1991-92
1	घोरावल	190	44 0	25.42	65.4	9.0	1.3	102	14.26	14	14 58	2
2.	राबर्ट्सगंज	312	31.6	30.32	72 5	6.5	0 7	100	13.98	9	9.37	1
3.	चतरा	265	36.5	31.04	78.6	5.9	3.0	53	7.41	4	4.16	2
4	नगवा	59	53 5	18.27	95.4	9.2	-	52	7.27	5	5.20	-
5.	चोपन	97	58.0	20.73	68.4	9 6	0.6	114	15.94	16	16.66	1
6.	म्योरपुर	144	43 1	41.29	56.6	8.3	1.0	109	15.24	16	16.66	2
7	दुद्धी	136	57.4	22 94	71.5	12.4	1.0	69	9.65	12	12.50	1
8	बभनी	95	65 3	19.28	102 4	5.4	1.7	59	8.25	3	3.12	1
सम्पूर्ण विकास खण्ड		137	47.31	27 92	70.8	8.5	1.1	658	92.02	79	82.29	10
नगरीय		7035	11.93	74.08	39.56	11.8	13.88	57	7 97	17	17.70	20
सम्पूर्ण योग-		158	42.5	34.4	66.50	8.92	279	715	100 00	96	100 00	30

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, से सगणित ।

तालिका 7.3

जूनियर बेसिक विद्यालय के छात्रों शिक्षकों व विद्यालयों का अनुपात वर्ष 1991

विकासखण्ड	सम्पूर्ण छात्रों संख्या	सम्पूर्ण विद्यालयों की संख्या	प्रति विद्यालय छात्रों का औसत	सम्पूर्ण शिक्षकों की संख्या	प्रतिशिक्षक छात्रों की संख्या
1. घोरावल	14124	102	138.47	164	86.12
2. राबर्ट्सगंज	15225	100	152.25	178	85.53
3. चतरा	7008	53	132.23	76	92.21
4. नगवां	7713	52	148.32	55	140.23
5. चोपन	13761	114	120.71	143	96.23
6. म्योरपुर	11940	109	109.54	93	128.38
7. दुद्धी	8479	69	122.88	92	92.16
8. बभनी	6646	59	112.64	42	158.23
योग	84886	658	129.00	843	100.70
नगरीय योग	14890	57	261.22	250	59.56
सम्पूर्ण योग	**99776**	**715**	**139.54**	**1093**	**91.28**

स्रोतः सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृ0 90,92 एवं 96 से संगणित ।

तालिका 7.4

जूनियर बेसिक विद्यालय से बस्तियों की दूरी वर्ष 1991-92

विकासखण्ड/ जनपद		ग्राम में	1किमी0 से कम	1-3 किमी0	3-5 किमी0	5किमी0	योग	योग का %
1.	घोरावल	94	59	145	27	12	337	25.12
2.	राबर्ट्सगंज	89	152	76	-	12	329	24.52
3.	चतरा	53	73	41	1	-	168	12.52
4.	नगवां	51	10	9	20	38	128	9.53
5.	चोपन	88	-	2	1	-	91	6.78
6.	म्योरपुर	109	-	3	2	6	120	8.94
7.	दुद्धी	69	-	22	6	1	98	7.30
8.	बभनी	59	-	3	5	4	71	5.29
योग जनपद		**612**	**294**	**30 1**	**62**	**73**	**1342**	**100**
		(45.60%)	(21.9%)	(22.42%)	(4.61%)	(5.44%)	(100%)	

स्रोतः सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 146, एवं संगणित ।

इसके अन्तर्गत प्रति विद्यालय विद्यार्थियों की संख्या वर्णित है। सम्पूर्ण जनपद में प्रति विद्यालय जूनियर बेसिक विद्यार्थियों की संख्या का औसत 139.54 है। ग्रामीण व नगरीय विद्यालयों में असमानता बहुत अधिक है। ग्रामीण क्षेत्रों का औसत जहाँ 129 विद्यार्थियों का है वहीं नगरीय क्षेत्र का औसत 261.22 विद्यार्थियों का है। जनपद के समस्त विकास खण्डों में प्रति विद्यालय छात्रों की अधिकतम संख्या विकास खण्ड राबर्ट्सगंज (152.25) में है। इसके बाद अवरोही क्रम में क्रमशः नगवां (148.32), घोरावल (138.47), चतरा (132.23), दुद्धी (122.88), चोपन (120.71), तथा बभनी (112.64) का स्थान आता है (तालिका 7.4)।

जूनियर बेसिक विद्यालय में प्रति शिक्षक छात्रों की संख्या तालिका 7.3 में प्रदर्शित किया गया है। सम्पूर्ण जनपद में प्रति शिक्षक छात्रों का औसत 91.28 है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह अनुपात 1:100.70 का तथा शहरी क्षेत्रों में 1:59.56 का है। प्रति शिक्षक विद्यार्थियों की अधिकतम संख्या 158.23 विकास खण्ड बभनी में है। इसके बाद अवरोही क्रम में क्रमश: नगवां (140.23), म्योरपुर (128.38), चोपन (96.23), चतरा (92.21), दुद्धी (92.16), घोरावल (86.12), तथा राबर्ट्सगंज (85.53) का स्थान आता है।

जूनियर बेसिक विद्यालय की दूरी एवं गाँवों की संख्या को तालिका 7.4 में प्रदर्शित किया गया है। विद्यालय से 1 किमी0 की दूरी तक जनपद के 294 (21.90%) गाँव आते हैं। जबकि 612 गाँवों में विद्यालय हैं अर्थात सम्पूर्ण गाँवों का 45.60% विद्यालय से युक्त हैं। 1-3 किमी0 की दूरी पर 301 (22.42%) गाँव आते हैं, 3-5 किमी0 की दूरी पर 62 (4.61%), गाँव तथा 5 किमी0 से अधिक दूरी पर 73 (5.44%) गाँव हैं।

(ब) सीनियर बेसिक विद्यालय

सन् 1991-92 में जनपद में कुल 96 सीनियर बेसिक विद्यालय थे (तालिका 7.6)। इन विद्यालयों में कुल पंजीकृत विद्यार्थियों की संख्या 22181 थी जिसमें से 19206 (86.59%) ग्रामीण विद्यालयों में व 2975 (13.41%), विद्यार्थी नगरीय विद्यालयों में पंजीकृत थे। सम्पूर्ण विद्यार्थियों में बालकों की संख्या 15700 (70.78%) तथा बालिकाओं की संख्या 6481 (29.22%) थी। सम्पूर्ण विद्यार्थियों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के कुल विद्यार्थियों

तालिका 7.5

सीनियर बेसिक विद्यालय में छात्र-छात्राओं तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्र-छात्राओं की संख्या वर्ष (1991-92)

विकास खण्ड		सम्पूर्ण विद्यार्थी	छात्रों की संख्या	छात्राओं की संख्या	अनु0जाति एवं जनजाति के छात्रों की संख्या	अनु0जाति एवं जन0 के छात्राओं की संख्या
1	घोरावल	3193	2295	898	834	130
2	राबर्ट्सगंज	3803	2932	871	1366	185
3	चतरा	1712	1236	476	371	218
4	नगवा	1258	878	380	347	74
5	चोपन	3262	2075	1187	1086	183
6	म्योरपुर	3558	2593	965	1253	186
7	दुद्धी	1456	984	472	593	123
8.	बभनी	964	682	282	235	53
योग ग्रामीण		19206	13675	5531	6085	1151
योग नगरीय		2975	2025	950	614	95
योग जनपद		**22181**	**15700**	**6481**	**6699**	**1246**

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 93, एव सगणित ।

तालिका 7.6

सीनियर बेसिक विद्यालय में छात्रों विद्यालयों तथा शिक्षकों का अनुपात वर्ष 1991-92

विकासखण्ड	कुल छात्र	शिक्षकों की संख्या	प्रति शिक्षक छात्रों की संख्या	विद्यालयों की संख्या	प्रति विद्यालय छात्रों की संख्या	प्रति विद्यालय शिक्षकों की संख्या
1. घोरावल	3193	28	114.04	14	228.07	2.00
2. राबर्ट्सगंज	3803	38	100.08	9	422.56	4.22
3. चतरा	1712	38	45.05	4	428.00	9.50
4. नगवां	1258	14	89.86	5	251.60	2.80
5. चोपन	3262	33	98.85	16	203.88	2.54
6. म्योरपुर	3558	32	111.18	16	222.38	2.00
7. दुद्धी	1456	28	52.00	12	121.33	2.33
8. बभनी	964	6	160.67	3	321.33	2.00
ग्रामीण योग	19206	217	88.51	79	243.11	2.74
नगरीय योग	2975	65	45.76	17	175.00	3.82
सम्पूर्ण जनपद	**22181**	**282**	**78.66**	**96**	**231.05**	**2.93**

स्रोतः सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 90, 93, 96 एवं उससे संगणित ।

की सख्या 7944 (35 81%) थी, जिसमे छात्रों की सख्या 6699 तथा छात्राओं की सख्या 1246 थी (तालिका 7 ·5) । सम्पूर्ण विद्यार्थियों, छात्र-छात्राओं तथा अनुसूचित जाति एव जनजाति के छात्र छात्राओं की सख्या तालिका 7 5 मे दी गयी है ।

जनपद मे सीनियर बेसिक विद्यालयो का वितरण असमान है। 73% विद्यालय विकासखण्ड घोरावल, चोपन, म्योरपुर तथा दुद्धी में है, तथा शेष चार विकास खण्डो में मात्र 27% विद्यालय है। जनपद में प्रति विद्यालय विद्यार्थियों की सख्या लगभग 231 है जबकि राज्य में यह अनुपात 166 विद्यार्थियो का है। जनपद में कुल शिक्षकों की संख्या 282 है। जिसमे से 217 शिक्षक ग्रामीण विद्यालयों में तथा 65 नगरीय विद्यालयों मे हैं। जनपद में प्रति शिक्षक छात्रों का औसत लगभग 79 है, जबकि राज्य मे यह औसत 31 विद्यार्थियों का है। राज्य की तुलना मे जनपद के शिक्षक 255% अधिक विद्यार्थियों को पढ़ाते हैं। प्रति शिक्षक छात्रो की सख्या को तालिका 7·6 में दर्शाया गया है। विकास खण्ड बभनी के प्रत्येक शिक्षक को 161 विद्यार्थी तथा चतरा के प्रत्येक शिक्षक को 45 विद्यार्थी को पढ़ाना पड़ता है। अत इस तथ्य से भी क्षेत्रीय विषमता आभाषित होती है । जनपद में प्रति विद्यालय शिक्षकों की संख्या लगभग 3 हे जबकि राज्य में यह स्थिति लगभग 6 से भी अधिक है। अतः राज्य की तुलना मे प्रति विद्यालय शिक्षकों की संख्या लगभग आधी है।

सामान्यत· कोई भी सीनियर बेसिक विद्यालय किसी भी गाँव से 5 किमी0 से अधिक दूर नही होना चाहिए । जनपद के सन्दर्भ में अभिगम्यता ठीक नहीं है, 76·75% (1030) बस्तियाँ 5 किमी0 से अधिक दूरी पर हैं। 21·24% (285) बस्तियाँ 1 से 5 किमी0 की दूरी पर हैं तथा 27 बस्तियाँ ही 1 किमी0 से कम दूरी पर हैं ।

(स) हायर सेकेन्ड्री विद्यालय

हायर सेकेन्ड्री विद्यालय के. अन्तर्गत हाई स्कूल और इण्टरमीडिएट दोनों प्रकार के विद्यालयों को सम्मिलित किया गया है। 1991-92 में कुल हायर सेकेन्ड्री विद्यालयों की संख्या 30 थी इसमें से 20 विद्यालय नगरीय क्षेत्रों में तथा 10 विद्यालय ग्रामीण क्षेत्रों में अवस्थित हैं। विकासखण्ड घोरावल में घोरावल, शाहगंज, लोहाड़ी, धनावल व कपुरा में हायर सेकेन्ड्री विद्यालयों

की सख्या 5 है। राबर्ट्सगंज, चुर्क, गुरमा व परासी में एक-एक, चतरा मे रामगढ व सिलथम मे, चोपन में चोपन, ओबरा, डाला व कोन में, म्योरपुर में रेनूकूट, बीजपुर, पीपरी, अनपरा व शक्तिनगर में, दुद्धी मे दुद्धी व विण्ढमगंज मे तथा बभनी में चपकी में हायर सेकेन्ड्री विद्यालय अवस्थित है। उल्लेखनीय है कि विकास खण्ड नगवां में एक भी हायर सेकेन्ड्री विद्यालय नहीं है। जनपद के अधिकांश हायर सेकेन्ड्री विद्यालय औद्योगिक केन्द्रों पर अवस्थित हैं। इन विद्यालयों मे पजीकृत विद्यार्थियों की संख्या 26997 है। इनमें से छात्राओं की सख्या 4155 (15 39%) है। सम्पूर्ण विद्यार्थियो में अनुसूचित जाति एव जनजाति के विद्यार्थियों की सख्या 4644 (17 20%) है। इनमे से बालिकाओं की संख्या 1084 तथा बालकों की संख्या 3560 (तालिका 7 7) है । विकास खण्डवार बालको एवं बालिकाओं तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बालकों एवं बालिकाओं का विवरण तालिका 7.7 में प्रदर्शित है ।

जनपद में सम्पूर्ण शिक्षकों की सख्या 726 है, इनमें से 196 शिक्षक ग्रामीण विद्यालयों में तथा 530 शिक्षक नगरीय विद्यालयो में कार्यरत है। सोनभद्र मे प्रति शिक्षक छात्रो की संख्या लगभग 37 है जबकि राज्य का प्रति शिक्षक छात्रों का औसत 35 है। अत. राज्य की तुलना मे जनपद के शिक्षकों को अधिक विद्यार्थियों को पढ़ाना पडता है। विकास खण्डवार यह असमानता और भी अधिक है जिसे 7.8 में देखा जा सकता है । जनपद मे सम्पूर्ण विद्याल्यों की संख्या 30 है। प्रति विद्यालय छात्रो की सख्या लगभग 900 है, जबकि उत्तर प्रदेश मे यह औसत लगभग 769 विद्यार्थियों का है। अत· राज्य की तुलना मे जनपद सोनभद्र के विद्यालयों में लगभग 16% अधिक विद्यार्थी है। राबर्ट्सगंज, चोपन व दुद्धी के विद्यालय में छात्रों की संख्या और अधिक है ।

सोनभद्र में प्रति विद्यालय शिक्षकों की संख्या लगभग 24 है। उत्तर प्रदेश में प्रति विद्यालय शिक्षकों की संख्या लगभग 22 है। जनपद के औसत से विकास खण्ड चोपन राबर्ट्सगंज व नगरीय विद्यालयों में प्रति विद्यालय शिक्षकों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है (तालिका 7.8) । सामान्यतः हायर सेकेन्ड्री विद्यालय किसी भी बस्ती से 8 किमी0 से अधिक दूर नहीं होना चाहिए। जनपद के 10 बस्तियों में हायर सेकेन्ड्री विद्यालय हैं। 1 किमी0 से कम दूरी पर 1.42%, 1-3 किमी0 की दूरी पर 5.07%, 3-5 किमी0 की दूरी पर 5 51%

तालिका 7.7

हायर सेकेन्ड्री विद्यालय के छात्र-छात्राओं तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्र-छात्राओं की संख्या- 1991-92

विकासखण्ड	सम्पूर्ण विद्यार्थी	छात्रों की संख्या	छात्राओं की संख्या	अनु0जाति एवं जनजाति के छात्रों की संख्या	अनु0जाति एवं जनजाति के छात्राओं की संख्या
1. घोरावल	973	895	78	248	35
2. राबर्ट्सगंज	1412	997	415	250	76
3. चतरा	1354	1315	39	110	18
4. नगवां	-	-	-	-	-
5. चोपन	2571	2162	409	260	97
6. म्योरपुर	1314	932	382	209	68
7. दुद्धी	1081	735	346	245	56
8. बभनी	546	498	48	95	38
योग ग्रामीण	9251	7534	1717	1417	388
योग नगरीय	17746	15308	2438	2143	696
जनपद योग	**26997**	**22842**	**4155**	**3560**	**1084**

तालिका 7.8

हायर सेकेन्ड्री विद्यालय में छात्रों, विद्यालयों तथा शिक्षकों का अनुपात 1991-92

विकासखण्ड	सम्पूर्ण छात्रों की संख्या	सम्पूर्ण शिक्षकों की संख्या	प्रतिशिक्षक छात्रों की संख्या	सम्पूर्ण विद्यालयों की संख्या	प्रति स्कूल छात्रों की संख्या	प्रति विद्यालय शिक्षकों की संख्या
1. घोरावल	973	42	23.17	2	486.5	21
2. राबर्ट्सगंज	2412	36	39.22	1	1412	36
3. चतरा	1354	26	52.08	2	677	13
4. नगवां	-	-	-	-	-	-
5. चोपन	2571	32	80.34	1	2571	32
6. म्योरपुर	1314	32	41.06	2	657	16
7. दुद्धी	1081	16	67.56	1	1081	16
8. बभनी	546	12	45.50	1	546	12
योग ग्रामीण	9251	196	47.20	10	925.1	19.6
योग नगरीय	17746	530	33.48	20	887.3	26.5
जनपद योग	**26997**	**726**	**37.19**	**30**	**899.9**	**24.2**

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, पृष्ठ 91, 94, 96 एवं संगणित ।

DISTRICT SONBHADRA
EDUCATIONAL FACILITIES
1991-92
N
S
0 4 8 KM
PRIMARY SCHOOL
SENIOR BASIC SCHOOL
HIGHER SECONDARY SCHOOL
DEGREE COLLEGE
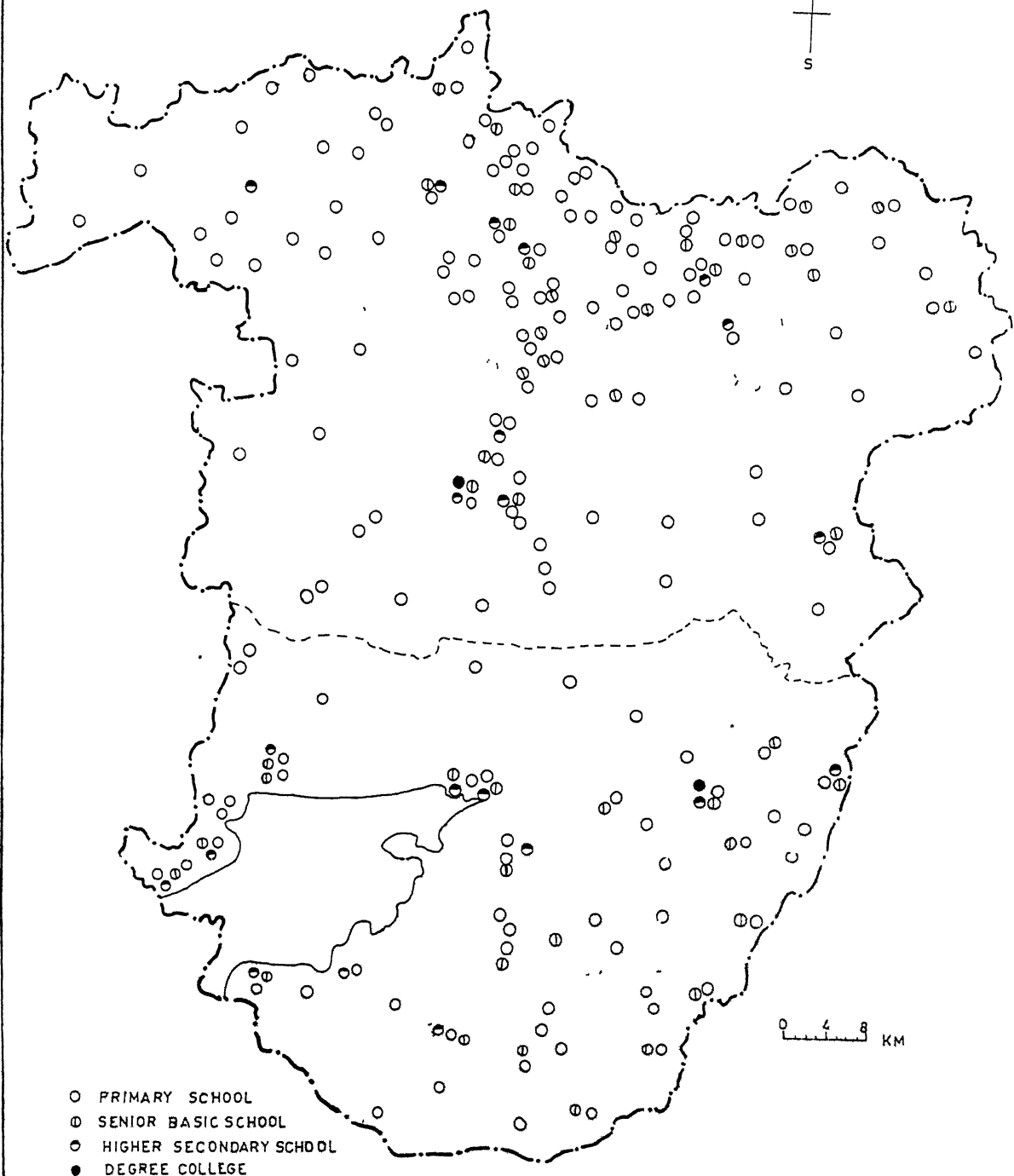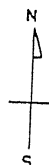
FIG 7.3

तथा 5 किमी0 से अधिक दूरी पर 87 26% बस्तियाँ हैं। 87 26% बस्तियो के छात्रो को 5 किमी0 से अधिक दूरी पर ही हायर सेकेन्ड्री विद्यालय उपलब्ध है।

(द) उच्च शिक्षा केन्द्र

उच्च शिक्षा से सम्बन्धित जनपद में 2 महाविद्यालय ओबरा व दुद्धी मे है। इन दोनो महाविद्यालयों में स्नातक स्तर तक शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त जनपद मे न तो तकनीकी विद्यालय है न ही प्रशिक्षण सस्थान है। उपर्युक्त दोनों महाविद्यालयों मे 1991-92 में पंजीकृत सम्पूर्ण विद्यार्थियो की संख्या 3050 थी, जिसमें से 86 4% (2635) बालक व 13 6%(415) बालिकायें थी। सम्पूर्ण विद्यार्थियों मे अनुसूचित जाति एवं जनजाति के विद्यार्थियो की संख्या 24 06% (734) थी। इनमें से बालको की सख्या 708 तथा बालिकाओं की सख्या 26 थी। दोनों महाविद्यालयों में कुल शिक्षकों की संख्या 41 है जिनमे से 4 शिक्षिकाये है (सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र 1992, पृष्ठ 95) । जनपद मे प्रतिशिक्षक छात्रों की सख्या लगभग 75 है जबकि उत्तर प्रदेश में यह औसत 25 है। अर्थात तीन गुना अधिक है। सोनभद्र मे प्रति महाविद्यालय छात्रों का औसत 1525 है जबकि उत्तर प्रदेश में यह 1237 है। उत्तर प्रदेश की तुलना में सोनभद्र के शिक्षकों पर छात्रों की संख्या अधिक है। जनपद मे प्रति महाविद्यालय शिक्षको का औसत लगभग 21 है। जबकि उत्तर प्रदेश में यह औसत लगभग 50 है। इस प्रकार प्रति महाविद्यालय शिक्षकों की संख्या जनपद मे बहुत कम है।

7.4 अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम

प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु छठीं पंचवर्षीय योजना मे भारत सरकार के सहयोग से प्रदेश में वर्ष 1979-80 से अनौपचारिक शिक्षा योजना अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम के पूरक के रूप मे प्रारम्भ की गयी, इस योजना के अन्तर्गत 9-14 वय वर्ग के ऐसे बालक-बालिकाओं को शिक्षा देने की व्यवस्था की गयी है जो सामाजिक आर्थिक तथा अन्य किन्हीं कारणों से विद्यालयी शिक्षा नहीं प्राप्त कर सकते हैं अथवा किन्ही परिस्थितियों के कारण प्राइमरी अथवा मिडिल स्तर की शिक्षा पूरी किये बिना ही पढ़ाई छोड़ने के लिए विवश हो गए हैं। ऐसे बालक - बालिका शिक्षा से सदेव वंचित न रह जाएं इसके

लिऐ उन्हें उनके स्थान एवं समय की सुविधानुसार शिक्षा देने की व्यवस्था इस योजना के अन्तर्गत की गयी है। अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत अशकालिक शिक्षण की भी व्यवस्था की गयी है। अनुदेशकों की नियुक्ति के लिए एक मापदण्ड निर्धारित है जिसके अन्तर्गत स्थानीय महिलाओ को प्राथमिकता प्रदान किये जाने का प्राविधान किया गया है।

अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रो मे नामांकित छात्रों को नि शुल्क पाठ्पुस्तकों अभ्यास पुस्तिकाये, स्लेट-पेन्सिल, आदि प्रदान की ,जाती है। केन्द्र का सचालन करने के लिए प्रत्येक केन्द्र को टाट-पट्टी, चार कुर्सी, फोल्डिग एक, उपस्थित रजिस्टर दो, स्टाक रजिस्टर दो, शिक्षक डायरी दो, पटरी दो, चाकू दो, डाट पेन दो, ताला एक, मानचित्र (प्राकृतिक एवं राजनीतिक) उत्तर प्रदेश, भारत तथा विश्व का एक मानचित्र, चाक का डिब्बा एक तथा डस्टर एक दिया जाता है।[9] अनौपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत प्रौढ़ शिक्षा द्वारा राष्ट्र के सभी नागरिकों को राष्ट्रीय विकास मे समान रूप से सहभागी बनाने के लिए सचालित किया गया है। इसका उद्देश्य साक्षरता दक्षता, तथा सामाजिक चेतना को बढ़ाना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्देशों के अनुसार और एक्शन प्लान मे बताए गए कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए सरकार ने प्रौढ शिक्षा का एक विशद प्रारूप तैयार किया है जिसका नाम है - राष्ट्रीय साक्षरता मिशन।[10] इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 15-35 आयु वर्ग के निरक्षर व्यक्तियों को साक्षर बनाने का लक्ष्य है। अध्ययन क्षेत्र में अनौपचारिक शिक्षा का प्रसार बहुत कम हुआ है।

7.5 शिक्षा नियोजन की प्रमुख बाधाएं

इस अध्ययन क्षेत्र का सबसे पिछड़ा पक्ष शिक्षा है। जनपद के लघुकृत होने पर भी सुविधाओं को प्रदान करने के नाम पर शिक्षण संस्थाओं मे मात्रात्मक व गुणात्मक स्तर पर कोई परिवर्तन नही हुआ है। जनपद का शैक्षणिक परिवर्तन वैज्ञानिक, तकनीकी और आर्थिक पहलुओं में परिवर्तन की तुलना में बहुत पीछे रह गया है। इसके कई निम्न कारण हैं जिन्हें दृढ़ता और सूझ बूझ से दूर किया जाना चाहिए ।

1. कोई भी शिक्षा प्रणाली केवल वृहद् सामाजिक - आर्थिक वातावरण की सच्चाई को प्रकट करती है। सोनभद्र में नए औद्योगिक संस्थानों की सस्थापना से न केवल आर्थिक व्यवस्था में असमानता आयी हैवरन 'फैक्ट्री स्कूल' अंग्रेजी माध्यम के व विशेषाधिकार युक्त

है। इन विद्यालयो को सभी सोनभद्र वासियो के लिए गुणवत्ता के आधार पर भी उपलब्ध न होना शैक्षिक उन्नयन में सबसे बडी बाधा है।

2. विभिन्न स्तरो पर शिक्षा सुविधाओं के विस्तार से सम्बन्धित समस्याएँ और शिक्षा की विषयवस्तु का गुणात्मक सुधार समाज के उद्‌देश्यो और उनकी प्राप्ति के लिए निर्धारित प्राथमिकताओं पर निर्भर करता है। शिक्षा सम्पूर्ण समाज के लिए आवश्यक है। अत राज्य और केन्द्र सरकारें इसके विकास एवं परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान कर सकते है। साधनों का बँटवारा राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित सामाजिक प्राथमिकताओं पर निर्भर करता है। किन्तु अब तक शिक्षा को उच्च प्राथमिकता नहीं दी गयी है। इसी प्रकार क्षेत्रों के चयन मे भी सोनभद्र हमेशा उपेक्षित रहा ।

3. एक अन्य बाधा शिक्षा प्रणाली में रूढ़ संकीर्णवादिता है, जो सस्थाओं और उनके प्रबन्धको में निहित स्वार्थ और कट्टर मान्यताओं को जन्म देती है। ये गुणात्मक परिवर्तन और सुधार के स्थान पर आदत और परम्परा को अधिक महत्व देते है। अब समय आ गया है कि आयोजन की बेहतर व्यवस्था की जाए। प्रशिक्षण सुविधाओं का विस्तार किया जाए और उनमें सुधार किया जाय। इन सबसे बढ़कर सभी सम्बन्धित पक्षों को सम्मिलित करके कार्यक्रमों को व्यवस्थित ढग से तेजी से लागू करने तथा विकेन्द्रीकरण और स्थानीय पहल के माध्यम से सामाजिक संसाधनों का गतिशील इस्तेमाल करने की व्यवस्था की जाए।

4. शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षकों की प्रमुख भूमिका को स्वीकार करना सबसे पहला और महत्वपूर्ण कदम है। शिक्षा में गुणात्मक परिवर्तन लाने के लिए सुयोग्य शिक्षक अपरिहार्य है समाज में सार्थक परिवर्तन तब तक सम्भव नहीं है जबतक शिक्षक उनके लिए तैयार न हो। यह तभी सम्भव है जब अध्यापको को सभी स्तरों पर योजना तैयार करने और निर्णय करने में सम्मिलित किया जाए तथा छात्रों व संरक्षकों से नियमित सम्पर्क एवं सुझाव लिया जाए ।

5. सरकार द्वारा शिक्षा पर व्यय का पिरामिड उल्टा है अर्थात प्राथमिक शिक्षा

पर बहुत कम व्यय किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि 60% से अधिक प्राथमिक विद्यालयों में पर्याप्त स्थान, अध्ययन कक्ष, पीने के पानी, टाट-पट्टियों ब्लैक बोर्ड आदि प्राथमिक आवश्यकताओ की भी कमी है। जनपद के केवल 10% विद्यालयो मे ही उपर्युक्त सभी सुविधाये उपलब्ध है और इनमे से 80% विद्यालय नगरीय क्षेत्रो मे है।

6 छात्र-छात्राओ का अध्ययन के प्रति अभिरूचि मे ह्रास नकल समस्या को और विकराल करती जा रही है। जनपद के विस्तृत पहाड़ी क्षेत्र मे पढाई के दिनो मे भी विद्यालय बन्द रहते है तथा विद्यालय मे पढ़ाई की समयावधि भी कम रहती है। नदी-नालो पर पुलों के अभाव में नगवा, म्योरपुर, बभनी, दुद्धी व चोपन विकास खण्ड के ग्रामीण जूनियर बेसिक विद्यालयों में से लगभग 50% विद्यालय अघोषित वर्षावकाश मे बन्द ही रहते हैं। क्योंकि इन क्षेत्रों के नालों में थोड़ी बरसात से भी उफान आ जाता है ।

7 विद्यार्थियों का हाई स्कूल तक अध्ययन के उपरान्त अध्ययन कार्य छोड़ देने की मजबूरी अब परम्परा बन गई है। जनपद में कुल 30 हायर सेकेन्ड्री विद्यालय है, जो आवश्यकता से बहुत ही कम है। यह सामान्य अध्ययन का विषय हो सकता है कि विस्तृत क्षेत्र पर फैला हुआ नगवा एक ऐसा विकास खण्ड है जहाँ हाई स्कूल स्तर का एक भी विद्यालय नही है तथा सीनियर बेसिक विद्यालय मात्र 5 है। ऐसी स्थिति में छात्रों द्वारा विद्यालय छोड़ने की परम्परा को बढ़ावा देने में छात्रों व अभिभावकों का नहीं बल्कि सरकार का योगदान अवश्य है और यहाँ की गरीबी शिक्षा पर पाबन्दी लगाती है ।

8. जनपद में तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा से सम्बन्धित एक भी विद्यालय नही है ।

7.6 विद्यालयों का शैक्षिक स्तर

किसी भी क्षेत्र में छात्र-शिक्षक, छात्र-विद्यालय तथा विद्यालय-क्षेत्र अनुपात का विशिष्ट मान्य स्तर क्या हो यह अभी तक तय नही हो पाया है। भारतीय शिक्षाविदों ने भारतीय सदर्भ में शिक्षक-छात्र अनुपात, कम से कम 1:25 तथा अधिक से अधिक 1:50 उचित

बताया है। इसी प्रकार हायर सेकेन्ड्री विद्यालयो मे शिक्षक-छात्र अनुपात, कम-से-कम 1 20 तथा अधिक-से-अधिक 1 30 उचित बताया है।[10] इसी प्रकार राष्ट्रीय मानक के अनुसार प्राथमिक विद्यालय, मिडिल तथा हाई स्कूल क्रमश· 1 5 किमी0, 5 किमी0 तथा 8 किमी0 से अधिक दूर नही होना चाहिए।[11]

किसी भी क्षेत्र का नियोजन प्रस्तुत करते समय राज्य व राष्ट्रीय मानकों को न तो पूर्णतः आधार बनाया जा सकता है और न ही अवहेलना की जा सकती है, क्योंकि यह मानक स्तर उस क्षेत्र विशेष के सामाजिक, आर्थिक व सास्कृतिक परिप्रेक्ष्य मे होनी चाहिए। फलत राष्ट्रीय और राज्य के मानकों की सीमाओ को ध्यान मे रखते हुए तथा वर्तमान शैक्षिक सुविधाओं के संदर्भ में तालिका 7 9 मे निर्धारित शैक्षणिक मानदण्डों को दिया गया है।

तालिका 7·9

जनपद सोनभद्र के लिए शैक्षिक मानदण्ड

क्रमसंख्या	**विद्यालयों का स्तर**	**शिक्षक-छात्र अनुपात**	**स्कूल-छात्र अनुपात**
1	जूनियर बेसिक विद्यालय	1 35	1·150
2	सीनियर बेसिक विद्यालय	1 30	1:120
3	हायर सेकेन्ड्री विद्यालय	1:25	1 500

जनपद के शैक्षणिक इकाइयों की अवस्थिति के संदर्भ में एक उचित मानदण्ड का निर्धारण होना चाहिए। सोनभद्र मे यह अवस्थितिक मानदण्ड भौतिक स्वरूप, परिवहन के साधन व माध्यमों की प्रकृति एवं प्रकार, बस्तियों की संख्या, जनसंख्या, शैक्षणिक इकाइयों की कार्यात्मक रिक्तता तथा उसके विशिष्ट जनसंख्याधार के संदर्भ में निर्धारित करने का प्रयास किया गया है। सीनियर बेसिक विद्यालयों की दूरी किसी भी बस्ती से 3-5 किमी0 के बीच होनी चाहिए तथा हायर सेकेन्ड्री के संदर्भ में यह दूरी 5-8 किमी0 के बीच होनी चाहिए

अध्ययन क्षेत्र में कैमूर की ऊँची पहाड़ियाँ व नदी-नालों पर पुलों का अभाव विद्यालयों से बस्तियों की न्यून दूरी को भी अभिगम्य बनाने में बाधा उपस्थित करती है। अत ऐसी स्थिति मे प्राकृतिक अवरोधो को ध्यान में रखते हुए व्यावहारिक अभिगम्यता पर ध्यान दिया गया है।

7.7 शैक्षणिक नियोजन

विकास का अर्थ केवल आर्थिक विकास ही नही है, बल्कि इसके और भी महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं, जैसे शिक्षा का प्रसार, जिससे जनसंख्या नियन्त्रण के लिए सही दृष्टिकोण विकसित होने में सहायता मिलती है।[12] शिक्षा की समस्या को स्वय एक समस्या के रूप मे न देखकर सकल सामाजिक-आर्थिक विकास के एक अभिन्न पहलू के रूप मे ही देखा जाना चाहिए। नियोजन का मूल आधार मानव शक्ति नियोजन होना चाहिए। इसमे भी सम्भव हो तो युवा शक्ति नियोजन को अधिक महत्व दी जानी चाहिए। युवको को अपने अस्तित्व व शक्ति की पहचान करानी चाहिए। आधुनिक शिक्षा पद्वति ही बेरोजगारी की समस्या का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण रहा है। शारीरिक श्रम को निम्न दृष्टि से देखा जाता है। शिक्षा के लिए नियोजन प्रस्तुत करने के लिए निम्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए -

1. शिक्षा व साक्षरता को जनपद स्तर पर देखा जाए ।
2. केन्द्र व राज्य सरकार दोनों को अपना अनिवार्य कर्तव्य मानकर सहायता करनी चाहिए।
3. अशिक्षा व निरक्षरता गरीबी का ही एक अग है ।
4. अशिक्षा व्यक्तिगत चिंता ही नही, सामाजिक और राजनीतिक चिता का विषय है।
5. सदी के अन्त तक निरक्षरता व अशिक्षा को मिटाने का प्रयास जनपद स्तर पर शुरू होनी चाहिए ।

शैक्षणिक नियोजन के लिए भविष्य में उसकी उपादेयता एवं आवश्यकता तथा वर्तमान का ध्यान रखा जाता है। वर्तमान स्वरूप का वर्णन गत पृष्ठों में किया गया है, तथा बढ़ती हुई आवश्यकता एवं उपादेयता की गणना जनपद के शैक्षिक मानदण्डों के परिप्रेक्ष्य में

की जा सकती है। अत· जनपद की भावी संभाव्य जनसख्या की गणना करना आवश्यक है जिससे विद्यार्थियो की बढ़ती जनसंख्या के संदर्भ में जनपद की शैक्षिक सुविधाओ का नियोजन प्रस्तुत किया जा सके ।

(अ) जनसंख्या प्रक्षेपण एवं छात्रों की संभाव्य संख्या

नियोजन भविष्य के लिए होता है। कोई भी नियोजन भविष्य में तभी कारगर सिद्ध हो सकता है जब उस क्षेत्र की संभाव्य जनसंख्या वृद्धि को ध्यान में रखा जाय। किसी भी क्षेत्र या प्रदेश के संभाव्य भावी जनसख्या वृद्धि के अनुमान को जनसंख्या प्रक्षेपण कहते हैं। जनसंख्या प्रक्षेपण के लिए विभिन्न विद्वानों द्वारा विभिन्न आधारों यथा आयु समूह संरचना, उत्पादकता, गत् जन्मदर एवं मृत्युदर आदि का प्रयोग किया गया है। किन्तु जनसख्या वृद्धि एक गतिशील प्रक्रिया होने के कारण सदैव बदलती रहती है। जनसंख्या आकार में परिवर्तन जन्मदर, मृत्युदर एवं प्रवास के कारण होता रहता है। जनपद में जनसख्या प्रक्षेपण के लिए उपर्युक्त तथ्यों के अतिरिक्त निम्न तथ्यो को भी ध्यान में रखा गया है -

1. जनसंख्या प्रक्षेपण में जनपद की जनसंख्या वृद्धि दर को सभी विकास खण्डों के लिए आधार माना गया है ।

2. यह मान लिया गया है कि जनसख्या वृद्धि दर वर्तमान वृद्धि दर के समान रहेगी क्योंकि इस बात का ध्यान रखा गया है कि समय के साथ लोग परिवार नियोजन के विभिन्न साधनों का प्रयोग करते रहेंगे ।

3. जनसंख्या वृद्धि चक्रवृद्धि दर से होगी ।

तत्पश्चात सर्वप्रथम जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दर की गणना की गयी है। 1961 की जनसंख्या को आधार वर्ष तथा 1991 की जनसंख्या को अंतिम वर्ष की जनसंख्या के रूप में प्रयुक्त किया गया है। यह गणना गिब्स द्वारा प्रस्तुत निम्न सूत्र से की गयी है[13]-

$$r = \frac{(p_2 - p_1)/t}{(p_2 + p_1)/2} \times 100$$

जहाँ,

r = वार्षिक औसत वृद्धिदर,

p_1 = प्रारम्भिक जनसंख्या आकार,

p_2 = अंतिम जनसंख्या आकार, तथा

t = समयावधि

गिब्स के उपर्युक्त सूत्र से गणना करने पर जनपद की औसत वार्षिक वृद्धि दर 2.85% आती है। पुनः सभी विकास खण्डों की सन् 2001 की भावी जनसंख्या का अनुमान निम्न सूत्र से निकाला गया है[14]-

$$A = P \left[1 + \frac{r}{100} \right]^t$$

जहाँ,

A = प्रक्षेपित जनसंख्या,

P = वर्तमान जनसंख्या

t = वर्तमान तथा प्रक्षेपित जनसंख्या के बीच की अवधि

r = औसत वृद्धि दर

सन् 2001 तक जनपद की जनसंख्या बढ़कर 14,23,862 हो जाने की सभावना है।

चूँकि आयु संरचना के अनुरूप छात्रों की संख्या के आंकड़े उपलब्ध नही है इसलिए विद्यालयों के स्तर के अनुसार संभाव्य भावी छात्रो की संख्या का अनुमान लगाने का प्रयास किया गया है। विद्यालयों के स्तर में मात्र जूनियर बेसिक विद्यालय, सीनियर बेसिक विद्यालय तथा हायर सेकेन्ड्री स्कूल को ही सम्मिलित किया गया है। छात्रों की वार्षिक वृद्धि दर की गणना 1961 से 1991 के मध्य 30 वर्षों के जनसंख्या छात्र अनुपात के औसत की गणना करके की गयी है। प्राथमिक विद्यालयों में छात्रों की औसत वार्षिक वृद्धि दर 0.46% है। सीनियर बेसिक विद्यालय तथा हायर सेकेन्ड्री विद्यालयों में वृद्धि दर क्रमशः 0.16 तथा 0.08 प्रतिशत

है। सन् 2001 तक जूनियर बेसिक विद्यालयों में पढने वाले छात्रो की संख्या कुल जनसख्या की 9.72% होने का अनुमान है। सीनियर बेसिक विद्यालयों तथा हायर सेकेन्ड्री स्कूलों में यह अनुमान 'क्रमशः 2.20 व 2.70% होने के लिए लगाया गया है, जो तालिका 7.10 से स्पष्ट है।

तालिका 7.10

जनपद सोनभद्र में जनसंख्या छात्र अनुपात x.

क्रमसंख्या	विद्यालय स्तर	छात्रों की औसत वार्षिक वृद्धि प्रतिशत में	अनुमानित छात्र जनसंख्या अनुपात 2001	2001 में जनसंख्या की तुलना में छात्रों का प्रतिशत
1	जूनियर बेसिक विद्यालय	0.46	1:10 29	9.72
2	सीनियर बेसिक विद्यालय	0.19	1 45.92	2.20
3.	हायर सेकेन्ड्री स्कूल	0.08	1:39.82	2.70

x. छात्र जनसख्या अनुपात एवं प्रतिशत की गणना प्रक्षेपित जनसंख्या व छात्रों की संख्या के आधार पर की गयी है।

(ब) विद्यालय स्तर के अनुसार नियोजन

तालिका 7.11 से यह स्पष्ट है कि जूनियर बेसिक विद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों की सख्या 2001 से बढ़कर 138356 हो जाने का अनुमान है। बढ़े हुए छात्रों के लिए 207 नये विद्यालयों तथा 2860 नए अध्यापकों की आवश्यकता होगी। सीनियर बेसिक विद्यालयों में 9166 छात्रों के बढ़ने का अनुमान है जिनके लिए 165 नए विद्यालयों तथा 763 नये शिक्षकों की आवश्यकता होगी। हायर सेकेन्ड्री स्कूल में 11462 विद्यार्थी बढ़ेंगे जिनके लिए 47 नये विद्यालयों व 812 नये अध्यापकों की आवश्यकता होगी।

तालिका 7.11

जनपद सोनभद्र में आवश्यक शैक्षणिक सुविधाएं, 2001 ई0

क्रमसंख्या	विद्यालय का स्तर	छात्र संख्या			विद्यालय संख्या			शिक्षक संख्या		
		वर्तमान	2001 ई0	वृद्धि	वर्तमान	2001 ई0	वृद्धि	वर्तमान	2001ई0	वृद्धि
1.	जूनियर बेसिक विद्यालय	99776	138356	38580	715	922	207	1093	4953	2860
2.	सीनियर बेसिक विद्यालय	22181	31347	9166	96	261	165	282	1045	763
3.	हायर सेकेन्ड्री स्कूल	26997	38459	11462	30	77	47	726	1538	812

स्रोत : तालिका 7.10, तथा 7.9, में दिए गए मानकों के संदर्भ में प्रक्षेपित

जनसंख्या से संगणित ।

DISTRICT SONBHADRA
PROPOSED EDUCATIONAL FOCI
N
S
SENIOR BASIC SCHOOL
HIGH SCHOOL
INTERMEDIATE COLLEGE
DEGREE COLLEGE
POLYTECHNIC / ITI SCHOOL/ INSTITUTE
0 4 8
KM
FIG 7.4
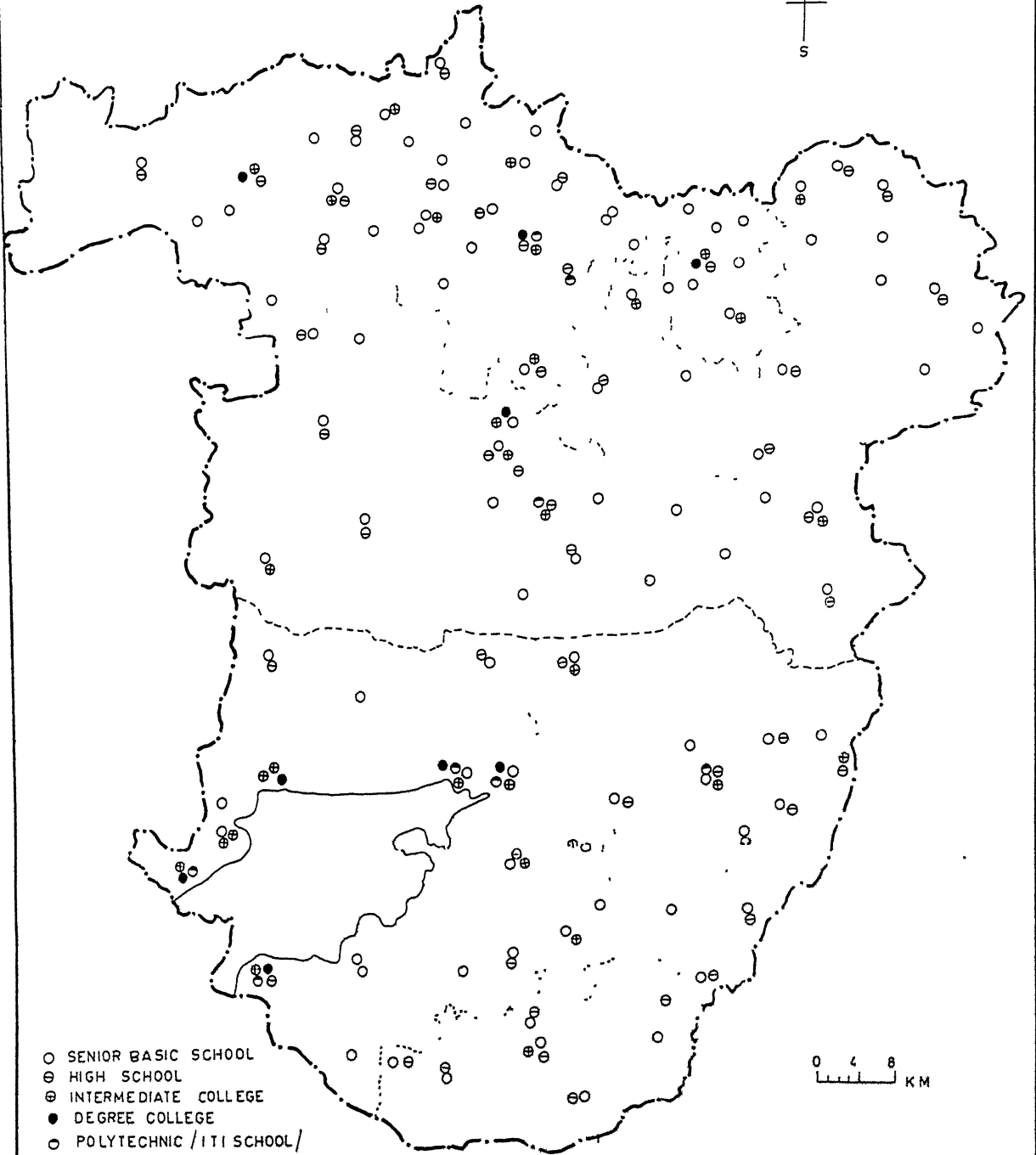
(1) जूनियर बेसिक विद्यालय

वर्तमान समय में कुल 715 जूनियर बेसिक विद्यालय है। भावी जनसंख्या में वृद्धि के साथ छात्रों की उचित प्राथमिक शिक्षा के विकास के लिए 2001 तक 207 विद्यालय और खोले जाय। जनसंख्या के अनुपात में लगभग 73 विद्यालय नगरों में तथा 134 विद्यालय गाँवों मे खोलना चाहिए। गाँवों की संख्या के परिप्रेक्ष्य में विकास खण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज, चतरा व नगवां में सबसे कम विद्यालयों का औसत है। अत इन विकास खण्डों मे अधिक विद्यालय खोलने की आवश्यकता है। 2001 ई0तककेवल 792 गाँवों मे विद्यालय होंगे। 550 गाँव उस समय भी जूनियर बेसिक विद्यालय रहित होंगे। विकास खण्ड चतरा, राबर्ट्सगंज व घोरावल के कुछ कृषि प्रधान क्षेत्रों के अतिरिक्त अधिकांश बस्तियाँ बिखरी हुई है। और कुछ गाँवों मे अत्यधिक न्यून जनसंख्या पायी जाती है। उपर्युक्त तथ्यों के परिप्रेक्ष्य मे 1342 ग्रामों मे से 792 ग्रामों में विद्यालय होना उपयुक्त होगा ।

(2) सीनियर बेसिक विद्यालय

प्रस्तुत अध्ययन में दिए गए मानदण्डों के सदर्भ में विद्यार्थियों मे भावी वृद्धि तथा उनकी वर्तमान कमी को देखते हुए सन् 2001 तक 165 नए विद्यालयों की आवश्यकता होगी। नगरों में भी ऐसे विद्यालयों की आवश्यकता होगी। नगरों में ऐसे विद्यालयों की स्थिति संतोषजनक है इसलिए नगरो मे ऐसे विद्यालयों के खोलने की आवश्यकता कम है क्योंकि नगरों में इसकी पूर्ति हायर सेकेन्ड्री स्कूलों के माध्यम से भी हो जाती है। अतिरिक्त खुलने वाले विद्यालयों की अवस्थितियों का प्रारूप अध्ययन क्षेत्र में उनकी कार्यात्मक रिक्तता को ध्यान में रखकर किया गया है। इनकी अवस्थितिया मानचित्र में देखी जा सकती है।

(3) हायर सेकेन्ड्री स्कूल

छात्रों की भावी संख्या तथा अध्ययन क्षेत्र में अपनाए गए मानदण्डों के अनुसार सन् 2001 तक 47 अतिरिक्त विद्यालयों की आवश्यकता होगी। इसमें से 30 इण्टरकालेज तथा 27 हाईस्कूल खोले जाने का प्रस्ताव है। इण्टर कालेज की अवस्थिति 10 नगरीय क्षेत्रों में यथा 20, ग्रामीण क्षेत्रों में होनी चाहिए, मानचित्र में इनकी अवस्थिति देखी जा सकती है। हाई स्कूल की अवस्थिति का प्रस्ताव कार्यात्मक रिक्तता, प्राकृतिक अवरोधों व अनुसूचित जाति एवं जनजाति बहुल क्षेत्रों

को ध्यान में रखकर किया गया है। यह मानचित्र में प्रदर्शित है ।

(4) उच्च शिक्षा केन्द्र

अध्ययन क्षेत्र में उच्च शिक्षा के नाम पर स्नातक स्तर तक ओबरा व दुद्धी मे दो महाविद्यालय हैं। इसके अतिरिक्त अनपरा में सीमित स्तर पर प्राइवेट डिग्री कॉलेज कार्यरत है। जनपद में मुख्यालय राबर्ट्सगंज में एक भी महाविद्यालय नहीं है। जनपद में उच्च शिक्षा के अभाव को देखते हुए 8 नये महाविद्यालय स्नातकोत्तर स्तर तक खोलने का प्रस्ताव है। रामगढ़, राबर्ट्सगज, घोरावल, चोपन, रेनूकूट, रिहन्द नगर, शक्तिनगर व अनपरा में एक एक महाविद्यालय 2001 ई0 तक खुल जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त दुद्धी व ओबरा महाविद्यालय को स्नातकोत्तर स्तर तक किया जाना चाहिए।

(5) तकनीकी शिक्षण संस्थान

सम्पूर्ण सोनभद्र जनपद में एक भी प्रशिक्षण या तकनीकी संस्थान नहीं है। उल्लेखनीय है कि सोनभद्र में अनेक औद्योगिक केन्द्र होने के कारण तकनीशियनों की माँग सदैव बनी रहती है, इसे देखते हुए एक पॉलिटेक्निक व एक आई0टी0आई0 विद्यालय 2001 ई0 तक खोलने की आवश्यकता है। औद्योगिक कर्मियों के प्रशिक्षण आवश्यकतानुसार औद्योगिक केन्द्रों में ही औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान खोलने की आवश्यकता है। ओबरा ताप विद्युत गृह में सीमित स्तर पर प्रशिक्षण संस्थान है। रेनूकूट, अनपरा, शक्तिनगर, रिहन्द नगर, डाला व चुर्क के कारखानों में प्रशिक्षण की सुविधा होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त कृषि तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों में कुशलता बरतने हेतु राबर्ट्सगंज में एक प्रशिक्षण संस्थान होना चाहिए।

(6) अनौपचारिक शिक्षा

1991 की जनगणना के अनुसार जनपद की 65.60% जनसंख्या निरक्षर है। इसमें पुरूषों की निरक्षरता 52.44% तथा स्त्रियों की निरक्षरता 81.35% है। जनपद में निरक्षरों की बहुतायत संख्या को देखते हुए अनौपचारिक शिक्षा की महती आवश्यकता है। इसके लिए विश्व स्तर पर 1990 को साक्षरता वर्ष के रूप में अवश्य मनाया गया किन्तु जनपद स्तर पर इसका प्रभाव दृष्टिगत नहीं होता है। अतः इसके लिए जनपद व विकासखण्ड स्तर पर साक्षरता वर्ष घोषित करके आवश्यक सुविधा उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। इस काम में स्वयं

सेवी सस्थाए विशेष योगदान दे सकती हैं। गोविन्दपुर बनवासी आश्रम द्वारा निरक्षरता समाप्त करने के लिए 'अक्षर सेना' का गठन करके अनूठा कार्य किया गया है। उल्लेखनीय है कि चोपन, म्योरपुर, बभनी, दुद्धी विकास खण्ड में अकेले इस सस्थान ने अब तक जो कार्य किया है। उसका अन्य स्वयंसेवी संस्थाए व सरकार अनुकरण कर सकती है। अनौपचारिक शिक्षा में प्रौढ़ शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना चाहिए तथा उनकी शिक्षा व्यवसायपरक भी होनी चाहिए। प्रौढों को अक्षर ज्ञान के साथ-साथ कृषि में प्रयुक्त होने वाले उर्वरको, कीटनाशक दवाओं, बीजों का प्रयोग तथा लघु एवं कुटीर उद्योग आदि से सम्बन्धित व्यावसायिक शिक्षा भी देनी चाहिए।

निरक्षरता दूर करने के अब तक के हमारे प्रयास अधिक सफल नहीं हो पाए हैं। यदि हम सफल रहे होते तो साक्षरता की उम्र बढाने की बावजूद जनपद की लगभग 2/3 जनता आज भी निरक्षर नही होती। हमें साक्षरता के प्रसार के लिए भविष्य मे और बड़े स्तर पर प्रयास करने होंगे लेकिन समस्या यह है कि हमारे आर्थिक ससाधन सीमित हैं और निरक्षरों की संख्या में भी तेजी से वृद्धि हो रही है, जिससे निरक्षरों की सख्या भी बढ़ती जा रही है। फिर भी यदि कोशिश की जाए तो अधिकांश को साक्षर बनाया जा सकता है। इसके लिए जरूरी है कि हर एक पढ़ा लिखा व्यक्ति कम से कम एक को पढ़ाने का संकल्प ले और उसे निष्ठापूर्वक पूरा करे। सभी स्नातकों को कम से कम 6 महीने या साल भर निरक्षरता उन्मूलन अभियान में लगाया जा सकता है। अच्छा तो यह होगा कि स्नातक स्तर पर अंतिम वर्ष में निरक्षरता दूर करने के कार्यक्रम को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाए। यदि प्रौढ़ शिक्षा को पाठ्यक्रम के रूप में लागू नहीं किया जाता तो नोकरी पाने या स्वरोजगार के लिए ऋण पाने के लिए प्रौढ़ शिक्षा को अनिवार्य किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त साक्षरता अभियान को सफल बनाने का एक माध्यम यह हो सकता है कि निजी औद्योगिक प्रतिष्ठानों से उनकी आय के अनुपात में एक निश्चित राशि साक्षरता प्रसार के लिए प्राप्त की जाए। इस कार्य को सरल बनाने निजी प्रतिष्ठानों के वाणिज्यिक मंडलों की सहायता ली जा सकती है। स्वयंसेवी संगठन भी साक्षरता के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं और इस कार्य में उनका सहयोग लेना बहुत जरूरी है। साक्षरता कक्षायें चलाने में स्थानीय और सस्ते साधनों का अधिक उपयोग किया जाना चाहिए, तभी इस अभियान को सफल बनाया जा सकता है। प्रायः संसाधनों की कमी के कारण. अभियान

सफल नहीं हो पा रहा है।

आधुनिक जन संचार माध्यम साक्षरता प्रसार के काम मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। हालांकि कठपुतली, नाटक, लोकगीत, लोककथाएं आदि का भी इस क्षेत्र में उपयोग हो रहा है लेकिन इन सबकी अपनी सीमाएं है। दूसरी ओर आकाशवाणी और दूरदर्शन ऐसे माध्यम हैं, जिनकी पहुँच न केवल जनपद सोनभद्र तक वरन् एक ही बार में देश के करोड़ो लोगों तक होता है। इसलिए इन माध्यमों का साक्षरता के प्रसार के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। हमें भूलना नहीं चाहिए कि ये इलेक्ट्रानिक माध्यम केवल मनोरजन के लिए नही है, बल्कि इनके माध्यम से व्यापक सामाजिक परिवर्तन लाये जा सकते है। इसके लिए कठोर सकल्प और इच्छाशक्ति की आवश्यकता है। समन्वित विकास के लिए यह सकल्प लेना ही होगा।

7.8 स्वास्थ्य

संसाधनों का अधिकतम उपयोग स्वस्थ मनुष्य ही कर सकता है । स्वस्थ मनुष्य औषधियों का प्रयोग न करके, अनेक रूपों में देश के संसाधनों की बचत करके उसे अन्य विकास कार्यों में लगाने के लिए अप्रत्यक्ष रूप से प्रेरित करता है । कहा गया है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ विचार का निवास होता है । उत्तम स्वास्थ्य सफल एवं सार्थक जीवन के लिए आवश्यक है । 'केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय' नागरिकों के जीवन को स्वस्थ और सुखी बनाने के राष्ट्रीय प्रयास को सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । स्वास्थ्य से सम्बन्धित कार्यक्रम विकास की दिशा में हमारे प्रयासों के महत्वपूर्ण अंग है । सितम्बर 1978 की 'अल्मा आटा' घोषणा के अनुसार सन् 2000 तक सबके लिए स्वास्थ्य के लक्ष्य को पूरा करने का राष्ट्रीय संकल्प लिया गया है ।[15] इसीलिए सातवीं पंचवर्षीय योजना में चिकित्सा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सेवाओं के प्रसार हेतु संकल्प लिया गया है ।[16] राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में परिकल्पित सन् 2000 तक सभी के लिए स्वास्थ्य का लक्ष्य अब कोई सपना या आदर्श मात्र नहीं रह गया है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के चार दशकों में हमारे देश में किए गए निरन्तर प्रयासों के फलस्वरूप अब इस लक्ष्य को प्राप्त कर पाना संभव हो गया है ।[17] यह हमारे उच्च जीवन स्तर से स्पष्ट होता है जो अब लगभग 60 वर्ष हो गया है । पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत स्वास्थ्य सम्बन्धी योजनाओं पर पूरा ध्यान दिया गया है । हमारे देश के संविधान के अनुसार

प्रत्येक राज्य का कर्तव्य है कि अपने लोगों के पोषाहार के स्तर तथा जीवन - स्तर को ऊँचा उठाए और जन-स्वास्थ्य के प्रति सजग रहे । इसके अन्तर्गत बच्चों, गर्भवती महिलाओं, दूध पिलाने वाली माताओं और गरीब वर्गों के लिए परिवार कल्याण और पोषाहार के साथ न्यूनतम जन-स्वास्थ्य तथा चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करने की व्यवस्था की जा रही है । पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण, पहाड़ी और जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएं पहुँचाई जा रही हैं । इसके साथ ही स्वास्थ्य कर्मिकों के शिक्षण और प्रशिक्षण की बेहतर व्यवस्था करने पर अधिक बल दिया गया है ।[19] किसी भी जनपद के स्वास्थ्य सम्बन्धी नियोजन प्रस्तुत करने के लिए वर्तमान स्वास्थ्य सुविधाओं एवं समस्याओं का निरूपण करना आवश्यक है । अधिकांश बीमारियों की जड़ 'पेय जल' की समस्या को जनपद की विशिष्ट समस्या के रूप में निरूपित किया गया है ।

7.9 स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं

जनपद में स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का विश्लेषण दो प्रकार से किया जा सकता है । प्रथम, जनपदवासी सामान्य बीमारियों के अतिरिक्त विशिष्ट बीमारियों से ग्रस्त हैं तथा उसका कारण क्या है ? द्वितीय, उन बीमारियों को दूर करने के लिए पर्याप्त मात्रा में अस्पताल, शैय्या, डाक्टर है या नहीं । यदि इन सुविधाओं की कमी है या इन सुविधाओं की अवस्थिति सुव्यवस्थित नहीं है या उनमें समुचित कार्यात्मकता का अभाव है तो निश्चय ही ऐसे क्षेत्र को समस्यायुक्त क्षेत्र कहा जा सकता है । ऐसे क्षेत्र में स्वास्थ्य सुधार प्राथमिक आवश्यकता बन जाती है । जनपद सोनभद्र में दोनों तरह की समस्याएं हैं ।

(अ) रोगों की समस्या

सोनभद्र वासी बहुधा कॉलरा, ग्रैस्ट्रो, तपेदिक, टाइफाइड, मलेरिया, चर्मरोग, कुष्ठरोग, नेत्र रोग, फाइलेरिया, चेचक , कुकुरखाँसी, पोलियो, पेचिस, हड्डी व उदर सम्बन्धी रोग, आन्त्र ज्वर, खाँसी आदि रोगों से पीड़ित रहते हैं । जनपद के औद्योगिक केन्द्रों (प्रदूषणयुक्त क्षेत्रों) में, धुँआ, धूल के कणों, सीमेण्ट के कणों व पेयजल की समस्या के कारण टाइफाइड, टी.वी., खाँसी आदि रोग सामान्य रोगों की श्रेणी में आ गए हैं । अन्य क्षेत्रों में पौष्टिक आहार की कमी तथा पेयजल की समस्या के कारण उपर्युक्त रोगों का वर्चस्व है तथा इससे सम्पूर्ण जनपद समस्याग्रस्त है जिससे विकास कार्यों में बाधा पहुँच रही है ।

राबर्ट्सगंज, घोरावल, चतरा, नगवां, विकासखण्डों के कृषि मजदूर कृषि कार्यों से खाली होने पर सोनपार के औद्योगिक क्षेत्रों में धन कमाने की लालसा से बहुधा जाया करते हैं और प्रदूषित क्षेत्रों से 'अनाम बीमारियों' को लेकर आते हैं तथा झोलाछाप डाक्टरों से इलाज कराकर और अधिक 'बेनाम बीमारियों' को पैदाकर, अपनी गाढ़ी कमाई गवाँ कर ऋणग्रस्तता के जाल में फंस जाते हैं । इसके दो प्रभाव दिखाई पड़ते हैं -

(1) नव-पर्यावरणवादी जो इन उद्योगों का विरोध करते हैं तथा इनमें काम करने से मना करते हैं, इन बीमारियों ने उनका काम स्वयं आसान कर दिया है। बहुत से मजदूर अब सोनपार के क्षेत्रों में नहीं जाना चाहते किन्तु सोनपार के निवासियों के लिए यह एक जन्मजात समस्या बन गई है ।

(2) अध्ययन क्षेत्र में रोगों की पर्याप्तता के कारण झोलाछाप डाक्टरों की बहुतायत है । शहर के अच्छे डाकटर तथा सरकारी डाक्टर भी स्वयं पैसा कमाने के ध्येय से दूरस्थ क्षेत्रों में अपना प्रसार शुरू कर दिए हैं । इससे ग्रामीणों को जहाँ कुछ सुविधा मिली है वहीं अधिक धन संचय (व्यावसायिकता) के कारण अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई हैं ।

एक विशिष्ट उल्लेखनीय तथ्य यह है कि ये डाक्टर अपनी चिकित्सा के बदले पैसा नहीं लेते वरन् वे दुर्लभ वस्तुएं जो पैसा से भी नहीं मिलती जैसे मूल्यवान पत्थर,जंगली जानवर,पक्षी, पियार (इससे चिरौंजी बनता है), घी, जानवरों की छाल, फर्नीचर के लिए लकड़ी, हर्र, बहेर, जड़ी-बूटी, शहद, उनका श्रम, जमीन आदि का शोषण करते हैं । यह लेन - देन स्वयं के उपयोग के लिए नहीं वरन् व्यापार के लिए होता है । ये हिन्दुस्तान के अंग्रेज हैं, इनसे मुक्ति पाने के लिए सामाजिक क्रान्ति आवश्यक है । मेरे 27 वर्ष के अनुभव व व्यक्तिगत सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि सोनभद्र वासी अपने समाज से इतर केवल दो संस्थाओं (चिकित्सा व पुलिस विभाग) तथा दो अधिकारियों, डाक्टर व दरोगा को ही जानते हैं, दूसरे शब्दों में ये दो लोग ही अपनी पहुँच ग्रामीण स्तर पर बनाए हैं । शायद इसके विश्लेषण की जरूरत नहीं है ।

इस तरह स्वास्थ्य सम्बन्धी अध्ययन से समस्याओं की एक श्रृंखला नजर आती है । इसके मूल में है - पौष्टिक आहार की कमी, प्रदूषित वातावरण तथा पेयजल की समस्या ।

पौष्टिकता की कमी गरीबी व अशिक्षा से जुडी हुई हैं । पैसे के लोभ में सोनभद्र के प्रत्येक क्षेत्र में मोटे अनाजों की जगह, बाहर से आए हुए, औद्योगिक केन्द्रों में बसे हुए लोगों के लिए सब्जी उगाने का प्रयास किया जा रहा है । ग्रामीण अंचलों से दूध, दही एवं घी सस्ते दामों पर इन 'औद्योगिक केन्द्र स्थलों पर कार्यरत अधिकारियों' के लिए चला जाता है । चराई की सुविधा से युक्त पशुपालन के लाभ से यहाँ के निवासी वंचित हैं । ये तो इसी में खुश हैं कि अब उन्हें 'खोवा' बनाकर बनारस की मंडियों में नहीं भेजना पड़ता है ।

चुर्क से शक्तिनगर व रिहन्द तक का सम्पूर्ण क्षेत्र महानगरों की तरह प्रदूषित है। सीमेण्ट कारखानों, चूने की भट्ठियों, क्रेशर उद्योगों, तापविद्युत केन्द्रों आदि से सम्पूर्ण क्षेत्र धूल के कणों व धुआं से भरा हुआ है । इससे नेत्र, चर्म व फेफड़े सम्बन्धी अद्यतन बीमारियाँ उत्पन्न हो रही हैं । खनन कार्यों में काम करने वालों की अलग समस्या है ।

पेयजल की समस्या जनपद की प्रमुख समस्या है । कहा जाता है कि 50% रोगों का कारण पानी है । अतः इस समस्या की विस्तार से विवेचना की गयी है । पेयजल की समस्या न केवल मनुष्यों के लिए है वरन् जानवरों के लिए भी है । पेयजल की समस्या के कई कारण हैं -

1. जल की कमी बढ़ते जाना,
2. भूमिगत जल का लगातार नीचे जाना,
3. पेय जल का अन्य कार्यों में प्रयोग करना,
4. पेय जल का प्रदूषित होना,
5. पानी को रिफाइन्ड करके दुबारा प्रयोग न करना ।

"हमें सोना नहीं पानी चाहिए" म्यानमार के सूखा पीड़ित क्षेत्र के एक गाँव में यह साइन बोर्ड लगा था, इसमें बुनियादी जरूरत और जीवन की कुंजी के रूप में पानी के महत्व का पता लगता है । अनुमानतः हर व्यक्ति को हर रोज निजी उपयोग के लिए 20 लीटर पानी चाहिए । यह न्यूनतम मात्रा भी जनपदवासियों को उपलब्ध नहीं होता है । भारत की 1981-91 की दशक की योजना में पानी की आपूर्ति को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गयी । इसमें 30% जनता को नलों के माध्यम से और 70% को मौके पर उपलब्ध साधनों द्वारा पानी की आपूर्ति की व्यवस्था

है । भारत सरकार ने त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम (*ARWSP*) के माध्यम से गाँवों में पीने का पानी उपलब्ध कराने को उच्च प्राथमिकता दी है । राज्य सरकारें अपनी न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रमों के माध्यम से इस काम में सहयोग कर रही है । सरकार द्वारा पेयजल समस्या से ग्रस्त गाँवों के निम्न मापदण्ड निर्धारित किए गए हैं -

1. पेय जल स्त्रोत से गाँवों की 1.6 कि0 मी0 से अधिक दूरी,
2. कूपों की 15 मीटर से अधिक गहराई,
3. 100 मीटर की ऊँचाई के अन्तर पर,

- सुरक्षित पेयजल रहित गाँव
- जैविक प्रदूषण (गिनीकृमि, हैजा, टायफाइड आदि)
- रासायनिक प्रदूषण (फ्लोराइड, खारापन, लौह, आर्सेनिक आदि) वाले गाँव ।

सोनभद्र जनपद का प्रत्येक गाँव व नगर किसी - न - किसी रूप में पेयजल की समस्या से ग्रस्त है । चतरा, राबर्ट्सगंज व घोरावल के कुछ नहरी सिंचाई वाले क्षेत्रों में भूमिगत जल - स्तर ऊपर आ जाने से जल की गुणवत्ता में ह्रास हुआ है । सिचाई के लिए भूमिगत जल का अत्यधिक उपयोग से भूमिगत जल अदृश्य होता जा रहा है । ग्रीष्म ऋतु मे अधिकांश कुएं सूख जाते हैं । अन्य ऋतुओं में तालाब - पोखर का पानी मनुष्य व पशु साथ-साथ उपयोग करते हैं, जिससे अनेक रोगों का जनन अपने आप हो जाता है । 180 वर्ग मील में फैले रिहन्द जलाशय से, उसके तटवर्ती औद्योगिक पेटी (रेनूकूट, पिपरी, अनपरा, रेणूसागर, शक्तिनगर, रिहन्द नगर तथा ओबरा) में अधिकांश पेय जल की आपूर्ति होती है । रिफाइन्ड करने के बावजूद इसे प्रदूषण मुक्त करना कठिन है । फलतः यहाँ के लोग स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक रोगों से ग्रस्त हैं । दूर - दराज के पहाड़ी इलाकों (बभनी, नगवां, दुद्धी, म्योरपुर, चोपन) में पेय जल स्त्रोत अल्प हैं । यूनिसेफ के सहयोग से लगा हैण्डपम्प भी इस समस्या का समाधान करने में असमर्थ है ।

(ब) स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं की समस्या

किसी क्षेत्र, प्रदेश या देश में स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं की मात्रा एवं अवस्थिति की उपयुक्तता के सम्बन्ध में कई प्रश्न हो सकते हैं । जैसे जिस क्षेत्र में स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या

हो ही नहीं, ऐसे क्षेत्र में चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं की अनुपस्थिति को क्या पिछड़ा क्षेत्र या अभावग्रस्त क्षेत्र कहना उचित है ? यदि स्वास्थ्य सम्बन्धी परेशानी कम है तथा उसके अनुरूप चिकित्सकीय सुविधाओं को अल्प सुविधा कहना कहाँ तक उचित है ? यदि किसी क्षेत्र में विशिष्ट रोग हो तथा उसके अनुरूप वहाँ चिकित्सा सुविधा हो (जैसे तराई क्षेत्र में मस्तिष्क ज्वर का गोरखपुर में चिकित्सा सुविधा) किन्तु अन्य क्षेत्र में उस सुविधा का न होना उस विशिष्ट रोग का अभाव हो, तो क्या ऐसे दो क्षेत्रों को दो 'असमान चिकित्सा सुविधायुक्त क्षेत्र' कहना उचित है ? इसी प्रकार गरीबी के कारण आधुनिक मँहगी चिकित्सा सुविधा का उपयोग न करना क्या स्वास्थ्य के प्रति जागरूक न होने की बात कही जा सकती है ? सरल - सादा जीवन व्यतीत करने वाले तथा पर्यावरण से तादात्म्य स्थापित करके जीवन जीने वालों पर प्राकृतिक चिकित्सा रामवाण सिद्ध होती है । जल, हवा सौर प्रकाश, तुलसी की पत्ती आदि अधिकांश रोगों का समाधान कर देती है । ऐसे लोगों को एलोपैथिक चिकित्सा की अल्प आवश्यकता को क्या पिछड़ा कहना उचित है ? उपर्युक्त सभी प्रश्न विवाद एवं अतिरिक्त शोध के विषय हैं, जो साधन व समय की अल्पता के कारण सम्भव नहीं है। प्रस्तुत अध्याय में सरकार द्वारा निर्धारित चिकित्सा सुविधा के मानदण्डों एवं जनपद की वर्तमान सुविधा के संदर्भ में विश्लेषण किया गया है ।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक 5000 आबादी के पीछे एक उपकेन्द्र तथा एक मातृ शिशु कल्याण केन्द्र, 30,000 आबादी के पीछे एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 100000 की आबादी के पीछे एक सामुदायिक केन्द्र खोला जाना है ।[18] किन्तु पहाड़ी क्षेत्रों रेगिस्तानी व आदिवासी क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के लिए 20,000 की तथा उपकेन्द्र के लिए 3000 की जनसंख्या होना ही पर्याप्त है ।[19]

जनपद की स्वास्थ्य सेवा सम्बन्धी कुछ प्रमुख समस्याएं निम्न हैं -

1. नगरों में पढ़े हुए डाक्टरों का, उच्च वेतनमान की प्राप्ति के बावजूद, ग्रामीण प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर न रहना एक प्रमुख समस्या है । अस्पताल में समय पर न जाना, शहरों में रहकर साप्ताहिक निरीक्षण करना डॉक्टरों द्वारा प्रमुख समस्या खड़ी कर दी गयी है ।

2. चिकित्सालयों में दवाओं का अभाव तथा उनके रख-रखाव का उचित प्रबन्ध न होना प्रमुख समस्या है, यह जनपद में सर्वत्र व्याप्त है ।

3· गर्भवती महिलाओं को पौष्टिक आहार की कमी रहती है, इसका कारण गरीबी व अशिक्षा है ।

4· समस्त ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसव के लिए नर्सो का अभाव है । अप्रशिक्षित दाइयों से जच्चा - बच्चा विशेष रूप से प्रभावित होते हैं ।

5· ग्रामीण व नगरीय क्षेत्र में आवास की समस्या, पानी के निकास की समुचित व्यवस्था न होने से मच्छरों द्वारा अनेक बीमारियाँ उत्पन्न कर दी जाती हैं । इससे जनपद मुख्यालय राबर्ट्सगंज सर्वाधिक प्रभावित है ।

6· शौचालयों का अभाव एवं सफाई व्यवस्था न होने से अनेक रोगों का अपने आप जनन होता है, जिससे सम्पूर्ण स्वास्थ्य व्यवस्था प्रभावित होती है ।

7· मद्यपान व नशीले पदार्थो के सेवन से आर्थिक व शारीरिक क्षीणता बढ़ती जा रही है ।

7·10 चिकित्सा सुविधाओं की वर्तमान स्थिति

जनपद में चिकित्सा सुविधाओं की स्थिति संतोषजनक नहीं है । रोगियों के अनुसार सुविधाओं का नितान्त अभाव है । जनपद के कुल अस्पतालों की संख्या 83 है, जिसमें से आयुर्वेद के 16 (19·28%) होम्योपैथ के 20 (24·09%) तथा यूनानी चिकित्सा पद्धति का 1 (1·2%) अस्पताल है । 55·42% अस्पताल एलोपैथ से सम्बन्धित है । 83 अस्पतालों में से 15 अस्पताल नगरीय केन्द्रों में है । अर्थात 13·40% नगरीय जनसंख्या के लिए 18·07% अस्पताल है । उल्लेखनीय है कि नगरों में ' प्राइवेट क्लिनिक' के अतिरिक्त अनेक 'नर्सिंग होम' हैं । चूँकि व्यक्तिगत क्षेत्र की चिकित्सा सुविधाएं नगरों में अधिक रहती हैं, इसलिए ग्रामीण क्षेत्र के निवासी अपने जनसंख्या के अनुपात में अल्प चिकित्सिकीय सुविधा को प्राप्त किए हैं । विकास खण्ड घोरावल, राबर्ट्सगंज, चतरा, नगवां, चोपन, म्योरपुर, दुद्धी व बभनी के ग्रामीण क्षेत्रों में अस्पतालों की संख्या क्रमशः 9, 8, 4, 7, 11, 16, 6, 7 है । इस प्रकार सम्पूर्ण जनपद में 12798 जनसंख्या पर 1 अस्पताल का औसत है । प्रति लाख जनसंख्या पर एलोपैथिक चिकित्सालय /औषधालय एंव प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की संख्या 1991-92 में 3·7 था । अध्ययन क्षेत्र की चिकित्सा सुविधाओं का विवरण तालिका 7·12,13 में दिया गया है।

तालिका 7.12

जनपद में विकास खण्ड वार चिकित्सा सेवा

वर्ष/जनपद/ विकासखण्ड	एलोपैथिक चिकित्सा सेवा चिकित्सालय/ औषधालय	प्रा0स्वा0 केन्द्र	उपलब्ध शैय्या	डाक्टरों की संख्या	आयुर्वेदिक चिकित्सा औषधा0/ चिकित्सा0	उपलब्ध शैय्या	डाक्टरों की संख्या	होम्योपैथिक चिकित्सा औषधा0/ चिकित्सा0	उपलब्ध शैय्या	डाक्टरों की संख्या	यूनानी चिकित्सा औषधा0/ चिकित्सा0	उपलब्ध शैय्या	डाक्टरों की संख्या
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
1989-90	14	22	348	46	9	40	17	18	-	15	1	4	1
1990-91	14	22	348	46	16	123	20	20	-	11	1	4	1
1991-92	17	29	382	41	16	123	20	20	-	11	1	4	1
1991 - 92													
1. घोरावल	-	3	42	5	3	8	2	3	-	1	-	-	-
2. राबर्ट्सगंज	2	4	48	12	1	15	2	-	-	-	1	4	1
3. चतरा	1	2	10	3	1	-	1	-	-	-	-	-	-
4 नगवां	1	2	14	3	2	19	3	2	-	-	-	-	-
5. चोपन	2	4	46	4	1	8	2	4	-	3	-	-	-
6. म्योरपुर	2	6	32	2	4	40	5	4	-	1	-	-	-
7. दुद्धी	1	2	26	2	1	-	1	2	-	2	-	-	-
8. बभनी	-	2	10	1	1	4	1	4	-	3	-	-	-
ग्रामीण योग	9	25	228	32	14	94	17	19	-	10	1	4	1
नगरीय योग	8	4	154	9	2	29	3	1	-	1	-	-	-
सम्पूर्ण योग	**17**	**29**	**382**	**41**	**16**	**123**	**20**	**20**	**-**	**11**	**1**	**4**	**1**

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका, जनपद सोनभद्र, 1992, पृष्ठ 101 - 102.

तालिका 7.13

जनपद सोनभद्र में चिकित्सा सुविधा

विकासखण्ड	प्रति लाख जन0 पर एलोपैथिक चिकि0/औष0 एवं प्राईमरी स्वास्थ्य केन्द्र की संख्या	प्रति लाख जन0 पर एलोपैथिक चिकि0/औष0 एवं प्रा0स्वा0के0 में उपलब्ध शैय्याओं की संख्या	प्रति लाख जन0 पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या	परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र	मानक उपकेन्द्र	परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण उपकेन्द्र
1. घोरावल	1.9	26.9	1.9	1	32	26
2. राबर्ट्सगंज	4.3	34.8	2.9	1	34	30
3. चतरा	4.5	14.8	3.0	1	13	12
4. नगवां	5.5	25.7	3.7	1	11	10
5. चोपन	3.6	27.6	1.8	1	44	26
6. म्योरपुर	4.1	16.6	1.6	1	48	22
7. दुद्धी	3.1	26.9	1.0	1	1	15
8. बभनी	3.5	17.4	1.7	1	12	14
ग्रामीण योग	3.7	24.5	1.9	8		155
नगरीय योग				3		2
सम्पूर्ण जनपद	-	-	-	**11**	**215**	**157**

जनपद में कुल चिकित्साधिकारियों की संख्या - 73, अस्पतालों में उपलब्ध समस्त शैय्या की संख्या - 509, मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र की संख्या - 11 तथा उपकेन्द्रों की संख्या 157 है । अस्पताल की संख्या - 83 तथा डाक्टर की संख्या-73 से स्पष्ट है कि कुछ अस्पताल कम्पाउण्डर द्वारा ही चलाए जा रहे हैं ।

7.11 स्वास्थ्य सुविधाओं का नियोजन

स्वास्थ्य सुविधाओं का नियोजन, उनकी वर्तमान मात्रा एवं अवस्थिति का निश्चित मानदण्डों से तुलना करके भविष्य की आवश्यकताओं तथा वर्तमान समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में किया गया है । नियोजन को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त संसाधनों की आवश्यकता पड़ती है संसाधनों का अनुमान तथा उसके निवेश के प्राथमिकता का निर्धारण सरकार करती है, इसलिए संसाधनों की उपलब्धता व निवेश प्राथमिकता के परिप्रेक्ष्य में नहीं किया गया है ।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के अनुसार पहाड़ी क्षेत्रों में प्रति 20000 जनसंख्या पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र होना चाहिए । किन्तु जनपद में 37070 जनसंख्या पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र है अर्थात 54 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की जगह मात्र 29 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र है जनपद के प्रदूषण को देखते हुए यह मात्रा और होनी चाहिए । विकासखण्ड चतरा में सिलथम, नगवां में कैमूर के दक्षिण व सोननदी के उत्तर में गड़ाव , बभनी में कोरची, दुद्धी में बीड़र, बघाड़ू, चोपन में सेन्दुरिया म्योरपुर में बेलहत्थी, घोरावल में लहास न्यायपंचायत केन्द्रों पर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोलने से लोगों के स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को सुधारने में महती सहायता मिलेगी । जनपद में सम्पूर्ण अस्पतालों की संख्या 83 है किन्तु चिकित्साधिकारियों की संख्या 73 है । अत॰ किसी भी अस्पताल को कम्पाउण्डर के संरक्षण में छोड़ना लोगों के जीवन से खिलवाड़ करना है । प्रत्येक अस्पताल पर चिकित्साधिकारियों की नियुक्ति एवं उपस्थिति अनिवार्य होनी चाहिए ।

जनपद वासियों का जड़ी - बूटी पर विश्वास है, अतः आयुर्वेदिक, यूनानी एवं होम्योपैथिक चिकित्सालय खोलने की और आवश्यकता है । विकासखण्ड चतरा, राबर्ट्सगंज, चोपन, दुद्धी व बभनी में मात्र एक - एक आयुर्वेदिक चिकित्सालय है । इन पांचों विकासखण्डों में कम-से- कम चार - चार आयुर्वेदिक चिकित्सालय या यूनानी चिकित्सालय और खोलना चाहिए।

जिला मुख्यालय पर कम-से-कम 200 शैय्या युक्त जिला अस्पताल का होना आवश्यक है । मुख्यालय विवाद के कारण इस कार्य में और विलम्ब नहीं करना चाहिए । इसके अलावा सभी बड़े औद्योगिक केन्द्रों पर कम-से-कम 100 शैय्या युक्त अस्पताल होना चाहिए । ऐसे अस्पताल ओबरा, डाला, चुर्क, रेनूकूट, पिपरी, रिहन्दनगर, अनपरा, रेणूसागर व शक्तिनगर में आवश्यक हैं । इन सभी अस्पतालों को उपर्युक्त उल्लिखित सभी बीमारियों की चिकित्सा सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए ।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति के अनुसार पहाड़ी क्षेत्रों में 3000 जनसंख्या पर एक चिकित्सा उपकेन्द्र होना चाहिए । सोनभद्र के जनसंख्या के अनुपात में सभी उपकेन्द्रों की संख्या 358 से कम नहीं होना चाहिए किन्तु वर्तमान उपकेन्द्रों की संख्या मात्र 155 है । अतः 203 उपकेन्द्र और खोलने की जरूरत है । जनपद में कुल 586 ग्राम सभाएं हैं । 1.64 ग्राम सभा पर । उपकेन्द्र का औसत है । जनपद में प्राकृतिक अवरोधों को ध्यान में रखते हुए, प्रत्येक व्यक्ति तक चिकित्सा सुविधा पहुँचाने के लिए 203 ग्राम सभा केन्द्रों पर उपकेन्द्र खोलने की नितान्त आवश्यकता है ।.

सभी स्वास्थ्य केन्द्रों व उपकेन्द्रों पर चिकित्साधिकारियों एवं कर्मचारियों की अनिवार्य उपस्थिति तथा चिकित्सा संसाधनों की उपलब्धता की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए । स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धि मात्र से ही सुन्दर स्वास्थ्य नहीं प्राप्त किया जा सकता । दवा से स्वस्थता का घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं है । इसके लिए पौष्टिक आहार, शुद्ध वायु, उचित सफाई व्यवस्था, शुद्ध वातावरण तथा शुद्ध पेय जल की आवश्यकता होती है । इसमें से अधिकांश की प्राप्ति स्वविवेक तथा जागरूकता से की जा सकती है । पौष्टिक आहार के लिए यह आवश्यक नहीं है कि मेवे - मशाले ही खाए जाए बल्कि मोटे अनाजों दूध, सब्जी व स्थानीय रूप से उपलब्ध फलों से भी प्राप्त किया जा सकता है । सफाई व्यवस्था को दैनिक क्रिया के रूप में अपना लेने से न केवल रोगों से मुक्ति मिलती है बल्कि मन भी प्रसन्न रहता है जो उत्तम स्वास्थ्य का सूचक है ।

शुद्ध वायु की प्राप्ति जनपद के 5 विकासखण्डों (चोपन, राबर्ट्सगंज, म्योरपुर, दुद्धी

व बभनी) के लिए दुर्लभ होती जा रही है । ऐसी स्थिति में सम्पूर्ण स्वास्थ्य नियोजन प्रक्रिया खर्चीली होकर अर्थहीन हो जाती है । वास्तव में विकास नीति के द्वन्द्व में फंस जाने के कारण एक तरफ हम बड़े - बड़े उद्योगों की स्थापना की तरफदारी करते हैं तथा दूसरी तरफ उससे नि:सृत प्रदूषण की आलोचना करते हैं । पौराणिक कथाओं के अनुसार जब तेजी से समुद्र मन्थन हुआ तो उसमें से अमृत कलश के साथ विषकुण्ड भी निकला । ठीक इसी प्रकार जब हम तेजी से विकास नीति अपना रहे हैं तो प्रदूषण रूपी विषकुण्ड का जहर पीना ही पड़ेगा। इसके प्रभाव को प्रदूषण नियन्त्रण यन्त्र लगाकर तथा चिकित्सा सुविधाएं बढ़ाकर कुछ कम किया जा सकता है ।

पेयजल जनपद की प्रमुख समस्या होने के साथ - साथ इसका नियोजन प्रस्तुत करना भी कठिन है । जनपद में पेय जल कूपों, नलों, हैण्डपाइप, नदियों व बाधों से प्राप्त किया जाता है । भूमिगत जल ही वह स्त्रोत है जिसका अनेक प्रकार से दोहन करके जल आपूर्ति करते हैं । अतः यह अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि हम इसका सावधानी से उपयोग करें । हमें वैज्ञानिक आधार पर भूमिगत जल की उपलब्धता बढ़ाने के उपाय करने चाहिए । सम्पूर्ण सोनभद्र क्षेत्र भूमिगत जल के रूप में दुर्बल क्षेत्र है । अतः भूमिगत जल का उपयोग केवल पेयजल के रूप में ही करना चाहिए । इसका उपयोग सिंचाई के लिए तभी करना चाहिए जब छोटे-छोटे तालाबों, पोखरों व बन्धियों का निर्माण करके जलस्तर को बढ़ाने का प्रयास किया जाय । इस तरह का कार्य राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम और राष्ट्रीय भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अन्तर्गत किए जा सकते हैं ।

पेयजल की सुविधा बढ़ाने से सर्वाधिक लाभ ग्रामीण महिलाओं को होता है, इसलिए पानी का स्त्रोत चुनते समय उनसे विचार विमर्श अवश्य लिया जाना चाहिए । ऐसा करने पर कभी - भी असुविधाजनक स्थानों पर नल नहीं लग सकते । पानी की समस्या का समाधान सरकार स्वैच्छिक क्षेत्र में उपलब्ध विशेष व्यावसायिक और तकनीकी जानकारी को प्राप्त करके कर सकती है । इसके लिए महाराष्ट्र की स्वैच्छिक एजेंसी ' पानी पंचायत' से प्रेरणा ली जा सकती है । इसके अलावा निम्न उपबन्धों का सहारा लिया जा सकता है ।

1. लागत की कमी लाने के लिए वैज्ञानिक स्त्रोत का पता लगाना ।

2. जल की गुणवत्ता की जांच के लिए आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराकर जल की गुणवत्ता पर बल देना ।

3. सुरक्षित जल की पूर्ति करके गिनीकृमि का उन्मूलन करने; डिफ्लोराइडेशन संयन्त्र लगाकर अतिरिक्त फ्लोराइड को हटाने, लौह तत्वों को हटाने के लिए संयन्त्र स्थापित करके अतिरिक्त लौह तत्वों को दूर करने, संयन्त्र लगाकर क्षारता दूर करने जैसे रासायनिक और जीवाण्विक दूषण समाप्ति के कार्यों को करने के लिए विशेष अभियान चलाना ।

4. वर्षा के जल को इकट्ठा करने और पानी एकत्र करने के लिए समुचित ढाँचों के निर्माण को बढ़ावा देने का कार्य करना चाहिए ।

5. भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा बनाए गए नियमों के माध्यम से ग्रामीण जल पूर्ति गतिविधियों/आदानों का मानकीकरण करना ।

6. पंचायतों व जल उपभोक्ता समितियों को बड़े पैमाने पर सम्मिलित करके सामुदायिक सहभागिता और गैर सरकारी संगठनों की अधिक सहभागिता को बढ़ावा देना तथा चुने हुए क्षेत्रों में समुदाय आधारित मॉडल पर प्रयोग करना ।

7. जलापूर्तिक निवेश को सामुदायिक स्तर पर बेहतर स्वास्थ्य स्तर प्रदान करने वाले माध्यम के रूप में परिवर्तित करने वाले प्रेरक तत्वों के रूप में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को मान्यता देकर जलापूर्ति प्रबन्ध में महिलाओं की भूमिका का विस्तार करने का प्रयास करना ।

8. जल प्रबन्ध, जल लक्ष्य निर्धारण और जल की सम्भावनाओं का पता लगाने के लिए भू - भौतिकी तकनीकों, विशेषकर कैमूर पर्वत के दक्षिण के कठोर चट्टानों और दुर्गम इलाकों में स्त्रोत का पता लगाने के लिए विद्युत जांच तकनीक का इस्तेमाल करना चाहिए।

9. कड़ी चट्टान वाले क्षेत्रों में कुओं से अधिक पानी प्राप्त करने के लिए हाइड्रोलिक फ्रेक्चरिंग स्टिमुलेशन तकनीक (बोर वेल) का विकास करना होगा ।

सुरक्षित पेयजल की लगातार उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए जल के शुद्धिकरण और जल संरक्षण की संसाधन प्रौद्योगिकी को अपनाना होगा। यह रिहन्द जलाशय के लिए उपयुक्त होगा । 40 कि0 मी0 प्रति घंटे के वायु वेग को सहन करने के लिए एलकोक्सी इथेनॉल

मिश्रणों का उपयोग करके जल वाष्पीकरण का नियन्त्रण करना । पानी के गंदलेपन की जाँच 'टर्बिडिमीटर' द्वारा करके ही नगरों में जलापूर्ति करनी चाहिए । गाँवों में यह विधि संभव नहीं है । रिहन्द जलाशय से पेयजल आपूर्ति के पहले पानी के खारेपन, कठोरता और अपशिष्ट क्लोरीन का विश्लेषण टाइट्रेशन विधि से करनी चाहिए । फ्लोराइड, लौह तत्वों, सल्फेट, नाइट्रेट आदि का क्लोरीमीट्रिक विधि से पता लगना चाहिए । जनपद के औद्योगिक पेटी वाले क्षेत्र में पेय जल के गुणवत्ता के मूल्यांकन तथा जल के भौतिक - रसायन, जीवाणु और जैविकीय विश्लेषण के लिए चलती - फिरती जांच प्रयोगशाला का विकास करना चाहिए ।

इन सब योजनाओं के अतिरिक्त स्वास्थ्य नियोजन का सबसे नायाब तरीका 'परिवार नियोजन' है, जिसके बिना उत्तम स्वास्थ्य व संतुलित विकास की कल्पना नहीं की जा सकती । जनपद के लिए ही नहीं बल्कि राष्ट्र के प्रगति के लिए हमें सर्वाधिक प्रमुखता स्वास्थ्य क्षेत्र को ही देनी होगी क्योंकि केवल स्वस्थ नागरिक ही एक मजबूत राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं ।[21]

सन्दर्भ

1. *Thapaliyal, B.K. and Ramanna, D.V. : Planning for Social Facilities 10th Course on DRD, NKD, Hyderabad 1977, Sept - Oct., p. 1, (Unpublished paper).*

2. वही, पृष्ठ 1.

3. *Draft Five Year Plan, 1978 (1978-83), Planning Commission, Govt. of India, New Delhi, p. 106.*

4. 'भारत', प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, 1988-89, पृष्ठ 62.

5. वही.

6. योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, 30 सितम्बर 1991, पृष्ठ 14.

7. चाँदना, आर.सी. : जनसंख्या भूगोल, कल्याणी पब्लिसर्स, नयी दिल्ली, 1987,

8. वार्षिकी, उत्तर प्रदेश, 1990-91 व 1991-92, पृष्ठ 121.

9. वही, पृष्ठ 123.

10. *Report of Education Commission, 1966, p.234*

11. *Pathak R.K. : Environmental Planning Resources and Development, Chugh Publication, Allahabad, 1990, p. 153.*

12. दत्त, भवतोष . योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, 26 जनवरी 1990, पृष्ठ 2.

13. *Gibbs, J.P. (ed.) : Urban Research Method, 1966, p. 107.*

14. वही.

15. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 4, पृष्ठ 155.

16. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 8, पृष्ठ 330.

17. योजना , 15 सितम्बर 1991, पृष्ठ 9.

18. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 13, पृष्ठ 161 तथा 331-335.

19. योजना, 26 जनवरी 1992, पृष्ठ 5.

20. दास, शिवतोष : भारत स्वतन्त्रता के बाद, प्रकाशन विभाग , सूचना और प्रसारण मंत्रालय, 1987 , पृष्ठ 48.

21. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 19, पृष्ठ 4.

xxxxxxxxxxxxx

अध्याय 8

समन्वित क्षेत्र - विकास

'समन्वित क्षेत्र-विकास' की संकल्पना एक व्यापक संकल्पना है। किसी अर्थव्यवस्था या क्षेत्र के विकास का तात्पर्य केवल कुछ सुविधाओं की वृद्धि करना ही नहीं है वरन् समग्र विकास करना है। पिछले अध्यायों में अध्ययन क्षेत्र के उद्योग, कृषि, परिवहन, संचार, शिक्षा तथा स्वास्थ्य से सम्बन्धित प्रतिरूपों एवं समस्याओं को विश्लेषित कर विकास-नियोजन प्रस्तुत किया गया है। किन्तु किसी क्षेत्र के विकास में उक्त मुख्य तथ्यों का ही योगदान नहीं होता है। इसके अतिरिक्त अनेक ऐसे कारक हैं यथा - आवास, सफाई, प्रौद्योगिकी विकास, विकसित मानव संसाधन, पर्यावरण संतुलन, मनोरंजन के साधन, खेलकूद के साधन, वर्ग-द्वेष का अभाव, सामुदायिक भावना तथा चरित्र निर्माण आदि, जिसके बिना समग्र- विकास की कल्पना की ही नहीं जा सकती। किन्तु एक शोध - प्रबन्ध में समग्र - विकास के लिए आवश्यक सम्पूर्ण भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक कारकों का अध्ययन नहीं किया जा सकता। इसके लिए शोध - श्रृंखला की आवश्यकता है। एक शोधकर्ता के लिए समय, संसाधनों तथा विशेषज्ञता के अभाव में समग्र अध्ययन करना संभव नहीं है। अतः प्रस्तुत अध्याय में क्षेत्र विकास से सम्बन्धित विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है।

जिस क्षेत्र की (जनपद सोनभद्र) लगभग 86% से अधिक जनसंख्या ग्रामीण हो, 2/3 अशिक्षित हो, 1/4 भाग पर कृषि कार्य हो तथा 40% बस्तियाँ ही सड़कों से अभिगम्य हो ऐसे क्षेत्र के समग्र-विकास के लिए, विकास के लिए उत्तरदायी सभी कारकों को झंकृत करने होंगे। वस्तुतः क्षेत्र के समग्र - विकास की संकल्पना भी सापेक्षिक होती जा रही है। पिछड़े क्षेत्रों के विकास की योजना, प्रायः विकसित देशों के विकसित क्षेत्रों के आधार पर की जाती है। किन्तु अध्ययन क्षेत्र का अपना एक विशिष्ट व्यक्तित्व है, जिसके विकास का नियोजन क्षेत्रीय समस्याओं और क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप ही होना चाहिए। कभी-कभी राष्ट्रीय हित में क्षेत्रीय हित को गौण बना दिया जाता है। लेकिन समन्वित क्षेत्र-विकास क्षेत्रीय असंतुलन उत्पन्न कर प्राप्त नहीं किया जा सकता ।

राष्ट्रीय - हित को ध्यान में रखते हुए अध्ययन क्षेत्र के हित एवं विकास को भुला दिया गया है। गोविन्द बल्लभ पन्त सागर, विद्युत परियोजनाओं, सीमेंट, अल्यूमिनियम,

रसायन तथा अन्य अनेक उद्योगों की स्थापना सेहजारों लोग बेघर हो गए। बीना, खड़िया तथा ककरी कोयला क्षेत्रों के उजड़े हुए लोगों से बात करने पर उनके क्षोभ का पता चलता है। एक आदमी ने कहा - 'यदि मुझे ज्ञात हो जाय कि मेरे घर या गाँव में सोने की खान है तो भी मैं किसी से नहीं बताऊँगा सरकार से तो कदापि नहीं। क्योंकि हमारा उजाड़ना तो निश्चित हो जाता है और खुश करने के लिए (मुआवजा के रूप में) कुछ पैसे मिल जाते हैं'। उजड़े हुए लोगों के पुश्तैनी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक वातावरण को तो प्रदत्त नहीं किया जा सकता किन्तु पुनर्स्थापना की समुचित व्यवस्था कर उनकी समस्याओं को कुछ हद तक कम अवश्य किया जा सकता है। इसके लिए पैसा नहीं वरन् उनके अनुरूप वातावरण एव आरक्षण देने की आवश्यकता है। वास्तव में हजारों सोनभद्रवासियों के त्याग (मन से भले ही न किया गया हो) से देश के विभिन्न क्षेत्रों में विकास की किरण फैली है।

चुर्क से शक्तिनगर एवं रिहन्द नगर तक सम्पूर्ण क्षेत्र पर्यावरण प्रदूषण की समस्या से ग्रस्त होता जा रहा है। हमारी भोगवादी सभ्यता ने 'टेक्नोस्फीयर' में सांस लेने के लिए मजबूर कर दिया है। हमारी सभ्यता का उदय अरण्यों में हुआ था किन्तु हम पश्चिम के समुदी सभ्यता (विस्तारवादी एवं भौतिकवादी) के अनुकरण में स्वावलम्बी एवं संतुलित विकास का परित्याग करते जा रहे हैं। आने वाले कुछ दशकों में जनपद सोनभद्र 'महानगरीय प्रदूषण' जैसी समस्या से ग्रस्त हो जाएगा। 'स्टोन क्रेशर' से पहाड़ों को तोड़ने, ताप विद्युत गृहों, सीमेंट कारखानों तथा चूना भट्ठियों आदि से निकलने वाले धूम्र एवं कणों से न केवल जीव जन्तुओं पर वरन् वनस्पतियों पर भी दुष्प्रभाव पड़ रहा है। औद्योगिक केन्द्रों के समीपवर्ती क्षेत्रों में फसलों एवं बागानों पर पड़ने वाले प्रभाव एवं उसे दूर करने के लिए उपाय हेतु शोध की आवश्यकता है।

वनों की कटाई एवं उससे जनित अपरदन की समस्या समन्वित विकास की प्रक्रिया को बाधित कर रही है। बांधों, बन्धियों एवं नदियों में लगातार बढ़ते निक्षेप से अनेक पर्यावरणीय समस्या उत्पन्न हो रही है। अतः वनोपज की चोरी एवं कटाई पर रोक लगाने की आवश्यकता है। अनियन्त्रित चराई से भी अपक्षय एवं अपरदन में वृद्धि हो रही है। विकासखण्ड चतरा एवं घोरावल के कृषि प्रधान बेलन - घाटी से, वर्षा के दिनों में, पालतू पशु जंगलों में चराई

के लिए भेज दिये जाते हैं । अतः ऐसी समस्याओं के समाधान की आवश्यकता है ।

लगभग 40 वर्ष की छोटी सी अवधि में जनपद सोनभद्र के पर्यावरण की समस्याओं के लिए तीन कारणों को बताया जाता है। वे हैं गरीबी, कम विकास और विकास कार्यक्रमों का गलत आयोजन तथा गलत कार्यान्वयन । किन्तु गरीबी या गरीबी में जीवन बसर करने वाले लोगों ने नहीं बल्कि धनी किसानों, जो बड़े बांधों और अधिक रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशक दवाओं के उपयोग पर जोर देते हैं । बड़े और मझोले उद्योगपतियों ने जो हमारे वनों की कटाई के लिए जिम्मेदार हैं और जो प्रदूषण नियंत्रण उपकरण के बगैर अपने कल - कारखाने चला रहे हैं, पर्यावरण को नुकसान पहुँचा रहे हैं । अल्प विकास से नहीं बल्कि इसके विपरीत तेज और जल्दबाजी के विकास से पर्यावरण को क्षति पहुँच रही है । विकास कार्यक्रम के खराब आयोजन और क्रियान्वयन से भी पर्यावरण को नुकसान नहीं पहुँचा है बल्कि इसलिए कि हम विकास की परिकल्पना शुद्ध रूप में वृद्धि के रूप में करके मात्रात्मक आकार देते हैं । जबकि हमें गुणात्मकता पर ध्यान देना चाहिए ।

अनपरा ताप विद्युत गृह, रिहन्द नगर तथा सिंगरौली सुपरथर्मल पॉवर हर वर्ष उत्पादन के कीर्तिमान बना रहे हैं । इसे हम प्रायः विकास का सूचक मानते हैं । वास्तव में इनके द्वारा उत्पादित उत्पादों के मूल्य को, उनके द्वारा जनित पर्यावरण प्रदूषण के पुनरूद्धार के मूल्य में से घटा कर ही वास्तविक लाभ ज्ञात करना चाहिए । समन्वित क्षेत्र - विकास के लिए यहीं सबसे उपयुक्त मापदण्ड है । अब ऐसी योजना बनाने की आवश्यकता है जिससे पता चल सके कि मनुष्य और पर्यावरण के साथ आज और भविष्य में क्या हो रहा है ।

अध्ययन क्षेत्र के समन्वित विकास के लिए यह आवश्यक है कि 'वृद्धि रोग' से बचा जाय । इसके जगह 'निर्वाह योग्य विकास' की नयी संकल्पना स्थापित करनी होगी। निर्वाह योग्य विकास वह विकास है जो सबकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, खासकर बहुसंख्यक गरीबों की रोजगार, भोजन, ऊर्जा, पानी और आवास की जरूरतें पूरी करने के लिए; कृषि, निर्माण, ऊर्जा और सेवाओं की प्रगति सुनिश्चित करता है । इसमें पर्यावरण एवं अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों का विलय होता है ।

अधिकतर गाँवों की सबसे बड़ी समस्या पेय जल की है । मानसून की वर्षा न होने से और भूमिगत जल के स्तर में कमी से अध्ययन क्षेत्र में भयानक सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । भूमिगत जल का पता लगाने के लिए उपग्रहों द्वारा भेजे गए दूर - संवेदन आंकड़ों का व्यापक इस्तेमाल करना चाहिए ।

पशुओं की पर्याप्त संख्या देखते हुए उनके समुचित विकास की आवश्यकता है। ये पशु ग्रामीण अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग हैं । इन पशुओं की उत्पादकता काफी कम है। नस्ल सुधार के लिए अब तक जो कार्य हुआ है वह विदेशी जाति के पशुओं से संकर-नस्ल के पशु पैदा करने तक सीमित है । भेड़ - बकरियो के पालन की सुविधाएं एवं उनके उत्पादों को सही मूल्य दिलाने की कोशिश करनी चाहिए । भेड़ों के ऊनों से कम्बल बनाने के कार्य को प्रोत्साहन एवं दक्षता प्रदान करने की आवश्यकता है । मुक्त बधुआ मजदूरों को 'जर्सी गाय' देने की बजाय, भेंड, बकरी या देशी गाय आदि देनी चाहिए, जो उनके वातावरण के अनुकूल हों ।

उद्योगों में श्रमिकों की भागीदारी कैसी हो ? इसे तर्क से नहीं बल्कि व्यवहारिक रूप से सोचना होगा । कृषकों एवं कृषि - मजदूरों के सम्बन्ध एक परिवार की तरह होते थे । कृषि - मजदूरों को किस - किस वस्तुओं की आवश्यकता है तथा कृषक मजदूरी के रूप में क्या दे सकता है, के संतुलन एवं सामंजस्य पर कृषि मजदूरों की मजदूरी एवं सम्बन्ध स्थापित थे । किन्तु सरकार औद्योगिक श्रमिकों की तरह कृषि श्रमिकों को भी पैसा दिलाने की नीति अपना रही है जिससे कृषि श्रमिकों की दुर्दशा बढ़ती जा रही है । अतः इसे रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाने की आवश्यकता है ।

अध्ययन क्षेत्र की अधिकांश ग्रामीण बस्तियाँ कच्चे एवं झोपड़ी के रूप में है । इन्दिरा आवास योजना के तहत इनके लिए पक्का मकान बनाने की आवश्यकता नहीं है । सरकार को इनके पुराने मकान की मरम्मत एवं सुघरा स्वरूप प्रदान करना चाहिए । इससे उनके पुश्तैनी मकान का मोह भंग भी नहीं होता है तथा नया (सुघरा मकान) मकान किसी के भी द्वारा अधिग्रहित नहीं किया जा सकता है । कच्चे मकानों व झोपड़ियों में रहने वाले लोगों के

लिए 'हवाई पैखाना' बनाने की जगह प्रत्येक गाँव में नाली की सुविधा, गलियों में खड़ंजा तथा प्रत्येक गाँव में एक सफाई कर्मी नियुक्त किया जाना चाहिए । सामुदायिक - भावना में वृद्धि करके भी सफाई, नाली तथा सड़क अव्यवस्था से मुक्ति पायी जा सकती है । गोबर के खाद के गड्ढे को गाँव से बाहर बनाना चाहिए; पशुओं को, निवास स्थान से दूर तथा खेतों के पास गोशाला में बांधना चाहिए । ग्रामीणों तथा ग्रामीण क्षेत्रों के समन्वित विकास के लिए गांधी जी के विचारों को कार्यान्वित करने की आवश्यकता है । अधिकांश ग्रामीण समस्या नगरों की नकल करने से उत्पन्न हो रही है ।

अध्ययन क्षेत्र के विकास को नगरीकरण से नहीं मापना चाहिए । क्योंकि नगरीकरण स्वयं एक समस्या है । वह दिन दूर नहीं जब नगरों से गाँवों की ओर पलायन होगा । नगरों की झोपड़-पट्टियों व गंदी गलियों में रहने वाले लोगों से सोनभद्र का आदिवासी अधिक सुखी है । वर्तमान में सुख की अनुभूति एवं विकास कार्यक्रमों से खुशहाली में लगातार वृद्धि होना ही समन्वित विकास है ।

जनपद सोनभद्र में खेलकूद के एवं मनोरंजन के साधनों की कमी है । खेलकूद को प्रोत्साहन देकर, प्राचीन किलों मन्दिरों तथा प्राकृतिक स्थलों को सड़कों से जोड़कर इस उद्देश्य की पूर्ति की जा सकती है । विकासखण्ड स्तर पर खेलों की प्रतियोगिताएं होनी चाहिए । इससे चारित्रिक विकास एवं मनोरंजन के उद्देश्य की पूर्ति होगी । भारतीय संस्कृति में भौतिक सुविधाओं में वृद्धि से ही समन्वित विकास की परिकल्पना नहीं की गयी है । वस्तुतः सामुदायिक भावना, उच्च चरित्र के लोग तथा वर्ग - द्वेष की भावना का अभाव भी समन्वित क्षेत्र - विकास की संकल्पना को पूर्ण करते हैं ।

अध्ययन क्षेत्र में विकास की ऐसी प्रक्रिया चल रही है जिससे आत्म निर्भरता समाप्त होती जा रही है तथा निर्भरता बढ़ती जा रही है । इसे समुचित विकास नहीं कहा जा सकता है । हमारी क्षमता विकसित देशों की तरह विकल्प पैदा करने की नहीं है । हमें तो अपने विकल्पों से ही विकास करना है । तभी समुचित एवं आत्मनिर्भर विकास किया जा सकता है । यहाँ के अरण्यों में रहने वाले संत बिना किसी भौतिक सुविधा के सम्पूर्ण विश्व की संवेदना रखते थे । क्या आज का भौतिक युग तथा तथाकथित विकसित विश्व उन्हें पिछड़ा कह सकता है?

समन्वित - क्षेत्र - विकास की एक नयी परिकल्पना दी जा सकती है । जो क्षेत्र जितना अधिक अन्तर्विरोधों की पचा (समाहित) सकता है उसे उतना ही विकसित कहा जा सकता है । यदि अध्ययन क्षेत्र में बड़े उद्योगों से प्रदूषण न होता, वनों की कटाई से अपरदन न होता तथा जलाशयों के निर्माण से बस्तियों का विस्थापन न हुआ होता तो इसे उच्च स्तर का विकसित क्षेत्र कहा जा सकता था । एक ओर हम तेजी से विकास कर रहे हैं तो दूसरी ओर उसके दुष्परिणाम दिखायी दे रहे हैं । विकास प्रक्रिया से यदि दुष्परिणाम न हो तो समन्वित विकास कहा जा सकता है किन्तु सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र इससे प्रभावित है । यह तथ्य स्वयं एक शोध का विषय है ।

अध्ययन क्षेत्र का समन्वित विकास, उस क्षेत्र में उपलब्ध साधनों, वहाँ के निवासियों की आवश्यकताओं, महत्वाकांक्षाओं और उनके तकनीकी कौशल पर निर्भर है । यहाँ के प्राकृतिक उपहारों का साधन के रूप में मूल्य तभी बढ़ेगा, जब लोगों को उनके उपयोग का ज्ञान हो जाएगा। ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जहाँ संभाव्य साधन विशाल मात्रा में उपलब्ध है, किन्तु उपयोगिता के ज्ञान के अभाव तथा आर्थिक कारणों से उनका विकास नहीं हो पाया है । पूँजी, सड़कों, रेलों, तथा तकनीकी ज्ञान के अभाव में विकास में कठिनाई आ रही है ।

जनपद के सभी विकासखण्डों में संसाधनों का वितरण असमान है । विकासखण्ड नगवां, बभनी, चतरा एवं घोरावल में अभी तक विकास प्रक्रिया आरम्भ नहीं हो सकी है । इससे पिछड़े जनपद में भी क्षेत्रीय असमानता दृष्टिगोचर हो रही है । उपर्युक्त विकासखण्डों में उनके संसाधानों के अनुरूप विकास प्रक्रिया शीघ्र आरम्भ करने की आवश्यकता है । इससे क्षेत्रीय असमानता को कम किया जा सकता है ।

समन्वित क्षेत्र - विकास एक अविछिन्न प्रक्रिया है, जिसे अल्प अवधि में प्राप्त नहीं किया जा सकता है । इस विकास को पूर्ण तभी कहा जा सकता है जब अध्ययन - क्षेत्र के लोगों द्वारा अपने (सोनभद्र के) ही संसाधनों द्वारा विकास किया जाय । राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में यह संकल्पना विवादास्पद हो सकती, किन्तु क्षेत्रीय विकास के लिए यह अनिवार्य शर्त है। किसी क्षेत्र में (जैसे सोनभद्र) अनेक उद्योग स्थापित कर देने से ही क्षेत्र का विकास नहीं होता

है। हाँ, वहाँ के संसाधनों (जिस पर उद्योग आधारित) का विकास तथा उपयोग अवश्य हो जाता है। इस प्रक्रिया में जब तक स्थानीय लोगों का सहयोग (जिससे रोजगार मिले) प्राप्त नहीं किया जाता है तब तक समन्वित क्षेत्र - विकास को प्राप्त नहीं किया जा सकता है। इस समस्या के समाधान के लिऐ व्यावहारिक शोध की आवश्यकता है ।

वर्ष 1991 के जनगणना के अनुसार जनपद सोनभद्र में 42.5% लोग अनुसूचित जाति एवं जनजाति के हैं। स्वतन्त्रता के पूर्व इन्हें केवल पिछड़ा कहा जा सकता था। किन्तु बड़े उद्योगों की स्थापना, खनन व निर्माण कार्य तथा अन्य कार्यों के प्रारम्भ होने के पश्चात इनका शोषण प्रारम्भ हो गया। इन पिछड़े व शोषित लोगों के कल्याण के लिए विशेष नीति तैयार करने की आवश्यकता है । विकास प्रक्रिया एवं विकास-लाभ में इन्हें सम्मिलित किए बिना समन्वित क्षेत्र - विकास की परिकल्पना अधूरी रह जाएगी। इसके लिए आवश्यक है जंगली क्षेत्रों में भी छोटे-छोटे 'विकास केन्द्रों' की स्थापना की जाय। यहाँ के लोगों के रूढ़िवादिता को तोड़ने व नवीनताओं के प्रसरण के लिए व्यावहारिक नीति अपनाने की आवश्यकता है।

सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र के विकास की व्यूह रचना इस प्रकार करनी होगी जिससे न केवल सभी विकास खण्ड एक दूसरे के पूरक हो जायं बल्कि प्रत्येक गाँव एक दूसरे का पूरक हो जाय। 'आत्म निर्भर विकास' ऐसा हो कि सम्पूर्ण गाँव, न्यायपंचायत एवं विकास खण्ड एक दूसरे से विलग न हों बल्कि माला की तरह एक दूसरे से गुथ जाय। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सतत् प्रयास एवं व्यापक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। इसके अभाव में ही जिला मुख्यालय विवाद तथा 'सोनपार क्षेत्र' को अलग जिला बनाने की माँग हो रही है।

किसी क्षेत्र की जनसंख्या को उसका संभाव्य संसाधन माना जाता है। इसमें उनकी संख्या और गुणवत्ता दोनों ही सम्मिलित है। लोगों की गुणवत्ता में उनकी कार्य क्षमता या उत्पादकता, उनका वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक विकास, उनके सांस्कृतिक मूल्य और उनके सामाजिक एवं राजनीतिक संगठन सम्मिलित हैं। अतः अध्ययन क्षेत्र के मानव और उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास बहुत आवश्यक है। इसके लिए एक साथ अनेक दिशाओं में लगातार एकजुट होकर प्रयास करने की आवश्यकता है। इस प्रक्रिया में परिवार, समाज तथा विद्यालय जैसी

सामाजिक संस्थाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इनके प्रभावी भूमिका पर शोध करने के लिए विस्तृत क्षेत्र खुला है। सोनभद्रके मानव संसाधन को अधिक से अधिक अच्छे ढंग से विकसित, शिक्षित एवं प्रशिक्षित करना आवश्यक है क्योंकि इनके विकास पर ही इस जनपद के प्राकृतिक संसाधनों का विकास निर्भर है। इसके अभाव में ही अन्य क्षेत्रों के लोग यहाँ (सोनभद्र) के कार्यों को हथिया लिए हैं। इसलिए शिक्षा, स्वास्थ्य, कार्य-कुशलताओं का विकास, कार्य के प्रति लगन, चरित्र निर्माण तथा सामाजिक भावना जैसे गुण और अधिक महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं। उपर्युक्त तथ्यों का विकास कैसे किया जाय, गहन शोध की आवश्यकता है।

समन्वित क्षेत्र - विकास लिए कुछ लक्ष्य ऐसे हैं, जिन्हें प्राप्त करना अनिवार्य है। लक्ष्य तो स्पष्ट है, लेकिन उसे किस प्रकार प्राप्त किया जाय तथा किस प्रकार उपयोग किया जाय, शोध का विषय है। ये लक्ष्य हैं - सबको साक्षर बनाना, सभी के लिए स्वास्थ्य सेवाएं जुटाना, व्यावसायिक प्रशिक्षण, तकनीकी शिक्षा तथा व्यावसायिकता में प्रवीणता । इनके अतिरिक्त कर्तव्यपरायणता तथा कार्य के प्रति निष्ठा पैदा करना, स्त्रियों को बराबरी का दर्जा देकर उनकी क्षमताओं का विकास करना, श्रमिकों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए विज्ञान प्रौद्योगिकी तथा उर्जा का उपयोग करना, कुछ अन्य प्राप्त करने योग्य लक्ष्य हैं।

अनेक ऐसे कारक, जो समन्वित क्षेत्र - विकास के लिए आवश्यक हैं, किन्तु अनेक कारणों से प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध की विषय वस्तु में सम्मिलित नहीं किया गया है। अतः अध्ययन क्षेत्र (जनपद सोनभद्र) के समन्वित विकास के लिए व्यापक शोध की आवश्यकता है जिसमें अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों तथा वैज्ञानिकों से सहयोग लेना आवश्यक है।

xxxxxxxxx

परिशिष्ट I

शब्दावली

अर्थव्यवस्था	*Economy*
अध्ययन क्षेत्र	*Study Area*
अपरदन	*Erosion*
अनौपचारिक	*Non-formal*
आकारकीय	*Morphological*
आदान	*Inputs*
आर्थिक समृद्धि	*Economic Growth*
आधारभूत उद्योग	*Basic Industry*
आधारभूत कार्य	*Basic function*
उपभोक्ता उद्योग	*Consumer Industry*
औद्योगिक क्रान्ति	*Industrial Revolution*
कार्यात्मक आकार	*Functional Size*
कार्यात्मक अंक	*Functional Score*
कार्यात्मक सूचकांक	*Functional Index*
कार्याधार जनसंख्या	*Threshold Population*
कुटीर उद्योग	*Cottage Industry*
केन्द्र स्थल	*Central Place*
केन्द्रीयता	*Centrality*
केन्द्रीयता अंक	*Centrality Score*
केन्द्रीयता सूचकांक	*Centrality Index*
केन्द्रीय कार्य	*Central Function*
कृषि योग्य भूमि	*Culturable Land*
कृषित	*Cropped*
कृषि सम्पदा	*Agricultural Resources*
खनन	*Mining*
खनिज अयस्क	*Mineral Ore*
खरीफ	*Kharif*
खुली खदान	*Open Mine*
गहन कृषि	*Intensive Agriculture*
गैर आबाद	*Uninhabited*
गृह उद्योग	*House hold Industry*
चकबन्दी	*Consolidation of Holding*
जलग्रहण क्षेत्र	*Catchment Area*
जल विद्युत	*Hydroelectricity*
जल स्तर	*Water Table*
जोत	*Holding*
डेयरी उद्योग	*Dairy Industry*
ढलान	*Gradient*

तालाब	*Tank*
ताप विद्युत	*Thermal Electricity*
तिलहन	*Oilseeds*
तृतीयक उद्योग	*Tertiory Industry*
द्वितीयक उद्योग	*Secondary Industry*
नलकूप	*Tube Well*
नौ परिवहन	*Navigation*
पठार	*Tableland*
पदानुक्रम	*Hierarchy*
पर्यटन	*Tourism*
प्रवेशी जनसंख्या	*Threshold Population*
फसल कोटि	*Crop-rank*
फसल संयोजन	*Crop-Combination/association*
बस्ती अन्तरालन	*Settlement Spacing*
बेसाल्ट	*Basalt*
बृहद् उद्योग	*Large-scale Industry*
बृहत् स्तरीय	*Macro-level*
भौम जल	*Ground water*
मध्यम स्तरीय	*Meso-level*
मुख्य कर्मी	*Main worker*
लघु उद्योग	*Small Scale Industry*
विकास केन्द्र	*Growth Centre*
विकास ध्रुव	*Growth Pole*
विदेशज	*Exotic*
विनिर्माण	*Manufacturing*
संतृप्त/संपृक्त जनसंख्या	*Saturation point Population*
शस्य गहनता	*Crop-Intensity*
शुद्ध बोया गया	*Net Swon*
सड़क जाल	*Road Network*
सड़क सम्बद्धता	*Road Connectivity*
समन्वित	*Integrated*
सर्वगत/सर्वत्रिक	*Ubiquitous Compact Index*
संहत	*Compact*
सूचकांक	*Index*
सूक्ष्म स्तरीय	*Micro-level*
सेवा केन्द्र	*Service Centre*
सेवित जनसंख्या	*Served Population*
शुष्क कृषि	*Dry Farming*
हृदय क्षेत्र	*Heart-Land*

परिशिष्ट 2

FURTHER READINGS

BOOKS AND ARTICLES

Abder,R. et al.: 'Spatial Organisation' Prentice Hall, Englewood Cliffs, New Jersey, 1967.

***Agarwal,S.N.:** 'Indian Population Problems, Tata McGraw Hill, Bombay 1972.*

***Ahmed,E.:** 'Geomorphic Regions of Peninsular India', Journal of Ranchi University, 1/9, 1962, pp. 1-29.*

*Alagh, **Y.:** (1972) Regional Aspects of Indian Industrialization, University of Bombay, Economic Series No.21.*

*Arora, **R.C.:** 'Development of Agriculture and Allied Sectors-An Integrated Area Approach', New Delhi, 1976, pp.1-9.*

***Atkinson,** B.W.: Precipitation in Man and Environmental Process edited by K.J. Gregory and D.E. Walling, Butercuorths, pp. 23, 37.*

Bannet, H.H.: 'Adjustment of Agriculture to its Environment', AAAG, Vol.33, No. 4, Dec. 1943, pp.169-198.

*Berry, L. **and Perov, G.:** 'Economic Planning in the Soviet Union in Planning of Manpower in the Soviet Union Translated by Shcherbovich, S.B., Progress Publisher, Moscow, 1975, pp. 24-36.*

*Bhalla, **C.S.:** Changing Agrarian Structure in India, A Study of the Impact of Green Revolution in Haryana, Meenakshi Prakashan, Meerut (1972).*

Bhatt, L.S.: 'Regional Planning in India', Statistical Publishing Society, Calcutta, 1972.

Bhatnagar, L.P.: Transport in Modern India, 5th ed. Kishore Publication House, Kanpur (1970).

Bracey, H.E.: 'Towns As Rural Service Centres: An Index of Centrality with Special Reference to Somerset', Transaction of papers,Institute of British Geographers, No. 19, (1953), pp. 85-105.

Champion, H.G.: A, Preliminary Survey of Forest Types of India and Burma, Indian Forest Record, New Series, Silviculture, vol.1, Delhi, 1936.

Cartor, H.: 'Urban Grades and Sphere of Influence in South West Wales', Scotish Geographical Magazine, Vol. 71 (1955), pp. 43-58.

Chauhan, D.S. : Studies in the Utilisation of Agricultural Land, Shiv Lal and Co., Agra, (1966).

Chandna, R.C. and S.Manjit: Introduction to Population Geography, Concept Publishing Company, New Delhi,(1980).

Chaudhury, M.R.: Indian Industries: Development and Location, Oxford, Calcutta, 1970.

Dubey, B. and M.Singh: Integrated Rural Development, Jeevan Dhara Publication, Varanasi, (1985).

Dutta, A.K.: Two Decades of Planning-India: An Anotomy of Approach', National Geographical Journal of India, Vol.XVIII (3-4), (1972),pp.187-205.

Friedman, J.: 'Cities in Social Transformation', Reprinted in J. Friedman, et al.(ed.) 1964, Regional Development Planning-A Reader (1961), pp. 343-60.

Gadgil, D.R.: 'District Development Planning', Gokhale Institute of Politics and Economics, Poona, 1967, pp.1-38.

Glasson,J.: 'An Introduction of Regional Planning - Concept, Theory and Practice', London, 1978, pp.24-31.

Gould, P.R.: 'The Development of the Transportation Pattern in Ghana', Illionis, 1960, p.132.

Government of India, : National Atlas of India, New Delhi, Ministry of Education, 1957.

Government of India: Irrigation and Power Projects, Ministry of Irrigation and Power, New Delhi, 1970.

Grossman, L.: Man-Environment Relationship in Anthropology and Geography, Annals of the Assoc. Amer, Geographers, Vol. 67, pp. 126-44.

Haggerstrand, T.: Innovation Deffusion as a Spatial Process, Chicago (1970).

Haggett, P.: Location Analysis in Human Geography, Arnold, London (1967).

Hansen, N.M.(ed.) : The Regional Economic Development, The Press, New York (1972).

Harvey, D.: Social Justice and the City, Edward Arnold, London(1973).

Indian Council of Agriculture Research: Handbook of Agriculture, New Delhi, 1970.

ICSSR.: 'A Survey of Research in Geography', Popular Prakashan, Bombay, 1972, pp. 122.

Jana, M.M.: 'Hierarchy of Market Centres in Lower Silabati Basin', Geographical Review of India, Vol. 40, No. 2 June 1978, pp. 164-176.

Kar, N.R.: 'Urban Hierarchy and Central Functions Around Calcutta and their Significance', Land Studies in Geography, Series B, Human Geography, No. 24, 1962, pp. 253-274.

Kayastha, S.L. et al.: 'Geographical Environmental Approach for Integrated Rural Development', Proceedings of 65th Session of ISCA (Geology & Geography Section), 1978, p.3.

Kulkinski, A.K.: 'Some Basic Issues in Regional Planning', in Regional Planning and National Development by Mishra, R.P. et al. (Eds.), VP, New Delhi, 1978, pp. 3-21.

Kuznetsov, V.I.: 'Economic Integration - Two Approaches', Progress Publishers, Moscow, 1975, pp. 13-25.

Khan, W.and R.N. Tripathi: Plan for Integrated Rural Development in Paurigarhwal, NICD, Hyderabad(1976).

Law, B.C. (ed.): Mountain and Rivers of India, Calcutta, National Committee for Geography, Calcutta, 1968.

Mishra, B.N.: Spatial Pattern of Service Centres in Mirzapur Distt,U.P., Unpublished Thesis,in Geography, 1980.

Mishra, H.N.: 'The Concept of Umland: A Review', Natioanl Geographer, Vol.6, 1971, pp. 57-63.

Majid Hasan, : Crop Combination in India, Concept Publishing Company,New Delhi, 1982.

Misra,R.P.: Diffusion of Agricultural Innovation, University of Mysore, 1968.

District Planning Development Studies No.6, Institute of Development Studies, Univesity of Mysore 1972.

Regional Planning and National Development, Vikas Publishing House, New Delhi, 1976.

Nicholson, M.: *The Environmental Revolution, Penguin, Harmondsworth, 1972.*

NSSO.: 'Report on the Status of Estimation of Agricultural Production in India (1974-75)8, Govt. of India, New Delhi, 1977, pp.191-198.

Preogrzhenzky, V.S.: *'Integrated Research on the Natural Environment and Resources'in Man Society and the Environment, by Gerasimov, I.P. et al. (Eds.), Progress Publishers, Moscow, 1975, pp. 60-70.*

Ramanna, D.V. and Thapliyal,B.K.: *'Planning for Agricultural Infrastructures', 10th Course on IRD, Hyderabad, Sept.-Oct. 1977, pp.1-2, (Cyclostyled Paper).*

Rao, V.L.S.P.: Regional Planning, Indian Finance, Calcutta, 1949.

Regional Planning, Asia Publishing House, Bombay, 1963.

Regier, H.A.and Cowell, E.B.: *Application of ecosystem theory, succession, diversity, stability, stress and conservation, Biological Conservation, Vol. 4, 1972, pp.83-88.*

Singh,B.:*'Land Use-its Efficiency,Stages and Optimum Use', National Geographical Journal of India, Vol. 23, Nos. 1-2, March-June 1977, pp.61-72.*

Singh,H.P.: *'Development Pole Theory-Review and Appraisal', National Geographer, Vol.13,No.2, Dec.1978, pp.155-162.*

Singh,J.: *'Transport Geography in South Bihar', NGSI, Varanasi, 1964.*

Singh,L.R., Savindra, Tiwari, R.C. and Srivastava, R.P.: *Environmental Management (ed.), Allahabad*

Geographical Society, Geog. Deptt. Allahabad University, 1983.

Singh, R.L.(ed.): 'India-A Regional Geography', NGSI, Varanasi, 1971, pp. 189-196.

Singh, **R.N.: and Sahab Deen:** 'Occupational Structure of Urban Centres of Eastern U.P. A Case Study of Trade and Commerce', Indian Geographical Journal, Vol. 56. No. p. 81, pp.55-62.

Smith, D.D.: and Wischmeier, W.H.: Rainfall erosion, Advances in Agronomy,Vol. 14, 1962, 109-48.

Spate, O.H.K. and Lear Month, A.T.A.: Indian and Pakistan: A General and Regional Geography, 3rd ed. Methuen, London, 1967.

Stamp, L.D.: 'The Determination of Planning Regions', National Geographer, Vol. 5, 1962, pp.1-6.

Sundram, K.V.: 'Regional Planning in India', in 'Symposium on Regional Planning (21st I.G.C.), Calcutta, 1971, pp. 109-123.

Thapliyal, B.K. and Ramanna, D.V.: 'Planning for Social Facilities', 10th Course on IRD, NICD, Hyderabad, Sept.-Oct. 1977, pp.1-3.(Unpublished Paper).

Verma, L.N.: 'Spatial Arrangement on Central Places on the Rewa Plateau' in Essay in Applied Geography by Mishra,V.C. et al. (Eds.),University of Saugar, 1976, pg. 251-258.

Wadia, D.N.: Geology of India (Economic Minerals) 5th ed., MacMillan, London, 1965.

Wadia, M.D.N.: 'Minerals of India, N.B.T., India, New Delhi,1966.

Wanmali, S.: 'Central Places and their Tributary Population-some observations', Behavioural Sciences and Community Development, Vol.6, No.1, March 1972, pp.11-39.

William,R.C. and Morill, R.L.: 'Diffusion Theory and Planning', Economic Geography, Vol.51, No.3, July 1975,pp. 290.